आत्म मार्ग प्रकाशन

2

अविनाशी ज्योति

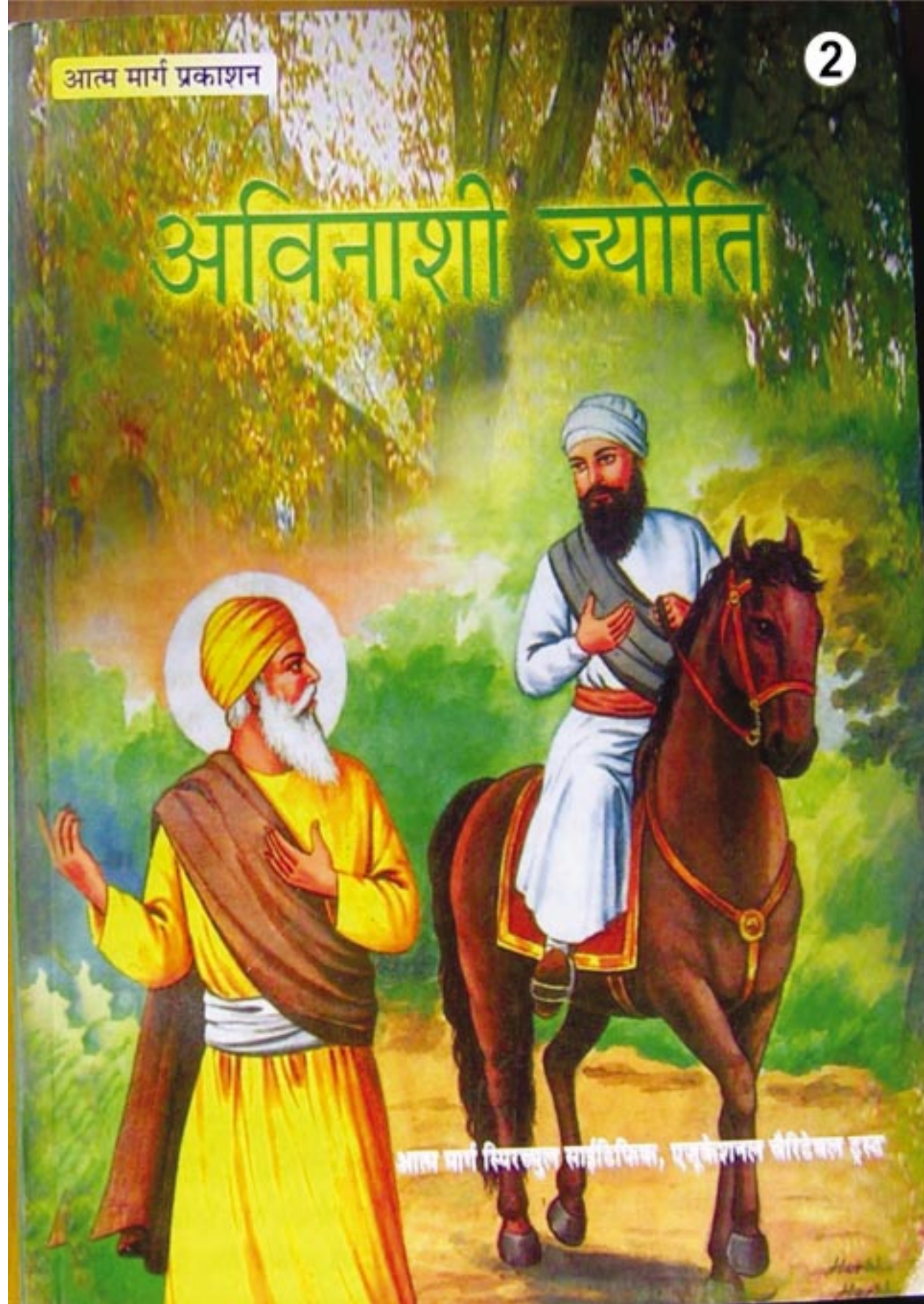

⑧

शान...।

सतनाम श्री वाहिगुरू,
धंन श्री गुरू नानक देव जीओ महाराज।

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ पृष्ठ - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ पृष्ठ - 289

किसही कोई कोइ मंञु निमाणी इकु तू।
किउ न मरीजै रोइ जा लगु चिति न आवही॥ पृष्ठ - 791

धारना - कवन अनाथ विचारा,
प्रभ मोहि कवन अनाथ विचारा - 2, 4

प्रभ जी मोहि कवनु अनाथु बिचारा।
कवन मूल ते मानुखु करिआ इहु परतापु तुहारा।
जीअ प्राण सरब के दाते गुण कहे न जाहि अपारा।
सभ के प्रीतम स्रब प्रतिपालक सरब घटां आधारा।
कोइ न जाणै तुमरी गति मिति आपहि एक पसारा।
साध नांव बैठावहु नानक भवसागरु पारि उतारा॥ पृष्ठ - 1220

धारना - हरि के सेवक जो हरि भाए,
तिन की कथा निरारी रे - 2, 2
तिन की कथा निरारी रे, - 4, 2
हरि के सेवक जो हरि भाए,........ -2

हरि के सेवक जो हरि भाए तिन की कथा निरारी रे।
आवहि न जाहि न कबहू मरते पारब्रहम संगारी रे॥ पृष्ठ - 855

साध संगत जी! गर्ज़ कर बोलो, सतनाम श्री वाहिगुरू! दूर दराज़ से आप गुरू महाराज जी की अपार प्रेरणा के कारण गुरू की हजूरी में एक महान तप कर रहे हो। सौ वर्षों तक धूनियां रमाने वालों का तप, कलयुग में थोड़ी देर में किये गये सत्संग का मुकाबला नहीं कर सकता। जब आप मन चित्त एकाग्र करके, श्रद्धा का पल्ला फैलाकर, गुरू महाराज जी के विचार श्रवण करोगे तो -

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम॥ पृष्ठ - 546

सुनने और गाने वाले को कई करोड़ यज्ञों का फल मिलता है। पिछले कई सप्ताहों से लगातार एक बहुत ही प्यारी कथा गुरू अंगद साहिब महाराज जी की आप सुनते आ रहे हो कि गुरू नानक पातशाह का उनके साथ कैसे मिलाप हुआ। केवल 3 साल, बड़ा ही आश्चर्य है, सेवा की और आपने वह पदवी प्राप्त कर ली जो सारी आयु पर्यन्त सेवा करने के बाद भी प्राप्त नहीं होती या तो आप धुर दरगाह से यह लेख लिखवा कर लाये थे या आपकी सेवा इतनी प्रबल थी कि सेवा में पहला स्थान प्राप्त करके, आपने अपना ही स्वरूप बना लिया। गुरू अंगद साहिब जी के बारे पिछले

कई दीवानों में सुनते आ रहे हो।

आप गुरू नानक पातशाह के पास पहुँच गये हैं। दिन रात सेवा में लगे रहते हैं। केवल सेवा ही नहीं करते बल्कि काम करते-करते गुरू नानक देव जी के साथ अत्याधिक प्यार हो जाता है। गुरू और शिष्य का प्यार, सारी सृष्टि में जितने भी प्यार होते हैं, सबसे उच्च श्रेणी का प्यार हुआ करता है। सृष्टि में प्यार के अलग-अलग स्तर हुआ करते हैं। जड़ चीज़ें भी जड़ चीज़ों के साथ प्यार करती हैं। पशु-पशुओं से प्यार करते हैं तो पक्षी-पक्षियों से प्यार करते हैं। वनस्पति का वनस्पति से प्यार होता है - वृक्ष पेड़ पौधे सभी आपस में प्यार के कारण बन्धे हुए हैं। ऐसा नहीं होता कि इन्हें पता नहीं होता। इन्हें भी ज्ञान होता है। एक प्रतिशत से लेकर 25% तक पौधों को सूझ होती है। इनके पास बैठकर संगीत बजाओ, ये प्यार करेंगे। हृदय के अन्दर से Telepathy अर्न्तसंवेदन द्वारा यदि इनका भला चाहो तो सभी पौधे लहलहाने लग जाते हैं। जिन पौधों को फल नहीं लगते उन्हें गुरू की बाणी श्रवण कराओ, उन्हें भी फल लगना शुरू हो जाता है। साध संगत जी! यह तासीर है। ऐसे ही मनोकल्पित बातें नहीं हैं। डा. बोस ने ये बातें स्पष्ट प्रत्यक्ष रूप में दिखाई हैं। आजकल तो सभी वैज्ञानिक इस मत से सहमत हैं कि यदि दुधारू पशुओं के पास संगीत की धुन बजाई जाये तो उन पशुओं का चित्त एकाग्र हो जाता है तथा वे दूध भी अधिक देते हैं। जिन पशुओं के पास परेशानी वाली या भय पैदा करने वाली चीज़ें रखी हों, वे दुधारू पशु दूध भी कम देते हैं। इन सभी बातों का प्रभाव पड़ता है।

यह निम्न स्तर का प्यार है। पशुओं का पशुओं के साथ प्यार है। अपने बराबर वालों के साथ भी प्यार होता है। जब एक पशु को बेच दिया जाता है तो उसके साथ के सभी डंगर ढोर रम्भाते रहते हैं। उसे याद करते रहेंगे, आखों से आंसू बहाते रहेंगे। Telepathy (अर्न्तसंवेदन) की यदि कोई भाषा जानता होगा तो वह उनकी वेदना को समझ सकता है।

मनुष्य का प्यार दो किस्म का है। एक को मोह कहते हैं और एक को प्यार कहते हैं। मोह में हित (स्वार्थ) काम करता है। माँ पुत्र से प्यार करती है। पहला स्वार्थ माँ का यह होता है कि वह बड़ा होकर कमाई करके मुझे खिलायेगा, बुढ़ापे में हमारी देख भाल करेगा। कोई बिरली लाखों करोड़ों में ऐसी एक माँ मिलेगी जो, अपने पुत्र से कहेगी, ''बेटा! काफी समय के बाद तूने मनुष्य का जामा लिया है। जाओ, तुम किसी पूर्ण महापुरुष की शरण में चले जाओ। वहाँ पर जाकर साधना करो। इतनी कठिन साधना करना कि मेरी गोद सफल हो जाये ताकि लोग मुझे धन्य-धन्य कहें और कुलों का उद्धार हो जाये।'' ऐसा कोई भी माँ नहीं कहती। यदि चला भी गया तो माँ को खाना-पीना अच्छा नहीं लगता। जब तक उसे गृहस्थ में नहीं फसा लेती तब तक उसे चैन नहीं आती। इसमें बच्चे का भला तो न मांगा। गुरू हमेशा शिष्य का भला मांगता है -

सतिगुरु सिख की करै प्रतिपाल। सेवक कउ गुर सदा दइआल॥ *पृष्ठ - 286*

गुरू जो होता है वह सदा अपने सिख (शिष्य) के बन्धन काटने के इरादे रखता है। हर समय यही सोचता है कि इसका बन्धन कैसे काटा जाये, किस प्रकार यह चौरासी के चक्कर से छूट कर पुनः जन्म मरण के बन्धन में न फसे। यही कारण है कि गुरू और शिष्य के प्यार को सबसे उत्तम श्रेणी का प्यार कहा है जो इस लोक में भी निभता है और परलोक में भी निभता है -

सजण सेई नालि मै चलिदआ नालि चलंन्हि।
जिथै लेखा मंगीऐ तिथै खड़े दिसंनि॥ *पृष्ठ - 729*

यह प्यार सच्चा हुआ करता है, निश्चल प्यार होता

है क्योंकि इसमें कोई गर्ज़ या हित नहीं हुआ करता -
जे गुरु झिड़के त मीठा लागै जे बखसे त गुर वडिआई॥ *पृष्ठ - 758*

यदि गुरू द्वारा दी गई झिड़कियां, पिटाई भी अच्छी लगती है, तब तो गुरू के साथ किया गया प्यार अच्छा है, यदि कड़वी लगती हैं तो समझो प्यार में अभी बहुत जबरदस्त कमी है। फिर वह प्यार नहीं हुआ करता।

इस प्रकार भाई लहणा जी ने गुरू नानक पातशाह जी के साथ इतना प्यार बढ़ा लिया कि कभी फुरने में भी घर की याद नहीं सताई। घर में लड़की जवान थी, बच्चे जवान थे, कारोबार काफी दूर-दूर तक फैला हुआ था। साहूकारी का काम किया करते थे। बड़े-बड़े व्यापारियों के साथ लेन-देन तथा दूर-दराज़ तक पैसे लेने और देने भी थे और अपना भी थोक का व्यापार काफी दूर तक फैला हुआ था। जब गुरू नानक देव जी के चरणों में नमक की गठड़ी लेकर पहुँचे तो एक बहुत महान कार्य किया। नमक की गठड़ी (थैली) एक बहुत बड़ा प्रतीक है। कहते नमक को किसी भी चीज़ में डाल दो वह अपनी हस्ती गवां देता है। पानी में डाल दो, पानी का रूप हो जायेगा पर अपना अस्तित्व (स्वाद) उसमें कायम रखेगा। इसलिये उन सारी संगत में घुलने मिलने तथा उनसे अस्तित्व रूप में अलग अपनी हस्ती बनाये रखने के लिये नमक की गठड़ी लाये थे। इस बात का प्रतीक था कि मैंने अलग नहीं रहना, आपके अन्दर रहना है, सारी संगत में घुल मिल कर रहते हुए भी अपनी अलग हस्ती भी कायम रखनी है। अत: आप गुरू नानक पातशाह की दिन रात सेवा करते हैं।

पिछली पूर्णमाशी पर बहुत ही विस्तार पूर्वक विचार की थी कि सेवा क्या होती है? कौन सी सेवा सफल हुआ करती है? सेवा करने से क्या फल प्राप्त होता है? इस प्रकार आप जी ने संसार की ओर से मुख मोड़ लिया। कभी फुरने में भी घर को याद नहीं करते थे, परिवार की ओर से विमुख हो गये क्योंकि यदि परिवार, बाल बच्चों, काम काज की ओर ध्यान है तो वह प्यार खण्डित माना जाता है। उसे पूर्ण प्यार नहीं कहते। वह एक प्यार नहीं होता, उसमें बहुत सी बातों का प्यार समाया होता है। उसे Broken Love (बिखरा हुआ प्यार) कहते हैं क्योंकि ध्यान किसी अन्य चीज़ की ओर है। जो प्यार सही होता है, उसके अन्दर किसी अन्य चीज़ की ओर ध्यान नहीं जाया करता। जिसे प्यार करता है, दिन रात केवल उसी का ध्यान करता है। उस प्यार के बारे में इस तरह से समझ आ जायेगा -

धारना - सच्ची लागी है प्रीत नाल गुरां दे,
जग्ग वलों मुख मोड़ के - 2, 2
पिआरिओ, जग्ग वलों मुख मोड़ के - 2, 2
सच्ची लागी है प्रीत नाल गुरां दे, ... -2

जउ तुम गिरिवर तउ हम मोरा।
जउ तुम चंद तउ हम भए है चकोरा।

साची प्रीति हम तुम सिउ जोरी।
तुम सिउ जोरि अवर संगि तोरी॥ *पृष्ठ - 659*

सारे संसार से प्यार को तोड़ दिया, न पुत्रों के साथ, न पत्नी, न लड़कियों, न रिश्तेदारों से किसी से भी प्यार नहीं रहा, केवल एक गुरू नानक को सारा प्यार अर्थात अपने आपको उन्हीं के हवाले पूर्ण समर्पित कर दिया। आगे पीछे कोई भी फुरना नहीं करते जो कुछ हो रहा है, होने दो, क्योंकि प्यार करने वालों की बातें अजीब ही हुआ करती हैं -

हरि के सेवक जो हरि भाए तिन की कथा निरारी रे॥ *पृष्ठ - 855*

जो परमेश्वर को रूच जाते हैं, उनकी कथाएं संसारी लोगों की कथाओं से अलग हुआ करती हैं।

राड़ा साहिब वाले महाराज जी, दसवीं कक्षा में पढ़ते थे। बाबा हीरा सिंघ जी तोपखाने जाया करते थे। वहाँ पर आप सभी इकट्ठे होकर अमृत बेला में स्नान करके बैठ जाया करते थे। पटियाले का तोपखाना काफी मशहूर था और वहाँ पर काफी साधु सन्त हुए हैं।

एक दिन बाबा जी आपको साथ लेकर लुधियाना से होते हुए दोराहा पहुँचते हैं और महापुरुषों के जाकर दर्शन करते हैं। दर्शन करने की देर थी, ऐसे लगा जैसे सदियों का आपस में मेल था। एक ही नज़र में, अपना सभी कुछ अर्पण कर दिया। दो-तीन दिन आप ठहरे। महापुरुष बोले, ''जाओ, आपने परीक्षा देनी है। माँ बाप लेने आ जायेंगे।'' परन्तु आप हाथ जोड़कर प्रार्थना करते हैं, ''अब मैंने कहीं नहीं जाना आप मुझे यहीं रख लो। मैंने जहाँ आना था वहीं पहुँच गया।''

कौवी (मादा कौवा) कोयल के बच्चे पालती है। कोयल कभी भी अपना घौंसला नहीं बनाती। जब कोयल ने अण्डे देने होते हैं तो कौवी के घौंसले में अण्डे दे आती है। कौवी अण्डों में से बच्चे निकालती है, उनका पालन पोषण करती है। जब अगला मौसम आता है और आमों की बहार पर कोयल अपना मीठा राग अलापती है, वह बोली, उन बच्चों को जगा देती है और वे उड़ कर कोयल के पास आ जाते हैं और कौवी को छोड़ देते हैं। इसी प्रकार जो महापुरुष हुआ करते हैं, हमारी तरह से घरों में रहते हैं, परन्तु उनकी कथाएं हमारी कथाओं से न्यारी होती है। पढ़ते हैं, लिखते हैं, परन्तु जिनके साथ वे दरगाह से आये होते हैं, जब उनकी आवाज़ सुनते हैं, उस समय घर बार छोड़कर, उन्ही के हो जाया करते हैं, फिर वापिस नहीं जाया करते। बड़ी मुश्किल से महापुरुषों को घर भेजा। परिक्षाएं बिल्कुल निकट थीं। महाराज जी बताया करते थे कि उस दिन के बाद हमारा दुनियां से लगाव खत्म हो गया। यदि प्यार लगाव था तो यह कि दो बजे उठ जाना। मोती बाग में एक सुधासर सरोवर है, वहाँ पर जाकर बैठ जाना। आपकी छोटी उम्र है और आप फरमाया करते थे कि पाँच घंटे अफूर अवस्था में, वहाँ पर बैठकर सिमरण करना और हमें ऐसा अनुभव होता कि जैसे कमल फूलों पर बैठकर हम पानी में तैर रहे हों। प्रकाश के हिन्डोलों में झूलना, अनहद शब्दों के मीठे रस के नादों का आनन्द लूटना। यह बात हर एक आदमी की समझ में नहीं आती। परीक्षा के दौरान वाहिगुरू के सिवाय पेपर में और कुछ न लिखना। यदि पेपर में लिखने लगे, तो जितने भी पेपर थे, सभी को वाहिगुरू-वाहिगुरू लिख कर भर दिया। जिनका बनना था, उनके बन गये, परीक्षा देकर चले गये। माँ-बाप कई बार गये। जाकर माँ-बाप कहते, ''महाराज! सगाई हो चुकी है, आज्ञा दे दो, शादी कर दें।'' महापुरुषों ने भी कई बार कह देना, ''जाओ।'' पर

आप कहते, ''अब तो मैंने जहाँ जाना था, वहाँ पहुँच गया हूँ। अब मेरा इस संसार में और कोई स्थान नहीं है। यदि कोई जगह है तो केवल आपके चरणों में है।'' यह प्रीत हुआ करती है –

जउ तुम गिरिवर तउ हम मोरा। जउ तुम चंद तउ हम भए है चकोरा।
माधवे तुम न तोरहु तउ हम नही तोरहि। तुम सिउ तोरि कवन सिउ जोरहि।
जउ तुम दीवरा तउ हम बाती। जउ तुम तीरथ तउ हम जाती।
साची प्रीति हम तुम सिउ जोरी। तुम सिउ जोरि अवर संगि तोरी॥ *पृष्ठ - 659*

अब तो आपके साथ प्रीत जुड़ गई है, अब मेरा और कोई नहीं है, चाहे मारो, चाहे रखो –

जे सुखु देहि ता तुझहि अराधी दुखि भी तुझै धिआई।
जे भुख देहि त इत ही राजा दुख विचि सूख मनाई।
तनु मनु काटि काटि सभु अरपी विचि अगनी आपु जलाई॥ *पृष्ठ - 757*

जब इस प्रकार का सच्चा प्यार पैदा हो जाये तो गुरू महाराज कहते हैं, ''दुनियां के लोगो, सुनो। ऐसे ही तरले मत करो कि मैं यहाँ अमुक स्थान पर सुरत टिकाऊं, ऐसे कर लूँ, वैसे कर लूँ? कहते हैं सच्ची बात सुन लो –''

साच कहौं सुन लेहु सभै जिन प्रेमु कीओ तिन ही प्रभु पाइओ॥ *त्व प्रसादि स्वये*

धारना - प्रभ जी मिल जांदे ने,
होवे जे प्रीत सच्ची - 2, 2
होवे जे प्रीत सच्ची - 4, 2
प्रभ जी मिल जांदे ने, ... - 2

सलिल निवास जैसे मीन की न घटै रुचि, दीपक प्रकास घटै प्रीत न पतंग की।
कुसल सुबास जैसो त्रिपत न मधुप कौ, उडत अकास आस घटै न बिहंग की॥
कबित भाई गुरदास जी

जानवरों के उदाहरण देते हैं कि उनके अन्दर कितना प्यार होता है। महाराज जी कहते हैं, मनुष्य में तो बहुत कम प्यार है –

कोटन मै नानक कोऊ नाराइनु जिह चीति॥ *पृष्ठ - 1427*

जिसके साथ पूर्ण प्यार होता है, चित्त सदा वहीं रहता है। करोड़ों में से कोई एक आध निकलता है, जिसके अन्दर प्यार होता है। महाराज जी कहते हैं, ''देखो भाई गुरदास जी जिनकी बाणी को गुरू ग्रन्थ साहिब की कुन्जी का दर्ज़ा प्राप्त है। आप कहते हैं कि –''

सलिल निवास जैसे मीन की न घटै रुचि,
दीपक प्रकास घटै प्रीत न पतंग की॥ *कबित भाई गुरदास जी*

मछली पानी के अन्दर रहती है और उसकी रूचि कम नहीं होती। इतनी अधिक रूचि रहती है कि पानी के बिना एक सांस भी नहीं ले सकती और मर जाया करती है शरीर त्याग देती है –

..... दीपक प्रकास घटै प्रीत न पतंग की॥ *कबित भाई गुरदास जी*

दीपक जलता है, उसका प्रकाश धीरे-धीरे कम होता जाता है। परन्तु पतंगा दीपक के प्रकाश पर अपने आपको कुर्बान कर देता है। धरती पर गिर कर तड़पता है। यदि उड़ने की समर्थ

हो तो पुनः दीपक की लौ पर आ गिरता है, दीपक के साथ जल जाता है, पर पीछे नहीं हटता –

कुसल सुबास जैसो त्रिपत न मधुप कौ .....॥ *कबित भाई गुरदास जी*

भंवरा फूल के बीच में बैठ जाता है। वह रस पीते-पीते तृप्त नहीं होता, उसी तरह बैठा सुगन्धि लेता रहता है सांय के समय फूल बन्द हो जाता है और वह भी कली के अन्दर बन्द होकर अपने प्राण त्याग देता है –

..... उडत अकास आस घटै न बिहंग की॥ *कबित भाई गुरदास जी*

पक्षी आकाश में उड़ता चला जाता है। उसकी आशा कभी कम नहीं होती। वह उसी तरह उड़ता चला जाता है–

घटा घनघोर मोर चात्रिक रिदै उलास .....॥ *कबित भाई गुरदास जी*

मोर ज्यों-ज्यों बादलों की गर्ज़न सुनता है, उसका चित्त प्रसन्न होता चला जाता है। साथ ही नाचने लग जाता है, पैलें डालता है –

नाद बाद सुनि रति घटै न कुरंग की॥ *कबित भाई गुरदास जी*

जब घण्डेहेड़े का शब्द हिरण सुनता है, तो वह सभी कुछ भूल जाता है। उसे यह पता ही नहीं रहता कि शिकारी उसे पकड़ कर ले जायेगा और मारकर खा जायेगा। वह मस्त हुआ, बौरा होकर घन्डेहेड़े की आवाज़ की सीध में चला जाता है, जहाँ पर शिकारी जाल बिछाकर बैठा हुआ उसे बजा रहा होता है। उसे –

तैसे प्रिय प्रेम रस रसिक रसाल संत,
घटत न त्रिसना प्रबल अंग अंग की॥ *कबित भाई गुरदास जी*

भाई गुरदास जी लिखते हैं कि ऐसा प्यार परमेश्वर के प्यारों का, प्रभु के साथ हुआ करता है। वह कम नहीं हुआ करता। कभी फीका नहीं पड़ता बल्कि बढ़ता ही चला जाया करता है और प्यार के बिना जिन्दा नहीं रह सकते –

आखा जीवा विसरै मरि जाउ॥ *पृष्ठ - 9*

यदि कहते हैं, तो प्यार रहता है। प्यार के साथ ही याद रहती है, तभी वे जिन्दा रहते हैं। यदि परमेश्वर को भूल जायें तो मौत हो जाया करती है। अतः महाराज जी कहते हैं, ऐसा प्यार होना चाहिये –

साच कहौं सुन लेहु सभै
जिन प्रेमु कीओ तिन ही प्रभु पाइओ॥ *त्व प्रसादि स्वयै*

नामदेव जी कहीं बाहर गये हुए हैं और किसी विरोधी ने उसकी झौंपड़ी को आग लगा दी, जिसमें आप नाना जी के साथ रहा करते थे। नामदेव जी को खबर की गई कि आपकी झौंपड़ी को आग लग गई है, ''भगत जी! बचा लो, जो कुछ बचा सकते हो।'' बड़ी हिम्मत करके हमदर्दियों ने कुछ सामान बाहर निकलवा दिया। जब आप आये तो उस समय आप की दृष्टि संसार में नहीं लगी हुई थी। अतः आपने फ़रमान किया –

आपे पावकु आपे पवना। जारै खसमु न राखै कवना॥ *पृष्ठ - 329*

आग के अन्दर भी प्रभु नज़र आ रहे थे। जो सामान बाहर पड़ा था, उसे भी उठा-उठा कर

आग के अन्दर ही फैंके जा रहे हैं और कहते हैं, ''प्रभु! आप आज इस रूप में आये हो। इसे भी भोग लगा लो।'' सारा सामान जला दिया और आप मस्त होकर बैठ गये। एक दिन बीता, दो दिन बीते, चार दिन बीते। इस प्रकार 2-4 दिन तो पड़ौसियों ने रैन बसेरे के लिये जगह दे दी। नाना जी कहने लगे, ''बेटा, नामदेव! झौंपड़ी तो हमें डालनी ही पड़ेगी। यह लो 20 रूपये का प्रबन्ध कर दिया है और ये ले जाओ। फूस, सरकण्डे आदि तथा घर का अन्य सामान जो जरूरी होता है, वह खरीद लाओ। इन पैसों से आ जायेगा।'' उन दिनों एक रूपये की कीमत बहुत हुआ करती थी। एक रूपये के 12 मन चने आ जाया करते थे।

आप पैसे लेकर चल पड़ते हैं। परन्तु रास्ते में साधुओं की जमात मिल गई। आप भी साधु हैं क्योंकि सन्त को सन्त देख ले, तो चाव चढ़ जाता है क्योंकि वे भी परमेश्वर के प्यारे होते हैं। आपने उनको नमस्कार की। आपस में वार्तालाप हुआ। उन्होंने कहा, ''भक्त जी! यहाँ पर किसी सेठ साहूकार का लंगर नहीं चलता है? सारी सन्त मण्डली, कई दिनों से निराहार रह रही है। कहीं से भोजन नहीं मिला।''

नामदेव जी बोले, ''महाराज! उन्हें कहाँ ढूँढते हो? मैं रसद पानी ला देता हूँ।''

आपने 20 रूपये में भोजन आदि की रसद लाकर दे दी। इतना करके आप एक अकेले स्थान पर आकर बैठ गये। अब बल्लियां कौन खरीदता? सरकण्डे किससे खरीदते? और घर का सामान कौन खरीदता? प्रभु की याद में बैठ गये और उधर प्रभु को पीड़ा सताती है, क्योंकि आपका विरद है कि अपने प्यारों के लिये आप सभी कुछ अर्पण कर देते हैं। अतः प्रभु दर्शन देने आये और पूछते हैं, ''नामदेव! तुम उदास बैठे हो?''

नामदेव कहते हैं, ''प्रभु! आप जानते तो हैं।''

भगवान बोले, ''जाओ! मैं तेरी झौंपड़ी बना आया हूँ।''

करोड़ों ब्रह्मण्डों की रचना करने वाले के लिये एक झौंपड़ी बनाना कौन सी मुश्किल बात थी? वह तो -

हरन भरन जा का नेत्र फोरु॥ ***पृष्ठ - 284***

एक पलक झपकते ही करोड़ों ब्रह्मण्ड बन जाते हैं, करोड़ों नष्ट हो जाते हैं। प्रभु तो प्यार के वशीभूत होकर मनुष्यों जैसा नाटय करते हैं। प्रभु, जैसे झौंपड़ी बनाते हैं उसी तरह से काम करते हैं। बल्लियां फिट करते हैं, पूलियां लगाते हैं, सामान उठाते हैं, नौकर बन कर काम करता है। फिर कहते हैं, ''नामदेव! अब तुम वापिस घर जाओ।''

जब वापिस घर आये तो द्वार पर भीड़ लगी हुई है। उनकी एक पड़ौसिन महिला थी। उसने झौंपड़ी देखी तो उसके मन में भी वैसी झौंपड़ी बनवाने की इच्छा हुई। उसके पास काफी खुला स्थान था।

मन ही मन में कहती है, ''इस पक्के मकान के सामने, खुली जगह पर, मैं भी ऐसी ही झौंपड़ी बनवाऊँ। इसके अन्दर जाने पर चित्त स्थिर हो जाता है। सभी कलह क्लेश दूर हो जाते हैं।''

साध संगत जी! हों भी क्यों न? जहाँ परमेश्वर ने स्वंय साकार रूप धारण करके अपने चरण रखे और हाज़िरी दी। जब नामदेव जी आये तो उसने नाम देव जी से कहा, ''नामदेव! मुझे यह बतायेगा कि यह झौंपड़ी तूने किससे बनवाई है?''

पाड़ पड़ोसणि पूछि ले नामा का पहि छान छवाई हो।
तो पहि दुगणी मजूरी दैहउ मोकउ बेढी देहु बताई हो॥ *पृष्ठ - 657*

वह बोली, ''नामदेव! जितनी तूने मज़दूरी दी है, मैं तेरे से दुगुनी मज़दूरी दे दूंगी। मैं भी ऐसी ही झौंपड़ी बनवाना चाहती हूँ।'' उस समय आपने कहा -

री बाई बेढी देनु न जाई॥ *पृष्ठ - 657*

ऐसे नहीं आया करता बेढ़ी?

पड़ौसिन बोली, ''वह कहाँ रहता है?''

देखु बेढी रहिओ समाई॥ *पृष्ठ - 657*

नामदेव बोले, ''बीबी! तू जिधर भी देखती है, वही है।''

क्योंकि वह तो मानते थे। हम इस बात को सुनते हैं, मानते नहीं हैं। लाखों साल तक सुनते रहें पर मानेंगे नहीं क्योंकि मानने की अवस्था छठा साधन होता है। मानना छठा साधन है। जब तक पहला बहिरंग बाहरी साधन नहीं करता तब तक मानने की स्थिति नहीं आती। जब यह अवस्था आ जाती है तो महाराज जी कहते हैं -

मंनै की गति कही न जाइ। जे को कहै पिछै पछुताइ।
कागदि कलम न लिखणहारु। मंने का बहि करनि वीचारु।
ऐसा नामु निरंजनु होइ। जे को मंनि जाणै मनि कोइ॥ *पृष्ठ - 3*

जिन्होंने माना, उनके नाम लिये जाते हैं। आज तक उन्हें प्रणाम किये जाते हैं क्योंकि उन्होंने मान लिया।

सन्त महाराज अतर सिंघ जी मस्तुआणे वाला हजूर साहिब से वापिस आ रहे हैं। एक प्रेमी भी साथ आ रहा है। जब विन्ध्याचल पर्वत पार करने लगे। पैदल चले जा रहे हैं तो रास्ते में एक शेर खड़ा दिखाई दिया। वह प्रेमी तो देखते ही घबरा गया। उसका गला सूख गया। बोला नहीं जाता, कुछ कह नहीं पाता। भाग कर पास ही वृक्ष पर चढ़ने की कोशिश करता है, हाथ पैर फूल गये हैं, पेड़ पर चढ़ नहीं सकता बड़ी मुश्किल से टहनी पकड़ कर पेड़ पर चढ़ कर बैठ गया। महापुरुषों को कह न सका, ''महाराज! रूक जाओ। आगे शेर है।'' चुप चाप भय से कांपता हुआ देखे जा रहा है कि अब क्या होगा? महापुरुष आगे बढ़ते चले गये। शेर के पास पहुँच गये। शेर ने सूंघा, पूंछ हिलाई। उसके पश्चात एक छलांग लगाई और जंगल में भाग गया। आप निडर उसी प्रकार चले जा रहे हैं। वह प्रेमी पेड़ से उतरा, बहुत तेज़ भागकर महापुरुषों को आकर मिला। सांस फूला हुआ है और कहता है, ''महाराज! रास्ते में शेर खड़ा था आप तो बच गये।''

महापुरुष बोले, ''अरे भाई! कहाँ था शेर?''

कहने लगा, ''महाराज! वहाँ पर जब मैं उस पेड़ पर चढ़ा था। मेरे से तो बोला भी न जा सका। मेरा तो गला भी सूख गया। हाथ लगाकर देखो तो सही मेरा कलेजा कैसे धक-धक कर रहा है।

मेरी तो सांस भी फूली हुई है।''

महापुरुष मुस्कराये और कहने लगे, ''प्यारे! नज़रों का फर्क होता है। सोचने का फर्क होता है। कोई समय था जब हमें भी शेर नज़र आते थे, पर अब तो हम जिधर भी देखते हैं, उधर ही गुरू नानक देव जी के सिवाय कोई ओर दिखाई नहीं देता। एक ही दृष्टिगोचर आता है।'' आप कहने लगे –

री बाई बेढी देनु न जाई। देखु बेढी रहिओ समाई॥ *पृष्ठ - 657*

जिधर भी तू देखती है, उधर ही बेढ़ी ही बेढ़ी है। यह जो बेढ़ी है –

हमरै बेढी प्रान अधारा॥ *पृष्ठ - 657*

नामदेव कहते हैं, ''वह तो मेरे प्राणों का आधार है। मैं तो उसी के कारण जीवित हूँ, अन्यथा मर जाता। मेरी जिन्दगी का आधार वही बेढ़ी है जो सभी जगह परिपूर्ण है और तू मज़दूरी की बात करती है। मज़दूरी दे दे। वह किसी की सिफारिश से नहीं आता। जो मज़दूरी दे देता है उसके पास ही आता है।''

वह बोली, ''फिर मुझे बता, वह क्या मज़दूरी मांगता है?''

उस समय आप इस प्रकार फ़रमान करते हैं –

धारना - मंगदा है बेढी प्रीत मज़दूरी - 2, 2
प्रीत मज़दूरी, बेढी प्रीत मज़दूरी - 2, 2
मंगदा है बेढी, ... -2

कहते हैं –

री बाई बेढी देनु न जाई। देखु बेढी रहिओ समाई॥ *पृष्ठ - 657*

वह तो सभी जगह समाया हुआ है –

हमरै बेढी प्रान अधारा॥ *पृष्ठ - 657*

मेरे तो प्राणों का आधार है। जब तू प्राणों का आधार बना लेगी, तेरे पास भी आ जायेगा क्योंकि –

बेढी प्रीति मजूरी मांगै जउ कोऊ छानि छवावै हो॥ *पृष्ठ - 657*

फिर एक झौंपड़ी तो क्या, कुछ भी करवा लेना। वह तो आगे-आगे भागा फिरता है।

कबीर के साथ द्वैष किया जा रहा है। विरोधियों ने अनेक तरीकों से इन्हें बदनाम करने का यत्न किया। सभाएं की गईं क्योंकि –

भगता तै सैसारीआ जोड़ु कदे न आइआ॥ *पृष्ठ-145*

सन्तों का दृष्टिकोण और हुआ करता है, सांसारिक लोगों का नज़रिया और हुआ करता है। दोनों में कभी मेल नहीं हुआ करता। बड़े-बड़े ब्राह्मणों, विद्वानों ने सभा बुलाई और कहने लगे, ''देखो! एक अनपढ़ जुलाहा, न तो तर्कों द्वारा और न ही शास्त्रार्थ द्वारा हमसे हार नहीं मानता। किसी तरह से भी वह वश में नहीं आ रहा। गोरखनाथ जैसे जोगी भी इसके सामने हार मान गये, बड़े-बड़े विद्वान तर्कशील लोग आए, नास्तिक भी आए, वामपंथी भी आये, परन्तु इसने सभी निरुत्तर कर

दिये, बल्कि उलटा इसकी जय जयकार हो रही है। क्यों न कोई ऐसा तरीका सोचें, जिससे सारे भारत वर्ष में एक ही बार में इसको अपमानित करवाया जाये। फिर लोग अपने आप ही इसके पास आने से हट जायेंगे। इस प्रकार योजनाएं बनाते हैं और अन्त में एक योजना बनाते हैं कि कबीर साहिब के नाम सभी विद्वानों को निमन्त्रण (Invitaion) भेज दो।'' बड़े-बड़े साधुओं को, उनकी मण्डली सहित आमंत्रित करो, बड़े-बड़े विद्वानों, बड़े-बड़े योगियों, मठों के महन्तों, वैरागियों को अनेक सम्प्रदायों के प्रमुखों को पत्र लिखो कि एक बहुत बड़ा यज्ञ करना है और इस यज्ञ में अनेक प्रकार के सिरोपे वस्त्र आदि दान किये जाने हैं, दक्षिणा के रूप में मोहरें भी दान दी जायेंगी। इसलिये यज्ञ में धूम-धाम के साथ पहुँचो।'' भण्डारा भी बहुत बड़ा किया जायेगा। हजारों की संख्या में निमन्त्रण पत्र बनाकर, इस जुण्डली ने बंटवा दिये। दूर दराज़ तक जहाँ भी किसी साधु ने सुना, किसी विद्वान ने सुना, सभी को बहुत खुशी हुई क्योंकि उनका नाम तो बहुत ऊँचा था कि कबीर साहिब ने हमें याद किया है। अतः उस यज्ञ में शामिल होने के लिये सभी आते हैं। तिथि निश्चित कर दी गई। जब निश्चित दिन आया तो थोड़े से लोग कबीर साहिब के पास गये, उन्हें नमस्कार की।

कबीर साहिब ने पूछा, ''कैसे आना हुआ?''

वे बोले, ''भगत जी! आज तो आपके यहाँ बहुत बड़ा भण्डारा है।''

साथ ही चिट्ठी दिखाई कि यह आपके द्वारा लिखी गई चिट्ठी है। उस समय आप समझ गये। एक तरफ ये लोग हैं और एक तरफ अकाल पुरुष हैं, जैसे उसकी मर्ज़ी। सन्त न तो निन्दा से डरते हैं, न ही अपनी प्रशंसा चाहते हैं, यही सन्तों की विशेषता होती है। निन्दा करने वाले, निन्दा किये जायें, वे तो उन्हें भी प्यार करते हैं क्योंकि निन्दक एक बहुत बड़ा काम कर रहा होता है जो अन्य किसी से नहीं हो सकता। सहज स्वभाव राह चलते व्यक्ति से कुछ बातें ऐसी हो जाती हैं जिन्हें पाप कहा जाता है। निन्दा करने वाले उसकी मुँह से सफाई करते हैं और सन्तों को पता होता है प्रतीति से पता चल जाता है कि वह निन्दक है पर कहते हैं -

निंदा करै सु हमरा मीतु॥ *पृष्ठ - 339*

यह तो मेरा मित्र है। जो पुण्य होते हैं वे भी उन्हें बन्धन रूप हुआ करते हैं क्योंकि -

पुंन दानु जो बीजदे सभ धरमराइ कै जाई।। *पृष्ठ - 1414*

उनसे खलासी पाने (मुक्ति पाने) के लिये जो प्रशंसा करते हैं, स्तुति करते हैं, सेवा करते हैं, वे पुण्य ले जाते हैं और निन्दक जो होते हैं, उनके हिस्से में पाप आ जाया करते हैं। अतः कबीर गम्भीर हो गये। कुछ भी न बोले। देख लिया कि पता नहीं कितने निमन्त्रण पत्र भेजे होंगे? खैर! परमेश्वर की याद में कहीं बैठते हैं, अपने आप ही वह देखेगा जो कुछ भी होगा, निन्दा होगी तो भी अच्छी बात है, नहीं होगी तो भी अच्छी बात है। अतः आप घर से बाहर कहीं दूर एकान्त स्थान में जाकर बैठ गये और स्वरूप का ध्यान रखकर परमेश्वर के चरणों में ध्यान लगाकर बैठ गये।

इधर साधु सन्त आने शुरू हो गये। बिठाने वाले भी पहुँच गये। जगह-जगह तम्बू लगे हुए हैं, उन्हें उचित स्थानों पर बिठाये जा रहे हैं। सारा प्रबन्ध एक ही सैकिण्ड में हो गया। सभी को यथा शक्ति स्थान दिया जा रहा है। इसके पश्चात प्रार्थना की गई कि भोजन करने के लिये तैयार हो जाइये

क्योंकि काफी सन्त महात्मा पहुँच चुके हैं। उस समय ऐसा विचित्र भण्डारा हुआ, लंगर चला, वस्त्र बांटे गये, दक्षिणा दी गई, अशर्फियां बांटी गईं और सभी वाह! वाह! करते हुए चले जाते हैं। यदि द्वैष की आग में कोई जल रहे थे तो केवल वही, जिन्होंने निमन्त्रण पत्र भेजे थे, जिन्होंने यह षडयन्त्र रचा था। सभी हैरान हैं, परन्तु आंखों से अज्ञान की पट्टियां नहीं उतर रहीं कि यह सभी कुछ भगवान स्वंय कर रहे हैं बल्कि वे कह रहे हैं कि यह तो करामाती हैं। योग माया के बल पर सारा भण्डारा कर रहा है। चारों ओर कबीर साहिब की धन्य-धन्य हो रही है। कबीर साहिब जहाँ बैठे थे, उनके पास से कोई जत्था, यह कहता जा रहा है कि कबीर साहिब धन्य हैं! कितने लोग आये, सन्त महात्मा साधु आए, कोई भी नाराज़ नहीं जा रहा बल्कि सभी की यथा योग्य सेवा की गई।

कबीर साहिब का ध्यान टूटा और उन्हें पूछते हैं, ''भाई कबीर साहिब ने ऐसा कौन सा काम कर दिया?''

वे बोले, ''तुझे नहीं पता? बहुत बड़ा यज्ञ हो रहा है। जा, तू भी भोजन कर आ।''

अत: जब आप वहाँ जाते हैं, उस समय तक प्रभु ने सारा काम निपटा कर, सारा खेल संकोच दिया। इस यज्ञ की समाप्ति के पश्चात, लोग कबीर साहिब के पास आते हैं और धन्यवाद करते हुए कहते हैं, ''महाराज! इतना महान यज्ञ तो आज तक किसी राजा महाराजा ने भी नहीं किया।'' आप फ़रमान करते हैं -

कबीर ना हम कीआ न करहिगे ना करि सकै सरीरु।
किआ जानउ किछु हरि कीआ भइओ कबीरु कबीरु॥ *पृष्ठ - 1367*

नामदेव कहते हैं, ''अरी बीबी! एक झौंपड़ी की क्या बात है? उसके साथ प्यार करके तो देख।''

बीबी कहती है, ''नामदेव! तेरा क्या ख्याल है कि हम परमेश्वर को प्यार नहीं करते? तेरा कोई और प्यार है? जरा हमें भी बता दे, तू कैसा प्यार करता है? इस दुनियां में कोई ऐसा हो जो परमेश्वर को प्यार नहीं करता या फिर मुझे यह बता, तेरा प्यार कैसा है?''

उस समय नामदेव जी इस प्रकार के भाव प्रकट करते हैं -

धारना - कर लै प्रीत, जैसे चंद ते चकोर दी - 2, 2
चंद ते चकोर दी - 4, 2
कर लै प्रीत, जैसे ..... -2

चंद चकोर परीत है, लाइ तार निहाले।
चकवी सूरज हेत है, मिलि होनि सुखाले।
नेहु कवल जल जाणीऐ, खिड़ि मुह वेखाले।
मोर बबीहे बोलदे, वेखि बदल काले।
नारि भतार पिआरु है, माँ पुत सम्हाले।
पीर मुरीदा पिरहड़ी ओहु निबहै नाले॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/4*

यदि प्यार करना है तो ऐसा कर जैसे -

चंद चकोर परीत है लाइ तार निहाले॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/4*

चान्द ने कभी भी उससे बात नहीं की, कभी भी चकोर को बुलाया तक नहीं, कभी मिला नहीं, परन्तु वह सारी जिन्दगी एक टक चान्द की ओर देखता रहता है –

चकवी सूरज हेत है मिलि होनि सुखाले॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/4*

रात को इस जोड़े का बिछौड़ा हो जाता है। जब दिन निकल आता है। चकवी सारा दिन सूरज की ओर देखती रहती है –

नेहु कवल जल जाणीऐ खिड़ि मुह वेखाले॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/4*

कमल के फूल को पानी अपनी लहरों से पछाड़ता है, उसे डबोने की कोशिश करता है, परन्तु कमल की नाल उतनी ही ऊँची हो जाती है, जितना पानी ऊपर चढ़ता है और इसका मुख खिला ही रहता है और खिल के दिखाता है। उसके चित्त में कभी नाराज़गी पैदा नहीं होती–

मोर बबीहे बोलदे वेखि बदल काले॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/4*

बबीहा (पपीहा) बादलों को देखता है, याद करता है, पिऊ–पिऊ की दिन रात एक ही रट लगानी शुरू कर देता है, मोर बादलों को देखकर प्रफुल्लित हो उठते हैं –

नारि भतार पिआरु है माँ पुत सम्हाले।
पीर मुरीदा पिरहड़ी ओहु निबहै नाले॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/4*

नामदेव कहते हैं, ''बीबा! जैसा तूने कहा कि मैं वह (परमात्मा) को प्यार करती है और मैं कोई अधिक और न्यारा, प्यार करता हूँ, हम नहीं करते? क्योंकि वह तो पूर्ण प्यार मांगता है, आधा अधूरा प्यार नहीं मांगता –''

धारना - लोग कुटंब सबहूं ते तोड़े,
तउ आपन बेढी आवै हो - 2, 2
आपन बेढी आवै हो - 4, 2
लोग कुटंब सबहूं ते तोड़ै, ... -2

बेढी प्रीति मजूरी मांगै जउ कोऊ छानि छवावै हो॥ *पृष्ठ - 657*

एक 'छान' (छप्परी) की तो बात ही क्या? वह तो फिर सारे काम करता है। उसने तो भक्तों के पशु भी चराये हैं, बैल भी हाँकें हैं, खेतों में पानी भी दिया है और अनेक काम करता है परन्तु बात यह है कि –

लोग कुटंब सभहु ते तोरै .....॥ *पृष्ठ - 657*

बिखरा हुआ खण्डित प्यार मत कर। इसी प्यार में घर वालों को भी प्यार किये जाता है। उसे तू अपना कर्तव्य समझ। वह प्यार शुद्ध नहीं होता। प्यार तो केवल परमेश्वर के साथ होता है। बाकी जितने प्यार हैं, वे सभी झूठे हैं, फंसाने वाले हैं। ये सभी तोड़ने पड़ते हैं। इस तरह से –

ऐसो बेढी बरनि न साकउ सभ अंतर सभ ठांई हो।
गूंगै महा अंम्रित रसु चाखिआ पूछे कहनु न जाई हो।
बेढी के गुण सुनि री बाई जलधि बांधि ध्रू थापिओ हो।
नामे के सुआमी सीअ बहोरी लंक भभीखण आपिओ हो॥ *पृष्ठ - 657*

इस प्रकार का प्यार जिसने किया, वहाँ पर प्रभु स्वंय हाज़िर हो जाया करता है। गुरू तथा परमेश्वर में कोई भेद नहीं हुआ करता। यह तो कलयुग के सभी युगों से अधिक अच्छे भाग्य हैं,

साध संगत जी! इस बात को निश्चय पूर्वक जान लो। इसमें कोई मैं जबरदस्ती नहीं करता। इस युग में गुरू परमेश्वर स्वंय शरीर धारण करके, गुरू नानक देव जी के रूप में प्रकट होकर और आज गुरू ग्रन्थ साहिब के रूप में है। यदि दिल बेईमान हो तो कुछ नहीं मिलता। यदि बात समझ में आ जाये तो फिर सभी कुछ मिला मिलाया है क्योंकि गुरू तथा गोबिन्द में कोई अन्तर नहीं हुआ करता –

समुंदु विरोलि सरीरु हम देखिआ इक वसतु अनूप दिखाई।
गुर गोविंदु गुोविंदु गुरू है नानक भेदु न भाई॥ *पृष्ठ - 442*

गुरू छठे पातशाह के स्वरूप की एक प्रीत कहानी हमारी आंखे खोलने के लिये बहुत है। एक गाँव जिसका नाम बड़ा घर था। वहाँ पर एक गुरसिख, जिसने चौथे पातशाह से गुरू उपदेश लिया था, गुरू पाँचवे पातशाह के समय भी वह रहा और गुरू छठे पातशाह के भी उसने दर्शन किये। उनका नाम आकल था। उनकी एक लड़की थी। जब लड़की सात साल की हुई, उन दिनों छोटी उम्र में ही लड़कियों की शादी कर दी जाती थी, उसका विवाह कर दिया था। 16 साल के बाद तो भाईचारा उस घर का पानी पीना भी छोड़ दिया करता था। जिस घर में 16 साल की लड़की बैठी होती, लोग उसे बुरा मानते थे।

अत: आपने लागी बुलाये और कहने लगे, ''पण्डित जी! कोई सुन्दर सा वर देखना। नैन नक्श सुन्दर हों क्योंकि लड़की के नैन नक्श भी काफी सुन्दर हैं। बिल्कुल इस जैसा हो। खर्च की चिन्ता मत करना, चाहे जितना मर्ज़ी हो जाये यह खर्च पहले ही ले लो और जाओ, गाँव-गाँव में घूम कर सुन्दर सा वर ढूंढ कर लाओ।''

उन दिनों रिश्ते भी ऐसे ही लोग किया करते थे। ज्यादातर इन लोगों की नज़रों में बहुत से रिश्ते पहले ही रहा करते थे। पण्डित जी घूमते हुए एक गाँव में चले गये। उस गाँव का नाम 'तुकलाणी' था। वहाँ एक परिवार देखा। उसमें एक लड़का बहुत ही सुन्दर, होनहार था। सारा कुछ पूछ कर, फिर पण्डित जी ने कहा कि मैं एक रिश्ता करने आया हूँ। जब रिश्ते की बात सुनी तो उस समय पण्डित जी का खूब आदर मान हुआ। खाने-पीने के लिये बहुत बढ़िया भोजन बनाया, रिहायश का प्रबन्ध बहुत अच्छा किया गया, खूब सेवा हुई तथा बहुत से आपस में वचन किये, फिर उसने उनका कारोबार देखा, वह भी काफी चलता था। भाईचारे में भी काफी मान सम्मान है। काफी मशहूर घर है और वहीं पर शगन देकर आ गये। वापिस आकर, भाई आकल जी को कहते हैं, ''भाई आकल जी! वधाई हो। ऐसा चांद जैसा लड़का देखा है कि उसे देखते ही भूख भी मिट जाती है। खाली सुन्दरता ही नहीं बल्कि घर बार भी बहुत अच्छा है। कारोबार भी बहुत बढ़िया है। लड़का होनहार लगता है, ऐसा लगता है कि बड़ा होकर कोई बहुत ही कारोबारी आदमी बनेगा।''

होणहार बिरवान के होत चीकने चीकने पात॥

तुकलाणी गाँव में रिश्ता तय कर आया हूँ। परन्तु आकल जी के चेहरे पर यह सुनकर कोई खुशी प्रकट न हुई, बल्कि थोड़ी सी चिन्ता के चिन्ह प्रकट होने लगे।

कहने लगे, ''पण्डित जी! ये तो सभी बातें ठीक हैं। एक बात बताओ, उस तुकलाणी गाँव में तो एक भी गुरसिख नहीं है। वह सारा ही गाँव सरवरियों का है और हमारे घर में सिक्खी है। लड़की को गुरू से प्यार है। हर 6 महीने बाद हम दसवन्ध लेकर गुरू के चरणों में भेंट करते हैं।

उस समय लड़की के लिये तो बहुत मुश्किल हो जायेगी। उन्होंने उसे कहना है कि मुकाम को सिर झुका। इसी तरह उन्होंने भराई का जूठा जो रोट होता है, वह खिलाना है और मेरी लड़की ने वह खाना नहीं। इसका तो गुरू के साथ प्यार है और दूसरा यह है कि जब मनमुखों के बीच जायेगी, उस समय इसके मन पर जरूर मैल पड़ेगी क्योंकि वह तो सरवरियों का घर है। उस घर में नाम की धुन नहीं है। कोई भी जपुजी साहिब का पाठ नहीं करता और वहाँ की मैल बच्ची को लग जायेगी और लड़की का जन्म तो खराब होगा ही और साथ ही साथ आगे जो सन्तान होगी, उसका जन्म भी खराब हो जायेगा। यह तो पुण्य के स्थान पर हम पाप कर बैठे।'' अब आप कर आये हो कोई बात नहीं पर यह याद रखना कि –

आसा इसट उपासना खाण पीण पहिराण।
तुलसी खट लछण मिले मित्रता पहिचाण।

उपर्युकत 6 बातें जहाँ न मिलती हों, वहाँ पर सम्बन्ध बहुत महंगे पड़ते हैं, सदा एक जैसे नहीं रहा करते। मनमुखों की तो संगत करना ही वर्जित है –

धारना - कालख लग जांदी है,
मनमुख दी संगत करके - 2, 2
मनमुख दी संगत करके - 2, 2
कालख लग जांदी है, ... -2

कबीर साकत संगु न कीजीऐ दुरहि जाईऐ भागि।
बासनु कारो परसीऐ तउ कछु लागै दागु॥ *पृष्ठ-1371*

आकल जी ने कहा, ''अच्छा, जो हो गया, सो हो गया पर हमें विवर्जित है।'' सफेद कपड़े पहने हुए हों, काले बर्तन को उठाकर ले जा रहे हो, कपड़ा हवा के झोंके से भी उड़कर यदि बर्तन को लग जाता है तो भी काला दाग लग ही जाता है।

आकल जी कहते हैं, ''पण्डित जी! यह तो बड़ी दुविधा हो गई। यह तो पूछ लेना था कि घर में गुरसिखी है या नहीं। जिस घर में गुरू की सिखी हो, पैसा चाहे न भी हो, उसके पास सभी कुछ हो जाता है। यदि सिखी नहीं है, गुरू का प्यार नहीं है, सभी कुछ होते हुए भी उसके पास कुछ नहीं है क्योंकि ऐसा फ़रमान है –

धारना - दिसदा उजाड़ है, प्रीतम दे पिआरे बाझों - 2, 2
प्रीतम दे पिआरे बाझों - 2, 2
दिसदा उजाड़ जी, ... -2

कबीर जह जह हउ फिरिओ कउतक ठाओ ठाइ।
इक राम सनेही बाहरा ऊजरु मेरै भांइ॥ *पृष्ठ - 1365*

मेला लगा हुआ है। कबीर साहिब भी घूम रहे हैं। वापिस आकर सभी अपनी-अपनी बातें सुनाते हैं, कहते हैं, मैंने यह देखा, मैंने वह देखा आदि-आदि।

एक ने कबीर जी से पूछा, ''भगत जी! आपने क्या देखा?''

कबीर, ''हम तो उजाड़ में घूम कर आये हैं।''

उस व्यक्ति ने कहा, ''वहाँ पर बहुत भारी मेला था। निकलने के लिये रास्ता भी नहीं था। लोग छाती

से छाती लगाकर चल रहे थे।''

कबीर, ''प्यारे जी! जहाँ पर कोई भी परमेश्वर का प्यारा न हो, वे गहरी बस्तियां भी उजाड़ हुआ करती हैं। जिस घर में परमेश्वर का प्यारा न हो, उन घरों में रहने वाले भूत-प्रेत हुआ करते हैं-''

कबीर जा घर साध न सेवीअहि हरि की सेवा नाहि।
ते घर मरहट सारखे भूत बसहि तिन माहि।। *पृष्ठ - 1374*

इस प्रकार जहाँ परमेश्वर का प्यारा नहीं रहता वह तो उजाड़ स्थान हुआ करता है। चाहे जितना मर्ज़ी बड़ा काम धन्धा व्यापार हो, कितना बड़ा कारोबार चलता हो, यह परमात्मा का प्यार नहीं तो वह स्थान उजाड़ है -

आगि लगउ तिह धउलहर जिह नाही हरि को नाउ॥ *पृष्ठ - 1365*

कहते हैं उन बड़ी-बड़ी इमारतों को आग लग जाए, जहाँ पर परमेश्वर का नाम न लिया जाता हो, क्या हैं वे इमारतें? ये तो भूत प्रेतों का निवास स्थान है। समय बीतता चला गया। लड़की जवान होती चली गई। लड़की को बताया गया, ''बेटी! थोड़े दिनों के अन्दर तेरा विवाह हो जाना है।'' इतना कहने के पश्चात पिता के नेत्रों से आंसू बह चले। लड़की ने महसूस किया और बोली, ''पिता जी! क्या बात है? आप इतने चिन्तित क्यों हैं? क्या कोई गलत काम हो गया है?''

पिता बोले, ''हाँ बेटी! मैं मुख से कह नहीं सकता।''

लड़की बोली, ''क्या हुआ पिता जी? आप मुझे बताइये तो सही।''

पिता कहता है, ''तेरे हृदय में गुरू का प्यार है। गुरू प्यार के बिना हम रह नहीं सकते, परन्तु जहाँ तेरा रिश्ता हुआ है, जिस घर में तेरी डोली जायेगी, वह गुरू घर नहीं है। वह तो गुरू निन्दकों का घर है, विरोधियों का घर है, सरवर पीर को मानने वालों का घर है। उन्होंने मुकाम के आगे सिर झुकवाना है, दीपक जलाने हैं, तुझे भराई रोटी का जूठा खिलाना है। बेटा! जब मैं इन सारी बातों पर ध्यान करता हूँ तो मेरा दिल कांपने लगता है।''

लड़की पर भी इन बातों का बहुत गहरा असर हुआ। विवाह का दिन निश्चित हो गया। बारात आती है और लड़की के हृदय से हर समय इस प्रकार की अरदास निकलती है -

धारना - निभांई दातिआ, सिखी सिदक भरोसा - 2, 2
सिदक भरोसा सिखी सिदक भरोसा - 2, 2
निभांई दातिआ, ... -2

सगल दुआर कउ छाडि कै गहिओ तुहारो दुआर।
बांहि गहे की लाज अस गोबिंद दास तुहार॥ *रहिरास साहिब*

किसही कोई कोई मंजु निमाणी इकु तू।
किउ न मरीजै रोइ जा लगु चिति न आवही॥ *पृष्ठ - 791*

बार-बार प्रार्थना करती है, ''हे प्रभु! मैं कैसे तेरे से टूट जाऊंगी। जो शीश तेरे चरणों में एक बार लग गया, उसे मैं मड़ियों मसानों में जाकर कैसे झुकाऊं? हे पातशाह! क्या होगा? मैं बहुत गरीबनी हूँ। उस घर में, उस गाँव में अकेली होऊंगी, मेरे सिक्खी सिदक का क्या हाल होगा? हे प्रभु! आप तो घट-घट की जानने वाले हो। कृपा करो।'' शादी हो जाती है। इस तरह तीन दिन बारात रूकी और उनकी खूब सेवा हुई।

विदाई के समय पिता ने कहा, ''बेटा! यह तेरा शीश गुरू चरणों में लगा कर पवित्र हो चुका है। देखना, कहीं यह किसी मुकाम के आगे न झुक जाये? प्रार्थना करना, गुरू तेरी सहायता जरूर करेगा। तुरक का जूठा किया रोट मत खाना।''

क्योंकि यही तरीका हुआ करता था। जब हम छोटे होते थे तो मैंने भी ऐसा देखा है। हमारे गाँव धमोट में एक लालां वाले पीर का मुकाम बना हुआ है, वहाँ पर लोग जाते थे, क्योंकि अज्ञानता थी। सिक्खी का प्रचार कभी हो जाता, कभी मद्धम पड़ जाता, कभी खत्म हो जाता। वह तभी होता है, जब सिक्ख का ध्यान किसी दूसरी ओर चला जाता है। नेता लोग कुर्सियों के चक्कर में पड़े हुए सिक्खी का प्रचार नहीं करते। सिक्खी का प्रचार तो स्वाभाविक ही महाराज जी ने जिन्हें सौंपा है, वही कर रहे हैं। वे भी निष्काम भाव से करते हैं।

गाँवों में सिक्खी नहीं पहुँचती, न ही शहरों में सिक्खी है। शहरों में लोग गुरूद्वारों में तो आते हैं, कीर्तन भी सुनते हैं, लेकिन कोई बात नाम जपने की पूछो, तो कहते हैं, जी पता नहीं और ही तरह की उनकी बातें होती हैं, कटाक्ष पूर्ण बातें होती हैं, ऊपर-ऊपर की खोखली बातें, असली प्रीत प्यार की कोई बात नहीं हुआ करती। अत: गाँव के लोग जाया करते थे क्योंकि पीर को मानते थे। जब मैं छोटा सा था, एक बार मैंने भी देखा कि बहुत सी पाथियां लगाकर उसके अन्दर एक रोट पकाया जा रहा है। लगभग 3-4 अंगुल मोटा रोट होगा। जब वह पक गया तो हमारे गाँव का जो भराई था, वह ढोल बजाता जा रहा था। उस रोट को निकाल कर, लोगों ने उसे एक परात में रख लिया, फिर उसने उसके चारों ओर परिक्रमा की, उसे उठाया, फिर मुँह से एक तरफ से छोटा सा टुकड़ा खा लिया। कहते हैं, पीर साहिब को भोग लग गया, फिर वे सभी को बांटते थे। हमारे घर में सिक्खी थी। हमें पहले से ही पता था कि किसी का प्रसाद नहीं लेना। साध संगत जी! उन दिनों यह बहुत बड़ी समस्या थी।

अत: लड़की हर समय यही अरदास करती है। तीन दिन बारात रूकने के पश्चात, अगले दिन सुबह-सुबह बारात को विदा किया क्योंकि तुकलाणी काफी दूर था। तुकलाणी जाने के लिये रास्ते में डरौली गाँव पड़ता था। वहाँ पर गुरू महाराज किसी रिश्तेदार के यहाँ आये थे। इस लड़की की डोली जा रही थी। अमृत बेला है, थोड़ा-थोड़ा अभी सूर्य का प्रकाश फैल रहा है। बाकी बारात तो काफी आगे-आगे जा रही है और भाई साधु जिसके साथ इसकी शादी हुई थी, वह घोड़ी पर चढ़ा हुआ डोली के आगे-आगे चल रहा है। कहार (डोली उठाने वाले) बड़े घर, अर्थात उसके गाँव के ही थे। जब डोली डरोली गाँव के पास पहुँची, तो वहाँ पर आसा जी की वार के कीर्तन हो रहे थे। उस कीर्तन की आवाज़, उस लड़की के कानों में पड़ी। वह समझ गई कि मेरे सतगुरू पातशाह यहीं निवास किये हुए हैं और उनकी हज़ूरी में कीर्तनकारों की कीर्तन करने की आवाज़ें आ रही हैं क्योंकि अधिकतर कीर्तन में जाया करती थी, अत: आवाज़ पहचानने में देर न लगी।

उस समय उसने कहारों से कहा, ''देखो भाई! अब मैंने सरवरियों के घर चले जाना है। पता नहीं फिर कब गुरू के दर्शन हों, यह तो वाहिगुरू ही जानता है और आज मैंने दर्शन करके ही जाना है। आप मेरी डोली को वहाँ पर ले चलो, जहाँ पर गुरू महाराज जी के हज़ूर दीवान सज रहे हैं।'' अपना कंगन उतारा और भेंट रूप में उन कहारों को दे दिया। उसी समय कहारों ने डोली का

रूख डरौली की ओर कर दिया। गलियों में से निकलते हुए, जहाँ गुरू महाराज जी का दीवान सजा हुआ था, एक खुले स्थान पर वहाँ पहुँच जाते हैं। वहाँ पर जाकर डोली नीचे रख दी। कुछ थोड़ा-थोड़ा उजाला सा हो चुका था। महाराज जी के ध्यान में बैठी। उस लड़की ने विवाह वाले कपड़े पहने हुए हैं। उस पालकी में से वह लड़की बाहर निकलती है और रोते हुए नमस्कार करती है तथा यथा स्थान देखकर बैठ जाती है। उसके पश्चात आसा जी की वार का कीर्तन समाप्त हुआ। महाराज जी की पहली दृष्टि उस लड़की पर पड़ी। जब लड़की ने देखा कि महाराज जी मेरी ओर देख रहे हैं, उसी समय आंसुओं की धारा बह चली। महाराज जी ने पास बुला लिया।

महाराज कहते हैं, ''बेटा! तूने शगनों वाले वस्त्र पहने हुए हैं जिससे मालूम होता है कि तुम डोली से उतरी हो। सामने पालकी रखी है और तुम ससुराल जा रही हो फिर इसमें चिन्ता की क्या बात है?''

कहने लगी, ''पातशाह! आप अर्न्तयामी हो। जो कुछ भी हो रहा है, आप जानते ही हो। आप की नज़रों से कोई भी चीज़ ओझल नहीं है, पातशाह! मेरा रिश्ता मनमुखों के, नास्तिकों के घर हो गया है। मेरी सिक्खी कैसे निभेगी? आप कृपा करो।''

महाराज जी ने कहा, ''बेटा! तेरे भाग्य के लेख ही ऐसे लिखे हुए हैं। तू तो दरगाह से ऐसे ही लेख लिखवा कर लाई है -''

जैसी कलम वुड़ी है मसतकि तैसी जीअड़े पासि॥ ***पृष्ठ - 74***

उस लड़की ने उसी समय महाराज जी के चरण पकड़ लिये और कहने लगी, ''पातशाह! वहाँ पर लिखने वाला कौन है? और यहाँ पर लिखने वाला कौन है? वहाँ भी आप ही हो और यहाँ भी आप ही लिखते हो। मैं तो आजकल यही सुनती आई हूँ कि जब सत्संग में श्रद्धा पूर्वक आकर शीश झुकाओ तो जो मन्द लेख, दुख देने वाले होते हैं, वे सभी मिट जाया करते हैं। सतगुरू समरथ हैं, वे ऐसे मन्द लेख मिटा देते हैं।'' इस तरह से प्रार्थना करती है -

धारना - सतिगर जी मेटदे, लिखे जो लेख हरी ने - 2, 2
लिखे जो लेख हरी ने - 2, 2
सतिगुर जी मेटदे, ...-2

कहने लगी, ''पातशाह! आप का तो फ़रमान है कि -

मेरी बांधी भगतु छुडावै बांधै भगतु न छूटै मोहि।
एक समै मोकउ गहि बांधै तउ फुनि मोपै जबाबु न होइ॥ ***पृष्ठ - 1252***

आप तो समरथ गुरू हैं। आपने तो अपने सन्तों को यह ताकत प्रदान की हुई है कि वे मस्तक पर लिखे लेख मिटा दिया करते हैं। आप कृपा कर दो यदि वहाँ पर गलत लिखे गये हैं तो यहाँ पर ठीक, सीधे लिख दो।''

अपुसट बात ते भई सीधरी दूत दुसट सजनई॥ ***पृष्ठ - 402***

जब गुरू की कृपा हो जाये तो उलटी बातें भी सीधी हो जाया करती हैं। बेनती सुनने के पश्चात महाराज जी कुछ गम्भीर हो गये और फ़रमान करते हैं -

श्री मुख ते अंम्रित सम कहयो।

तेरे लेख इसी बिधि लहयो॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3127*

बेटा! तेरा लेख ही इस तरह का था -

चलि आई सति संगति शरनी॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3127*

अब तू संगत की शरण में आ गई। संगत की शरण में जो भी आता है, उसके मन्द लेख मिटने शुरू हो जाया करते हैं -

लिखहिं लेख अबि जिउं शुभ करनी॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3127*

अब तेरे मन्द लेख मिट गये और शुभ हो गये -

सिखी दान दीनि हम तोही॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3127*

हमने तुझे सिक्खी का दान दे दिया -

अधिक सिख सुत तेरो होही॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3127*

तेरे घर में बहुत अधिक सिक्खी फैलेगी -

पति भी सिख होइ है भले।
गुर सिखी के मारग चले॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3127*

जा, तेरा पति भी सिक्ख होगा और गुरसिखी के मार्ग पर चलेगा। इतनी देर में बारात वालों ने देखा कि पीछे पालकी तो आ नहीं रही। कहाँ चली गई? और भाई साधु भी चला आ रहा है। पीछे नहीं देखा। बारात वहीं रूक गई, आप घर पहुँच गये। उन्होंने पूछा, ''डोली कहाँ है?'' वह बोला, ''पीछे आ रही थी।''

घर वालों ने कहा, ''कहाँ है, दिखा तो सही?''

थोड़ा सा दिन निकल आया। उस समय उन्होंने कहा, जा घोड़े पर चढ़कर देख, कहाँ हैं? घोड़ा भगाया पर आस-पास डोली कहीं भी दिखाई न दी। गाँव में पहुँचा तो वहाँ से पता चला कि इधर गुरू का दरबार सजा हुआ है। हरि यश हो रहा है और पालकी वहाँ पर रखी है। इधर गुरू महाराज जी बख्शीश दे रहे हैं और उधर वह भी पहुँच गया। देखते ही कुछ भी तर्क न कर सका और मन के अन्दर शीश झुकाने का उत्साह पैदा हो गया। घोड़े से उतरा तथा उसे एक तरफ बान्ध दिया और आप जाकर गुरू महाराज जी के हजूर में मस्तक नवां दिया। गुरू महाराज जी ने शीश पर हाथ रख दिया। हाथ रखने की देर थी, उसी समय जो मन्द लेख थे, वे सभी शुभ लेखों में बदल गये।

कहने लगे, ''बेटा! यह हमारी पुत्री है। गुरसिखी में पली हुई है। अब तू गुरसिखी धारण कर और आज के बाद उस मुकाम को सिर नहीं झुकाना और जूठा रोट नहीं खाना। तेरी हिन्दू जाति है। इतनी पवित्र जाति के होते हुए। फिर कौन से फोकट कर्मों में पड़ गया है तू।''

इसके बाद आप जी ने कृपा की। आर्शीवाद दिया, आशीष दी, तब वे डोली लेकर चले गये। जब घर पहुँचते हैं तो औरतें तेल, पानी लेकर खड़ी थीं, बहुत से शगुन पूरे किये और उन्होंने फिर पहला काम यही किया कि पालकी में से उतारते ही बीबी को पीर के मुकाम पर सिर नंवाने के लिये ले गईं जो घर में बनाया हुआ था। सारी संगत के मुखिया थे और जब वहाँ ले गये और

इसे कहा, ''बीबा! यहाँ पर शीश झुकाओ।'' भाई साधु जी को कहा, ''तुम भी शीश नवाओ।'' परन्तु उन्होंने जब शीश न झुकाया तो संगत ने कहा, ''तू शीश क्यों नहीं झुकाता? ब्याह करवा कर आया है, पीर नाराज़ हो जायेगा।''

भाई साधु बोला, ''मैंने जहाँ शीश झुकाना था, वहीं झुका आया हूँ। अब मैंने यहाँ पर शीश नहीं झुकाना।''

पीर को ठोकर मारी। लोग कहने लगे, ''अरे देखो बावरा हो गया। पीर नाराज़ हो जायेगा। सारा गाँव गर्क हो जायेगा। इसने यह क्या किया?'' बहुत समझाया।

इसने कहा, ''नहीं, नहीं मैं शीश नहीं झुकाऊँगा। मैंने जहाँ शीश झुकाना था, वहीं झुका आया। अब मेरा शीश और किसी स्थान पर नहीं झुकेगा। जहाँ झुकना था, झुक गया।''

घर में सिक्खी आ गई। महाराज जी ने वरदान दिया कि तुम्हारे घर में एक बहुत बन्दगी करने वाला पुत्र पैदा होगा। जाओ, तुम्हें गुरू नानक के घर से बख्शीशें मिलेंगी। घर वाले सभी नाराज़ हो रहे हैं। भाईचारा भी नाराज़ हो रहा है, परन्तु इन्होंने किसी की भी परवाह न की। समय बीतता चला गया। सिक्खी आ गई। बाणी का पाठ होना शुरू हो गया। 6 महीने के बाद किरत कमाई करके गुरू के दर्शन करने जाते हैं। यहाँ पर जाकर दसवन्ध भी देते हैं। गुरू का उपदेश लेकर वापिस आ जाते हैं। साधना करते हैं, बन्दगी करते हैं। अमृत बेला में उठ जाते हैं-

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरि नामु धिआवै।
उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंम्रित सरि नावै॥ *पृष्ठ - 305*

गुरसिखी का पूरा रंग चढ़ गया और गृह में अति सुन्दर बालक ने जन्म लिया। एक साल के बाद महाराज जी के पास ले जाते हैं। प्रार्थना करते हैं, ''पातशाह! यह आपका बालक एक साल का हो गया है। इसका नाम करण कीजिये।''

महाराज जी ने कहा, ''बड़ा रूपवन्त है यह तो। इसलिये इसका नाम रूप चन्द रख दो। यह एक महान गुरसिख बनेगा।''

धीरे-धीरे बच्चे की परवरिश होती है। बड़ा हो गया। बाणी के साथ जुड़ा रहा। गुरू के दर्शन करता है। सारे परिवार का गुरू के साथ प्यार पड़ गया। लड़की को तो पहले ही गुरू घर से प्यार था ही। अब तो सारे परिवार के सदस्यों को गुरू से प्यार हो गया। जेठ आषाढ़ का महीना है। लकड़ियां काटने के लिये जंगल में जाते हैं। पिता ने कहा 'कुन्ने' में जल भर ले चल। वहाँ आस पास कहीं पानी नहीं मिलता। मिस्सी रोटीयां हमने खानी हैं, फिर हमें प्यास लगेगी ही। अतः कुन्ना पानी से भर कर ले चल। कुन्ना पानी का भर कर साथ ले जाते हैं और जहाँ पर लकड़ियां काटते हैं, वहाँ पर एक वृक्ष के साथ लटका देते हैं और आप लकड़ियां काटने लग जाते हैं। जब 9 बजने लगे तो प्यास ने जोर मारा। भाई साधु ने अपने पुत्र रूप चन्द को कहा, ''रूपा! जाओ पानी लाओ प्यास बहुत लगी हुई है।'' जब रूपा वहाँ पानी के कुन्ने के पास पहुँचा और हाथ लगाया क्योंकि हर समय गुरू की हाज़िरी में रहते थे। यदि कोई काम भी करते हैं तो भी चित्त गुरू की ओर ही रहता था। ऐसा नहीं था कि काम करते समय गुरू को भूल जाते। काम करो। काम करने से गुरू

ने नहीं हटाया, पर जिस बात से वर्जित किया है, वह यह है कि काम के अन्दर खो मत जाओ, यदि काम में खो जाते हैं, तो फिर उस काम को धिक्कार है, जिसमें गुरू भूल जाये। गुरू को याद रखना है। गुरू को याद रखना कोई मुश्किल काम नहीं है। इस तरह से फ़रमान करते हैं –

धारना - चित्त हरी दे नाम नाल लाईए,
हत्थीं पैरी कंम करीए - 2, 2
पिआरे जी! हत्थीं पैरी कंम करीए - 2, 2
चित्त हरी दे नाम नाल लाईए, ... -2

नामा कहै तिलोचना मुख ते रामु संम्हालि।
हाथ पाउ करि कामु सभु चीतु निरंजन नालि॥ *पृष्ठ - 1375*

काम प्यार में रूकावट पैदा नहीं करते। प्यार वाला आदमी तो दुगुना काम करता है क्योंकि उसके अन्दर आनन्द होता है, मुर्दापन नहीं होता। उसके चेहरे पर खुशी झलकती है। चेहरा हसमुख रहता है। वैरागी के अन्दर झुंझलाहट होती है। जिसे वैराग लगता है, वैराग पहला स्तर होता है और प्रेम आखिरी स्तर होता है। प्रेमी का तो पैर ही नहीं टिकता रोम-रोम से प्यार की झरनाहटें निकलती हैं, बढ़ चढ़ कर काम करता है, भागा ही फिरता है। इस तरह वे काम कर रहे हैं। काम करते हुए उन्हें प्यास लगती है। पुत्र को कहा, ''बेटा! बहुत प्यास लगी है।'' जैसे उसने जल को हाथ लगाया तो महसूस किया कि इतना ठण्डा पानी गुरू तो पहले ही हृदय के अन्दर है। कहने लगा, ''यह पानी तो हमारे पीने लायक नहीं है। यह तो मेरे सतगुरू के पीने लायक है।'' ऐसे ही हाथ लगाकर वापिस लौट आया। साध संगत जी! प्यार की जो रीत होती है, वह बड़ी न्यारी हुआ करती है। भाई गुरदास जी कहते हैं यदि प्यार करना नहीं आता तो सीख ले। इन चीज़ों से सीख ले, इन तरह फ़रमान करते हैं –

धारना - सबक प्रेम दा, पढ़ लै पतंगे कोलों - 2, 2
पढ़ लै पतंगे कोलों - 4, 2
सबक प्रेम दा, ...-2

दरसनु देखि पतंग जिउ जोती जोति समावै।
सबद सुरति लिव मिरग जिउ अनहद लिव लावै।
साधसंगति विचि मीनु होइ गुरमति सुख पावै।
चरण कवल चिति भवरु होइ सुख रैणि विहावै।
गुर उपदेस न विसरै बाबीहा धिआवै।
पीर मुरीदां पिरहड़ी दुबिधा न सुखावै॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/14*

कहते हैं, यदि प्यार करने का उपदेश, पाठ सीखना है तो सीख ले कि –

दरसनु देखि पतंग जिउ जोती जोति समावै॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/14*

हम भी गुरू के दर्शन करते हैं, ज्योति में तो क्या समाना? हम तो उनका मामूली सा हुक्म भी नहीं मानते। कहते हैं पतंगा देर नहीं लगाता। एक दम लौ में समा जाता है। गुरू की ज्योति में समा जाता है, अपनी मनमति छोड़ देता है। कहते हैं यदि गुरू के साथ प्यार करना है तो अपने फुरने छोड़ दे और गुरू की मति में समा जा –

सबद सुरति लिव मिरग जिउ.....॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/14*

यदि बैठता है, शबद सुरत के साथ नाम जपने लग जाता है। फिर कहता है, मेरा मन नहीं टिकता। मन इधर उधर भागता है। तूने तो अभी सीखा ही नहीं। सीख ले मृग से। जब उसे एक बार घण्डेहेड़े की आवाज़ सुन गई, फिर सारे फुरने छोड़ देता है, फिर वह नहीं देखता कि उसके आगे शिकारी खड़ा होगा या कुत्ते खड़े होंगे, उसे पकड़ कर ले जायेंगे। वह तो सीधा ही बिना रोक टोक के उसी आवाज़ की ओर खिंचता चला जाता है। इसी तरह यदि तू बन्दगी करता है प्यारे! नाम जपता है। अपने प्यारे से प्यार करता है फिर हिरण की तरह कर। एक बार यदि उसके ध्यान में चला गया फिर और कोई फुरना नहीं आना चाहिये –

सबद सुरति लिव मिरग जिउ अनहद लिव लावै॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/14*

नाम की धुन में लिव लगा ले फिर उसमें से अपनी सुरत को मत निकाल –

साधसंगति विचि मीनु होइ.....॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/14*

संगत में बैठा है तो मछली की तरह बन जा। यदि बिछुड़ गया, मन उठ गया, इधर उधर झांक लिया –

जिउ मछुली बिनु पाणीऐ किउ जीवणु पावै॥ *पृष्ठ - 708*

तेरी मौत हो जायेगी। लीन हो जा संगत में। संगत को मत छोड़। महाराज जी के सुख आसन हो जायें, अरदास हो जाये, फिर जाना भाई। पहले ही मत चल पड़ो। घड़ियों में समय मत देखो। यदि प्यार करना है, तो सत्संग को मछली की तरह प्यार करो –

साधसंगति विचि मीनु होइ गुरमति सुख पावै।
चरण कमल चिति भवरु होइ .....॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/14*

और भंवरे की तरह चरणों का ध्यान कर –

गुर की मूरति मन महि धिआनु॥ *पृष्ठ - 864*

जैसे भवरा ध्यान धरता है, ऐसे ध्यान धर –

..... सुख रैणि विहावै॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/14*

सारी रात फूल की कली में बन्द रहता है –

गुर उपदेसु न विसरै बाबीहा धिआवै॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/14*

पपीहा बादलों को देख लेता है, तभी पिऊ–पिऊ करना शुरू कर देता है। कहते हैं, इस तरह ध्यान धर। गुरू के उपदेश को भूल मत। उसे भूला ही रहता है –

पीर मुरीदां पिरहड़ी दुबिधा न सुखावै॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/14*

जहाँ प्यार होता है वहाँ दुविधा नहीं हुआ करती, इसलिये कहते हैं यदि प्यार करना सीखना है तो मछली, पतंगा और पपीहा से सीख।

इतिहास में ऐसा उल्लेख मिलता है कि गुरदास नंगल की गढ़ी में बन्दा सिंह बहादुर को घेरा हुआ है। बड़ा भारी युद्ध हो रहा है। कई महीने बीत गये, घेरा डाले हुये हैं तो मुगलों ने छल कपट द्वारा, कुछ सिंहों में फूट डाल कर आपस में दो राय बना दीं। एक कहते हैं कि किला छोड़ दें। एक कहते हैं कि नहीं आखिरी दम तक लड़ेगें। दूसरे कहने लगे, ''यदि हम किला छोड़ भी देंगे

तो भी वैरी हमें नहीं छोड़ेंगे।'' पहले वाले बोले, ''उन्होंने वचन दिया है कि तुम्हें जागीरें दी जायेंगी, फौज में नौकरी दी जायेगी। इसी तरह से फौज भी रख सकोगे। वे हमारी सारी शर्तें मानने को तैयार हैं फिर तो हमें भी मान जाना चाहिये।'' दूसरे मत वाले बोले, ''ये शर्तें तो इन्होंने गुरू दशमेश पिता जी के साथ भी रखी थीं। किला छोड़ते ही हमला करके कितना बुरा हाल किया। माताएं पता नहीं कहाँ बिछुड़ गईं? साहिबजादे कहीं और जगह बिछुड़ गये? काफी सिंह शहीद हो गये, कुछ सिंह दरिया भी पार न कर सके। किसी का मुख किधर को तो किसी का किधर? गुरू महाराज जी ने तो साहित्य लगभग एक सौ दो लेखकों से बड़ी मेहनत करके तैयार करवाया था, वह सारा का सारा, इधर उधर तितर बितर हो गया।'' उस समय इतना विरोध बढ़ गया कि तू-तू मैं-मैं पर उतर आये। अन्त में तलवारें चल पड़ीं। एक दल उसमें से बाहर निकल आया जिसे 'तत्त खालसा' कहते थे। दूसरा दल वहीं रह गया। बड़ा भारी युद्ध हुआ। इसके पश्चात जब भूखे मरने की नौबत आ गई और चलने फिरने लायक भी न रहे, तो उस समय उन्होंने फैसला किया कि अपनी-अपनी श्री साहिबें निकाल कर, शहीदी प्राप्त करें, परन्तु वैरी के हाथों नहीं जायेंगे। उस समय किले से बाहर निकले, द्वार खोल दिये। बहुत भयंकर युद्ध के पश्चात बेअन्त लोग मारे गये तथा बन्दा सिंह बहादुर सहित 400 सिंहों को गिरफ्तार कर लिया गया। उस समय बड़ी खुशियां मनाई गईं। दिल्ली की ओर काफला चल पड़ा। सिंहों को गाड़ियों में बिठा दिया गया, उनके मुँह पर कालिख पोती गई, सिरों पर कागज़ों की टोपियां बनाकर पहना दी गईं, हाथ पैर बान्ध दिये गये, जलूस निकाला गया। साध संगत जी! प्यार का पाठ पक्का याद करना, आसान नहीं होता।

इसे तो महाराज जी ने बहुत ही कठिन बताया है -

धारना - डेरा नी जिंदे, सिर तों परे है प्रेम दा - 2, 2
परे है प्रेम दा डेरा - 4, 2
डेरा नी जिंदे, ... -2

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ। सिरु धरि तली गली मेरी आउ।
इतु मारगि पैरु धरीजै। सिरु दीजै काणि न कीजै॥ *पृष्ठ - 1412*

जलूस निकाला जा रहा है। सिंह बाणी पढ़ते जा रहे हैं। सभी गुरू के प्यार में बन्धे हैं, किसी को कोई शिकवा नहीं है। पता है कि उन्होंने शहीदियां देनी हैं। अत: दिल्ली चले गये। जो जत्थेदार सिंह थे, उन्हें पिंजरों में बन्द कर दिया गया। सबसे पीछे बन्दा बहादुर पिंजरे में बन्द था। साथ ही उसकी पत्नी है और एक पुत्र भी है। वहाँ पर जाकर कोई मुकदमा या सुनवाई नहीं होती। उस समय एक ही बात कही जाती है कि यदि बचना चाहते हो तो इस्लाम धर्म कबूल कर लो अन्यथा मरने के लिये तैयार हो जाओ। खाफी खान लिखता है कि अड्डा बना दिया गया। सौ-सौ सिंह रोज़ लाये जाते हैं। अकेले-अकेले को पूछते हैं। वे सिंह बढ़ चढ़ कर शहीद होने के लिये छलांगे लगाते हुए चले जाते हैं। उसी समय एक लड़का भी आ गया और उसकी माँ पीछे-पीछे उसके साथ चली आ रही है। साथ ही उस लड़के की पत्नी भी है। लिखते हैं कि माँ ने बादशाह के पास आकर फरियाद की। कोई सुनवाई न हुई फिर एक दिन फरखसीयर बाज़ार में हाथी पर चढ़ कर जा रहा था तो यह उसके सामने गिर पड़ी। उसने पूछा, ''माई, तुझे क्या तकलीफ है?'' वह बोली, ''बादशाह सलामत, मेरा जो पुत्र था। एक बार सिक्खों ने हमारे गाँव पर हमला किया और

वे मेरे पुत्र को पकड़ कर ले गये। उन्होंने उसे सिंह बना दिया और किसी बहाने से मैं उसे वापिस घर लेकर आई और अब इसकी शादी भी हो चुकी है। यह मेरी बहु मेरे साथ है, इसका अभी तक कंगना भी नहीं खुला है, घर के अन्दर भी प्रवेश नहीं किया और तेरे सिपाही इसे पकड़ कर ले आये।''

हुक्म दे दिया कि परवाना लिखो और उस बच्चे को छोड़ दो। वहाँ पर पहुँच जाती है, जहाँ पर सिंघ शहीद किये जा रहे थे। वहाँ पर जैसे ही पहुँची तो देखती है कि जल्लाद ने तलवार हाथ में ले रखी है और वार करने ही वाला है और इस लड़के ने गर्दन नीचे की हुई है। एक सैकिण्ड का अन्तर था तो वह बोल पड़ी, ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाई, ''इसे मत मारो, यह सिक्ख नहीं है। मेरे पास बादशाह का परवाना है।'' जल्लाद रूक गया। वहाँ पर जो बड़ा अधिकारी था उसे परवाना दिखाया गया। इतनी देर में फरखसीयर भी वहाँ पर आकर बैठ गया। हुक्म दे दिया कि उस बालक को छोड़ दो। बच्चे को छोड़ दिया। बच्चे को पास बुला लिया और फरखसीयर ने कहा, ''तुम्हारी माँ इस तरह कहती है।''

बालक बोला, ''मेरी माँ तो झूठ बोलती है।'' माताएं पहले से ही ऐसे करती आई हैं। नामदेव जी को गाय जिन्दा करने के लिये जन्जीरों से बान्धा हुआ है। उस समय माँ कहती है -

रुदनु करै नामे की माइ। छोडि रामु की न भजहि खुदाइ॥ *पृष्ठ - 1165*

बेटा! इस्लाम कबूल कर ले। जान तो बच जायेगी।

नामदेव जी कहते हैं, ''माता! इतनी कमज़ोर शिक्षा? यदि तू ऐसी जननी है तो -''

न हउ तेरा पूंगड़ा न तू मेरी माइ। पिंडु पड़ै तउ हरि गुन गाइ॥ *पृष्ठ - 1165*

प्रहलाद की माँ ने भी समझाया था -

माता उपदेसै प्रहिलाद पिआरे। पुत्र राम नामु छोडहु जीउ लेहु उबारे॥ *पृष्ठ - 1133*

बचा ले अपनी जान। छोड़ दे राम का नाम -

प्रहिलादु कहै सुनहु मेरी माइ। राम नामु न छोडा गुरि दीआ बुझाइ॥ *पृष्ठ - 1133*

कहता है, ''मैं राम का नाम छोड़ दूँ? पहले कहती तो मैं छोड़ देता। अब तो राम का नाम मेरे रोम-रोम में रम गया। अब राम का नाम मुझे नहीं छोड़ता। मेरे नेत्र खुल गये हैं। अब तो मैं जिधर भी देखता हूँ, मुझे तो राम के बिना और कोई नज़र नहीं आता। कैसी भोली बातें करती है?''

इस माता ने भी ऐसे ही कहा। पुत्र कहता है, ''बादशाह सलामत! यह मेरी माँ नहीं है। मैं पहले भी सिंह था और अब भी सिंह हूँ। मैं अपने गुरू का प्यार छोड़कर जिन्दा रहने के लिये इस्लाम धारण कर लूं? फिर क्या गारन्टी है कि मैं सदा जीवित रहूंगा? क्या मैं मरूंगा नहीं? मैं तो बिक चुका हूँ। मैंने अपने गुरू को तन भी दे दिया है, मन भी दे दिया है और धन भी दे दिया है। मेरे पास तो कुछ बचा ही नहीं है। यदि मेरी कोई प्रार्थना है तो केवल एक ही प्रार्थना है -''

धारना - सिर जावे तां जावे, मेरा सिखी सिदक न जावे - 2, 2
सिखी सिदक न जावे - 4, 2
सिर जावे तां जावे, ...-2

कहता है, ''बादशाह! जिस सिखी सिदक को मैंने सिर देकर लिया है, उसे छोड़ दूँ? इस शरीर ने तो एक दिन जाना ही जाना है। यदि आज नहीं मरा तो कुछ समय बाद मर जायेगा।''

बादशाह ने बच्चे से कहा, ''देखो बेटे! यह तुम्हारी पत्नी है। इसकी ओर देख, अभी तक इसकी हाथों की मेंहदी नहीं उतरी है। कंगन भी नहीं उतारा है। बड़ी खुशी-खुशी तेरी माँ ने इसके साथ तेरी शादी की है। फिर तेरी माँ कहती है कि इसका पिता भी नहीं है। मैं तो इस बच्चे को देख-देख कर ही जिन्दा रहती हूँ। तुझे माँ का प्यार नहीं सताता? पत्नी का प्यार नहीं सताता?''

बच्चा बोला, ''बादशाह सलामत! ये तो संयोग वश इकट्ठे हुए हैं।''

बिरखै हेठि सभि जंत इकठे। इकि तते इकि बोलनि मिठे।
असतु उदोतु भइआ उठ चले जिउ जिउ अउध विहाणीआ।। *पृष्ठ - 1019*

हम सभी यहाँ पर संयोग वश इकट्ठे हुए हैं और जब वियोग का समय आयेगा तो उस समय हम सभी ने किसी ने, दो दिन आगे तो किसी ने दो दिन पीछे, चले ही जाना है। संसार में न तो इकट्ठे आये और न ही संसार से इकट्ठे जायेंगे। मेरा यह तन बेकार हो जायेगा यदि सिखी से हीन हो गया। मुझे खुशी है कि आप हुक्म दो, मेरे साथी मेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं देर मत करो और मैं उनके साथ जाना चाहता हूँ।

साध संगत जी! यह जो प्यार है, यह कोई ऐसे बातें करने से नहीं हुआ करता है। यह तो बहुत मंहगा है। इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - गल्लां नाल ना पिआर कदे मिलदा,
डेरा उसदा सिरों पार है - 2, 2
मेरे पिआरे, डेरा उसदा सिरों पार है - 2, 2
गल्लां नाल ना पिआर कदे मिलदा, ...-2

पहिला मरणु कबूलि जीवण की छडि आस।
होहु सभना की रेणुका तउ आउ हमारै पासि॥ *पृष्ठ - 1102*

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ। सिरु धरि तली गली मेरी आउ।
इतु मारगि पैरु धरीजै। सिरु दीजै काणि न कीजै॥ *पृष्ठ - 1412*

वह बच्चा बोला, ''बादशाह! मैं गुरू के साथ प्यार करता हूँ। यह तुमने बहुत ही कच्ची बात कह दी कि मैं जान बचाने के लिये, स्त्री के लिये, माँ के लिये, मैं गुरू से विमुख होकर जीवित रहूँ? नहीं, मुझे जल्दी शहीद करो।''

उस बच्चे को शहीद कर दिया गया और भी बहुत से सिंह शहीद कर दिये गये। बन्दा बहादुर को भी शहीद कर दिया गया पर -

रते सेई जि मुखु न मोड़ंन्हि जिन्ही सिञाता साई॥ *पृष्ठ - 1425*

जो प्यार में रंगे गये वे और कुछ नहीं सोचा करते। उनका प्यार ऐसा होता है -

दरसनु देखि पतंग जिउ जोती जोति समावै॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/14*

वह तो ज्योति में समाना चाहता है -

धारना - मुखड़ा ना मोडदे, रत्ते जो नाल गुरां दे -2, 2

रत्ते जो नाम गुरां दे - 4, 2
मुखड़ा ना मोड़दे, ... -2

रते सेई जि मुखु न मोड़ंन्हि जिन्ही सिञाता साई।
झड़ि झड़ि पवदे कचे बिरही जिन्हा कारि न आई॥ *पृष्ठ - 1425*

कच्चे झड़ जाया करते हैं। जिन्होंने गुरू के साथ प्यार की गाँठ पक्की तरह बान्ध लीं, दुख आये या सुख, मुसीबत आयें या खुशियां, हानि हो या लाभ, वे तो गुरू के ही बने रहते हैं और एक ही इच्छा रहती है कि उन्हें गुरू का प्यार ही चाहिये और किसी ओर ध्यान भी नहीं देते।

रूप चन्द ने पुत्र से कहा, ''बेटा! प्यास लगी है, जल लाओ।'' उसने जैसे ही पानी को हाथ लगाकर देखा तो पानी अति शीतल था। उसको गुरू हमेशा ध्यान में रहता है। स्वंय भी उसने पानी न पीया। उस समय आपने कहा, ''पिता जी! यह पानी तो गुरू जी के पीने लायक है।''

पिता कहता है, ''अच्छा बेटा।''

वापिस आ गया, लड़का खुद भी पानी नहीं पीकर आया। प्यास के मारे होठ भी सूखते जा रहे हैं। बोला भी नहीं जाता। पिता ने कहा, ''मैं जाकर देख कर आता हूँ। एक घन्टा और बीत गया। दोपहर हो गई, फिर जाकर पानी को हाथ लगाकर देखा तो कहता है, यह पानी तो वास्तव में ही गुरू जी के पीने लायक है।''

पुत्र से कहता है, ''बेटा, हम तो गरीब आदमी हैं। हमारे पास तो कोई ऐसी चीज़ नहीं है जो गुरू को भेंट कर सकें'' -

हम तुम अहैं मिहनती लोग।
शुभ अस वसतू के नहिं जोग॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3131*

कहता है कि ऐसी सुन्दर वस्तु तो हमारे पास कोई है ही नहीं, हम तो मेहनती मज़दूर लोग हैं -

सतिगुर की लाइक जल भयो।
अपर उचित मैं नहिं लखि लयो॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3131*

यह पानी तो वास्तव में गुरू जी के पीने योग्य है अपने पीने लायक तो है नहीं -

जल को तजि बैठयो सुत पास॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3131*

पुत्र तो पहले ही वहीं पानी के पास बैठा था, अब पिता भी वहीं आकर बैठ गया -

लागी बहु दोनहुं को प्यास॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3131*

प्यास बहुत सताने लगी, होठों पर जीभ फेरते हैं। धीरे-धीरे जीभ भी सूख गई -

शुशक कंठ मुख ओशट भए॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3131*

मुख पूरी तरह से खुश्क हो गया। जीभ भी पीछे ही मुड़ने लग गई। कण्ठ भी खुश्क हो गया -

रसना चलति न बहु मुरझए॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3131*

अब जीभ भी नहीं हिलती। वह भी मुर्झा गई। चेहरे पर भी मूर्च्छा सी छा गई। उस समय

बेहोशी की अवस्था होती जा रही है और उनके हृदय में से यही अरदास निकलती है –

धारना - निभाईं मालका, मेरा प्रण प्रेम वाला - 2, 2
प्रण प्रेम वाला - 4, 2
निभाईं मालका, ... -2

प्रार्थना करते हैं, ''हे पातशाह! तेरा बिरद है –''

अपुने सेवक की आपे राखै आपे नामु जपावै।
जह जह काज किरति सेवक की तहा तहा उठि धावै॥ *पृष्ठ - 403*

सरब शकति मालक गुर पूरा।
जहिं मिसरै सभि थान हज़ूरा॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3131*

जहाँ भी याद करो, गुरू के लिये दूर नज़दीक की कोई बात नहीं हुआ करती। उसी समय पहुँच जाता है –

हमरो प्रेम परण निरबाहैं। पान हरहिं लायक निज चाहै॥
श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3132

पातशाह! आप स्वंय आकर पानी पीजिए। यह पानी अब हमारे पीने योग्य नहीं है क्योंकि इतना ठण्डा पानी पीने के हम लायक नहीं हैं, हम तो अति गरीब आदमी हैं। यह जल तो अब आपके पीने लायक हो गया। साध संगत जी! ये प्यार की बड़ी अजीब-अजीब बातें हुआ करती हैं। इस तरह फ़रमान करते हैं –

धारना - रीत निआरी है, प्रेम दी दुनीआ नालों - 2, 2
प्रेम दी दुनीआं नालों - 2, 2
रीत निआरी है, ...-2

दीपक जलै पतंग वसु फिरि देखि न हटै।
जल विचहु फड़ि कढीऐ मछ नेहु न घटै।
घंडा हेड़ै मिरग जिउ सुणि नादु पलटै।
भवरै वासु विणासु है फड़ि कमल संघटै।
गुरमुखि सुख फलु पिरम रसु बहु बंधन कटै।
धंनु धंनु गुरसिक्ख वंसु है धंनु गुरमति निधि खटै॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/23*

निआरी रीत –

दीपक जलै पतंग वसु फिरि देखि न हटै॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/23*

पहले जलते हुए दीपक को देखता है, फिर हटता नहीं फिर जाकर उसमें छलांग लगा देता है।

जल विचहु फड़ि कढीऐ मछ नेहु न घटै॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/23*

मछली खाने वाला आदमी पानी-पानी चिल्लाता रहता है क्योंकि मछली का पानी के साथ प्यार होता है –

घंडा हेड़ै मिरग जिउ सुणि नादु पलटै॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/23*

मृग नाद सुनता है। सामने शिकारियों को भी खड़ा देखता है, पकड़ने वाले खड़े होते हैं। पीछे तो हटता ही नहीं बल्कि आगे ही आगे बढ़ता जाता है –

भवरै वासु विणासु है फड़ि कवल संघटै॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/23*

वासना, सुगन्धि के साथ भौंरे का प्यार है, फूल के अन्दर ही बन्द हो जाता है –

गुरमुख सुख फलु पिरम रसु बहु बंधन कटै॥
धंनु धंनु गुरसिक्ख वंसु है धंनु गुरमति निधि खटै॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/23*

कहते हैं, गुरसिखों का वंश धन्य है, धन्य है, धन्य है। गुरू के साथ प्यार कर बैठते हैं फिर पीछे नहीं हटते। चाहे जिन्दा रहें या फिर सब कुछ जाता रहे। यह भी एक वंश है।

इस प्रकार दोनों पिता पुत्र गहरी बेहोशी में पड़े हैं। उस समय गुरू महाराज जी 30 कोस की दूरी पर 'डरौली' गाँव में बिराजे हुए हैं। दोपहर हो गई है। आपके कमरे को ठण्डा करने के लिये खस की चिकें लगाई हुई हैं, दीवारों पर इत्र आदि छिड़के हुए हैं। चारों ओर खुशबू आ रही है। बहुत सुन्दर बिस्तरा है, जिस पर आप बिराजमान हैं। बीबी राम कौर जो रिश्तेदार हैं, उन पर पंखा झुला रही है। कोई खस पर तथा इधर ऊपर जल छिड़क रहा है ताकि अन्दर धूल न आये। आपका विश्राम स्थान एक दम ठण्डा है। 12 बजे का समय है। उस समय महाराज अचानक उठकर बैठ गये। कहते हैं, ''घोड़ा मंगाओ और जल्दी उस पर काठी लगाओ। हमने कहीं जाना है।'' साध संगत जी! जाना क्यों है? क्योंकि प्यार में शक्ति होती है। ऐसा फ़रमान है–

धारना - रब्ब वस भगतां ने कीता,
पा के ते प्रेम डोरीआं - 2, 2
मेरे पिआरे, पा के ते प्रेम डोरीआं - 2, 2
रब्ब वस भगतां ने कीता, ... -2

ना तू आवहि वसि बहुतु घिणावणे। ना तू आवहि वसि बेद पड़ावणे।
ना तू आवहि वसि तीरथि नाईऐ। ना तू आवहि वसि धरती धाईऐ।
ना तू आवहि वसि कितै सिआणपै। ना तू आवहि वसि बहुता दानु दे।
सभु को तेरै वसि अगम अगोचरा। तू भगता कै वसि भगता ताणु तेरा॥ *पृष्ठ - 962*

वश में कर लिया। प्रेम के कारण खींच लिया। गुरू महाराज जी कितने आराम से बैठे हैं –

करी प्रेम ने खैंच बडेरी।
सभि किछ त्याग दीनि तिस बेरी॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्छ, पृष्ठ - 3132*

उस वातानुकूलित (Air conditioned) ठण्डे बने हुए कमरे में बिराजमान हैं, अति सुन्दर मकान, सुन्दर बिस्तर, सभी कुछ छोड़ दिया। उस समय प्रेम ने खींच लिया। एक दम सभी कुछ छोड़ दिया –

कहति शीघ्र ही ज़ीन पवायो॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3132*

जल्दी ही घोड़े पर काठी लगवाई –

चढिबे हेतु तुरंग मंगायो।
भए इकाकी तबि असवार॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3132*

देखा ही नहीं। न किसी से कोई बात चीत की। घोड़ा आ गया। एक दम गुरू महाराज जी ने जाकर रकाब में पैर रखा और सवार होकर घोड़ा सरपट दौड़ा दिया। हवा से बातें करता हुआ घोड़ा भागा जा रहा है –

नहिं दासनि दुख सके सहार॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3132*

क्योंकि अपने दासों का गुरू को दुख सहन करना बहुत कठिन हो जाता है –

धारना - सतिगुर दुख मंनदे ने,
सेवक दे दुखी होण तों - 2, 2
सेवक दे दुखी होण तों - 2, 2
सतिगुर दुख मंनदे ने, ... -2

घट घट के अंतर की जानत। भले बुरे की पीर पछानत।
चीटी ते कुंचर असथूला। सभ पर क्रिपा द्रिसटि करि फूला।
संतन दुख पाए ते दुखी। सुख पाए साधन के सुखी।
एक एक की पीर पछानै। घट घट के पट पट की जानै॥ *चौपई साहिब*

जब प्यारा दुखी हो जाये, उसी समय गुरू को वही पीड़ा पहुँच जाया करती है –

भए इकाकी तबि असवार। नहिं दासनि दुख सके सहार॥
श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3132

कहते हैं, अपने दासों का दुख सहन नहीं कर सकते –

तीस कोस पहुंचे छिन मांही।
होइ त्रिखातुर इत उत जांही॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3132*

गुरू महाराज जी को इतनी प्यास लगी हुई है कभी घोड़े को इधर ले जाते हैं तो कभी उधर। पानी ढूंढते फिर रहे हैं। उधर दोनों पिता पुत्र बेहोश पड़े हैं। धूप में ही पड़े हुए हैं, उन्हें कोई होश नहीं है। गले सूखे पड़े हैं, एक दूसरे के साथ बात तक नहीं कर पाते। शरीर में कमज़ोरी आ गई। नीम बेहोशी हो गई। उस समय –

देखि दूर ते दोइन दासा॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3132*

दूर से देखा कि दो दास पड़े हुए हैं –

ऊचे सतिगुर बाक प्रकाशा॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3132*

ऊँची आवाज़ में आप बोले –

को तुम परे बतावहु हमे? *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3132*

बताओ भाई! तुम कौन हो जो लेटे पड़े हो? धूप में इस तरह क्यों लेटे हुए हो? ऐसे लगता है जैसे किसी ने मारकर फैंक दिया हो और इस तरह से बेहोश क्यों पड़े हो–

त्रिखा बिखाद देति इहु समै॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3132*

अरे प्रेमियो! हमें भी बहुत प्यास लगी हुई है। हमें प्यास बहुत ही बेचैन कर रही है –

जल जंगल महिं नांहिन पावैं॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3132*

हमने यहाँ पर खूब पानी ढूंढा, पर कहीं नहीं मिला –

खोजति फिरै हाथ नहिं आवै॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3132*

हमने पानी की बहुत तलाश की, पर नहीं मिला। जल्दी पानी दो। जब आवाज़ सुनी तो एक दम नेत्र खुल गये। दर्शन करते हैं और एक दम हैरान हैं! यह तो गुरू महाराज जी आ पधारे। इतनी दोपहरी में, पानी-पानी की आवाज़ लगा रहे हैं। आप तो दास की आशा पूरी करने आये हैं –

तरफति इक परमेशुर आस।
हुइ जलधर गुर पहुंचे पास॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3133*

कहते हैं, आप तो बादल बन कर आ गये -

जथा कमल जुग, घाम तपाए।
जल बिहीन हुइ करि मुरझाए॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3133*

धूप के कारण इनके शरीर सूख गये, पानी न मिलने के कारण मूर्च्छा आ गई और गुरू महाराज जी ने आकर पानी मांग लिया -

बार बार बच बदन बखाने॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3133*

बार-बार कहते हैं, प्रेमियो! पानी पिलाओ, पानी पिलाओ -

हम को लागी त्रिखा महाने॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3133*

हमें तो बहुत प्यास लगी हुई है। उस समय होश सम्भाली, हौंसला बढ़ गया। गुरू महाराज जी को देखते ही एक दम बिजली की तरह ताकत आ गई। उस समय पुत्र भागा-भागा गया। पानी का भरा हुआ 'कुन्ना' उठा लाया। पत्तों का डोना बनाया और उसमें पानी डालकर महाराज जी को दिया। हथेली पर रखा। महाराज जी ने उठाकर जब पानी पीया तो कहने लगे, प्यारे, यह आपने हमें क्या पिलाया -

जल ऐसो कबि पीयो न आगे॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3133*

हमने आज तक कभी ऐसा पानी पीया ही नहीं। पानी पीते-पीते हमारी उम्र बीत गई -

किनहूँ न दीनसि करि अनुरागे॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3133*

इतने प्यार के साथ आज तक हमें किसी ने भी पानी नहीं पिलाया। कृष्ण महाराज जी भी कहा करते थे -

खीर समानि सागु मै पाइआ .....॥ *पृष्ठ - 1105*

दुर्योधन से कहते हैं, ''जिसे तू दुख कहता है। हमें तो बिना नमक के जो साग खाने को विदुर जी के घर मिला, वह तो तेरे महलों के दूध से भी अधिक मीठा और स्वादिष्ट था''-

..... गुन गावत रैनि बिहानी॥ *पृष्ठ - 1105*

हमें तो आज तक किसी ने भी प्यार से ऐसा पानी नहीं पिलाया -

हिम अरु शोरे महिं धरि राखा॥श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3133

आपने इसे बर्फ में शोरा डालकर रखा हुआ था -

अति सीतल करिबे अभिलाखा॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3133*

इतना ठण्डा करने के लिये, आपने पानी रखा हुआ था -

इस जल सम हम कबहू न पीओ।
बारंबार सराहिन कियो॥ *श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ, पृष्ठ - 3133*

बार-बार प्रशंसा करते हैं, अपने हाथों से दोनों को पानी पिलाया। साध संगत जी! कितने भाग्यशाली थे। कितने महान सौभाग्यशाली थे, जिन्होंने गुरू महाराज जी के हाथों जल पीया और गुरू महाराज जी को तीस कोस दूर से खींच कर ले आये? क्योंकि प्यार सच्चा था। दुनियां के प्यार स्वार्थी

होते हैं पर गुरू का प्यार सच्चा होता है –

धारना - होर पिआर दुनीआं दे कूड़े,
सच्चा पिआर नाल गुरां दे - 2, 2
मेरे पिआरे, सच्चा पिआर नाल गुरां दे - 2, 2
होर पिआर दुनीआं दे कूड़े, ... -2

लेलै मजनूं आसकी चहु चकी जाती।
सोरठि बीजा गावीऐ जसु सुघड़ा वाती।
ससी पुंनूं दोसती होइ जाति अजाती।
मेहीवाल नो सोहणी नै तरदी राती।
रांझा हीर वखाणीऐ ओहु पिरम पराती।
पीर मुरीदा पिरहड़ी गावनि परभाती॥ *भाई गुरदास जी, वार 27/1*

गुरू का प्यार, दुनियां का प्यार। इश्क-ए-मज़ाज़ी से इश्क-ए-हकीकी। इश्क-ए-मजाजी सांसारिक प्यार है। दरगाह से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है। गुरू का प्यार यहाँ भी होता है और दरगाह में भी होता है। इस प्रकार जिसके हृदय में प्यार बस गया –

साचु कहौं सुन लेहु सभै
जिन प्रेम कीओ तिन ही प्रभु पाइओ॥ *त्व प्रसादि स्वयै*

गुरू अंगद देव जी महाराज भाई लहणा जी के रूप में गुरसिखी कमाने के लिये गुरू महाराज जी के चरणों में हाज़िर होते हैं। गुरू नानक पातशाह की सेवा में दिन रात एक किया हुआ है। न नींद का पता है, न भूख प्यास का पता है, हर समय गुरू महाराज जी की सेवा में रहते हैं। आप स्नान करने जाते हैं तो गुरू अंगद देव जी साथ जाते हैं। गुरू नानक पातशाह जब समाधि में बैठते हैं तो आप उन्हें देखते रहते हैं।

ऐसा प्यार हो गया जो बताया नहीं जा सकता। जिसका कोई उदाहरण ही नहीं मिलता। हमने प्यार की वार्ता की है और इन सभी तरह के प्यारों से गुरू अंगद देव जी महाराज का प्यार कितना महान होगा? जिस पर गुरू नानक पातशाह रीझ गये। प्यार तो उन्हें भाई मनसुख ने भी किया, भाई भगीरथ ने भी किया, बाबा बुड्ढा जी ने भी किया, भाई सधारन ने भी किया और भी हज़ारों प्रेमियों ने किया और उनका प्यार कोई विलक्षण प्यार था, जिससे हमें शिक्षा लेनी चाहिये। इस तरह से फ़रमान करते हैं –

धारना - जागिआ हिरदे, सच्चा पिआर गुरां दा -2
पिआर गुरां दा, सच्चा पिआर गुरां दा - 2, 2
जागिआ हिरदे, ... -2

सच्चा प्यार, निर्मल प्यार, बिना किसी कामना के क्योंकि साध संगत जी! ऐसी प्रीत प्यार की निभाना बहुत कठिन है। समझनी भी कठिन है। गुरू नानक पातशाह प्यार विहीन पुरुष को मरा हुआ आदमी कहते हैं –

अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि डिआनी धनवंत।
मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत॥ *पृष्ठ - 253*

सो प्यार जाग पड़ा –

परम प्रेम जागिओ मन माही।
रंगिओ रंग भगति मन माही॥

हर समय भक्ति करते हैं। मन पर रंग चढ़ गया –

लाल रंगु तिस कउ लगा जिस के वडभागा॥ *पृष्ठ - 808*

इक मन होइ पड़ै गुरबाणी। सुनै गुनै कीरत चित आनी।

यदि बाणी पढ़ते हैं तो एक मन दत्त-चित्त होकर पढ़ते हैं। गुरबाणी का रूप होकर पढ़ते हैं –

वाहिगुरू कउ सिमरन कर ही। उमंग उमंग मुख सुजस करही।

बड़े प्यार के साथ यश गाते हैं –

चीत प्रीत की रीत निआरी।

अरे भाई प्यार की रीतें बड़ीं न्यारी होती हैं –

लिव लागी निसदिन सुखकारी।

सुखों की देने वाली दिन रात की लिव लग गई –

करतवो सेवा समां बितावै। जग कारज कउ रिदै न आवै।

सेवा करते हैं। गुरू महाराज जी के दर्शन करते हैं। प्यार में सारा दिन बीत जाता है और प्यार में ही रात बीत जाती है। कभी भूल कर भी घर की याद नहीं आती कि पीछे से घरवालों का क्या हाल हो रहा होगा। जवान लड़की पीछे घर में है कुआंरी है, कारोबार कैसा चल रहा होगा? बच्चे लेन देन वालों के साथ कैसा व्यवहार करते होंगे? कुछ पता नहीं। सारी दुनियां छोड़ दी। अगर अपने पास रखा तो केवल गुरू महाराज जी का प्यार रखा। इस प्रकार आप समय बिता रहे हैं। इससे आगे की विचार, महाराज जी की इच्छा हुई तो सक्रान्ति वाले दिन रतवाड़ा साहिब में करेंगे। अब सभी प्रेमी जो अभी तक नहीं बोले, वे भी अपनी रसना पवित्र कर लो। सभी आनन्द साहिब तथा गुर सतोतर में बोलो?

- आनन्द साहिब -

- गुर सतोतर -

- अरदास -

⑨

शान.....।

सतनाम श्री वाहिगुरू,

धंन श्री गुरू नानक देव जी महाराज!

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥ *पृष्ठ - 256*

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ *पृष्ठ - 289*

धारना - गावो गुरां दी बाणी
आवो सिखो पिआरिओ - 2, 2
सिखो पिआरिओ आवो सिखो पिआरिओ-2, 2
गावो गुरां दी बाणी, ...-2

आवहु सिख सतिगुरू के पिआरिहो गावहु सची बाणी॥ *पृष्ठ - 920*

साध संगत जी! गर्ज़ कर बोलो सतनाम श्री वाहिगुरू। कारोबार संकोचते हुए, गुरू महाराज जी की प्रेरणा के कारण इतनी कड़कती धूप में आषाढ़ महीने की सक्रान्ति मनाने के लिये दूर दराज़ से आप आये हो। बहुत से प्रेमियों को तो पता ही नहीं कि संगत कहाँ-कहाँ से आती है? पाँवटा साहिब से लेकर अम्बाला, रोपड़, राजपुरा, माछीवाड़ा आदि से संगत यहाँ पहुँचती है। यह कितना महान तप है! इतनी गर्मी पड़ रही है। वह प्रेमी जो पाँच धूनियों में बैठकर तप करता है, चार धूनियां अपने चैगिर्दे लगाता है और पाँचवा सूर्य सिर पर तपता है, हम कहते हैं कि वह तो बहुत कठोर तप कर रहा है। महाराज कहते हैं, वह तो कुछ भी नहीं है, यदि वह 100 साल तक भी तप करता रहे, उसका कोई मूल्य नहीं है। साध संगत जी! यदि आप चित्त एकाग्र करके एक दीवान सुन लो, इसका फल 100 साल की तपस्या से भी अधिक है। यह कोई ऐसी वैसी बात नहीं है, निरर्थक बात नहीं है क्योंकि वह 'हठ तप' है और यह 'सहज तप' है। सहज तप का, सहज भजन का फल बेअन्त हुआ करता है। इसके अन्दर केवल इतना करना होता है कि चित्त को एकाग्र करके इसे फुरने करने से रोको, नेत्र गुरू स्वरूप की ओर रखो, कानों से वाणी श्रवण करो, बुद्धि के साथ विचार करो, रसना के साथ गाओ फिर इसका फल कितना होगा? महाराज कहते हैं -

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम॥ *पृष्ठ - 546*

कई करोड़ों यज्ञों का फल मिलता है जो सुनते हैं फिर गाते हैं। महाराज गुरू नानक पातशाह ने कितना सरल कर दिया। उनका अहसान भूलना नहीं चाहिये। यह तो शुक्र है जो हम इस घर में पैदा हुए हैं। यदि अब भी वे गरीबी में रहे अर्थात रूहानियत की दृष्टि से गरीबी में रहे, फिर तो उन जैसा मन्दभागी कोई नहीं है। एक तो कलयुग में जन्म मिला। कलयुग की एक ओर विशेषता भी है। पिछली बार बताया था कि सतयुग में यदि कोई एक लाख साल तप करता है, त्रेता युग में दस हज़ार साल तप करता है, द्वापर में एक हजार साल तप करता है और इस कलयुग में एक सत्संग दत्तचित्त होकर कर ले, उनसे भी अधिक फल प्राप्त हो जायेगा। यह भी गुरू नानक पातशाह

की कृपा है क्योंकि आप प्रसन्न हो गये थे। गुरू नानक पातशाह ऐसे ही कोई मामूली अवतार नहीं थे, जो लोग यह कह देते हैं कि गुरू नानक पातशाह विष्णु के अवतार थे, पता नहीं वे विष्णु जी को क्या समझते हैं। महाराज तो कहते हैं –

किसन बिसन कबहूं नहि धिआऊं॥ *(चौपई)*

हम तो ध्यान में भी नहीं लाते क्योंकि गुरसिख भी, इन देवताओं से आगे निकल जाते हैं, देवता पीछे रह जाते हैं। कई बार यह बात बताई गई है कि एक तो वाहिगुरू है। वाहिगुरू जी कहते हैं कि मैं तो हूँ पारब्रह्म परमेश्वर, मेरा कोई न आदि है, न अन्त है, न ही मेरा कोई पारावार पा सकता है, न ही मेरे बारे में कोई जान सकता है। न ब्रह्मा, न विष्णु, न शिव जी, मेरे बारे में जान सकते हैं –

एका माई जुगति विआई तिनि चेले परवाणु।
इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीबाणु।
जिव तिसु भावै तिवै चलावै जिव होवै फुरमाणु।
ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु॥ *पृष्ठ - 7*

कहते हैं कि बड़ा आश्चर्य है कि वाहिगुरू जी तो तीनों देवताओं को देख रहे हैं और तीनों देवताओं को वाहिगुरू का पता नहीं है –

नारद से चतुरानन से, रुमना रिख से, सभ हू मिलि गाइओ।
बेद कतेब न भेद लखिओ, सभ हारि परे हरि हाथ न आइओ।
पाइ सकै नही पार उमापति, सिध सनाथ सनंतन धिआइओ।
धिआन धरो तहि को मन मैं, जिह कै अमितोजि सभै जगु छाइओ॥ *अकाल उसतति*

कोई भी नहीं जान सकता। वेद भी 'नेति नेति' कहते हैं। अतः वे गुरू नानक पातशाह से कहने लगे, ''हे नानक! मैं तो हूँ पारब्रह्म परमेश्वर और तू है गुरू परमेश्वर।'' अब गुरू परमेश्वर ने हम पर तरस खाया क्योंकि यह कलयुग है। इतना बुरा युग है कि मनुष्य परमेश्वर की तरफ ध्यान दे ही नहीं सकता। महाराज कहते हैं, कोई बात नहीं, तू चिन्ता मत कर, हम तुझे अच्छा बना देंगे। पर एक शर्त है, मेरे सिखों को तंग मत करना। जो सत्संग में आकर बैठ जायें, वहाँ पर गड़बड़ मत करना। कहते हैं जो तेरे युग में मनुष्य का जन्म धारण करेगा यदि एक बार भी उसके मुख से वाहिगुरू, राम, अल्लाह, निकल जाये, केवल एक बार भी–

एक चित जिह इक छिन धिआइओ काल फास के बीच न आइओ॥

काल की फांसी उसके गले में नहीं पड़ेगी। कितना अच्छा युग है। कितनी महान कृपा हमारे ऊपर कर दी। महाराज कहते हैं कि जो अब भी वंचित रह जायेंगे, उनसे बड़ा मन्दभागी दुनियां में और कोई नहीं। गुरू ग्रन्थ साहिब जी औंकार का स्वरूप हैं। गुरू दसवें पातशाह लिखते हैं कि अकाल पुरुष ने जब ऐकंकार का स्वरूप धारण किया, उन्होंने यह प्रसार करके प्रकट करना शुरू कर दिया अपने आप को –

निरंकारु आकारु होइ एकंकारु अपारु सदाइआ।
एकंकारहु सबद धुनि ओअंकारि अकारु बणाइआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 26/2*

उससे शबद धुन हुई। ओंकार की शबद धुन हुई –

एकंकारहु सबद धुनि ओअंकारि अकारु बणाइआ॥ *भाई गुरदास जी, वार 26/2*

ये सारी सृष्टियां, सारी दुनियां, एक शबद के साथ ही उत्पन्न हो गई –

कीता पसाउ एको कवाउ। तिस ते होए लख दरीआउ॥ *पृष्ठ - 3*

यह सारी दुनियां बन गई। कहीं से कोई ईंटें नहीं आईं कहीं से पानी नहीं आया, कहीं से आग नहीं आई, सिर्फ एक शबद कहा है। महाराज गुरू दसवें पातशाह कहते हैं –

प्रथम ओअंकार तिन कहा। सो धुन पूर जगत मो रहा॥

सबसे पहले एक शबद बोला अकाल पुरुष ने ओ.....अं.....का.....र यह शबद बोला। मेरे द्वारा बोला हुआ तो खत्म हो गया। निरंकार का बोला हुआ खत्म नहीं हुआ। कहते हैं, अभी तक यह धुन चल रही है, साथ ही साथ ब्रह्मण्ड बनते चले जा रहे हैं। जिस दिन यह नाम धुन अकाल पुरुष ने बन्द कर दी, उसी दिन ही प्रलय आ जायेगी –

उतपति परलउ सबदे होवै॥ *पृष्ठ - 117*

शबद से ही उत्पत्ति होती है। शबद से ही प्रलय होती है। यह शब्द गुरू ग्रन्थ साहिब में हमारी बोली में अक्षरों का रूप धारण करके बैठ गया। इन अक्षरों की यदि हम सम्भाल कर लें, जिसे गुरबाणी कहते हैं, यदि इसकी सम्भाल कर लें, तो हम निरंकार तक पहुँच सकते हैं। यह एक सीढ़ी है, इसे समझने का यत्न करो।

प्रसंग चल रहा था कि भाई लहणा जी गुरू अंगद साहिब महाराज, गुरू नानक पातशाह की शरण में आते हैं। आप का जो हृदय था, वह बिन्ध गया। उनके दर्शन करके आप वहीं पर ही रह गये। बहुत प्यार करते हैं। आज भी आप गुरू नानक पातशाह के चरण दबा रहे हैं और महाराज जी बिराजमान हैं और अचानक क्या देखते हैं कि महाराज जी की टांगों में से खून रिसने लगा, झरीटें सी पड़ गईं। बड़े हैरान हुए, खून भी निकलने लग पड़ा। हाथ खून से लाल हो गये। बड़ी चिन्ता हुई कि यह क्या हो गया? अच्छे खासे सोये हुए हैं, कोई भी वस्तु इनकी टांगों को लगी नहीं फिर खून कैसे निकल रहा है? खरोचें कैसे पड़ गईं, बढ़ती ही जा रही हैं। फिर देखा कि कुर्त्ता भी फट रहा है। अपने आप ही फटता जा रहा है। जब गुरू नानक पातशाह सावधान हुए, उस समय आपने प्रार्थना की, ''पातशाह! कोई भी चीज़ दिखाई नहीं दी। यह कुर्त्ता भी आपका फट गया और टांगों पर खरोचें पड़ी हुई हैं। कुछ भी समझ नहीं आता। पातशाह! देखो तो सही। कृपा करो। आप मेरा यह संशय दूर करो कि ऐसा क्यों हो गया।''

महाराज जी कहते हैं, ''भाई लहणा! बहुत सी बातें गुप्त हुआ करती हैं परन्तु यह बताई हुई बात, संसार की भलाई हित काम आयेगी। ऐसा इसलिये है कि जब कोई गुरसिख बाणी पढ़ता है, जब प्यार से पढ़ता है, मैं उसी समय उसके संग हो जाता हूँ। चाहे एक पढ़ रहा हो या हज़ार पढ़ रहे हों, चाहे करोड़ पढ़ रहे हों। गुरू महाराज जी के स्वरूप को जब हम समझेंगे फिर हमें पता चलता है कि क्या बात है?''

कहने लगे, ''भाई लहणा! जब कोई प्यार के साथ गुरबाणी पढ़ता है, उस समय मैं उसके साथ होता हूँ।'' इस तरह से फ़रमान करते हैं –

धारना - जदों पढ़ीए गुरां दी बाणी,

सतिगुर हुंदे नाल सिख दे - 2, 2
पिआरिओ! सतिगुर हुंदे नाल सिख दे - 2, 2
जदों पढ़ीए गुरां दी बाणी, ... -2

भाई लहणा जी ने कहा, ''सच्चे पातशाह! आप का स्वरूप तो यहाँ पर है, आप तो यहीं पर बिराजमान हैं।''

गुरू नानक पातशाह कहते हैं, ''भाई लहणा! तुम देखो, पानी से भरे हुए करोड़ों बर्तन भरे पड़े हों, सूर्य चमकता हो, सभी बर्तनों में सूर्य की परछाईं पड़ती है। इसी प्रकार गुरू रूप जो सूर्य है, वह सभी गुरसिखों के साथ होता है, जब कोई प्यार के साथ बाणी पढ़ता है।''

इस बात पर विश्वास करो। साध संगत जी! भरोसा पैदा करो। जब तक विश्वास नहीं बनता तब तक बात नहीं बना करती। यह सुनने वाली बात नहीं है, बल्कि भरोसा पैदा करने वाली बात है क्योंकि इसके साथ हमारी उन्नति का सम्बन्ध है, उन्नति बन्धी हुई है। जब तक पक्का भरोसा नहीं होता तब तक वाहिगुरू याद नहीं आता -

जा कै मनि गुर की परतीति। तिसु जन आवै हरि प्रभु चीति॥ *पृष्ठ - 283*

महाराज जी कहते हैं, ''भाई लहणा! दूसरी बात यह है कि हमारा एक स्वरूप नहीं है, असली स्वरूप हमारा और है।''

एक बार गुरू नानक पातशाह एक राजा के पास गये। जब महाराज वहाँ से चलने लगे तो राजा ने एक बात कही। राजा बोला, ''सच्चे पातशाह! सुना है कि कृष्ण महाराज ने 16,108 शादियां की हुई थीं। इतनी रानियां होने पर उन्हें दोष नहीं लगता?''

महाराज कहते हैं, ''जो सर्वज्ञ पुरुष होते हैं, उनका अपना कोई फुरना नहीं हुआ करता। भावना के अनुसार व्यवहार करते हैं। इसके साथ-साथ यह भी ध्यान रखना कि वे शरीर नहीं हुआ करते उन्होंने योग माया से शरीर धारण किया होता है, वे होते नहीं हैं। दिखाई तो देते हैं पर होते नहीं हैं।'' बड़ी अजीब बात है कि नज़र तो आते हैं, पर हैं कुछ भी नहीं।

राजा बोला, ''महाराज! मेरी समझ में नहीं आता। देखो आप हैं, आप क्या कोई परमेश्वर से कम हैं? पर आप दिखाई भी दे रहे हों और साथ ही साथ मैं आपके चरणों को स्पर्श भी कर रहा हूँ। महसूस भी हो रहा है कि कोई बैठा हुआ है।''

महाराज जी ने कहा, ''नहीं प्यारे! यह तेरी भावना का शरीर होने के कारण तुझे ऐसा दिखाई दे रहा है। हमारा यह शरीर असली नहीं है। जाओ, वह जो तार पर हमारा परना लटक रहा है, उतार कर लाओ।'' राजा साफा लेकर आ जाता है।

महाराज कहते हैं, ''हमारी कमर के साथ बान्ध दें।'' जब वह कमर से बान्धने के बाद, गाँठ लगाता तो वह साफा (परना) वापिस हाथ में आ जाता, पर गाँठ न लगती। ऐसा उसने तीन बार किया। अन्त में कहता है, ''सच्चे पातशाह! साफा (परना) तो कमर के चारों ओर टिकता नहीं, जब मैं गाँठ लगाता हूँ तो फिर वह मेरे ही हाथ में वापिस आ जाता है।''

महाराज कहते हैं, ''राजन! यह है हमारा असली स्वरूप जिससे हम सिखों के साथ बर्ताव करते हैं। वह दृष्टि गोचर नहीं होता। इसी स्वरूप से हम सिखों के मध्य रहते हैं।''

गुरू दसवें पातशाह महाराज जब नन्देड़ साहिब में अन्तिम बार संगतों को मिलकर कनात में जाने लगे और कहने लगे कि अब हमने शरीर छोड़ देना है। चिता बना ली गई, कनात तान दी गई। उस समय सिंघों ने बहुत वैराग किया।

कहते हैं, ''पातशाह! अभी आपकी आयु कितनी सी है? केवल 42 वर्ष की आपकी आयु और इतना स्वस्थ, ताकतवर शरीर, हमें अभी छोड़कर जा रहे हो?''

महाराज कहते हैं, ''मैं जा नहीं रहा। मैं नहीं छोड़ता -''

पंथ खालसा खेती मेरी। करो संभाल मै तिस केरी॥

मैंने तुम्हारे अन्दर ही रहना है। मैं कहीं नहीं जाता। पर बात यह है कि मैं नेत्रों वालों को दिखाई दिया करूंगा, अन्धों को दिखाई नहीं दिया करूंगा। वे आन्तरिक नेत्र और हैं -

नानक से अखड़ीआं बिअंनि जिनी डिसंदो मा पिरी॥ ***पृष्ठ - 577***

ये नेत्र तभी खुलेंगे, जब इनके अन्दर ज्ञान का सुरमा डलेगा -

गिआन अंजनु गुरि दीआ अगिआन अंधेर बिनासु।
हरि किरपा ते संत भेटिआ नानक मनि परगासु॥ ***पृष्ठ - 293***

उन नेत्रों से मैं दिखाई दिया करूंगा। वे नेत्र और हैं। ये नेत्र नहीं हैं। ये तो मिट्टी के बने हुए नेत्र हैं। इनके साथ तो वही चीज़ें दिखाई देती हैं, जिन पर प्रकाश पड़ता हो, अन्धेरे में पड़ी चीज़ें इनसे दिखाई नहीं देतीं। वे नेत्र और हैं, उन्हें 'दिव्य नेत्र' कहते हैं -

गुरहि दिखाइओ लोइना।
ईतहि ऊतहि घटि घटि घटि घटि तूंही तूंही मोहिना॥ ***पृष्ठ - 407***

जब वे नेत्र खुल जाते हैं तो उस समय वाहिगुरू ही वाहिगुरू दिखाई देता है। नेत्र तो तुम्हारे भी हैं और मेरे भी हैं। किसी-किसी ने नेत्र खोल लिये। कईयों को पता ही नहीं कि उनके अन्दर और भी नेत्र हैं, जिनसे न दिखाई देने वाली चीज़ें भी दिखाई देती हैं। सिंघों ने अब यह निर्णय लिया कि हमने इस बार गुरू महाराज जी को घेर लेना है और उनके चरण नहीं छोड़ने, कैसे छुड़ायेंगे, चाहे घसीट कर ले जायें, चिता तक पहुँचते-पहुँचते नहीं छोड़ेंगे। सबसे आगे इसमें जत्थेदार सन्तोख सिंह था। साथ ही ज़ोर-ज़ोर से ऊँची-ऊँची आवाज़ में विलाप कर रहे हैं, ''पातशाह! बिछोड़ा मत दे जाना।'' भाग कर दोनों टांगों को पकड़ लिया और कह रहा है, ''अब तो मैंने आपको पकड़ जकड़ लिया है अब मैंने जाने नहीं देना।'' हैरान रह गया। बाजू छाती के साथ जा लगे। दूसरी बार फिर टांगों को पकड़ा, तीसरी बार भी ऐसा ही हुआ। महाराज जी यह देखकर मुस्करा पड़े, कहते हैं, ''भाई सन्तोख सिंह! यदि हमें पकड़ सकता है तो फिर पकड़ ले। यह तो माया का शरीर तुम्हारी भावना तथा प्रालब्ध कर्मों के फलस्वरूप हमने धारण किया हुआ है। हमारा स्वरूप तो माया से रहित है। इसे पकड़ा नहीं जा सकता। यह तो निरा ही नूर (प्रकाश) का शरीर है।''

सो महाराज कहते हैं, ''भाई लहणा! हमारा शरीर ऐसा होता है। इस शरीर के साथ, जहाँ पर प्यार के साथ जो गुरू ग्रन्थ साहिब का पाठ करता है, चाहे कोई मूल मन्त्र का पाठ करता है, चाहे जपुजी साहिब का पाठ करता है, चाहे पाँच बाणियां पढ़ता है, चाहे रसना के साथ जाप करता है, चाहे श्वांस के साथ नाम जपता है, कहते हैं, हम उसके साथ होते हैं। हमारे सन्त, संगत में यह भेद सिखों को बता देते हैं, ''सिख! जब तू बाणी पढ़ेगा तो तेरे साथ गुरू नानक देव बैठे होंगे। देखना फिर बुरे या मन्द फुरने मत करना, उन्हें पता चल जायेगा। उन्होंने देख लेना है कि यह तो जपुजी साहिब भी पढ़ता है और साथ ही साथ बुरी बातें भी करता है, सोचता है। गुरू महाराज से कुछ भी छिपा नहीं है।''

घट घट के अंतर की जानत। भले बुरे की पीर पछानत॥ ***चौपई***

भाई लहणा जी ने पूछा, ''सच्चे पातशाह! फिर इस समय कौन पढ़ रहा है?''

महाराज जी कहते हैं, ''भाई लहणा! इस समय एक बच्चा बहुत प्यारा, छोटा सा है, कोई बहुत ज्यादा उम्र का नहीं है। वह बकरियां चराने गया हुआ है। उसने अब बकरियों को झाड़ियों में छोड़ दिया और दूसरी ओर फसल है, वह उन्हें दूसरी तरफ लाने के लिये झाड़ियों में से निकल रहा है। साथ ही साथ सोहिला भी पढ़ रहा है। बहुत प्यार के साथ पढ़ रहा है। हम उसको कांटे नहीं लगने दे रहे। वे सभी कांटे हमारे शरीर को चुभ रहे हैं।''

इस तरह से भाई सन्तोख सिंह जी लिखते हैं –

एक अयाली अजा चराई॥ ***श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1164***

अयाली (गड़रिया) कहते हैं, बकरियां चरा रहा है।

मन इकांति ह्वै प्रीति युत पढहि सोहिला सोइ। ***श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1165***

महाराज जी कहते हैं, 'सोहिला' पढ़ता है कीर्तन सोहिला। जब कोई सिख कीर्तन सोहिला रात को पढ़ता है, पाँच स्नान करके, चौकड़ी मार कर बैठता है, फिर मैं उसके पास होता हूँ। रात को कोई दवाब नहीं आने देता। यहाँ पर मुझे बीबियां कहती हैं, ''जी दवाब आता है।'' मैं कहता हूँ, ''भाई आप बाणी पढ़ो। दवाब तो अपने आप हट जायेगा।'' कोई कहता है, ''जी भूत दवाब डालते हैं, भूत आता है।'' यदि तुमने अपने आप ही भूत बने रहना है तो भूत तो आयेंगे हीं, इन्हें कोई हटा नहीं सकता। मनुष्य बनो, भूत अपने आप हट जायेंगे।

अत: कहते हैं जब कोई –

मन इकांति ह्वै प्रीति युद पढहि सोहिला सोइ॥ ***श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ 1165***

कहते हैं, मन एकान्त किया हुआ है। प्यार के साथ हमारे चरणों का ध्यान रख कर वह सोहिला पढ़ रहा है –

कंटक झार अपार जहि फिरति प्रेम महिं होइ॥ ***श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ 1165***

झाड़ियों के बीच में, कांटोंदार झाड़ियों के बीच में घूम रहा है, उसे कोई पता नहीं, प्रेम में वह मस्त है –

ह्वै समीप बिचरों तिह संगा॥ ***श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ 1165***

उसके अंग संग होकर मैं भी झाड़ियों में उसके साथ-साथ घूमता फिर रहा हूँ -

लगने देउं न कंटक अंगा॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ 1165*

मैं आगे हो जाता हूँ, उस पर जो झाड़ी के कांटे चुभने होते हैं, मैं अपनी टागों से रोक लेता हूँ और वह पार कर जाता है। उसे पता नहीं है कि मैं उसके काटों को अपनी टागों से रोके जा रहा हूँ -

तहां झरीट लगी इहु जानहु॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ 1165*

वे कांटेदार झाड़ियां हमें लगी हैं। यह खरोचें वहीं से हमें लगी हैं, ऐसा निश्चय पूर्वक मानो -

लहिणो! साच बचन मम मानहु॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ 1165*

हे भाई लहणा! जो वचन हम कर रहे हैं, इन्हें तू सत्य-सत्य मान, मेरा यह भी वचन है -

पढ़हि सोहिला जो कित कोऊ॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ 1165*

जहाँ कोई कीर्तन सोहला पढ़ेगा -

तिह समीप निशचै मैं होऊं॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ 1165*

मैं जरूर उसके साथ ही हुआ करता हूँ। ऐसा निश्चय रखो। तब भाई लहणा जी ने पूछा, ''पातशाह! वह बकरियां कहाँ पर चरा रहा है?''

महाराज जी ने कहा, ''अमुक स्थान पर, एक ओर वहाँ चरा रहा है।'' एक गुरमुख भेज दिया और कहा, ''जाओ उस बच्चे को बुलाकर लाओ।'' जब वह बालक आ गया तब भाई लहणा बोले, ''देखो बेटा! तुम कीर्तन सोहिला पढ़ रहे थे?''

बालक बोला, ''हाँ जी।''

कहते हैं, ''कांटों में घूमता फिर रहा था?''

बालक बोला, ''हाँ जी।''

लहणा जी ने कहा, ''यह देख! पातशाह की टांगों पर खरोचें पड़ गईं, तेरे साथ-साथ उन झाड़ियों में घूम रहे थे।''

प्रार्थना की, ''पातशाह! यदि आपको कीर्तन सोहिला पढ़ने वालों के साथ इतना प्यार है फिर तो जब ये चारपाई पर बैठ जायें, सोना चाहें, उस समय आपकी छोह प्राप्त करके सो जायें, तब न तो बुरे-बुरे सपने आयें, न ही कोई दबाब पड़े, न ही कोई भूत आये, न प्रेत आये, न कोई चोर आये। पढ़ कर देख लो।''

एक बार गुरू पाँचवे पातशाह जी के पास एक घोड़ों का व्यापारी आया। वह सौदागर कहने लगा, ''सच्चे पातशाह! मैंने आपकी गुरसिखी धारण की हुई है, पर जब मैं मण्डी में घोड़े बेचने के लिये ले जाता हूँ, मेरे बहुत से घोड़े चोरी हो जाते हैं। इसके बावजूद मुझे लाभ होने की बजाये नुकसान ही हो रहा है। घर में गरीबी बढ़ती जा रही है। उन चोरों को रोकने का मेरे पास कोई

इलाज नहीं है। पता नहीं उनके पास कैसी जड़ी बूटियां हैं, जो पहरेदारों को सुंघा देते हैं और उन्हें नींद आ जाती है? पता नहीं चलता। सच्चे पातशाह! कृपा करो।''

महाराज कहते हैं, ''देखो प्यारे! तू ऐसे किया कर। तू कीर्तन सोहिला पढ़ा कर। जब कीर्तन सोहिला कोई पढ़ता है तो इस समय उसकी रक्षा गुरू किया करता है पर उसके साथ पाँच शबद लगा लिया कर।''

आपने फरमाया कि पाँच शबद पहले पढ़ लिया कर, पाँच स्नान करके, कुरली करके, साफ बिस्तर पर बैठकर गुरू के चरणों का ध्यान किया कर। उसके बाद पहला शबद पढ़ना है। सोरठ महला ५ –

गुर का सबदु रखवारे। चउकी चउगिरद हमारे॥ *पृष्ठ - 626*

दूसरा शबद बिलावल महला ५ –

ताती वाउ न लगई पारब्रहम सरणाई।
चउगिरद हमारै रामकार दुखु लगै न भाई॥ *पृष्ठ - 819*

तीसरा शब्द –

जह साधू गोबिद भजनु कीरतनु नानक नीत।
णा हउ णा तूं णह छूटहि निकटि न जाईअहु दूत॥ *पृष्ठ - 256*

चौथा शबद श्लोक महला ५ –

मन महि चितवउ चितवनी उदमु करउ उठि नीत।
हरि कीरतन का आहरो हरि देहु नानक के मीत॥ *पृष्ठ - 519*

यह सारा श्लोक पढ़ लिया करो फिर जो पाँचवा शबद है वह भी संस्कृत का श्लोक है –

सिर मस्तक रख्या पारब्रहमं हस्त काया रख्या परमेस्वरह॥ *पृष्ठ - 1358*

यह पूरा श्लोक चार पंक्तियों का है यह पढ़ लिया करो उसके बाद फिर कीर्तन सोहिला पढ़ा करो।

महाराज जी ने कहा, ''तू यह पढ़ लिया करना। तेरे घोड़ों के चारों ओर एक किला बन जाया करेगा, चोर नहीं आयेंगे।''

सौदागर बोला, ''फिर महाराज! सभी किले के अन्दर प्रवेश कर जायेंगे।''

महाराज जी ने कहा, ''नहीं, कोई भी उस किले में प्रवेश नहीं कर सकेगा। बाहर वाले बाहर रहेंगे, अन्दर वाले अन्दर रहेंगे।''

फिर वह बोला, ''सुबह कैसे करूं?''

महाराज जी ने कहा, ''इसकी चाबी है, जपुजी साहिब। अमृत बेला में उठकर, स्नान करके, जब तूने तथा तेरे नौकरों ने घोड़ों के पास जाना हो। उस समय फिर शुद्ध मन से जपुजी साहिब का पाठ करो। उससे यह किला हट जाया करेगा और घोड़े बिल्कुल सही सलामत हो जाया करेंगे।''

बड़ी खुशी हुई, महाराज जी ने इतना बढ़िया मन्त्र बता दिया। साध संगत जी! बाणी ऐसी ही नहीं है। बाणी महा मन्त्र है। दुनियां में, जपुजी साहिब के मुकाबले में कोई मन्त्र अपनी पहुँच नहीं रखता, न सतयुग का, न द्वापर का, न त्रेता का और फिर कलयुग के मन्त्र ने कहाँ पहुँचना है? हम अब इतने बड़े महान मन्त्र को भूल गये हैं। जब कभी पूछते हैं तो उत्तर मिलता है, ''बाबा जी! हम तो बीमार हैं।''

मैं कहता हूँ, ''जपुजी साहिब याद है?''

जवाब मिलता है, ''नहीं जी! जपुजी साहिब तो याद नहीं।''

अब बताइये, बाबा जी क्या करें? मैं कौन सा मन्त्र बोलता हूँ? मैं तो बताता ही हूँ, बाणी की महिमा बताता हूँ कि बाणी में इतनी शक्ति है। यह तो तुम्हारे सामने प्रत्यक्ष उदाहरण है, कितने यहाँ से ठीक होकर जाते हैं। ऐसे-ऐसे रोगी ठीक हो गये जिन्हें ठीक होने की उम्मीद ही नहीं थी। बाणी के अन्दर शक्ति है।

वह सौदागर वैसे ही करने लग गया जैसा महाराज जी ने बताया था। ऐसा करते-करते जहाँ जहाँ पर चोर सोया करते थे, वहाँ पर चला गया। अब नितनेम के साथ हर रोज़ पाठ करता है तो चोरों को मौका नहीं मिलता। जब वे आते हैं तो ज़ोर से माथे पर धड़ाम से टक्कर लगती है जो किला होता है, वह दिखाई तो देता नहीं क्योंकि मन्त्र में शक्ति होती है।

एक बार मैं सिन्ध में था। उसी गाँव में एक उत्तम सिंघ नाम का प्रेमी रहता था। उसी गाँव के बड़े जमीदार के साथ किसी बात पर ठन गई। उसने उसे घर का मन्त्र दिया। जो भी अन्दर आता, उसकी छाती पर जोर से मुक्के लगते और हाय! हाय! करता हुआ बाहर निकल आता। सारा कुटुम्ब हैरान। अन्दर कोई भी न घुसता। जो भी अन्दर घुसता और कहता कि यहाँ क्या है, तभी उस पर मुक्के बरसने लगते, मुझे भी सारी वार्ता बताई।

मैंने कहा, ''अब तुमने मुझे भी मुक्के लगवाने हैं।'' छोटा सा था लगभग 20 वर्ष का। मैंने कहा, ''चलो, महाराज जी की बाणी है, मूल मन्त्र से बढ़कर तो कोई नहीं है।'' मैंने मूल मन्त्र पढ़ा और अन्दर चला गया। मैंने कहा, यहाँ तो घूंसे मारने वाला कोई नहीं है, वह कहाँ चला गया? अन्त में जाकर उस व्यक्ति को पकड़ा, पकड़ कर जब उसकी पिटाई करने लगे तब कहता है, ''जी, मैं खोल देता हूँ। उसने मन्त्र पढ़कर खोल दिया।''

अत: यह कीर्तन सोहिला बहुत शक्तिशाली मन्त्र है। साध संगत जी! घर की भी रक्षा होती है, पशुओं की भी रक्षा होती है। अपनी भी रक्षा होती है। यह मैं आपको आजमाई हुई बात बता रहा हूँ। आपकी रक्षा होती है। उजाड़ में जाकर लेट जाओ, कहीं भी जाकर सो जाओ। कीर्तन सोहिला इस विधि से पढ़ लो। हिम्मत नहीं पड़ेगी किसी की कि आपके निकट कोई चीज़ आ भी जाये।

अत: चोर भी साथ-साथ चलते हैं, कोई कलाम पढ़ता है, किला दिखाई तो देता नहीं फिर एक दम धड़ाम से माथे को टक्कर लगती है। कोई जादू करता है। एक दिन कीर्तन सोहिला पढ़ते-पढ़ते बीच में अधूरा रह गया, नींद आ गई। वह ऊंघने लग गया और ये अन्दर घुस गये। जब चोर

घोड़े खोलने लगे। आगे पीछे खोल कर, घोड़ों के मुँह में लगामें लगा दीं, जब उन पर बैठने लगे तो उसकी नींद खुल गई। इसने कीर्तन सोहिला फिर पढ़ना शुरू कर दिया। वह किला बन गया, अन्दर ही बैठे रह गये। घोड़ों को पकड़ कर खुरली के पास बैठे रहे। सुबह हुई। जब जपुजी साहिब पढ़ कर किला हटा दिया, उस समय देखा तो चोर अन्दर ही बैठे हैं। जो सेवादार था, उसके साथ नौकर चाकर थे, उन्होंने मिलकर चोरों को पकड़ लिया। वे कहते हैं, ''पकड़ लो भाई! हमें तो तुम्हारे मालिक से बात करनी है।'' मालिक के पास आ गये और कहने लगे, ''मालिक! हमने तेरे बहुत से घोड़े चुराये हैं। हम ही हैं जो चोरी करते हैं पर तुझे कोई कलाम आता है और अब तू किला बना देता है। हम दस दिनों से तेरे पीछे लगे हुए हैं। आज तूने कलाम गलत पढ़ ली और हमारा दाव लग गया। अब हमें बेशक मारो, पीटो जो मर्ज़ी करो, पर हमें वह कलाम बता दे।''

सौदागर बोला, ''यह कलाम मेरा नहीं है। यह तो गुरू पाँचवे पातशाह का कलाम है।''

चोर बोले, ''हमें उनके पास ले चल।''

अत: मैंने यह प्रार्थना की थी। इस तरह पांच शब्द पढ़ कर कीर्तन सोहिला पढ़कर फिर छोटी अरदास की जाती है। साथ ही यह भी कहा जाता है कि सच्चे पातशाह ''दो बजे जगा देना।'' घड़ी पास रख कर देख लो, एक मिनट भी इधर उधर नहीं होगा। दो बजे तुम्हें उठा देगा। एक दम तुनक कर जाग आ जायेगी।

जब मैं पटियाला में रहा करता था तब मेरे पास कोई घड़ी वगैरा नहीं हुआ करती थी। वहाँ पर एक हमारा फौजी सरदार था। वह दो तीन मील दूर रहता था। मुझे कहा करता था कि तुम यहीं पर रह जाओ। मैं मना कर देता और कहता कि मैं तो अपनी छावनी में ही रहूंगा। वहाँ पर मेरी डयूटी अखण्ड पाठ की दो बजे लगती थी। रानी ने कह रखा था कि उसने पाठ सुनना है। मैंने कहा, ''बीबी! यदि तूने मेरा पाठ सुनना है तो दो बजे उठ जाया कर। दो बजे से चार बजे तक मेरी डयूटी होती है। मैं पाँच बजे तक पढ़ लिया करूंगा। यदि पाठ सुनने का तुझे शौक है, तो पर्दे के पीछे बैठकर सुन लिया करो। उन दिनों में हम पाठ पढ़ा करते थे।''

रानी बोली, ''तुम कैसे पहुँचा करोगे? तुम्हारे पास घड़ी है।''

मैंने कहा, ''नहीं, मेरे पास एक आन्तरिक घड़ी है।''

25 अखण्ड पाठ हुए थे। तीन मील जाना। कभी भी मुझे देर नहीं हुई थी। यह कह कर सो जाता, ''सच्चे पातशाह! एक बजे जगा देना।'' ठीक एक बजे उठ जाना, स्नान करना और साईकल उठा कर चले जाना। अन्दर घड़ी होती है। गुरू साहिब को कह दो कि इतने बजे जागना है, अरदास कर दो। उतने बजे ही जगा देते हैं। अपना आपा सभी कुछ गुरू को समर्पित कर दो।

इस बाणी को पढ़ने-सुनने, विचार करने तथा धारण करने के लिये हमारा जन्म हुआ है। इस तरह फ़रमान है -

धारना - सुणन पढ़न कउ बाणी आइओ,
सुणन पढ़न कउ बाणी - 2, 2

सुणन पढ़न कउ बाणी आइओ
सुणन पढ़न कउ बाणी - 2

महाराज कहते हैं, तू मकान बनाने के लिये, जमीनें खरीद कर पैसे जमा करने के लिये संसार में नहीं आया। कहीं भूल में मत रहना -

कबीर इहु तनु जाइगा सकहु त लेहु बहोरि।
नागे पावहु ते गए जिन के लाख करोरि॥ *पृष्ठ - 1365*

जिसके पास सौ खरब रूपया था, वह भी खाली हाथ गया है। तू कौन से उलटे कर्म में पड़ गया। तू तो आया ही बाणी सुनने और पढ़ने के लिये है। बाणी का पालन, साधना करने के लिये आया हैं। पहले बाणी सुनी जाती है। सुनने का कितना महान महातम है -

नानक भगता सदा विगासु। सुणिऐ दूख पाप का नासु॥ *पृष्ठ - 2*

दुखों का और पापों का नाश। फिर इसे मानना है। मान कर फिर उसका पालन करना है। साधना करके फिर जो बात बाणी कहती है, परमेश्वर वही अन्दर प्रकट हो जायेगा। परमेश्वर बाहर नहीं हुआ करता। कहते हैं तुम्हारा जन्म ही इसीलिये हुआ है -

आइओ सुनन पड़ न कउ बाणी॥ *पृष्ठ - 1219*

फिर हमारे मन में आता है कि कहीं तो महाराज जी कहते हैं -

भई परापति मानुख देहुरीआ।
गोबिंद मिलण की इह तेरी बरीआ।
अवरि काज तेरै कितै न काम।
मिलु साध संगति भजु केवल नाम॥ *पृष्ठ - 12*

वहाँ पर भी नाम बाणी ही होती है। नाम के अंग हैं। पहले बाणी होती है। गुरू ग्रन्थ साहिब का तत्व जपुजी साहिब है। जपुजी साहिब का तत्व मूल मन्त्र है। मूल मन्त्र का जो तत्व है वह वाहिगुरू मन्त्र है। वह सारी गुरबाणी का बीज है जो वाहिगुरू मन्त्र है। सारी ही बाणी हुआ करती है सो आपका फ़रमान है -

आइओ सुनन पड़ न कउ बाणी॥ *पृष्ठ - 1219*

पर हुआ क्या?

नामु विसारि लगहि अनलालचि बिरथा जनम पराणी॥ *पृष्ठ - 1219*

नाम को तो भूल गया। लालचों में फस गया। जन्म का क्या हुआ? कहते हैं वृथा ही चला गया। इस काम से बिनां जन्म बर्बाद हो गया -

समझु अचेत चेति मन मेरे .....॥ *पृष्ठ - 1219*

कहते हैं अरे मेरे मन। समझ ले, तू तो नशे करने ही नहीं छोड़ता, निन्दा नहीं छोड़ता, आगे की बात तो तू क्या करेगा? चुगली करना तू बन्द नहीं करता, ईर्ष्या तू नहीं छोड़ता, वैर तू नहीं छोड़ता फिर आगे की क्या बात करेगा? तू तो पशु बना हुआ है -

आवन आए स्त्रिसटि महि बिनु बुझै पसु ढोर।। *पृष्ठ - 251*

कहते हैं, ''तू तो पशु है।'' महाराज कहते हैं, ''ढोर है गधा है गधा।'' कहते हैं ऐसे ही

उलटे कामों में पड़ा हुआ है –

बैर बिरोध काम क्रोध मोह। झूठ बिकार महा लोभ धोह।। *पृष्ठ - 267*

अब तू इस बात को समझ ले। तुझे संगत मिल गई गुरू नानक की संगत मिल गई। जो संगत में आ गये उनके भाग्य कुछ जाग पड़े क्योंकि –

बिन भागा सतसंगु न लभै बिनु संगति मैलु भरीजै जीउ॥ *पृष्ठ - 95*

हरि कीरति साध संगति है सिरि करमन कै करमा॥ *पृष्ठ - 642*

दो बातें सबसे श्रेष्ठ हैं –

कहु नानक तिसु भइओ परापति .....॥ *पृष्ठ - 642*

पर मिलती किसे हैं?

..... जिसु पूरब लिखे का लहना॥ *पृष्ठ - 642*

कोई तुमने नेक कार्य किया है जिसके बदले में तुम संगत में आ गये। अब संगत में आ गये तो महाराज जी हमें समझाते हुए कह रहे हैं –

समझु अचेत चेति मन मेरे कथी संतन अकथ कहाणी॥ *पृष्ठ - 1219*

इस बाणी में वह बात गुरू नानक साहिब ने कह दी, जो कोई बता नहीं सकता –

लाभु लैहु हरि रिदै अराधहु .....॥ *पृष्ठ - 1219*

लाभ उठाओ और हृदय में परमेश्वर की आराधना करो –

..... छुटकै आवण जाणी॥ *पृष्ठ - 1219*

फिर आना-जाना छूट जाया करता है। जन्म मरण खत्म हो जाता है। जब हम बाणी को हृदय में आराधना शुरू कर देते हैं –

उदमु सकति सिआणप तुम्हरी देहि त नामु वखाणी॥ *पृष्ठ - 1219*

हे वाहिगुरू जी! मुझे कृपा करके उद्यम भी दे और शक्ति भी दे, सियानापन भी दे। वे तो तेरी चीज़ें हैं, मेरी नहीं हैं, मुझे दे दे, फिर मैं तेरा नाम जपूं। मैं तो पागल हो गया हूँ –

सेई भगत भगति से लागे नानक जो प्रभ भाणी॥ *पृष्ठ - 1219*

इस प्रकार मन, बाणी, तन से नाम जपो। हमारे अन्दर चार प्रकार की बाणियां हैं। पहली तो जैसे मैं बोलता हूँ, इसे बैखरी बाणी कहते हैं। इसके साथ भी बाणी पढ़ो, नाम जपो। दूसरी बाणी होती है मधमा। जो कंठ में धीरे-धीरे बोली जाती है। तीसरी होती है, हृदय की बाणी इसे पसन्ती बाणी कहते हैं, इसमें बोलना नहीं, चलना नहीं, मुँह नहीं हिलाना, होंठ नहीं हिलाने अन्दर ही अन्दर बोलना है। अन्दर बाणी सुन रही होती है। मस्त हो जाता है, झूमने लगता है। उसे पूछो, ''तू क्यों झूमता है?'' कहता है, ''मैं अन्दर बाणी सुन रहा हूँ, नाम सुन रहा हूँ?'' इसके बाद परा बाणी आती है। परा बाणी, रीढ़ की हड्डी में सबसे नीचे जो मूलधार चक्र है, वहाँ होती है, यहाँ पर गहन मौन होता है। उसके अन्दर कोई फुरना नहीं होता। महाराज कहते हैं कि तू चारों बाणियों से आराधना कर।

पहले बाहर से जपना पड़ता है। जैसे हाथ वाले नलके से पानी निकालना हो, नलका

लगाना हो, पहले उसमें पानी बाहर से डालते हैं, फिर अन्दर वाला पानी बाहर निकलता है। इसी तरह पहले बैखरी बाणी से बाणी गानी पड़ती है –

आवहु सिख सतिगुरू के पिआरिहो गावहु सची बाणी॥ *पृष्ठ - 920*

इसे जी भर कर गाओ। गाते रहो, जितना गा सकते हो, पढ़ते रहो, जितना पढ़ सकते हो फिर ऐसा करते रहने से क्या होगा –

इह बाणी जो जीअहु जाणै .....॥ *पृष्ठ - 797*

जो दिल से उसे प्यार करेगा –

..... जिसु अंतरि रवै हरि नामा।। *पृष्ठ - 797*

उसके अन्दर नाम प्रकट हो जायेगा। फिर उस नाम को माला से वाहिगुरू–वाहिगुरू–वाहिगुरू–वाहिगुरू करो, करते जाओ, करते जाओ जल्दी–जल्दी करो, धीरे–धीरे करो पर समय बहुत लगाओ। जिसने तो पार होना है, वह कम से कम 8–10 घंटे लगाओ। जिसने यह कहना है कि भाई! इस बार तो काम बहुत हैं, अगले जन्म में देखेंगे, वह अढ़ाई घंटे से कम मत लगाओ। यह 8–10 घंटे लगाने से वाहिगुरू–वाहिगुरू करते–करते रसना पर नाम आ जाता है, फिर होंठ भी नहीं हिलते, जीभ हिलती है अन्दर अपने आप ही किसी को पता ही नहीं चल पाता कि वह नाम जप रहा है। फिर जब दो चार साल इस तरह रसना से जपते–जपते बीत जायें, फिर रसना बन्द हो जाती है, कंठ में नाम चला जाता है। अपने आप ही श्वांस तोड़–तोड़ कर नाम चलता है, उसे सांस ऐसे नहीं आता जैसे हम लेते हैं। वह सांस नाम से भरा हुआ होता है। चाहे एक सांस में 20 बार वाहिगुरू कह दे या 40 बार कह दे, चाहे आधा कह दे, कोई फर्क नहीं पड़ता। उसके बाद नाम फिर हृदय में चला जाता है। फिर आकर्षण पैदा होना शुरू हो जाता है। फिर न होठ हिलते हैं, न जीभ हिलती है फिर हर समय नाम में ध्यान रहता है। इसे अजपा जाप कहते हैं –

अजपा जापु न वीसरै आदि जुगादि समाइ॥ *पृष्ठ - 1291*

फिर वह वाहिगुरू में समा जाता है जिसका इस प्रकार नाम चल पड़ता है –

धारना - आदि जुगादि समाए जी,
जाप अजपा जान न वीसरै - 2, 2
जाप-अजपा जाप ना वीसरै - 2, 2
आदि जुगादि समाए जी,
जाप अजपा जाप न वीसरै - 2

बिना जपे, बिना होंठ हिलाए, वगैर जीभ हिलाए, जैसे फुव्वारा चलता है, अपने आप ही नाम चलता है, इसे अजपा जाप कहते हैं। इसके बारे में फ़रमान है –

घर महि घरु देखाइ देइ सो सतिगुरु पुरखु सुजाणु।। *पृष्ठ - 1291*

इस घर के अन्दर जो हमारा असली घर है, जीव आत्मा का दसवां द्वार जो इसे दिखा दे, कहते हैं वही सतगुरू कहलाता है। वहाँ की कुछ निशानियां हैं –

पंच सबद धुनिकार धुनि तह बाजै सबदु नीसाणु॥ *पृष्ठ - 1291*

वहाँ पर पाँच शब्दों की धुनकार सुनती है। धुन चलती है, वहाँ की निशानी है। महाराज कहते हैं पाँच शब्द बजते होंगे। अब हमें यह पता नहीं कि पाँच शब्द क्या होते हैं? कहाँ बजते हैं?

कैसे होते हैं? बड़े अनजान बन गये। हम तो बाहर से सिख रह गये। अन्दर तो हम जाते ही नहीं हैं। ऊपर-ऊपर तक ही रह जाते हैं। पहली जमात से दूसरी जमात में दाखिल नहीं होते। उन्नति नहीं करते -

दीप लोअ पाताल तब खंड मंडल हैरानु॥ *पृष्ठ - 1291*

दीपों, लौ, खण्डों, ब्रह्मण्डों को जब देखता है, वाहिगुरू की सृष्टि को जब देखता है, विस्मादिक अवस्था में आ जाता है -

तार घोर बाजिंत्र तह साचि तखति सुलतानु॥ *पृष्ठ - 1291*

वहाँ पर बेअन्त किस्म के राग हो रहे हैं -

सो दरु केहा सो घरु केहा जितु बहि सरब समाले॥ *पृष्ठ - 3*

महाराज जी ने बताया कि इतने गान हो रहे हैं। साथ ही यह भी कहा कि और भी बेअन्त गाते हैं, वे चित्त में नहीं आ रहे। वहाँ पर राग होता है, नाद होता है, इसी शरीर के अन्दर और इसमें भी वाहिगुरू है -

..... साचि तखति सुलतानु।
सुखमन कै घरि रागु सुनि .....॥ *पृष्ठ - 1291*

ये जो इड़ा पिंगला दो नाड़ियां हैं, जहाँ पर जाकर मिलती हैं - उसे सुखमना कहते हैं। इस बीच की नाड़ी का यह नाम है। जब व्यक्ति जप करता-करता वृत्ति को यहाँ पर एकाग्र कर लेता है, वहाँ पर उसे यह राग सुनाई देता है। जिसे cosmic music, (ब्रह्मण्डीय संगीत) कहते हैं। बिना बजाये बाजे बजते हैं। ये आम बाजे नहीं, इनसे भी करोड़ों गुणा अधिक सुन्दर और सुरीले बाजे होते हैं -

..... सुनि मंडलि लिव लाइ।। *पृष्ठ - 1291*

जहाँ अफूर अवस्था है, दसवां द्वार है, वहाँ पर लिव लगाकर सुन -

अकथ कथा बीचारीऐ .....॥ *पृष्ठ - 1291*

यह जो बात तुम्हें बता रहे हैं, यह कहने वाली नहीं है पर इस पर विचार कर लो -

..... मनसा मनहि समाइ।। *पृष्ठ - 1291*

सारी वासनाएं मन में समाने पर मन मर जाता है और अ-मन हो जाता है। ब्रह्मण्डीय मन, वाहिगुरू का मन बन जायेगा इसी शरीर में -

उलटि कमलु अंम्रिति भरिआ इहु मनु कतहु न जाइ॥ *पृष्ठ - 1291*

फिर जो भटकन है वह दूर हो जायेगी। शान्ति आ जायेगी। अन्दर उलटा हुआ हृदय कमल सीधा होकर अमृत से भर जायेगा। यह मन फिर कहीं नहीं जाता। यदि जाता भी है तो अन्दर की ओर ही जाता है। सारे काम काज़ भी करता है -

हाथ पाउ करि कामु सभु चीतु निरंजन नालि॥ *पृष्ठ - 1376*

अजपा जापु न वीसरै .....॥ *पृष्ठ - 1291*

कहते हैं, अब 24 घंटे ही परमेश्वर नहीं भूलता अपितु सारा शरीर ही नाम जपता है। नेत्र भी नाम जपते हैं, कान भी नाम जपते हैं, सारे शरीर का अंग-अंग नाम जपता है। इस तरह फ़रमान

करते हैं –

धारना - रोम-रोम हरि धिआवे,
गुरमुख पिआरे दा - 2, 2
रोम रोम हरि धिआवे
गुरमुख पिआरे दा - 2

गुरमुखि रोमि रोमि हरि धिआवै॥ *पृष्ठ - 941*

जब अजपा जाप की अवस्था आ जाती है। जिस प्रकार एक मशक पानी की भरी हो, इसके अन्दर सुई से एक बारीक छेद कर दो, पानी उन बारीक छेदों में से अपने आप नहीं निकलता। जब उस पर दवाब डालेंगे फिर सभी छेदों में से पानी निकलना शुरू हो जायेगा। इस प्रकार हर एक शरीर में साढ़े तीन करोड़ रोम होते हैं। ये मुसाम (छिद्र) हैं। इनमें से पानी निकलता है, मैल निकलती है। जब नाम की धारा बढ़ जाती है, तब सारा शरीर ही नाम का रूप बन जाता है। उस समय रोम-रोम में से धुन निकलती है। क्या यह किसी को सुनाई भी देती है? जिन महापुरुषों ने बहुत समय तक बन्दगी की है, जो अभी भी इस रास्ते पर चल रहे हैं, वे सुन सकते हैं। उन्हें पता चल जाता है कि इसका तो रोम-रोम नाम जप रहा है।

गुरू पाँचवे पातशाह ने गुरसिखों को बताया था, ''भाई! रोम-रोम से नाम कैसे जपा जाता है।''

अजपा जापु न वीसरै आदि जुगादि समाइ॥ *पृष्ठ - 1291*

यह वाहिगुरू में जाकर समा जाता है –

सभि सखीआ पंचे मिले .....॥ *पृष्ठ - 1291*

पाँच कर्मेन्द्रियां, पाँच ज्ञानेन्द्रियां, इनके अन्दर पाँच श्रेष्ठ गुण मिल जाते हैं – सत्य, सन्तोष, दया, धर्म और धीरज –

..... गुरमुखि निज घरि वासु॥ *पृष्ठ - 1291*

फिर अपने घर में वास हो जाता है जो हमारा असली घर होता है। जहाँ से निकल कर हम भटकते फिरते हैं परन्तु यह घर मिलता नहीं है –

सबदु खोजि इहु घरु लहै नानकु ता का दासु॥ *पृष्ठ - 1291*

जिसे यह मिल जाये, महाराज जी कहते हैं, मैं उसका दास हूँ क्योंकि वह बहुत ऊँची अवस्था में पहुँच गया –

लाभु लैहु हरि रिदै अराधहु .....॥ *पृष्ठ - 1219*

जब हृदय में आराधना करते हैं, यह नाम यहीं पर ही नहीं रूकता, इससे आगे भी चलता है। कान भी नाम जपते हैं। जब रहट घूं-घूं की आवाज़ करता है हमें भी घूं-घूं की आवाज़ सुनाई देती है पर बन्दगी करने वाले को क्या सुनाई देता है? उसे तो तूं-तूं-तूं सुनाई देता है –

हरहट भी तूं तूं करहि बोलहि भली बाणि॥ *पृष्ठ - 1420*

वह भी तूं-तूं करता है। जब पन्छी बोलते हैं वे भी उसे परमेश्वर का नाम ही जपते नज़र आते हैं। इस तरह फ़रमान है –

धारना - नाम हरि दा जपदे,
सारे वणां दे पंखेरू - 2, 2
वणां दे पंखेरू, सारे वणां दे पंखेरू - 2, 2
नाम हरी दा जपदे, ... -2

जो बोलत है म्रिग मीन पंखेरू सु बिनु हरि जापत है नही होर॥ *पृष्ठ - 1265*

हमें क्यों नहीं सुनता क्योंकि हमारे दिव्य कान बन्द हैं। महाराज कहते हैं, सारी सृष्टि नाम जप रही है -

नानक जन हरि कीरति गाई छूटि गइओ जम का सभ सोर।। *पृष्ठ - 1265*

इस प्रकार जब पढ़कर, नाम जप कर वृत्ति यहाँ पहुँचती है फिर आगे क्या होता है? नेत्र खुल जाते हैं। नेत्र देखते हैं कि यह तो वाहिगुरू ही सभी के अन्दर समाया है, वाहिगुरू के अतिरिक्त और कोई है ही नहीं। इस तरह से फ़रमान करते हैं -

धारना - राम बोले राम बोले राम बोलदै,
सारीआं घटां दे विच राम बोलदै - 2, 2
राम बोले राम बोले राम बोलदै,
सारीआं घटां दे विच राम बोलदै -2.

सभै घट रामु बोलै रामा बोलै। राम बिना को बोलै रे।
एकल माटी कुंजर चीटी भाजन हैं बहु नाना रे।
असथावर जंगम कीट पतंगम घटि घटि रामु समाना रे॥ *पृष्ठ - 988*

सभी के अन्दर परमेश्वर बोलता हुआ नज़र आता है। हम कहते हैं, हमें तो सुनता ही नहीं कि परमात्मा भी बोलता है? महाराज कहते हैं -

दिला का मालकु करहि हाकु।। *पृष्ठ - 897*

कहते हैं, आवाज़ें लगा रहा है, जब से तू पैदा हुआ है तभी से कह रहा है। इस जन्म की बात छोड़, तू पशु भी रहा है, पन्छी भी रहा है, सांप भी बना है, गन्डोया भी बना है -

कई जनम भए कीट पतंगा। कई जनम गज मीन कुरंगा।
कई जनम पंखी सरप होइओ। कई जनम हैवर ब्रिख जोइओ॥ *पृष्ठ - 176*

वृक्ष भी बना है, नाम तो तेरे अन्दर हर समय था। वह वस्तु उसी समय खत्म हो जाती है, जिसके अन्दर नाम न बोलता हो। यह औंकार की धुन सभी के अन्दर बोलती है। कहते हैं, फिर सुनाई क्यों नहीं देती? हम तो कान बन्द करके भी सुनते हैं वह तो सुनती नहीं। साध संगत जी! सुनती इसलिये नहीं -

माइआधारी अति अंना बोला। सबदु न सुणई बहु रोल घचोला॥ *पृष्ठ - 313*

मन के अन्दर बहुत शोर शराबा, गड़बड़ घोटाला मचा हुआ है। वह तो कहता है, हमारा तो जपुजी साहिब में ही मन नहीं लगता, नाम तो सूक्ष्म चीज़ है, वह कहाँ सुनाई देगी? जब जपुजी साहिब पढ़ते-पढ़ते ही मन नहीं टिकता, भागा फिरता है, इधर-उधर उछल कूद करता रहता है, पता ही नहीं चलता कि कितना पढ़ लिया, कितना छूट गया। पता ही तभी लगता है जब -

जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि।
नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि।। *पृष्ठ - 6*

क्यों इसे 'जपुजी साहिब' पढ़ लिया कहेंगे? फिर नाम कहाँ से सुनेगा?

नउ निधि अंम्रितु प्रभ का नामु। देही महि इस का बिस्रामु।
सुंन समाधि अनहत तह नाद। कहनु न जाई अचरज बिसमाद॥ *पृष्ठ - 293*

यहाँ पर ही नहीं, गुरू महाराज तो यह फ़रमान करते हैं कि जो तू चाँद आदि देखता है, सूर्य देखता है, आकाश, धरती, पवन, पानी देखता है, बैसन्तर (अग्नि) तुझे दिखाई देती है, ये खण्ड, दीप देखता है, पाताल देखता है, पाताल की पुरियां देखता है, चारों खाणें अन्डज जेरज, सेतज, उतभुज देखता है, ब्रह्मा, विष्णु, महेश देवताओं का ध्यान धरता है, 33 करोड़ देवता देखता हैं, पन्छी, भूत, प्रेत, पर्वत, बेल बूटे, सूक्ष्म चीज़ें देखता है, स्थूल चीज़ें देखता है, सिद्ध साधक देखता है, कहते हैं, सभी के अन्दर नाम धुन चल रही है। उसी नाम धुन के सहारे ही उनके शरीर कायम हैं और सभी चीज़ों में परमेश्वर उनकी याद में है -

सभु को आखै आपणा जिसु नाही सो चुणि कढीऐ॥ *पृष्ठ - 473*

यह सारी प्रकृति जितनी भी दिखाई दे रही है, एक मनुष्य को छोड़कर, सभी नाम के ध्यान में है तथा हुक्म का पालन करती है। सूर्य की हिम्मत नहीं है कि वह ज़रा सा भी इधर उधर हो जाये। यदि मामूली सा भी पिछड़ जाये तो उसी समय ब्रह्मण्ड में विस्फोट हो जायेगा। यह सारी सृष्टि खत्म हो जायेगी। इतना हुक्म में बन्धा हुआ कार्य करता है। महाराज कहते हैं, सभी नाम की धुन के साथ जुड़े हुए हैं, हुक्म में बन्धन में है -

धारना - नाम हरी दा जपदी,
कुदरत सारी-कुदरत सारी - 2, 2
नाम हरी दा जपदी,
कुदरत सारी-कुदरत सारी - 2

महाराज कहते हैं, ''प्रेमियो! तुम्हें नहीं पता, संसार में ऐसी कोई वस्तु नहीं जिसके अन्दर नाम की धुन न हो।''

प्रथम ओअंकार तिन कहा। सो धुन पूर जगत मो रहा॥

वह धुन हर एक के अन्दर है। वृक्षों के अन्दर भी है। अन्यथा वृक्ष गिर जाये, कुछ भी न रहे। सो महाराज कहते हैं -

सिमरै धरती अरु आकासा।
सिमरहि चंद सूरज गुणतासा।
पउण पाणी बैसंतर सिमरहि
सिमरै सगल उपारजना॥
सिमरहि खंड दीप सभि लोआ।
सिमरहि पाताल पुरीआ सचु सोआ।
सिमरहि खाणी सिमरहि बाणी
सिमरहि सगले हरि जना॥
सिमरहि ब्रहमे बिसन महेसा।
सिमरहि देवते कोड़ि तेतीसा।
सिमरहि जख्यि दैत सभि
सिमरहि अगनतु न जाई जसु गना॥

सिमरहि पसु पंखी सभि भूता॥ *पृष्ठ - 1078*

जितने पंचभूत हैं, पवन, पानी, आकाश वगैरा, कहते हैं, ये सभी उसका सिमरण करते हैं। पशु और पक्षी भी सिमरण करते हैं। कुछ लोगों का विचार है कि पशुओं को परमात्मा का पता होता है? साध संगत जी! पशुओं में आदमी से भी ज्यादा अक्ल होती है। इस कुत्ते को कहीं भी ले जाओ, दूर जाकर छोड़ आओ, वह अपने घर वापिस आ जायेगा, मनुष्य नहीं आ सकता - मनुष्य को पता ही नहीं चलता। मनुष्य की भी आखें बान्ध लो और कुत्ते की भी आखें बान्ध लो। दोनों को साथ-साथ ले जाओ और कहीं परदेस में छोड़ आओ। कुत्ता तो लौट आयेगा पर मनुष्य नहीं लौट सकेगा। जो मनुष्य drugs (नशीले पदार्थ) चोरी छिपे लेकर जाते हैं, चोरी करते हैं, कुत्ते को पहले ही पता चल जाता है। कहीं भी छिपा लो, वह वहीं पर ही भौंकने लग जाता है, जिससे पता चल जाता है कि अमुक व्यक्ति के पास स्त्रह्ल्ह्द है। यह मनुष्य स्त्रह्ल्ह्द लेकर जा रहा है। मनुष्य को पता नहीं चलता, कुत्ते की मदद लेते हैं। कत्ल हो जाते हैं, चोरियां हो जाती हैं, पुलिस वाले खोजी कुत्ते ले आते हैं, आप क्यों नहीं जाते? वह कुत्ता उसी समय सूंघ कर चल पड़ता है, पीछे-पीछे पुलिस वाले, जिधर-जिधर वह जाता है, चल पड़ते हैं। कुत्ते को एक बार कोई वस्त्र सुंघा दो, सौ लोगों के बीच में से जाकर पकड़ कर ले आयेगा। उनके अन्दर हमारी अपेक्षा बहुत सी बातों में अक्ल ज्यादा है। हिरन का बच्चा पैदा हो और मनुष्य का भी बच्चा पैदा हो, दोनों को पानी में फैंक दो, हिरन का बच्चा कभी नहीं डूबेगा, मनुष्य का डूब जाता है। हिरन के बच्चे को चाहे दो दिन का हो, पानी में फैंक दो और मनुष्य के बच्चे को दो साल का भी हो, फैंक दो फिर भी मनुष्य का बच्चा डूब जायेगा हिरन का नहीं क्योंकि पैदा होते ही उसे पता था। उसे कोई बताता नहीं कि दूध कहाँ पर है? अपने आप ही दूध को ढूंढ लेता है। उसे पता है कि यह उसकी खुराक है। मनुष्य के बच्चे को तो पता ही नहीं होता कि माँ का दूध कहाँ है? अतः इसमें इतनी अक्ल नहीं जितनी पशुओं में होती है। इसके अन्दर एक अक्ल ही बहुत है, वह यह है कि इसे परमेश्वर ने बुद्धि दी हुई है, यह अच्छे बुरे की पहचान कर लेता है। अच्छे बुरे की तमीज़ उन्हें भी है। हरिआ पशु हो, फसल में घुसने से पहले, इधर उधर नज़र दौड़ा कर मालिक को देखता है कि कहीं उसकी नज़र तो इस पर नहीं है फिर खेत में घुसता है। यदि मालिक उसकी ओर देख रहा होगा तो वहीं पर ही चुगता रहेगा पर जैसे ही मालिक का ध्यान किसी और तरफ हो गया, उसने भागकर फसल में घुस जाना है। पता तो उसे भी है।

पौराणिक कथाओं में वर्णित एक हाथी जिस समय पानी में डूबने लगा तो एक ग्राह ने उसके पैर को पकड़ लिया केवल एक फुट सून्ड ही बाहर रह गई थी, उस समय उसने राम को याद किया -

जब ही सरनि गही किरपानिधि गज गराह ते छूटा॥ *पृष्ठ - 632*

उसी समय परमेश्वर ने आकर उस ग्राह के तार काट दिये। पशुओं का परमेश्वर है, केवल मनुष्यों का ही नहीं, पशुओं का भी है। महाराज कहते हैं -

हाथी की पुकार पल पाछै पहुचत ताहि
चीटी की चिघार पहिले ही सुनीअत है॥ *अकाल उसतति*

यदि परमेश्वर सुनता है, तभी महाराज जी ने लिखा है कि चींटियों की भी पुकार सुनता

है। जो जानवरों को मार-मार कर खाते हैं .....,महाराज कहते हैं, इन्हें खाकर क्या तू छूट जायेगा?

कबीर खूबु खाना खीचरी जा महि अंम्रितु लोनु।
हेरा रोटी कारने गला कटावै कउनु॥ *पृष्ठ - 1374*

पहले तू इन्हें खा फिर ये तुझे खायेंगे। कर्म बो दिया क्योंकि परमेश्वर इनका भी है। मनुष्य जबरदस्ती करता है -

कबीर जोरु कीआ सो जुलमु है लेइ जबाबु खुदाइ।। *पृष्ठ - 1375*

क्या बकरा कभी अपने आप कहता है कि मेरी गर्दन काट दो? एक आदमी उसे बान्धता है, दूसरा पकड़ता है फिर उसके बाद दूसरा कहता है, ''मार इसे गन्डासा।'' प्यारे! इसका लेखा देना पड़ेगा। जब यह हिसाब किताब देना पड़ेगा तब दुखी होगा, मांस ही खिलाना पड़ेगा क्योंकि भगवान तो सभी का है। महाराज कहते हैं, वह तो पशुओं का भी है -

सिमरहि पसु पंखी सभि भूता।
सिमरहि बन परबत अउधूता।
लता बली साख सभ सिमरहि.....॥ *पृष्ठ - 1079*

कहते हैं, ये बेलें भी परमेश्वर का नाम याद रखती हैं। जो ये फूल हैं ये भी वाहिगुरू को याद रखते हैं -

..... रवि रहिआ सुआमी सभ मना।
सिमरहि थूल सूखम सभ जंता।
सिमरहि सिध साधिक हरि मंता।
गुपत प्रगट सिमरहि प्रभ मेरे
सगल भवन का प्रभ धना॥ *पृष्ठ - 1079*

क्योंकि वह सभी का है, सभी के अन्दर समाया है -

सिमरहि नर नारी आसरमा॥ *पृष्ठ - 1079*

चारों आश्रम -

सिमरहि जाति जोति सभि वरना॥ *पृष्ठ - 1079*

चारों वर्ण -

सिमरहि गुणी चतुर सभ बेते सिमरहि रैणी अरु दिना॥ *पृष्ठ - 1079*

रात और दिन भी उसे याद करते हैं -

सिमरहि घड़ी मूरत पल निमखा॥ *पृष्ठ - 1079*

यह पल भी, निमख भी, सैकिन्ड मिनट ये सभी परमेश्वर का सिमरण कर रहे हैं -

सिमरै कालु अकालु सुचि सोचा॥ *पृष्ठ - 1079*

काल भी उसका सिमरण कर रहा है -

सिमरहि सउण सासत्र संजोगा .....॥ *पृष्ठ - 1079*

ये जो शगन है, ये भी उसे याद करते हैं -

..... अलखु न लखीऐ इकु खिना॥ *पृष्ठ - 1079*

यदि भूलता है तो मनुष्य भूलता है। इस तरह फ़रमान है –

धारना - सारे याद हरी नूं रखदे,
काहतों तैनूं राम भुलिआ - 2, 2
मेरे पिआरे, काहतों तैनूं राम भुलिआ - 2, 2
सारे याद हरी नूं रखदे, ... -2

वृक्ष, बेल बूटे, पशु पन्छी, सभी को परमेश्वर याद रहता है। यदि किसी को भूला हुआ है तो केवल मनुष्य को ही भूला हुआ है। इसके अन्दर हर समय परमेश्वर आवाज़ें लगा रहा है – हर वक्त –

दिला का मालकु करहि हाकु॥ *पृष्ठ - 897*

ऐसी हाक (आवाज़) लगाई है, जिस दिन से बिछुड़ा है उसी दिन से आवाज़ आ रही है। कोई जन्म धारण कर ले, कोई शरीर धारण कर ले, परमात्मा की आवाज़ तो आयेगी ही। सुन तो सही, इसे अन्दर। कभी पूछ ले किसी से कि परमेश्वर की आवाज़ कैसे सुनी जाती है? महाराज कहते हैं–

जलि थलि महीअलि सुआमी सोई। अवरु न कहीऐ दूजा कोई।
गुर गिआन अंजनि काटिओ भ्रमु सगला अवरु न दीसै एक बिना।। *पृष्ठ - 1079*

कहते हैं, सभी के अन्दर है। इतनी सी बात मान लो एक बात मान लो कि परमेश्वर सभी के अन्दर है फिर बाहर भी है? कहते बाहर भी है। बाहर कहाँ है? किसी जगह पर खड़ा हुआ है? कहते नहीं, वह तो सर्वत्र परिपूर्ण है, जैसे हवा है, आकाश है, ऐसे ही परमेश्वर है, तुम्हारा प्रत्येक कदम परमेश्वर के अन्दर है। हर एक सांस परमात्मा में है, उसे याद तो कर लो। यदि याद कर लें –

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ। कलि कलेस तन माहि मिटावउ॥ *पृष्ठ - 262*

फिर सुख अपने आप ही द्वार पर आ जायेंगे, जब उसे याद कर लिया। जो उसे भूलता है –

कोटि बिघन तिसु लागते जिस नो विसरै नाउ॥ *पृष्ठ - 524*

एक विघ्न नहीं? करोड़ों विघ्न पैदा हो जाते हैं। हम कहते हैं, जी हमारी तो कमाई नहीं होती। नुकसान ही नुकसान हो रहा है। महाराज जी कहते हैं कि तू तो परमेश्वर को हर वक्त भूले रहता है फिर तो घाटा ही पड़ना है प्यारे। महाराज तो यहाँ तक कहते हैं, **तुझे संसार में मनुष्य बनने का कोई लाभ न हुआ। इससे तो अच्छा था कि पशु ही बना रहता। पाप तो सिर पर न चढ़ते क्योंकि पशुओं को पाप नहीं लगता, वे कर्म यौनियां हैं, कर्म भोगते हैं।** यह मनुष्य ही है जिसे स्वतन्त्र यौनि मिली है। वह जितने कर्म करता है, उनकी गठड़ियां बान्ध कर ले जाता है –

गुणा गवाई गंठड़ी अवगण चली बंनि॥ *पृष्ठ - 23*

उसके लिये फ़रमान करते हैं कि इसीलिये तो कहते हैं –

जिह कुलि पूतु न गिआन बीचारी। बिधवा कस न भई महतारी॥ *पृष्ठ - 328*

जिस घर में परमेश्वर का नाम लेने वाला कोई नहीं हुआ, अच्छा होता वह माँ विधवा हो जाती। ऐसा कुपुत्र तो पैदा न होता जो नशे करता रहता है – आप भी दुखी और दूसरे भी दुखी यहाँ

पर मुझे आकर पूछते हैं, ''बाबा जी! लड़का थोड़ा सा नशा करता है, डोडे पीता है, सगाई कर दें।''

मैंने कहा, ''अरे! लड़की रोयेगी बेचारी।''

कहते हैं, ''जमीन जायदाद बहुत है।'' मैंने कहा, ''लड़की जमीन खायेगी क्या?'' वह सारी जमीन उसने गिरवी कर देनी है, कुछ भी अपने पास नहीं रखना। नशे करता है, लड़ाई झगड़े, दंगे कर लेगा। लड़की को तो उसने पूछना ही नहीं। यदि उसे नरकों में फैंकना है तो कर दे सगाई? इसकी अपेक्षा तो बन्दगी करने वाले किसी गरीब मेहनती के यहाँ कर दे। वहाँ पर आराम से बैठकर दोनों रोटी तो खा लिया करेंगे। दुख सुख तो बांट लिया करेंगे।

महाराज कहते हैं, ऐसे जो लोग हैं –

जिह कुलि पूतु न गिआन बीचारी। बिधवा कस न भई महतारी॥ *पृष्ठ - 328*

कहते हैं, विधवा हो जाती तो ऐसा कुपुत्र तो पैदा न होता। बन्दगी करने वाला नहीं आता –

जिह नर राम भगति नहि साधी। जनमत कस न मुओ अपराधी।। *पृष्ठ - 328*

कहते हैं, यदि नाम नहीं जपा; चलो पैदा हो गया, यदि बन्दगी नहीं की अपराधी! फिर तो तू पैदा होते ही मर जाता अच्छा था। यहाँ पर न आता –

धारना - काहनूं जंमणा सी भगती तों हीणिआ वे,
काहनूं जंमणा - 2, 2
काहनूं जंमणा सी भगती तों हीणिआ वे
काहनूं जंमणा - 2

जिनी ऐसा हरि नामु न चेतिओ से काहे जगि आए राम राजे।
इहु माणस जनमु दुलंभु है नाम बिना बिरथा सभु जाए।
हुणि वतै हरि नामु न बीजिओ अगै भुखा किआ खाए।
मनमुखा नो फिरि जनमु है नानक हरि भाए॥ *पृष्ठ - 450*

कैसा नाम? यदि एक बार भी जप लिया जाये, गले में पड़ी हुई यमों की फांसी उसी समय कट जाती है। यदि इस बात की सारी जिन्दगी समझ ही न आई कहते हैं, फिर तेरे पैदा होने का क्या लाभ? क्यों माँ को तकलीफ दी थी? कितना समय तेरे पालन पोषण में लगा? तुझ पर कितनी कुर्बानियां कीं? माँ-बाप कितने दुखी हुए? सभी कुछ तेरे सुख के लिये करते हैं, जायदादें बनाते हैं कि हमारा पुत्र सुखी रहे। कहते हैं यदि बन्दगी नहीं करनी थी तो तेरे आने का क्या लाभ था? कोई लाभ नहीं था। यदि पाप करेगा, शराब पीने लग गया। रहतनामें में ऐसा लिखा है –

तनक तमाकू सेवीऐ देव पितर तजि जाइ।
पाणी ता के हाथ कउ मधरा सम अघदाइ।
मदरा दहती सपत कुल भांग दहै तन एक।
जगत जूठ शत कुल दहै निंदा दहै अनेक॥

शराब सात कुलों का नाश कर देती है, ऐसा पुत्र पैदा कर लिया। सात कुलों का नाश अपने आप ही करने के लिये गड्ढा खोद लिया। इससे तो अच्छा था तू पैदा ही न होता। माँ-बाप को मारते हैं। माँ को मारते हैं – पर यह भूल जाते हैं कि माँ को मारने का पाप एक लाख यदि

हत्याएं कर दें तो इतना पाप एक माँ को मारने से लगता है फिर कभी उसे मनुष्य जन्म भी नहीं मिलता। नरकों में पड़ा रहता है। क्या लाभ ऐसे पुत्र का? इससे अच्छा था न आता –

जिनी ऐसा हरि नामु न चेतिओ से काहे जगि आए राम राजे॥ *पृष्ठ - 450*

कहते हैं, उसके आने का क्या लाभ, उसने तो पाप बान्ध लिये। यदि तम्बाकू पीता है, ज़र्दा खाता है? कहते हैं, जी भुक्की खाता है। अरे प्यारे! तेरे तो रक्षक, रक्षा करने वाले देवता, बुजुर्ग स्वर्गों में बैठे कहते थे कि हमारा पड़पौता, हमारा पोता, इसके काम काज़ फले फूले, विघ्नों से रक्षा करते थे। यह बात मैं ऐसे ही नहीं कह रहा। यह बात मैंने इंगलैण्ड में देखी है। वहाँ पर हमारी इस लड़की का कारोबार चलता था। वह पूछने चली गई। उस स्त्री का नाम Mrs. Vinter था। समय ले लिया, दो-दो महीने बाद समय मिलता है। जब वहाँ गई तो उसने कहा कि देखो सामने एक रूह आ रही है, वह कह रही है कि वह नीचे वाले स्वर्ग में रहती है। लड़की ने पूछा क्या निशानी है इसकी? वह बोली, ''मुझे यह बता रही है कि 1966 में जब इसकी दादी मरी थी, तो मैंने सारा वृतान्त चिट्ठी में लिखा था। उस समय समझ गई कि मुझे किसी रिश्तेदार ने चिट्ठी लिखी थी। फिर वह बोली, इससे ऊपर भी एक और रूह है, वह स्त्री की है और वह कह रही है कि मैं इसकी माँ की माँ हूँ और इसे कह दो कि कोई चिन्ता न करे। इसका कारोबार बहुत बढ़िया चलेगा। इसने फैक्टरी लगानी है।'' कुछ दिनों बाद फैक्टरी लग गई।

वे रूहें गन्धर्व लोक में, देव गन्धर्व में, स्वर्ग, पितर लोक, इन्द्र लोक, प्रजापति लोक, कर्मदेव लोक, अजान देव लोक, ब्रह्म लोक, शिवलोक, बैकुण्ठ धाम, सच खण्ड, वहाँ तक बैठी हुई सहायता करती हैं क्योंकि खून का रिश्ता होता है। खून का रिश्ता टूटा नहीं, दरगाह में जाकर भी बना रहता है। जो भूत प्रेत होते हैं, वे भी उसी घर के चारों ओर चक्कर लगाने लग जाते हैं। उन्हें समझता नहीं। वे पहले पशुओं को मारते हैं, फिर बीमार कर देते हैं बच्चों को, फिर मारने लग जाते हैं। वे तो बड़े क्रूर होते हैं। जो देव यौनियों में जाते हैं, वे सहायता किया करते हैं पर यदि कोई व्यक्ति तम्बाकू भी पी ले –

तनक तमाकू सेवीऐ देव पितर तजि जाइ॥

देवता भी साथ छोड़ जाते हैं, पितर भी छोड़ जाते हैं –

पाणी ता के हाथ कउ मधरा सम अघदाइ॥

उसके हाथों का पानी पीना भी ऐसे लगता है जैसे शराब पीने का दोष होता है। शराब का दोष कितना है –

मदरा दहती सपत कुल भांग दहै तन एक।

सात कुलों का नाश करती है –

जगत जूठ शत कुल दहै निंदा दहै अनेक॥

100 कुलों का नाश तम्बाकू पीने वाला करता है।

आज कल टी. वी. देखो, तम्बाकू का कितना जोर दिखाया जा रहा है कि जो तम्बाकू पी रहे होते हैं, उनके धूएं छोड़ने से कितना नुकसान हो रहा है। दोनों ही मरते हैं अर्थात पीने वाला

भी और उसके धूएं में बैठने वाला भी अमेरिका में तो बन्द कर दिया। अब चलने ही नहीं देते। अब यह शोर शराबा हमारे देश में आ गया। पहले जब सिंह कहा करते थे कि तम्बाकू मत पीयो, अमृतसर में हमने नहीं पीने देना, यहाँ पर हमारे भाई आते हैं, दर्शन करने के लिये, हजारों की संगत दर्शन करने आती है, तुम धुआं छोड़ते हो इससे वातावरण दूषित होता है इसलिये तम्बाकू का प्रयोग मत करो। हमारे अखबार क्या कहते थे, लो जी यदि सिखों का जोर चल गया तो तम्बाकू को बन्द कर देंगे। अब इन्हें पूछो तुम क्यों बन्द कर रहे हो? जब कैंसर से मरने लगे फिर अपने आप ही कहते हैं कि तम्बाकू पर पाबन्दी लगा दो। पहले तो तुमने इस रोग को बढ़ा लिया। बीड़ियां ही बीड़ियां पीते रहें। जब खातमा होने लगा, अब कहते हो बन्द करो। गुरू साहिब ने 500 साल पहले कहा था, यदि उस समय मान लेते। एक तो यह कुलों का नाश करता है, दूसरा शरीर का नाश तो इसने करना ही है। यह रक्त नाड़ियों में जाता है जो उसका पुत्र होगा, वह रोगी पैदा होगा, तम्बाकू खाने वाले के पुत्र को कैंसर होगा, उसे ही नहीं, उसका असर उसके पौत्रों पर भी होगा। इस प्रकार दसवीं पुश्त तक यह वार करेगा। अन्य दसवीं जो पुश्त होती है, जैसा दसवां बाबा वैसा ही स्वरूप दसवें पौत्र का हुआ करता है। उसे gene कहते हैं। gene बिगड़ जाते हैं। कहते हैं फिर ऐसे पुत्र का क्या करना था जिसने खानदान भी बदल दिया। बुर्जुगों को भी गुनाहागार बना दिया, नरकों में फैंक दिया। महाराज कहते हैं इसे तो आना ही नहीं चाहिये था –

जिनी ऐसा हरि नामु न चेतिओ से काहे जगि आए राम राजे॥ *पृष्ठ - 450*

क्यों पैदा होना था इन्हें?

इहु माणस जनमु दुलंभु है नाम बिना बिरथा सभु जाए।
हुणि वतै हरि नामु न बीजिओ अगै भुखा किआ खाए।
मनमुखा नो फिरि जनमु है नानक हरि भाए॥ *पृष्ठ - 450*

अतः साध संगत जी! यह जो बाणी है, यह धुर की बाणी है, अकाल पुरुष की बाणी है। यही गुरू है। गुरू जो गुरू नानक साहिब जी थे, पंच भूतक चोला, देखने में बहुत सुन्दर लगता था। वह शब्द के कारण ही था। उनके अन्दर शब्द था। महाराज कहते हैं, ''यह जो बाणी है, इसे तुम गुरू रूप में मान लो।'' इस प्रकार हमें सलाह देते हैं –

धारना - मन लै पिआरिआ
इहो बाणी गुरू रूप है - 2, 2
बाणी गुरू रूप है, बाणी गुरू रूप है - 2, 2
मन लै पिआरिआ, ... -2

बाणी गुरू गुरू है बाणी विचि बाणी अंम्रितु सारे।
गुर बाणी कहै सेवकु जनु मानै परतखि गुरू निसतारे॥ *पृष्ठ - 982*

जब बाणी माननी ही नहीं है, बाणी का मान ही नहीं करना, आदर नहीं करना, फिर तो बड़ी मुश्किल बात हो जाती है, फिर छुटकारा नहीं हो सकता। कई प्रेमियों का विचार होता है कि गुरू देहधारी होना चाहिये। ठीक है, अपने-अपने विचार होते हैं। हमारे यहाँ तो गुरू दशमेश पिता जी ने जो गुरू नानक पातशाह की ज्योति थी, गुरू अंगद साहिब जी, गुरू अमर दास जी, गुरू राम दास जी, गुरू अर्जुन साहिब में, गुरू हरगोबिन्द साहिब में, गुरू हरि राय साहिब में, गुरू हरि क्रिशन महाराज, गुरू तेग बहादुर साहिब में, गुरू गोबिन्द सिंघ जी में और वही ज्योति गुरू ग्रन्थ साहिब में

प्रवेश कर गई। अब इस बाणी ने हमारा उद्धार करना है। जब तक हम मानते नहीं हैं, हमें इसका स्त्रोत, उदगम पता नहीं चलेगा और जब तक हमें कोई बतायेगा नहीं, तब तक पता नहीं चलेगा। सन्तों का यह कर्तव्य होता है –

कबीर सेवा कउ दुइ भले एकु संतु इकु रामु।
रामु जु दाता मुकति को संतु जपावै नामु॥ *पृष्ठ - 1373*

सन्त गुरू बनने के लिये नहीं हुआ करते। सन्त नाम जपवाते हैं और यदि सन्तों के साथ प्यार हो, हृदय में उनके प्रति आदर मान हो, फिर जल्दी पार हो जाते हैं। इसीलिये बाणी पढ़ने की भी एक विशेष विधि होती है। अनुभवी महापुरुष बताते हैं कि –

पवित्र मन तन, मौन बाणी संतोख हाजर जानि।
इकांत हं काम तिआगे, निसचा अभिआसि ठानि॥

इस तुक में कितनी बातें कह गये। कहते हैं, यदि बाणी पढ़नी है तो पहले चित्त जो है यह जाप के अर्थ में लगा रहे, चित्त जाप में जुड़ा रहे, फिर दूसरी बात यह है कि यदि सिमरण करता है और थोड़ा सा भी आनन्द आता है तो बातें न करे कि मुझे ऐसा अमुक आनन्द आता है, रोशनी दिखाई देती है, मुझे अनहद नाद सुन गया आदि आदि। महाराज जी कहते हैं, ''इन बातों को गुप्त रखे और पवित्रता धारण करे। पवित्रता कई प्रकार की होती है, पहले तो घर पवित्र चाहिये। घर में गन्दगी नहीं होनी चाहिये, मक्खियां इधर उधर भिन-भिना रही हों, फिर नाम कैसे जप लेगा? घर स्थान साफ सुथरा रखो – 'सफाई दूसरी खुदाई।' जहाँ सफाई है, वहाँ परमात्मा है।

दूसरा अपने वस्त्रों की पवित्रता रखना। साफ धुले हुए वस्त्र पहने। तीसरा अपने शरीर को स्वच्छ रखना, केशों आदि को साफ रखना, उनमें मैल होती है। ध्यान से सुनना। हिंसा- दूसरों का नुकसान करना और सोचते रहना – यह मैल होती है। झूठ यह मैल लगती है – चोरी की मैल लगती है – एलाही की मैल लगती है, ईर्ष्या इसकी भी मैल होती है। निन्दा, तृष्णा, राग, द्वैष, पाखण्ड, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, राज, जात, रूप, माल, यौवन ये पाँच ठग हैं इनका अभिमान। शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध ये विषय वासनायें बेअन्त प्रकार की। हर समय वासना करते रहना कि मेरे पुत्र हो जाये, मेरा काम बन जाये, यह मैल लगती है। महाराज जी कहते हैं – यह कितनी मैल लग जाती है –

जनम जनम की इसु मन कउ मलु लागी काला होआ सिआहु।
खंनली धोती उजली न होवई जे सउ धोवणि पाहु॥ *पृष्ठ - 651*

कितनी मैल लगा ली? कहते हैं शरीर पर लगी मैल से कोई बहुत अन्तर नहीं पड़ता पर मन की मैल का बहुत ज्यादा असर होता है। प्यारे! गुरू से मन की मैल उतारने का साबुन ले ले। साबुन भी मिलता है? कहते हैं –

भरीए मति पापा कै संगि। ओहु धोपै नावै कै रंगि॥ *पृष्ठ - 4*

नाम का रंग, प्यार से नाम जपो, प्यार से बाणी पढ़ने से मन की मैल धुल जाती है। सो ये चीज़ें साथ हैं तो मन की मैल उतर जाती है और मन पवित्र हो जाता है।

इसके बाद तन को पवित्र करना होता है। यह तो तुम सभी जानते ही हो। शरीर को साफ,

स्वच्छ रखना जरूरी है। दोनों वक्त या तीनों वक्त, जैसा भी मौका मिले, स्नान करना। अमृत बेला में उठकर स्नान करो। मैंने बहुत से ऐसे भी देखे हैं। हमारे यहाँ एक प्रेमी आया। मैंने कहा, ''स्नान करेगा?''

कहता है, ''हाँ जी! दो बजे जगा देना।''

मैंने कहा, ''स्नान करेगा?''

कहता है, ''स्नान तो नहीं। पर मैं वैसे भजन करूंगा।''

मैंने कहा, ''हमारे गुरू महाराज कहते हैं कि स्नान जरूर करना चाहिये।''

चउथै पहरि सबाह कै सुरतिआ उपजै चाउ।
तिना दरीआवा सिउ दोसती मनि मुखि सचा नाउ॥ *पृष्ठ - 146*

उनकी कुंओं, नदियों, दरियाओं, नलकों के साथ दोस्ती है क्योंकि उन्होंने सुबह उठकर स्नान करना है। अतः तन का स्नान कराना।

फिर होता है मौन, चुप रहना। बाणी पढ़ते समय बातें न करें। गपशप न मारें। बाणी भी पढ़ता है और साथ ही साथ आवाज़ें भी लगाता रहे। एक प्रेमी ने मुझ से कहा, ''जी, पिता जी बाणी पढ़ते हैं, पर उन्हें थोड़ा सा समझा दो।''

मैंने कहा, ''क्यों?''

वह बोला, ''हमें एक-एक धड़ी की गालियां निकालते हैं। हाथ में गुटका भी पकड़ा होता है और माँ बहन से कम तो गालियां निकालते ही नहीं हैं।''

हम कहते हैं, ''बापू! आप तो गुटका हाथ में लेकर पढ़ते-पढ़ते गाली निकालते हो।''

इस प्रकार बाणी की पवित्रता नहीं रहती। मौन नहीं रखते।

फिर होती है मौन बाणी - मन के अन्दर फुरना नहीं उठने देते। इसके बाद मन में सन्तोष धारण करना पड़ता है। आखों का भी सन्तोष होता है -

पर त्रिअ रूपु न पेखै नेत्र॥ *पृष्ठ - 274*

कानों का होता है -

करन न सुनै काहू की निंदा॥ *पृष्ठ - 274*

हाथों का होता है -

हाथों से कोई बुरा कर्म न करें, सेवा करने से हाथ पवित्र हो जाते हैं। फिर पैरों का भी सन्तोष होता है। सत्संग आदि में चलकर जाना, यह पैरों का सन्तोष कहलाता है, जैसे तुम यहाँ पर चलकर आये हो। यह सन्तोष ने काम किया है, यदि न आता तो फिर पाप बन जाना था।

इसके बाद जब पाठ करने बैठे, सबसे पहले यह ध्यान रखे कि मेरे साथ गुरू नानक साहिब बैठे हैं। आपने वचन किया हुआ है कि जहाँ कोई भी बाणी पढ़ेगा। मैं उसके साथ होऊंगा। यह बात तो मान लो। यदि तुम मेरी यही एक बात मान लो तो बहुत उन्नति हो जायेगी। पहले यह

देखो कि गुरू साहिब मेरे साथ खड़े हैं, मेरे साथ बैठे हैं, मुझ से बाणी सुन रहे हैं, क्योंकि निरंकार की बाणी है –

पवित्र मन तन मौन बाणी संतोख हाजर जाण।
पहले परमेश्वर को हाज़िर जान।

एकान्त – मन में फुरने मत उठने देना। ऐसी जगह ढूंढना, जहाँ पर शोर शराबा बहुत ही कम हो। अमृत बेला में शोर बहुत कम होता है। शहरों में तो बहुत बुरा हाल है। यदि तो दो बजे से पहले जाग जाओ, तो 2 घंटे नाम जपने के लिये मिल जायेंगे। यदि 4 बजे उठो तो लाऊडस्पीकरों का इतना शोर शुरू हो जाता है कि न तो उनके द्वारा बोली गई बाणी समझ आती है और न ही नाम जपने देते हैं। साथ ही लाऊडस्पीकर की आवाज़ घर्र-घर्र करती रहती है। वे तो अपनी समझ के अनुसार कहते हैं कि हम लोगों को बाणी सुनाते हैं, पर इन प्रबन्धकों को यह मालूम नहीं होता कि तुम बाणी सुनते हो या शोर मचाते हो। समझ तो किसी को आती नहीं, एकान्त भी भंग कर देते हो। अतः स्थान फुरने रहित हो। हउमै रहित हो। इसके बाद कामनाओं और वासनाओं का त्याग करे।

इसके बाद यह निश्चय दृढ़ होना चाहिये कि मैंने इसी जन्म में पार होना है जरूर, फिर –

..... अभिआस ठानि॥

मन में अभ्यास की लगन हो। उठ कर बैठ जाये। आलस न करे क्योंकि मेरा समय बीत जाना है, फिर कल तो समय मिलना नहीं, जो समय बीत गया, यह दोबारा नहीं आता। इस प्रकार जब हम पाठ करेंगे, नाम जपेंगे फिर इसका फल हमें मिलेगा जो लिखा हुआ है –

भर पेट खा लिया तो फिर सुबह कौन उठेगा? वह जो भर पेट खाया हुआ है, उसने उठने नहीं देना। बार-बार चारपाई पर लिटायेगा। यदि उठ भी गया तो नींद के झटके लगवायेगा। नींद की झपकियां मारेगा, कम खा –

अलप अहार सुलप सी निंद्रा दइआ छिमा तन प्रीत॥

इतना कम भी मत खा कि शरीर ही काम न करे। एक राजा था उसके तीन पुत्र थे। उसके मन में विचार आया कि तीनों में से मैंने एक लायक पुत्र को राज्य देना है, इसलिये तीनों पुत्र बुला लिये। राजा बोला, ''देखो बेटा! जाओ तुम तीर्थ यात्रा कर आओ। कितने तीर्थ हैं?''

तीनों लड़कों ने कहा, ''68 तीर्थ हैं जी।''

राजा ने कहा, तुम एक काम करो, तीनों अलग-अलग एक-एक घोड़ा ले लो और तीर्थों पर चले जाओ। जो सबसे पहले तीर्थ यात्रा पूरी कर आयेगा, उसे राज पाट दे दिया जायेगा। ठीक है?

लड़के बोले, ''हाँ पिता जी! ठीक है।'' तीनों को एक-एक घोड़ा दे दिया। उन में से एक ने तो पानी भी नहीं पीया, रोटी भी नहीं खाई। उसी समय घोड़े पर चढ़ कर बैठ गया और घोड़े को सरपट दौड़ा कर चल पड़ा। घोड़े को भगाये ही चले जा रहा है। एक तीर्थ हो गया, दूसरा, तीसरा, ऐसे करते-करते, जब आधे तीर्थों की यात्रा तय कर ली, तो उसका घोड़ा बीमार होकर वहीं

मर गया। अब वापिस वहीं से पैदल लौट आया।

दूसरे लड़के ने सोचा कि सफर बहुत लम्बा है, इसलिये पहले घोड़े को जरा ताकतवर बना लूँ, क्योंकि कई हज़ार मील लम्बा सफर करना है, इसे तकड़ा कर लूं। उसने उसे खूब खाने-पीने को दिया और घोड़ा मोटा ताज़ा हो गया। जब उसे लेकर चला तो घोड़ा थोड़ा सा चलता, उसका दम फूल जाता, लीद करने लग जाता। इस तरह उससे भी कुछ न बन सका।

तीसरे लड़के ने एक नक्शा तैयार किया और रोज़ नामचा बना लिया कि मैंने इतने मील रोज़ सफर करना है, फिर घोड़े का भी ख्याल करना है। समय पर इसे खाना भी देना है, इतना दाना देना है। मैंने स्वंय भी इतनी देर आराम करना है, ताकि मैं भी ठीक रहूं और मेरा घोड़ा भी ठीक रहे। इस प्रकार तीसरे लड़के ने ठीक समय पर अपने बनाये नियमानुसार सारे तीर्थों की यात्रा पूरी कर ली और खुशी-खुशी घर लौट आया। जो पहले नम्बर पर था, वह सबसे पीछे पहुँचा क्योंकि उसका घोड़ा तो मर गया था। अब पैदल वापिस आना पड़ा। दूसरे नम्बर वाले का घोड़ा साथ नहीं देता क्योंकि उसने उसे खिला-खिला कर इतना मोटा कर लिया कि थोड़ा सा चलता दम फूल जाता।

जिसने विधि पूर्वक घोड़े को सही सलामत रखा और अपने शरीर को भी ठीक ठीक रखा और तीर्थ यात्रा भी पूरी की, राजा ने उसे राज्य दे दिया।

इसी प्रकार परमेश्वर ने हमें यह शरीर रूपी घोड़ा दिया है। इस घोड़े में थोड़े से समय के लिये श्वांस दिये हैं। यदि 100 साल की उम्र है तो 88,66,00,000 (अठासी करोड़ छिआसठ लाख) श्वांस दिये हैं, यदि 75 साल की उम्र है तो 66,44,00,000 (छिआसठ करोड़ चवालीस लाख) श्वांस दिये हैं। इन्हीं श्वासों के रहते हमने परमेश्वर को मिलना है।

कुछ तो ऐसे प्रेमी हैं जो एक दम वैराग में आकर शुरू हो जाते हैं। दिन में भी जागते हैं, रात में भी जागते हैं, खाना पीना छोड़ देते हैं। परिणाम क्या निकलता है? 'माली खौलिया' एक बीमारी लग जाती है। फिर उसे मस्ताना कहते हैं। अधिक जागने से दिमाग में एक रोग लग जाता है। शरीर कृश हो जाता है। खून कम हो जाता है। फिर नाम नहीं जपा जाता और भी बहुत सी बीमारियां लग जाती हैं। महाराज कहते हैं, ''प्यारे ऐसे मत कर'' -

नानक सो प्रभु सिमरीऐ तिसु देही कउ पालि॥ *पृष्ठ - 554*

''इस शरीर की रक्षा भी उसी तरह से कर। इसकी पालना भी कर। ऐसा मत कर कि इसे पेट भर कर खिला दे और सुबह नींद ही न खुले। पेट में गैस बनी रहे। इस शरीर रूपी घोड़े को ठीक रख। इसके लिये निश्चित समय निर्धारित कर ले।'' अमृत बेला में जब दो बजे उठते हैं, उठ कर बैठ जा। पहले पूरी नींद कर ले। 4 घंटे की नींद बहुत होती है। निट्ठले आदमी के लिये, इससे ज्यादा नींद बीमारी पैदा करती है। यदि काम काज़ी आदमी है तो उसे 6 घंटे सोना चाहिये, महिलाओं को सात घंटे की नींद बहुत होती है। बच्चे के लिये एक घंटा और अधिक या 8 घंटे की नींद बहुत होती है। इस प्रकार कार्यक्रम बनाकर अमृत बेला में उठो, शरीर को भी सही रखो और अपना कार्यक्रम भी सही बनाओ। इसके बाद विचार करके, बाणी पढ़ो। पहले नाम जपो, फिर बाणी पढ़ो, बाणी पढ़ने के लिये फ़रमान है कि -

अरथ बिचारि करहि उर मांही॥ *श्री गुरू नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206*

अर्थ विचार कर हृदय में धारण करता चला जाये -

मुकति होइ सो संसे नांही॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206*

कहते हैं जो अर्थ विचार कर बाणी को पढ़ेगा, उसे मन में कोई संशय नहीं करना चाहिये, उसकी मुक्ति हो जायेगी -

जपुजी सेवन प्रीति सु जांही।। *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206*

जब प्यार के साथ जपुजी साहिब पढ़ेगा। प्यार कैसे होता है। एक विचार से यह बात समझ में आ जायेगी।

कोई बहुत ही प्यारा माँ का पुत्र, पिता का पुत्र या किसी का कोई मित्र कहीं विदेश गया हुआ है। मान लो अमेरिका चला गया। वह चिट्ठी लिखता है। उसकी चिट्ठी हमने पढ़ ली क्योंकि प्यार ज्यादा होता है, इसलिये फिर पढ़ने लग जाते हैं। दूसरे दिन भी पढ़ने लग जाते हैं। जिसके साथ प्यार होगा, 10-10 बार उसकी चिट्ठियों को पढ़ेगा, फिर-फिर पढ़ता है। साल बाद फिर पढ़ता है। चिट्ठी को सम्भाल कर रख लेता है, क्योंकि उसके साथ प्यार है। उसकी चिट्ठी में से एक भी अक्षर नहीं छोड़ना चाहता कि जो हमारी समझ में न आये। फिर कहता है, बार-बार कहता है कि यह बात लिखी है। बार-बार उस बात को दोहराते हैं। महाराज जी कहते हैं, ऐसे ही बाणी पढ़ा करो -

जपुजी सेवन प्रीति सु जांही।
मम समीप प्रापति हुइ तांही॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206*

इस प्रकार गुरू नानक पातशाह, गुरू अंगद देव जी को बता रहे हैं। जो मैंने आपसे प्रार्थनाएं की हैं, ये सारी समझा रहे हैं, ''हे पुरखा! जो बाणी पढ़ता है ना, मैं उसके पीछे-पीछे फिरता रहता हूँ।'' इस तरह से बाणी पढ़ा करो।

यदि सिख बन गया, सिखी धारण कर ली, अमृत पान कर लिया, गुरू का सिख बन गया, गुरू बना लिया, कहते हैं, जपुजी याद नहीं किया तो फिर तो कुछ भी नहीं किया। कुछ भाई और बीबियां कहती हैं, ''जी हम तो अनपढ़ हैं हम कैसे याद कर सकते हैं?'' मेरा बाबा एक अक्षर भी नहीं जानता था। परन्तु बड़े प्यार से जपुजी साहिब पढ़ता था। बीबी जी की माता जी, एक अक्षर लिखना पढ़ना नहीं जानती थीं, पर जपुजी साहिब, जाप साहिब, सवैये, रहरास, कीर्तन सोहिला, आसा दी वार, गुरू नौवें पातशाह के श्लोक, कितनी बाणी हो गई? शबद हजारे, अन्य सवैये, शबद बेअन्त याद थे। दो बजे उठकर बैठ जाती, मुंडेर के पास। इतनी सुन्दर बाणी पढ़ती थी कि सारा गाँव सुनकर उठ जाता था और लोग कहते बेबे हरनाम कौर बाणी पढ़ रही है और हम सोये पड़े हैं। उठ कर जबरदस्ती बाणी सुनने को मन करता था। इतने रसमय ढंग से पढ़ती थीं, हालांकि एक अक्षर नहीं पढ़ी थीं। ये तो काम न करने के बहाने होते हैं। इन बीबियों से पूछ लो। कहती हैं, हम पढ़ी लिखी नहीं हैं। जब बातें बनानी शुरू कर देती हैं तो तूने उस समय ऐसे कहा था, वैसे कहा था, सारा चिट्ठा खुलवा लो, सारी पोल खोल देगीं, ये बातें कैसे याद रह जाती हैं? इतनी बातें 15 साल, बीस साल, 30 साल पुरानी बातें सुन लो, फिर जपुजी साहिब याद नहीं रहता, क्यों? कहते हैं, यदि तूने जपुजी साहिब याद नहीं किया तो फिर तेरे सिख बनने का कोई लाभ नहीं, ऐसे पढ़ लो -

धारना - काहनूं सिख बणिआ ओए,

जपुजी जे याद न कीता - 2, 2
जपुजी जे याद न कीता - 2, 2
काहनूं सिख बणिआ ओए, ...-2

गुरू नानक पातशाह 'जपुजी' का महत्व बताते हुए कहते हैं कि जिस गुरसिख ने जपुजी साहिब याद नहीं किया, कहते हैं उसका सिख बनने का क्या लाभ -

सिख गुरू को होइ गइओ जपुजी कंठ न कीन।
तंदुल बिन तुख काम किह तैसे सिख को चीन॥

कहते हैं यदि छिलके में चावल नहीं है, तो उस छिलके का क्या फायदा? वह सिख तो चावलों के छिलके के समान है, वह किसी काम नहीं आयेगा? वह तो आग में जलाने के काम आता है और तो किसी की भूख नहीं मिटा सकता। इसका महात्म बताते हैं -

धरहि कामना पढि है इक मन॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206*

होइ सपूरन तिह की ततछिन॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206*

यदि कामना हो, कोई बात पूरी करवानी हो मेरे पास आते हैं, यह बात आप सभी सुन लो अपने आप ही कर लिया करो -

एक मन होकर जपुजी साहिब का पाठ कर लो। मैं कहता हूँ, 25 पाठ रोज करो, 42 दिन तक लगातार किये जायो। रोग हट जायेंगे, कार्य सिद्ध हो जायेंगे, नौकरी मिल जायेगी जो काम नहीं हो रहे, हो जायेंगे। बाबा जी ने वचन करके कुछ नहीं करना। मैंने तो यही कहना है, भाई जपुजी साहिब के एक हज़ार पाठ कर ले। कुछ को मैं कहता हूँ 10,000 पाठ कर ले। यहाँ पर एक महिला आई। मैंने उसे कहा तू जपुजी साहिब के 10,000 पाठ कर। उसे 6 बीमारियां लगी हुई थीं। एक साल भर करते रहना। 6 की 6 बीमारियां दूर हो गईं। यहाँ से ठीक होकर गईं। डाक्टर नहीं कर सकते थे। अब वह भूल गई। अब उसे याद नहीं है क्योंकि हमारे अन्दर यह कमी है, जब हम मुसीबत में होते हैं या फंसे होते हैं, तब तो कहते हैं जो कुछ कहोगे करने को तैयार हूँ, जब मुसीबत टल जाती है ....., यह मुझे कल ही बता रहे थे। यहाँ एक गांव है, उसका नाम बुरज़ है। वहाँ पर हर शनिवार को एक न एक पढ़ा लिखा व्यक्ति मर जाता था। जिन दिनों मैं वहाँ पर घूम-घूम कर गाँव-गाँव में कीर्तन किया करता था, तो एक बार 'अकालगढ़' में दीवान सजे हुए थे, वहाँ पर पंचायत आई।

कहने लगे, ''हमारे गाँव के 7 लोग मर गये। पहले एक वकील मरा। दूसरी बार एक मुख्याध्यापक मर गया। इसी तरह से B.A., M.A. से कम पढ़े लिखे नहीं मरते, पता नहीं हमारे गाँव पर क्या कोप पड़ा हुआ है।''

मैंने कहा, ''तुम ऐसे करो। हम तुम्हारे यहाँ दीवान सजायेंगे। तुम सब गुरूद्वारे जाओ। नहा-धोकर प्रार्थना करो, ''सच्चे पातशाह! हम सहज पाठ करते हैं।'' अखण्ड पाठ भी मैंने नहीं बताया। मैंने कहा अभी जाओ और समय आने पर मैं भी दीवान सजाऊंगा। वे सभी गुरूद्वारे चले गये, वहाँ पर जाकर अरदास की और सहज पाठ शुरू कर दिया। इसके 2 महीने बाद उन्हें दीवान का समय मिला। मैं भी वहाँ चला गया। इतना सख्त दीवान था, ऐसी आन्धी चली कि शामियाने भी फाड़ दिये। कम से

कम 150 वृक्ष रास्ते में गिर गये। कहते हैं, तुझे भी पता बताते हैं, बड़ी मुश्किल से मैं निकल कर आया। दूसरे दिन फिर ऐसे हुआ। मैंने कहा, दीवान लगाने जरूर हैं। तीसरे दिन भी वही हाल हुआ, ऐसी कोई जबरदस्त ताकत है, जो रोक डाल रही है, लेकिन वे लोग बच गये, उसके बाद मुझे भी भूल गये। फिर तो न बाबा जी का पता कि कौन है? कल फिल्म दिखाने गये उस गाँव में, तो एक प्रेमी कहता है, इसे देखा तो है, हमारे गाँव में आया था कभी। सब भूल गये, फिर 150 को अमृत पान भी करवाया था। यह ऐसा स्वार्थी, भुलक्कड़ इन्सान है।

यह पास ही चिन्तगढ़ है चिन्तगढ़। मैंने कहा, इसका नाम चिन्तगढ़ की बजाये अचिन्तगढ़ रख लो। 'अ' आगे लगा लो। वहाँ पर हर शुक्रवार को 18 साल से लेकर 24 साल तक का कोई न कोई लड़का मर जाता था। सरपंच पंचायत लेकर मेरे पास आया। मैंने कहा, ''मेरे पास कोई जादू तो है नहीं। तुम ऐसा करो गुरूद्वारे जाओ, नहा धोकर, यहाँ पर अरदास करो, महाराज! न तो अब हम ज़र्दा खायेंगे, न शराब पीयेंगे, न अण्डे खायेंगे, न मांस खायेंगे, हम दीवान सजायेंगे और अखण्ड पाठ भी करवायेंगे पर हमारे लड़के न मरे।'' उस समय बस यही चिन्ता थी कि आज किसकी बारी है, 6 पहले मर चुके थे। उसके बाद दीवान सजाया, अखण्ड पाठ करवाया। उस गाँव में से मैं हमेशा गुज़रता हूँ, किसी को नहीं पता कि यह वही बाबा जी थे, जिन्होंने हमारे यहाँ दीवान सजाये थे। इतना भूल जाता है यह इन्सान। मैं यह बात इसलिये बता रहा हूँ कि मनुष्य ऐसे भूलता है –

नै लंघी खुआजा विसरिआ॥

परमात्मा को इन्होंने क्या याद रखना है? वह तो दिखाई नहीं देता। महाराज कहते हैं, तुम्हारी सारी कामनाएं पूरी हो जाती हैं। एक मन दत्त चित्त होकर जपुजी साहिब पढ़ लो। कहते हैं, उसी समय बात पूरी हो जायेगी

जंत्र मंत्र पुन तंत्र महाना॥ ***श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206***

कोई मन्त्र, कोई जन्त्र, कोई तन्त्र, जपुजी साहिब पर नहीं चलता। यह सबसे बड़ा है, इसलिये इसे महा मन्त्र कहा है। इससे बड़ा कोई मन्त्र नहीं है। महिलाएं इधर उधर भागती फिरती हैं और कहती हैं, ''जी, अमुक गाँव वाले से मन्त्र करवा लें।'' अब तो सिंहों ने सारे ही हटा दिये। कुछ तोड़ दिये, कुछ हटा दिये क्योंकि हमारे पास सब कुछ है। अपना घर छोड़कर क्यों बेगाने घर जाते हो? यह सबसे बड़ा है –

जंत्र मंत्र पुन तंत्र महाना। भूत जि प्रेत दैत बलवाना॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206

भूत प्रेत, दैत्त, ऐसे जो बहुत कठोर हैं, खबीस, जिन्न महाराज कहते हैं –

तिह समीप नहिं आवै कोई। पठन प्रीति नित नर जिह होई॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206

जो 'जपुजी साहिब' पढ़ता है, उसके निकट नहीं आते। 'जपुजी साहिब' पढ़ने लग जाओ, अपने आप हट जायेंगे पर विधि पूर्वक पढ़ना है, युक्ति के साथ पढ़ना है। सभी कुछ हट जायेगा।

यह बीबी छोटी सी थी। हमारे पिछली ओर एक भूतनी आया करती थी, जो उसे भूतनी कह देता, वह उसी के घर आ जाती थी, इतनी ताकतवर थी। 9 महिलाओं में उसने प्रवेश करना

होता और दिन निश्चित कर रखे थे कि आज अमुक महिला में प्रवेश करना है और कल दूसरी में। यह भी बीच में खड़ी थी। यह कहने लगी, ''तूने बहुत तंग किया हुआ है।''

कहती है, ''अच्छा! माँ का नाम लेकर कहती है, उसकी बहु बोल रही है। अब मैं तेरे ही घर आऊंगी, तैयार हो जा कल तेरे घर ही आऊंगी।''

यह पता नहीं, उसे चाची जी कह कर पुकारती थी। कहने लगी, ''चाची जी! आ जाना फिर। यह तो बता तेरे लिये सेवियां बना कर रखूं या खीर, क्योंकि जब तू आयेगी तो तेरा आदर सत्कार तो करना ही पड़ेगा।''

वह बोली, ''बातें बनानी आती हैं, उस समय पता चलेगा, जब मैं तुझे पकडूंगी।''

पता नहीं कितने दिन बीत गये? दोबारा फिर उसी लड़की को पकड़ लिया जो घर के पीछे रहती थी। ये फिर चले गये।

यह जाकर कहती है, ''चाची! तू तो आई ही नहीं। हमने तो तेरे लिये सेवियां बनवा कर रखी थीं।''

कहती है, ''मैं कैसे आती? सारा दिन तो कुर-कुर करे जाते हो, बाणी पढ़ते रहते हो, जपुजी साहिब पढ़ते रहते हो यह किरपान पहनी हुई है। मेरा बल ही नहीं चला। मैं आई तो थी, पर दहलीज़ से ही लौट गई। मेरा जोर नहीं चला, अन्दर कैसे आती?'' अब बताइये इतनी शक्ति है जपुजी साहिब में।

जो रोज़ 'जपुजी साहिब' का पाठ, प्यार के साथ करता है, उसके निकट कोई भी भूत प्रेत, जन्त्र, मन्त्र, तन्त्र कुछ भी नहीं आ सकता। कोई कहता है हमारे घर खून गिरता है, कोई कहता है, ईंटे गिरती हैं। एक बार एक प्रेमी मेरे पास आया कहने लगा, ''हमारे ऊपर ईंटे गिरती हैं।''

मैंने कहा, ''वहाँ पर आंगन में बैठकर 5 पाठ कर दे।''

कहने लगा, ''जी! यदि सिर पर आ गिरी कोई ईंट?''

मैंने कहा, ''बिल्कुल नहीं लगती।'' जब वह मुझे मिला, उन दिनों मैं पटियाला रहता था।

बाद में मैंने उसे पूछा, ''कैसे रहा?''

कहने लगा, ''अब नहीं गिरती।''

मैंने पूछा, ''क्या उपाय किया था?''

वह बोला, ''जपुजी साहिब पढ़ा था। हम तो सियाने लोगों को, औलियों को ला लाकर थक गये थे। पैसे भी बहुत खर्च किये थे।''

अत: यह जपुजी साहिब कोई छोटी-मोटी चीज़ नहीं है। जो व्यक्ति प्यार के साथ बाणी पढ़ता है -

मानुख देहि जीव जिन पाई॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206*

कहते हैं जो मनुष्य बन गया है और उसे जपुजी साहिब याद नहीं है –

जपु - बिहीन ह्वै बाद गवाई॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206*

कहते हैं, उसने तो अपनी जिन्दगी व्यर्थ गवाँ दी –

सिखन योग मंत्र गुर केरा। इत उत नित सुख देति घनेरा॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206

कहते हैं, सिंघों के लिये तो यही मन्त्र है। गुरू दसवें पातशाह ने यही मन्त्र बताया है। जहाँ भूत प्रेत थे, यही मन्त्र जपुजी साहिब पीढ़ी दर पीढ़ी, हटाने के लिये चला आ रहा है, मैं भी यही बताया करता हूँ, ''जपुजी साहिब पढ़ो।''

रोज़ सुख देता है –

होइ सिख-जपु-कंठ न कीनो॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206*

सिख तो बन गया पर जपुजी साहिब याद नहीं –

नाउं धरीक बेख धरि लीनो॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206*

कहते हैं फिर तो वह भेषी सिख है, मूर्ख है। केश भी रख लिये, दाढ़ी भी रख ली, किरपाण भी पहन ली, कछहरा भी पहन लिया, कड़ा भी पहन लिया, कंघा भी रख लिया और जपुजी याद नहीं किया। तेरा भेष तो बन गया, फजूल कर लिया –

इसते और न के बिधि ऊची। जपु सेवन इक मनि हुइ सूची॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206

इससे और अधिक ऊंची विधि कोई नहीं है। जपुजी का पाठ मन लगाकर करो –

कामधेनु, चिंतामनि, सुरतरू॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206*

स्वर्ग की तीन चीज़ें मशहूर हैं। एक तो कामधेनु गाय- कोई चीज़ मांग लो, तुरन्त दे देती है।

चिन्तामणि – से कोई नकदी, सोना चांदी मांग लो, तुरन्त मिल जाता है।

सुरतरू – जो परिजात (कल्प वृक्ष) है। जो कहो उसी कामना को तुरन्त पूर्ण कर देता है। कहते हैं जपुजी साहिब में तीनों चीज़ें है –

करि नहिं सके आधतिल समसर॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1206*

कहते हैं, देर नहीं लगती, उसी समय मिल जाता है। इसका जो सबसे बड़ा फायदा है, उसे इस तरह पढ़ लो –

धारना - कटदी जम फासी जी,
जपुजी दा पाठ करके - 2, 2
जपुजी दा पाठ करके - 2, 2
कटदी जम फासी जी, ... -2

जपुजी सेव कटहि जमफासी। बहुर मिलहि पदवी अबिनाशी॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1207

अविनाशी पदवी तक पहुँच जाता है –

अस संजोग चहित है सोई। तुम कउ तउ सभि प्रापति होई॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1207

कोई आशा मन में कर लो, कोई कामना कर लो –

ऐस समै ते जो चुक जाई। चढ़ि करि मेरु रसातल पाई॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1207

अब जो चूक गया न? इस संगत में आप जितने बैठे हो, सभी ने बात सुनी है, वचन सुने हैं। कहते हैं, जो इस समय चूक गया तो समझ लो पहाड़ की चोटी पर चढ़ कर खड्डे में गिर गया –

जपुजी कंठ नितप्रति रटै। जनम जनम के कलमल कटै॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1207

जन्म जन्मातरों के सारे पाप कट जायेंगे। एक प्रेमी संगरूर का रहने वाला था, उसका नाम लाल सिंघ था। वह मर गया और उसे लेने के लिये यमदूत आ गये। उसने अमृत पान नहीं किया था, केवल जपुजी साहिब पढ़ा करता था। जब वहाँ धर्मराज के पास पहुँच गया....., ऊंट चराता-चराता भी जपुजी साहिब पढ़ता रहता था। धर्मराज ने कहा इस लाल सिंह को नहीं लाना था, दूसरा लाल सिंह है, जाओ इसे वापिस ले जाओ। वह जब वापिस लौट रहा था तो उसने एक अति उच्च कोटि का कौतुक देखा। वहाँ पर एक महिला बैठी हुई थी, वह कहने लगी, ''तू मात लोक में जा रहा है, मेरा एक सन्देशा लेता जा। वह बोली मेरे पति वहाँ गये हुए हैं।'' वह बोला, ''मैं तो तेरे पति को जानता भी नहीं।'' वह बोली, ''उन्हें सन्त मस्तुआणे वाले कहते हैं। उन्हें यहाँ से संसार का उद्धार करने के लिये भेज दिया गया है। मैं यहाँ पर अकेली हूँ। उन्हें कह देना कि जल्दी वहाँ का काम पूरा करके यहाँ आ जायें।'' वह जब यहाँ दोबारा लौटा तो जिन्दा हो गया और उसी समय मस्तुआणे गया। महाराज जी के पास जाकर प्रार्थना की, ''सच्चे पातशाह! दरगाह में से यह सन्देशा दिया गया है।'' वह बोले, ''तुझे यमदूतों ने कुछ नहीं कहा।'' लाल सिंघ बोला, ''महाराज! मैंने अमृत पान तो किया नहीं था, बस जपुजी साहिब पढ़ता रहता था, जब मुझे पकड़ा तो बोले, ''अरे! यह तो जपुजी साहिब पढ़ रहा है। इसे हाथ मत लगाना, इसे इज्जत के साथ ले चलना। यह गुरू नानक की बाणी पढ़ता है।''

इसी तरह से जपुजी साहिब का महात्म तीसरे पातशाह महाराज जी ने जब बाऊली साहिब की स्थापना की थी, तब बताया था।

कहते हैं, ''कितनी सीढ़ियां बन गईं प्यारे जी?''

उत्तर मिला, ''चौरासी।''

फिर बोले, ''जाओ! अमृत बेला में उठ कर पहले स्नान करो, फुरने रहित होकर केशों सहित स्नान करो। पहली सीढ़ी पर बैठकर जपुजी साहिब पढ़ो, फिर चले जाओ दूसरी बार डुबकी लगाओ और दूसरी सीढ़ी पर बैठकर जपुजी साहिब पढ़ो। इस तरह से जो 84 बार पाठ कर लेगा, वह चौरासी के चक्कर से मुक्त हो जायेगा।''

बारि चुरासी करहि सनान। इतने जपुजी पाठ बखानि।

सतिगुर मूरति करिकै ध्यान॥ *श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1572*

गुरू नानक के चरणों का ध्यान धर कर, फुरने रहित होकर, जो जपुजी साहिब का पाठ कर लेगा -

मिटहि चुरासी आवनि जानि॥

उसकी चौरासी खत्म हो जायेगी -

ज्यों क्यों पाइ भुगति गुर केरी। मिचहि जून तिह भ्रमन कुफेरी॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1572

जब नौवें पातशाह महाराज, शरीर छोड़ने लगे तो उस समय आपने जपुजी साहिब का पाठ किया था। आपने कहा, ''सिंहों! अब मैंने जपुजी साहिब का पाठ करना है।''

आपने फ़रमान किया, ''यह जो तुम्हारी तलवार है, यह तो कच्चा धागा भी नहीं काट सकती।''

वे बोले, ''कच्चा धागा! हम तो गर्दन काट देते हैं।''

महाराज जी ने कहा, ''तुम्हारी तलवार तो स्पर्श भी नहीं कर सकती।''

आपने कहा, ''हमने जपुजी साहिब पढ़ना है। इसे पढ़ने के बाद, जब हम सिर झुकायेंगे, नमस्कार करेंगे, उसके बाद जब हम सिर ऊपर उठायेंगे, तब तुम अपनी तलवार चला देना।'' यह कागज़ हमारी गर्दन के साथ बान्ध दो और साथ ही धागा भी बान्ध दो, फिर इसके ऊपर तलवार चलानी है।

धागा बान्ध दिया और महाराज जी ने जपुजी साहिब पढ़ा। पढ़ते-पढ़ते जब -

जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि।
नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि॥ *पृष्ठ - 6*

कह कर मस्तक नवांया, फिर ऊपर उठे। उन्होंने उस धागे पर जिस पर कागज़ बन्धा हुआ था, उस पर तलवार चलाई तो शीश पहले ही भाई जैतो जी की गोदी में चला गया और तलवार से वार करने वाले, यह देखकर हैरान रह गये कि उनकी तलवार से तो कच्चा धागा भी न कट सका और फिर शीश कैसे कट गया?

अत: महाराज जी ने जपुजी साहिब की बड़ी महानता बताई है। बाबा लाल सिंघ जी ने जब शरीर छोड़ा तो बाबा कर्म सिंघ होती मरदान वालों ने संगत बुला ली और बोले कि हमने शरीर छोड़ना है। संगत बहुत उदास हो गई और रोती हुई कहने लगी, ''बाबा जी! अभी मत जाओ। अभी मत जाओ।'' बाबा लाल सिंघ जी जो छोटे सन्त थे, वे आ गये। कहने लगे, ''बाबा जी! संगत पर रहम करो।''

बाबा ने कहा, ''भाई लाल सिंह! फिर तुम हमारी जगह चले जाओ।''

गुरमुखि आवै जाइ निसंगु॥ *पृष्ठ - 932*

''अभी तेरे दो साल, दो महीने, दो दिन रहते हैं हम तेरी जगह आ जायेंगे।''

बाबा लाल सिंह जी ने कहा, ''ठीक है महाराज।''

साढ़े 4 बजे शरीर छोड़ना था। चार बजे बाबा लाल सिंह जी भी आ गये। नहा धो कर, कफन पहन कर आ गये। वहाँ पर बैठकर बड़े ही वैरागमयी शब्द पढ़े, फिर कहने लगे, अब हम जपुजी साहिब का पाठ करते हैं। चौकड़ी लगा कर बैठ गये। जपुजी साहिब का पाठ पूरा करके, जो मृतक शरीर के लिये बक्सा बनाया था, उसमें लेट गये। फिर उस बक्से को मृत शरीर सहित प्रवाह करना था –

जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि॥ *पृष्ठ - 6*

कह कर एक दम लेट गये। बाबा कर्म सिंघ जी ने कहा, ''देखो भाई! लाल सिंह जी चले गये या नहीं।''

जब नबज़ को हाथ लगा कर देखा, तो कुछ भी नहीं था। अत: यह जपुजी साहिब अन्त समय में सहायता करता है। गुरू साहिब मदद करते हैं। जो सिख गुरू की मदद ही नहीं चाहता, उसका सिख बनने का क्या लाभ?

जपे जाप तन ताप खप .....॥

कहते हैं उसके तन के तीनों तप आधि, बिआधि, उपाधि खत्म होते जायेंगे –

आरबला वध जाइ।
उसकी उम्र बड़ी हो जायेगी -
करहि कामना जथा उरि तथा जाप ते पाइ॥

जिस प्रकार की भी कामना, फुरना करता है वह जाप करने से मिल जायेगी –

अब सुनीऐ इक 'जाप' पड़ै सतिगुर के सिख संगि।
भुगत मुकत बखसी गुरू दरगहि जाए निसंग॥

जब 'जपुजी साहिब' शुद्ध रीति से एक चित्त होकर पढ़ लेगा, कहते हैं, दरगाह में जाता है, निसंग की प्राप्ति होती है–

आतम दरसी की गति प्राप्त तिस कउ होइ॥

उसे ब्रह्मज्ञानी की गति प्राप्त हो जाती है –

रहै संग तिह सतिगुरू .....॥

गुरू उसके साथ हमेशा रहता है –

..... पाइ सहाइक सोइ॥

गुरू सहायक मिल जाता है –

गुरू मेरै संगि सदा है नाले।
सिमरि सिमरि तिसु सदा सम्हाले॥ *पृष्ठ - 394*
जिउ धंने की धेन कउ ठाकर चारे नित॥

जिस तरह से धन्ने की गायें चराता था न?

करि परतीत नित 'जप' पड़ै तिम तिह सतिगुर मित॥

जो पूर्ण विश्वास करके, एक मन होकर जपुजी साहिब पढ़ेगा, उसकी गुरू नानक धन्ने की तरह गऊएं चरायेगा। उनके सारे काम गुरू नानक करेगा –

पढ़ै सुनै चित लाइ कै जो सिख देय परीत॥

प्रीत के साथ चित्त लगाकर जो पढ़ेंगे –

मन चिंतत फल पाइ के, तर है सुख भैभीत॥

स्वंय भी तर जायेगा और दूसरों को भी तार देगा। यह तो मैंने जपुजी साहिब की प्रार्थना की है। अत: नितनेम करना हर सिख के लिये हद से ज्यादा जरूरी है। अन्यथा फिर मैल चढ़ जाया करती है। उसके बारे में इस तरह फ़रमान है –

धारना - कट्टे जाणगे चौरासी वाले गेड़े,
नितनेम कर लै बंदिआ - 2, 2
नितनेम जी, कर लै पिआरिआ - 2, 2
कट्टे जाणगे चौरासी वाले गेड़े, ...-2

रहितनामे में लिखा हुआ है –

वाहिगुरू पुन मंत्र सु जाप॥ *रहतनामा भाई नंद लाल*

पहले उठकर स्नान करो। उसके पश्चात वाहिगुरू मन्त्र जो पाँच प्यारों ने दिया है, उसका जाप शुरू कर दो –

करि इसनान पढ़ै जपु जापु॥ *रहतनामा भाई नंद लाल*

जपुजी साहिब तथा जापु साहिब स्नान करके पढ़ो –

संधिआ समें सुने रहिरासि॥ *रहतनामा भाई नंद लाल*

शाम हो गई। सारे काम छोड़कर रहरास पढ़े या सुने –

कीरतन कथा सुनै हरि जास॥ *रहतनामा भाई नंद लाल*

कीर्तन सुने, कथा हो रही हो, कथा सुने –

इन पै नेम जु एक कराए॥ *रहतनामा भाई नंद लाल*

एक भी नियम जो इसमें से कर लेगा –

सो सिख अमरापुरी महि जाइ॥ *रहतनामा भाई नंद लाल*

वह गुरू दसवें पातशाह के पास जायेगा और जो नहीं करता –

बिन जपु जापु जपे बिनु जो जेवहि परसादि॥

रहतनामा भाई नंद लाल

जपुजी साहिब नहीं पढ़ा, जापु साहिब नहीं पढ़ा, रोटी खाने लग गया –

सो विसटा का किरम हुइ जनम गवाहै बाद॥ *रहतनामा भाई नंद लाल*

कहते हैं, फिर तो गन्दगी का कीड़ा है। ऐसे कठोर शब्दों में महाराज जी ने कहा है। इसका कितना महातम है। साध संगत जी, इसके बारे में मैं बेनती करता हूँ।

जब अमृतसर का युद्ध समाप्त हो गया, उस समय गुरू गोबिन्द सिंह महाराज जी ने भीड़

भाड़ में से निकल कर बाहर जाने के लिये, गोबिन्दपुरा की ओर तैयारी कर ली। जब आप वहाँ पहुँचे तो एक व्यक्ति भगवान दास करोड़ नाम का वहाँ रहता था। महाराज जी वहाँ पर इस गाँव को बसा कर गये थे, पर इसने महाराज जी की गैर हाज़री में सारे गाँव पर कब्ज़ा कर लिया। जब महाराज गाँव में पहुँचे, तो वह बोला, ''मैंने यहाँ नहीं बैठने देना।''

महाराज जी ने कहा, ''भाई! हमने यहाँ पर चौमासा बिताना है। हमारा गाँव है, हमने मोहरी (नींव) रखी है, यह तू क्या कर रहा है?''

वह बोला, ''यदि आपने रखी तो मैंने उखाड़ दी। अब मैंने यहाँ नहीं ठहरने देना।''

उसके मन में बड़ा अहंकार था क्योंकि जालन्धर के सूबेदार अबदुल खां का वह मित्र था। वह महाराज जी को गालियां देने लग गया। सिंघों को गुस्सा आ गया। पहले तो महाराज जी चुप करके बैठे रहे, जैसे कृष्ण महाराज शिशुपाल की 100 गालियां को चुप चाप सुनते रहे। इसी तरह महाराज जी भी चुप चाप बैठे रहे और वह बोलता चला गया।

सिख कहने लगे, ''सच्चे पातशाह! गालियां निकाले जा रहा है।''

महाराज जी ने कहा, ''कोई बात नहीं।'' जब गालियां निकालने से बन्द न हुआ तो महाराज जी ने कहा, ''इसे हटाओ यहाँ से।''

इतना कहने की देर थी, भाई विधि चन्द आदि ने पकड़ लिया। जैसे-जैसे उसे मुक्के घूंसे लगते, वैसे-वैसे ही गालियां निकालता, जब नहीं माना तो भाई विधि चन्द ने कन्धे पर उठाकर ज़ोर से दरिया में फैंक दिया और कहा, ''चल उधर'' उसका पुत्र रतन चन्द और कर्म चन्द, चन्दू का पुत्र खड़े थे। दोनों ने सलाह बनाई कि अब गुरू के साथ यहाँ पर कोई बहुत आदमी तो है नहीं, इसलिये रतन चन्द कहता है, चलो जालन्धर के सूबेदार अब्दुल खान के पास चलते हैं, वह मेरे पिता जी का मित्र भी है। उसके पास चलकर फरियाद करते हैं। कहते हैं, अब्दुल खां 15000 की फौज लेकर आ गया। महाराज जी ने एक ही दिन में सारी फौज खत्म कर दी और साथ ही कर्म चन्द, रतन चन्द और अब्दुल खान को भी दरिया में फैंक दिया।''

उसके बाद जो मुसलमान मरे थे, उनके लिये कब्रें बनवा दीं, हिन्दू मृतकों का संस्कार करवा दिया, इसके बाद वहाँ पर महाराज जी ने दम दमा बनवा दिया। महाराज जी कहते हैं, ''भाई! यहाँ पर रूहें भटक रही हैं। कोई गुरसिख संगत में से उठे और जपुजी साहिब का एक पाठ सुनाये और शुद्ध पाठ हो।''

शुद्ध और अशुद्ध उच्चारण में बड़ा अन्तर होता है। एक गुरसिख ने अशुद्ध बाणी पढ़ी थी –

करते की मिति करता जाणै कै जाणै गुरु सूरा॥ ***पृष्ठ - 930***

था तो ''कै जाणे गुर सूरा'' उसके चपेटें लगीं।

महाराज जी के पास आया और कहने लगा, ''सच्चे पातशाह! सुना है, आपकी बाणी तो

दरगाह में से यमों की मार से बचाती है। मुझे तो यहाँ पर दखणी औंकार पढ़ने पर आपके सिखों ने चपेटें मारी हैं।''

महाराज जी बताते हैं, ''प्यारे! यह बाणी तो मेरे अंग हैं, तूने मेरे कितने अंग टेढ़े किये, तूने तो मेरे अंग काट ही दिये, अर्थ से अनर्थ कर दिया। जो तू पढ़ रहा था - 'करते की मिति करता जाणै के जाणै गुरु सूरा।' इसका अर्थ है गुरू को किसी बात का नहीं पता। पर लिखा हुआ है -

..... कै जाणै गुरु सूरा॥ ***पृष्ठ - 930***

या तो गुरू जानता है या फिर अकाल पुरुष जानता है। यदि गुरू ही नहीं जानता, फिर तो देख, कितना बड़ा अनर्थ कर दिया?''

महाराज जी कहते हैं, ''शुद्ध पाठ सुनाओ।'' उस समय संगत में से एक गुरसिख उठा। उसका नाम भाई गोपाला था, फैज़ाबाद का रहने वाला था। आकर महाराज जी को नमस्कार की और कहने लगा, ''महाराज जी यदि आप का हाथ, मेरे सिर पर रहे, तो मैं पाठ सुनाता हूँ।''

महाराज कहते हैं, ''आ जा।'' महाराज जी का सिंहासन लगा हुआ था। महाराज जी ने कहा, ''गुरसिखो! एक और सिंहासन लगाओ।'' बराबर में दूसरा सिंहासन सजा दिया।

महाराज कहते हैं, ''नहीं। गुरू महाराज जी के सिंहासन को हमसे ऊँचा रखो। इसके नीचे दो-दो ईंटें और रखो।''

इस प्रकार अपने आसन से काफी ऊँचा करवा दिया। साथ में बोले, इस पर बैठकर इसने गुरू नानक की बाणी पढ़नी है।

इसे हमारे से ऊँचे स्थान पर बैठना चाहिये। बाणी का आदर करना सीखो। जब वह आसन पर बैठ गया और उच्चारण किया -

पूरब कहि 'इकि ओअंकारा'।

'एक औंकार' जिस समय उसने कहा -

'सतिनाम' को बहुर उचारा।

फिर 'सतिनाम' कहा -

श्री हरिगोबिंद सुनि कर जोरि॥

जब गुरू हरगोबिन्द साहिब ने सुना '१ओंकार सतिनाम' दोनों हाथ जोड़कर सिख को नमस्कार कर दी। सिख अब बाणी पढ़नी शुरू करता है -

नमसकार कीनी सिख ओरि।

नमस्कार की। महाराज जी ज्यों-ज्यों जपुजी साहिब सुनते हैं, शुद्ध उच्चारण, शुद्ध मात्रायें, फुरने रहित पढ़ रहा है। कोई भी फुरना गुरसिख नहीं कर रहा।

महाराज जी उस समय, ''वाह! वाह!! वाह!!! वाह!!!!'' कर रहे हैं। जब पूरा जपुजी साहिब पढ़ कर 'केती छुटी नालि' कहा तो महाराज जी तख्त से उठकर चल पड़े और सोच रहे हैं

कि इसे क्या सरोपा दें? पहले महाराज जी ने सोचा, इसे इतनी माया दें कि पुश्त दर पुश्त खत्म न हो। फिर महाराज जी ने सोचा, इससे कुछ नहीं बनेगा। इसे रिद्धियां-सिद्धियां दे दें। कहते हैं, यह भी कम हैं। महाराज जी के चित्त में आया कि अब यह ऊँचे स्थान पर बैठा है, हम उतर जाते हैं और इसे नमस्कार करके गुरू नानक की गद्दी ही दे दें। जब महाराज जी ने उठकर एक चरण आसन से नीचे उतार लिया और दूसरा चरण नीचे रखने लगे तो सिख के मन में एक फुरना उठा कि गुरू साहिब तो चले और तबेले में जो घोड़ा सवा लाख का है, उसके ऊपर काठी भी सारी सोने की जड़ी हुई है, ऊपर झालरें भी सोने की लगी हैं, अतः महाराज जी मुझे वही सरोपे में दे दें तो ठीक रहेगा। महाराज दोबारा तख्त पर बैठ गये।

महाराज जी ने कहा, ''भाई! घोड़ा खोल कर लाओ। उस पर सोने की काठी तथा झालरें भी डालो और इस गुरसिख को दे दो।''

घोड़ा मंगा लिया गया।

महाराज जी कहते हैं, ''गुरसिख! हम तुझ पर बहुत प्रसन्न हैं। अति प्रसन्न हैं क्योंकि तूने जपुजी साहिब फुरने रहित और शुद्ध पढ़ा है और हम तो तुम्हें गुरू नानक पातशाह की गद्दी प्रदान करने चले थे, पर तेरी किस्मत में थी नहीं, इसलिये रह गई। हमने तो अपना तख्त भी छोड़ दिया था। पाँच पैसे और नारियल लाकर तुझे नमस्कार कर देनी थी और कहना था, ''ले सिख! जपुजी साहिब बिल्कुल शुद्ध पढ़ा है। तुझे आज गुरू नानक बना देना था।''

कितना महातम है जपुजी का? और हम कहते हैं हमें तो याद ही नहीं है। कितनी बड़ी भूल है। महाराज जी कहते हैं, याद करो, तुम आए ही इसी काम के लिये हो -

धारना - सुणन पढ़न को बाणी आइओ - 2, 2

अतः हमारा संसार में आना, बाणी पढ़ना, बाणी सुनना, बाणी पर विचार करना, बाणी को हृदय में धारण करना, देवता तो क्या तुम स्वंय गुरू नानक का रूप बन जाओगे -

कबीर तूं तूं करता तू हूआ मुझ महि रहा न हूँ।
जब आपा पर का मिटि गइआ जत देखउ तत तू॥ ***पृष्ठ - 1375***

अतः बाणी वाहिगुरू को हाज़िर-नाज़िर जान कर पढ़नी चाहिये। ऐसा नहीं है कि बाणी पढ़ ली, फिर भी गुरू को हर समय याद रखना चाहिये, क्योंकि बाणी बताती है -

ऊठत बैठत .....॥ ***पृष्ठ - 286***

उठते हुए, बैठते हुए -

..... सोवत नाम॥ ***पृष्ठ - 286***

सोते हुए -

कहु नानक जन कै सद काम॥ ***पृष्ठ - 286***

एक बार एक सूफी पीर था, वह मस्जिद में जा घुसा। वहाँ पर नमाज़ी, नमाज़ पढ़ रहे थे। वह उनके पास से गुज़रता और कहता, ''काफ़र नमाज़ पढ़ रहे हैं, काफ़र नमाज़ पढ़ रहे हैं।'' ऐसे कहता-कहता चला गया। वहाँ पर बादशाह भी नमाज़ पढ़ रहा था। शाही मस्जिद थी। उसके बाद

मौलवियों ने कहा, ''बादशाह सलामत! आपने देखा था? वह मस्ताना सा हमें काफर-काफर कहता चला गया। जब हम नमाज़ पढ़ते हैं, फिर हम काफर कैसे हैं? काफर तो वे हैं जो नमाज़ नहीं पढ़ते।''

बादशाह चुप रहा क्योंकि उसने सोचा सन्तों की अपनी मौज़ होती है, पता नहीं क्यों कहा? फिर दूसरी बार क्या हुआ एक मुर्दा आ रहा था। सभी लोग खड़े हो गये और 'राम नाम सत है' - कह कर सिर झुकाने लग पड़े कि संसार में इसकी यात्रा खत्म हो गई, अब यह अन्तिम सफर कर रहा है। परन्तु फकीर खड़ा होने की बजाये, लेट गया, जबकि मुर्दे को देखकर खड़े होने का विधान है। फिर तीसरी बार एक मुसलमान इस फकीर सांई को रोटी देने लगा। फकीर कहता है, ''मैंने नहीं तेरे हाथ से रोटी लेनी। यह तो भ्रष्ट रोटी है?'' फिर एक हिन्दू ने कहा, ''पीर जी! फकीर सांई! भोजन कर लो।'' उसने दोनों हाथ आगे बढ़ाकर भोजन ले लिया।

चौथी बार क्या हुआ, एक सुनार की दुकान पर चला गया। वहाँ पर जाकर अपनी अंगुली आगे करते हुये कहा, ''अरे सुनार! खुदा की तर्जनी से अंगूठी निकालो।'' वहाँ पर मौलवी बैठे थे, उन्होंने सुन लिया। वे बादशाह के पास आकर कहते हैं, ''महाराज! आप तो चुप-चाप रहते हैं और वह तो कुफ्र बोलता जा रहा है।''

बादशाह ने बुला लिया और कहा, ''फकीर सांई! आपकी शिकायत आई है।''

फकीर, ''क्या शिकायत आई है?''

बादशाह - चार शिकायतें हैं, अकेली-अकेली शिकायत का उत्तर दिये जा। पहली शिकायत है, तूने मस्जिद में जाकर नमाज़ियों को कहा कि ये सब काफ़र हैं।

फकीर, ''हाँ जी! ये सभी काफ़िर ही थे, तभी तो कहा था।''

बादशाह, ''कैसे?''

फकीर, ''बादशाह आपके कितने पुत्र हैं?''

बादशाह, ''मेरे दो लड़के हैं।''

फकीर, ''बड़ा पुत्र कहाँ है?''

बादशाह, ''बड़ा पुत्र तो विदेश में है।''

फकीर, ''छोटा पुत्र?''

बादशाह, ''छोटा पुत्र मेरे पास रहता है।''

फकीर, ''बड़े पुत्र को दिन में कितनी बार याद करते हो?''

बादशाह, ''दो बार, कभी चार बार, कभी पाँच बार।''

फकीर, ''छोटे पुत्र को कितनी बार याद करते हो?''

बादशाह, ''जब वह आखों से जरा सा ओझल हो जाये तो मैं उसी समय पता करवाने के लिये भेजता हूँ और कहता हूँ, बेटा कहाँ गया? शहज़ादा कहाँ गया। ढूँढो। वह तो हर वक्त ही याद रहता है।''

फकीर ''मैंने यही तो कहा है कि तुम पाँच बार खुदा को याद करते हो, काफरो! सारा दिन याद करो।''

ऊठत बैठत सोवत नाम। कहु नानक जन कै सद काम॥ *पृष्ठ - 286*

फकीर ''ये तो काफ़िर हैं, फिर भी भूले ही रहते हैं। नमाज़ कितनी देर की होती है?''

इसी तरह हमने पाँच बाणियां तो पढ़ लीं, बाकी दिन हम परमेश्वर को भूले रहे। यह भी अच्छी बात नहीं है।

दूसरी शिकायत के बारे में बादशाह ने कहा, ''जब मुर्दा आ रहा था तो तुम लेट क्यों गये थे?''

फकीर, ''बादशाह! फकीर जो होता है, वह मुर्दा होता है। इसने कफ़नी पहनी होती है। ठीक है ना? मैंने भी यह कफ़न पहना हुआ है, इसलिये मैं भी मुर्दा। मुर्दे के सिर पर टोपी होती है, मेरे सिर पर भी टोपी है। जब यह मुर्दा आया तो मैंने कहा, ''अरे मुर्दे! तू तो जागता है। बातें करता है, गप्पे मारता है। यह देख अर्थी पर पड़ा है।'' इसे देखकर मैं भी लेट गया और कहा, मैं भी मुर्दा हूँ। मैंने तो अपने आपको बहुत फटकारा क्योंकि मैं तो मुर्दा होकर ज़िन्दा घूम रहा हूँ। तूने कफ़नी पहनी हुई है। कफ़नी पहन कर, फिर भी तू ज़िन्दा है। इसलिये मैं लेट गया।''

तीसरी शिकायत थी, ''तूने हिन्दू के हाथों की रोटी ले ली, पर मुसलमान के हाथों से नहीं, ऐसा क्यों?''

फकीर, ''मुसलमान का राज्य है। इसलिये मुसलमान अहंकारी हो गये हैं। वह मुसलमान घमण्डी आदमी हैं।''

हरि जीउ अहंकारु न भावई वेद कूकि सुणावहि॥ *पृष्ठ - 1089*

फकीर, ''वह परमेश्वर को, अल्लाह को नहीं रूचते। ये हिन्दू गरीब हैं, परमेश्वर को हर समय याद रखते हैं, इसलिये मैंने इनके हाथ से रोटी ले ली।''

बादशाह, ''आपने सुनार से यह क्यों कहा कि खुदा की तर्जनी अंगुली में से अंगूठी निकाल दे?''

फकीर, ''बादशाह! यह राज्य किसका है?''

बादशाह, ''खुदा का।''

फकीर, ''ये रानियां वगैरा किसकी हैं?''

बादशाह, ''खुदा की।''

फकीर, ''तेरा शरीर किसका है?''

बादशाह, ''खुदा का।''

फकीर, ''तेरा हाथ किसका है?''

बादशाह, ''खुदा का।''

फकीर, ''अंगुली किस की है?''

बादशाह, ''खुदा की।''

फकीर, ''फिर मैंने यही तो कहा था कि खुदा की अंगुली से अंगूठी उतार दो।''

कहते हैं, ''बादशाह! सबसे बड़ी बात तो याद रखने की होती है। हर समय याद रखो। जब हर समय याद रहता है, तब पाठ पढ़ने का पूरा-पूरा फल प्राप्त होता है।'' गुरू दसवें पातशाह के पास संगत आई हुई थी, कुछ सिखों ने प्रार्थना की -

''पातशाह! हमने सुना है कि बाणी में अमल है पर हमें तो होता नहीं?''

महाराज कहते हैं, ''तुम बाणी पढ़ते नहीं हो।''

सिख बोले, ''महाराज! एक नहीं बल्कि 9-9 बाणियां पढ़ते हैं।''

महाराज कहते हैं, ''भाई! तुम पढ़ते ही नहीं। जैसा गुरू नानक पातशाह ने बताया है, तुम वैसे नहीं पढ़ते। गुरू नानक पातशाह तो यह कहते हैं कि जो जपुजी साहिब भी एक चित्त होकर प्यार से पढ़ लेगा, पाँच बाणीयाँ तो दूर की बात है, कहते हैं उसे भी नशा चढ़ जाता है।''

धारना - चढ़ी रहे दिन रात, नाम खुमारी,
नाम खुमारी - 2, 2
चढ़ी रहे दिन रात, नाम खुमारी,
नाम खुमारी - 2, 2

पोसत मद अफीम भंग उतर जाए परभाति॥ *जनमसाखी*

चार नशे हैं।

यदि रात को पी लिये जायें तो सुबह उतर जाते हैं -

नाम खुमारी नानका चढ़ी रहे दिन रात॥ *जनमसाखी*

महाराज जी कहते हैं, ''तुम कहते हो रस नहीं आता? तुम बाणी नहीं पढ़ते?''

सिंह बोले, ''पातशाह! हम तो आठ-आठ नौ-नौ बाणीयाँ पढ़ते हैं।''

महाराज जी ने एक युक्ति से समझाने के लिये लांगरी से कहा, एक बालटी सुख निधान की ले आ, साथ ही कुछ छोटे, कुछ बड़े बाटे (बर्तन) भी लाने को कहा। बड़े-बड़े बर्तनों को तो भरवा दिया और छोटे-छोटे बर्तनों में एक-एक दो-दो घूंट डलवा दी। कुछ सिंहों को बड़े बर्तन देते हुए कहा कि ले जाओ और वहाँ दूर बैठ कर इनकी कुरलियां करो। ध्यान रखना अन्दर एक भी घूंट

नहीं जाना चाहिये। कुछ सिंघों को छोटे बर्तन दिये और कहा कि इन्हें पी जाओ। जब वे खत्म करके आ गये तो महाराज जी ने पूछा, ''क्यों भाई! नशा हुआ?''

सिंह बोले, ''सच्चे पातशाह! कैसा नशा? आपने तो कहा था इसकी कुरलियां करनी हैं?''

जब दूसरों से पूछा, ''क्यों भाई! तुमने दो-दो घूंट पीये हैं, क्या तुम्हें नशा हुआ?''

वे बोले, ''हाँ महाराज! हमारे तो सिर चकराने लग गये हैं।''

महाराज जी ने कहा, ''प्रेमियो! इन्होंने केवल दो-दो घूंट पीये हैं और इन्हें नशा चढ़ता जा रहा है। उन्होंने भर-भर कुरलियां की हैं, उन्हें कुछ नहीं हुआ। इसी तरह से तुम भी बाणी की कुरलियां करते हों, प्यार से पढ़ते नहीं हो। जान छुड़ाने की कोशिश करते हो कि जल्दी-जल्दी एक दम खत्म हो जायें।''

अब यह पंक्ति खत्म हो गई। अब यह भी खत्म हो गई। ऐसे गिन-गिन कर पढ़ते हो। ऐसे काम नहीं चलेगा जब चित्त एकाग्र करके बाणी पढ़ोगे, फिर बाणी अपना फल दिया करती है। मैं 25 पाठ क्यों बताता हूँ, वह इसलिये कि किसी न किसी एक आधे पाठ में तो चित्त लग ही जायेगा। दत्त चित्त होकर एक पढ़ लो या 25 पढ़ लो बात तो एक ही है। जपुजी साहिब का फल तो बेअन्त है। जब हम नाम जपते हैं, तो बाणी का फल, जब बाणी पढ़ते हैं तो यह हमें अकाल पुरुष के पास लेकर जाती है, फिर हम जाते क्यों नहीं हैं, क्योंकि हम पढ़ते नहीं हैं। यदि पढ़ते भी हैं तो पूरी विधि से नहीं पढ़ते।

गुरू दसवें पातशाह का दीवान सजा हुआ है। सभी देखते हैं कि एक अजीब किस्म का आदमी आ रहा है। एक गोदड़ी सी लिये हुए है। ऐसा कपड़ा जिसको जगह-जगह पट्टियों से जोड़ा हुआ है, कुछ रंग बिरंगा सा अजीब तरह का सा था। महाराज जी के पास आया, कुछ वार्तालाप किया और पाँच पंख सिर झुकाने के साथ ही भेंट कर दिये। कुशल क्षेम पूछी।

महाराज जी ने कहा, ''सुनाइये मुनि जी! आप कैसे पधारे?''

वह बोले, ''सच्चे पातशाह! मैं बैकुण्ठ धाम में विष्णु जी के पास बैठा प्रवचन सुन रहा था और उन्होंने बताया कि इस समय जो कलयुग की मालिकी है, गुरू नानक जी के पास है और गुरू नानक जी का दसवां स्वरूप, इस समय संसार का उद्धार कर रहे हैं और मैंने युद्धों के बारे में भी सुना और मैं दर्शन करने आया हूँ क्योंकि इसी तरह से कृष्ण भगवान भी शस्त्रधारी थे, राम चन्द्र जी भी शस्त्रधारी थे, मैं देखने आया था। महाराज जी, आपके दर्शन करके मन बहुत प्रसन्न हुआ है। अब हमें आज्ञा दें।''

महाराज जी ने आज्ञा दे दी। देखते ही देखते गायब हो गया। सभी हैरान कि पता नहीं कहाँ छू-मन्तर हो गया। महाराज जी से पूछा, तब महाराज जी ने कहा, ''भाई! नारद जी आये थे। बैकुण्ठ धाम से आये थे। चलो अब तीर अन्दाज़ी का अभ्यास करते हैं।''

वे पंख कारीगरों के पास भिजवा दिये और कहा कि इन्हें तीरों के साथ अच्छी तरह जड़

दो। शाम के 4 बजे का समय है।

महाराज जी कहते हैं, ''ऐसे करो। हम बाण चलायेंगे दूर-दूर खड़े हो जाना और जब यह बाण धरती पर गिरे तो उठाकर हमारे पास ले आना।''

पहले महाराज जी का परशादी हाथी लाया करता था जो तीर महाराज जी छोड़ा करते थे, वह दौड़कर जाता और बाण उठाकर महाराज जी के पास ले आता। उस दिन सिंह खड़े कर दिये। महाराज जी ने बाण चलाये, बहुत तेज़ धुन्कार हुई। सभी देख रहे हैं कि तीर ऊपर की ओर जा रहा है, देखते-देखते आखों से ओझल हो गया, धरती पर न गिरा। दूसरा, तीसरा, चौथा, पाँचवा कोई भी वापिस धरती पर न गिरा। सभी हैरान होकर महाराज जी से पूछते हैं, ''पातशाह! हम तो काफी दूर-दूर तक ढूंढ आये पर आपका बाण तो धरती पर गिरा ही नहीं क्या कारण है?''

महाराज कहते हैं, ''देखो प्यारे! वह नारद जी अनल पन्छी के पंख लेकर आये थे।''

कहते हैं यह पन्छी आकाश में घूमता रहता है। वहीं पर ही बच्चे देता है, आकाश में ही पलता है। इसके पंखों में यह तासीर है कि जिस चीज़ को भी इसके साथ लगा दो, उसे लेकर यह अपने देश में पहुँच जाया करता है।

महाराज जी ने कहा, ''प्रेमियो! तुम्हें एक दृष्टान्त द्वारा यह बात समझाई गई है। गुरू नानक जी की जो बाणी है वह इस मण्डल की बाणी नहीं है। यह उसी मण्डल की बाणी है और उसी मण्डल से आई है। जिसका मन इसके साथ लग जायेगा, उसे सचखण्ड में ले जायेगी। इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - इह धुर की बाणी आई - 2, 2
इह धुर की बाणी आई - 2, 2
सगली चिंत मिटाई
जिन, सगली चिंत मिटाई - 2, 2
इह धुर की बाणी आई,
जिन सगली चिंत मिटाई - 2.

धुर की बाणी आई। तिनि सगली चिंत मिटाई॥ *पृष्ठ - 628*

इस तरह से महाराज जी कहते हैं कि यह सचखण्ड की बाणी है, जिसका मन इसके साथ लग जायेगा, उसे कोई कर्म, धर्म, क्रिया, जाप और कुछ करने की जरूरत नहीं है। इस बाणी ने सचखण्ड में ले जाना है। इसलिये -

अंम्रित बचन साध की बाणी।
जो जो जपै तिस की गति होवै
हरि हरि नामु नित रसन बखानी॥ *पृष्ठ - 744*

इस बाणी के साथ जिसका चित्त लग गया, वह सचखण्ड चला जायेगा। यह गुरू का हुक्म है। साध संगत जी! मान ले इसे -

धारना - मंन पिआरिआ
सच्चा हुकम गुरां दा - 2, 2

हुकम गुरां दा, सच्चा हुकम गुरां दा - 2, 2
मंन पिआरिआ, ... -2.

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरिनामु धिआवै॥ *पृष्ठ - 305*

सच्चा सिख कहलाता है? हाँ जी! लिखवाया है, मैं सिख हूँ -

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए सु भलके उठि हरि नामु धिआवै।
उदमु करे भलके परभाती इसनानु करे अंम्रितसरि नावै॥ *पृष्ठ - 305*

फिर पहर रात रहते उठ जाया कर, फिर सोया मत कर -

उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै .....॥ *पृष्ठ - 305*

फिर जो पाँच प्यारों ने नाम दिया है, उसे जप। फल क्या होगा?

..... सभि किलविख पाप दोख लहि जावै॥ *पृष्ठ - 305*

जितने पाप तुझ से गलती से, अनजाने में हो गये, पहले सभी धुल जायेंगे -

फिरि चढ़ै दिवसु गुरबाणी गावै
बहदिआ उठदिआ हरिनामु धिआवै।
जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि
सो गुरसिखु गुरू मनि भावै।
जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी
तिसु गुरसिख गुरू उपदेसु सुणावै।
जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की
जो आपि जपै अवरह नामु जपावै॥ *पृष्ठ - 305*

अत: हुक्म मान ले -

सतिगुर का जो सिख अखावै। अंम्रितु वेले उठ कर नावै।
पठ गुर मंत्र समाध लगावै। गुर मूरत हिरदै महि लिआवै॥

गुरू नानक जी की मूर्ति हृदय में ले आ -

दिवसु चढ़ै जपुजी का पाठ। आसा वार सुनै सभ ठाठ॥

फिर आसा दी वार सुन। जपुजी साहिब का पाठ करने के बाद -

सगरु दिवस क्रित धरम करावै॥

दिन में धर्म की नेक कमाई कर -

सोदरु समे संधिआ गावै॥

जब सूरज छिपने वाला हो, आधा बाहर दिखाई दे रहा हो, आधा छिप गया हो। उससे पहले प्यारे! रहरास साहिब पढ़ लिया कर -

पुना आरती पढ़ हित लावै॥

फिर आरती पढ़ा कर -

कथा सुनै पीछै मन भावै॥

फिर गुरू का इतिहास सुना कर -

सोहिला पठ पुन सैन करावै॥

फिर कीर्तन सोहला पढ़ा कर फिर सो जाया कर। जो ऐसा सिख है –

सो सिख जमपुर नहि जावै॥

वह यम पुरी नहीं जायेगा। सीधा गुरू नानक के पास जायेगा। इसलिये साध संगत जी! जितनी बेनतियां की हैं, इन्हें हृदय में बसाओ। यह जनम बड़ा अमोलक है –

धारना - सौं के ना गवा लईं,
तेरा जनम अमोल है - 2, 2
जनम अमोल है तेरा जनम अमोल है - 2, 2
सौं के ना गवा लईं, ... -2

कबीर मानस जनमु दुलंभु है होइ न बारै बार।
जिउ बन फल पाके भुइ गिरहि बहुरि न लागहि डार॥ *पृष्ठ - 1366*

झालाघे उठि नामु जपि निसि बासुर आराधि।
कारा तुझै न बिआपई नानक मिटै उपाधि॥ *पृष्ठ - 255*

बड़ा अमोलक जन्म है, इसे किसी तरह सफल कर ले –

अंम्रित वेले उठिकै जाइ अंदरि दरिआउ न्हवंदे।
सहजि समाधि अगाधि विच इक मनि होइ गुर जापु जपंदे।
मथै टिके लाल लाइ साधसंगति चलि जाइ बहंदे॥ *भाई गुरदास जी, वार 6/3*

वे गुरसिख जिन्होंने अपना जन्म सफल करना है, उनकी रहतें बताते हैं –

सबदु सुरति लिव लीणु होइ सतिगुर बाणी गाइ सुणंदे।
भाइ भगति भै वरतमान गुर सेवा गुरपुरब करंदे।
संझै सोदरु गावणा मन मेली करि मेलि मिलंदे।
राती कीरति सोहिला करि आरती परसादु वंडंदे।
गुरमुखि सुख फलु पिरम चखंदे॥ *भाई गुरदास जी, वार 6/3*

सो भाई लहणा जी! यह बाणी का महत्व है। जहाँ भी कोई गुरसिख जपुजी साहिब पढ़ता होगा, कीर्तन सोहला पढ़ेगा, बाणी पढ़ेगा, भाई लहणा मैं उस स्थान पर गुरसिख के साथ-साथ रहूंगा।

कहने लगे, ''बेटा! बकरियां चराता हुआ तू बड़े प्यार के साथ बाणी पढ़ता था। अब ऐसे किया कर, जब बाणी पढ़ो, खास तौर से कीर्तन सोहला, उस समय चारपाई पर बैठ कर, पाँच स्नान करके पहले पाँच शब्द पढ़ो, फिर कीर्तन सोहला पढ़ो।''

इससे घर की, बाहर की तुम्हारी रक्षा होगी। भूत प्रेतों का दवाब नहीं पड़ेगा। यदि सोते हुए शरीरान्त हो जाये तो सीधा दरगाह में जायेगा। गुरू नानक जी द्वारा रक्षा होगी। साध संगत जी! जो वचन महाराज जी ने गुरू अंगद साहिब जी के साथ, जब आप सिख के रूप में सेवा करते थे, उन पर विचार किया है, ये हमारे लिये प्रकाश स्तम्भ हैं। हम भी इन्हें धारण करें और बाणी पर भरोसा करें। जिस दिन नितनेम नहीं होता, उस दिन रोटी मत खाओ पर नितनेम मत छोड़ो क्योंकि यह आत्मिक खुराक है। जो गुरसिख कर लेगा, बाणी को मान लेगा, बाणी के मुताबिक जीवन ढाल लेगा, उसकी फिर यहाँ से जय-जय कार होती जायेगी, खुशी-खुशी जायेगा –

कबीर मुहि मरने का चाउ है मरउ त हरि कै दुआर।
मत हरि पूछै कउनु है परा हमारै बार॥ *पृष्ठ - 1357*

कबीर जिसु मरने ते जगु डरै मैरै मनि आनंदु।
मरने ही ते पाईऐ पूरनु परमानंदु॥ *पृष्ठ - 1365*

कबीर संत मूए किआ रोईऐ जो अपुने ग्रिहि जाइ॥ *पृष्ठ - 1365*

वह तो अपने घर को, गुरू नानक पातशाह के पास जा रहा है। उसने तो दरगाह सचखण्ड में जाना होता है, जिसने सारी जिन्दगी बाणी पढ़ी है -

रोवहु साकत बपुरे .....॥ *पृष्ठ - 1365*

यदि रोना हो तो साकत (नास्तिक) की मृत्यु पर रोओ क्योंकि उसने जन्म-मरण में घूमते रहना है, धक्के खाने हैं -

..... जु हाटै हाट बिकाइ॥ *पृष्ठ - 1365*

कभी कुत्ता बनेगा, कभी बिल्ला बनेगा, कभी सांप बनेगा ऐसे व्यक्ति के लिये रोओ क्योंकि वह मानस जन्म व्यर्थ गवाँ कर जा रहा है।

सो साध संगत जी! यह जो विचार आपके चरणों में भेंट की है, इन्हें समझो। इस बात पर विचार करो। जब भी मुझे प्रेमी मिलते हैं तो मैं यही कहता हूँ, ''बाणी पढ़ो।'' वे कहते हैं, ''बाणी याद नहीं, कहते हैं मूल मन्त्र भी याद नहीं, फिर तेरा संसार में आने का क्या लाभ? यदि बाणी नहीं पढ़नी तो फिर धक्के खाओ। बीमार है तो बीमार ही रह। भूत है, भूतों में तू क्या बनेगा? तू आप भूत है।''

कबीर जा घर साध न सेवीअहि हरि की सेवा नाहि।
ते घर मरहट सारखे भूत बसहि तिन माहि॥ *पृष्ठ - 1374*

जैसा कि बताया है, प्रार्थना की है, पाँच प्यारों ने बताया था कि भूतों से देवते बन जाओ, यदि फिर वहीं रहना है.....। अमृत पान कर लिया जी। खाली अमृतपान करने से कुछ नहीं बनना, यदि बाणी पढ़नी नहीं, हुक्म मानना नहीं। यदि पढ़े लिखे नहीं हो तो बाणी को याद कर लो। अरे भाई! किसी पढ़े लिखे से पूछ कर एक-एक तुक याद करवा लो। जो याद करवाता है, उसे कितना महान फल मिलता है -

जैसे सत मंदर कंचन के उसार दीने
तैसा पुन सिख कउ इक सबद सिखाए का॥ *कबित सवय्ये*

पढ़ा लिखा यदि एक शब्द भी सिख को सिखा दे तो उसे 7 सोने के मन्दिर बना कर दान करने के बराबर पुण्य फल प्राप्त होता है। अनपढ़ो को बाणी याद कराओ। मैं सिन्ध में था, गन्ने की गोड़ाई कर रहे थे। मैं भी गोड़ाई करने लग गया। वे बोले, ''नहीं जी, आपसे हमने गोड़ाई नहीं करवानी।''

मैंने कहा, ''मैं तो जरूर गोड़ई करूंगा। तुमसे मैंने आज दिहाड़ी लेनी है।''

वे बोले, ''क्या लेगा?'' मैंने कहा, ''मैंने पैसे नहीं लेने। तुम्हें कुछ बात सिखानी है।'' जब पहली क्यारी की गोड़ाई हुई तो मैं उनसे कहलवाता गया -

१ओंकार सतिनामु करता पुरख .....

अन्तिम क्यारी के सिरे तक पहुँचते-पहुँचते 'गुर परसादि' तक याद करवा दिया। दूसरी क्यारी की गोडाई की तो आदि सचु जुगादि सचु से लेकर पहली पऊड़ी आधी याद करवा दी। इस तरह गोड़ाई करते-करते दोपहर तक पांच पऊड़ियां सभी को याद करा दीं। साथ ही साथ सभी से पूछ लिया करता, याद हो गई तो सुना।

वे बोले, ''जी मज़दूरी?'' मैंने कहा, ''यही मज़दूरी लेनी थी। बाणी याद करवानी थी।''

यदि कोई चाहे तो अनपढ़ को भी बाणी याद करवा सकता है। अनपढ़ यदि चाहे कि मैं गुरू के साथ कैसे सम्बन्ध बनाऊं, गुरू तो मेरी बाणी है, गुरू ग्रन्थ साहिब को सिर झुकाने से ही पार नहीं हो जायेगा। सतगुरू को देखने से मुक्ति नहीं हुआ करती -

डिठै मुकति न होवई जिचरु सबदि न करे विचारु॥ *पृष्ठ - 594*

जब तक शब्द पर विचार नहीं करता, देखने से मुक्ति नहीं होती। अतः बाणी याद करो। जितनी याद कर सकते हो करो। इस संसार में रहना नहीं है, यहाँ से चले जाना है फिर जब बाणी पढ़ने वाला जाता है -

धंनि धंनि कहै सभ कोइ। मुख ऊजल हरि दरगह सोइ।
इहु वापारु विरला वापारै। नानक ता कै सद बलिहारै॥ *पृष्ठ - 283*

अब सभी प्रेमी गुर सतोतर में बोलो। जो भाई अभी तक नहीं बोले, वे भी अपनी रसना पवित्र कर लो।

- आनन्द साहिब -
- गुर सतोतर -
- अरदास -

10

अविनाशी ज्योति

सन्त वरियाम सिंघ जी
बानी वि. गु. रू. मिशन

शान.....।

सतिनाम श्री वाहिगुरू,
धंन श्री गुरू नानक देव जी महाराज!

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥

पृष्ठ - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ
परिआ तउ सरनाइ।
नानक की प्रभ बेनती
अपनी भगती लाइ॥

पृष्ठ - 289

धारना - शरन परिओ
दरबारे - 2, 2.
शरन परिओ
दरबारे सुआमी - 4

धारना - हरि के सेवक जो
हरि भाए,
तिन की कथा
निरारी रे - 2, 2
तिन की कथा
निरारी रे - 2, 2
हरि के सेवक जो
हरि भाए, ...-2

हरि के सेवक जो हरि भाए तिन्ह की कथा निरारी रे।
आवहि न जाहि न कबहू मरते पारब्रहम संगारी रे॥ पृष्ठ-855

साध संगत जी! गर्ज़ कर बोलो। सतनाम श्री वाहिगुरू। कारोबार संकोचते हुए आप गुरू दरबार में पहुँचे हो, धूप भी पूरे ज़ोरों पर है, पर गुरू महाराज जी ने हमें तप और तितिक्षा करना, जिसे कठिन साधना कहते हैं, उसकी परवानगी दी है। थोड़ी सी सावधानी से, जब हम हरि यश करते हैं, उसका ही हमें पूरा-पूरा लाभ प्राप्त होता है। धूनियां रमाने से, निरर्थक तप करने से, मन क्रोधित हो जाता है, तमोगुण बढ़ जाया करता है, पर यही तप, जब हरि के यश की ओर, परमेश्वर के प्यार में लग जाये, तो यह सोने पर सुहागे का काम करता है। आप संगत में आते हो, नमस्कार करो। श्रद्धा भावना के साथ जहाँ भी स्थान मिलता है, बैठने का यत्न करो।

पिछले कई दिनों से गुरू अंगद साहिब महाराज जी की कथा चल रही है कि आप गुरू नानक पातशाह जी की संगत में कैसे आये? बेशक आप धुर से ही आये हुये थे, पर गुरसिख का एक नमूना, आपने बन कर दिखाना था और सिख भी इतना ऊँचा, जिसके आगे गुरू नानक पातशाह जैसा पारब्रह्म परमेश्वर भी झुक जाये। साध संगत जी! बहुत बड़ी बात है। अकाल पुरुष ने कहा, ''हे नानक! मैं पारब्रह्म परमेश्वर, तू गुरू परमेश्वर।''

पहले गुरू महाराज जी से पूछा, ''हे नानक! तुम जिस कार्य के लिये संसार में गये थे, वह काम अभी तक शुरू नहीं किया?''

महाराज जी कहने लगे, ''निरंकार जी! आपने ही मर्यादा बनाई हुई है कि जब तक गुरू धारण न किया जाये, तब तक मनुष्य निगुरा रहता है। मैंने सारे विश्व में नज़र मार कर देखा, बर्फीली पहाड़ों की चोटियों पर, समुद्र के किनारों पर, नदियों के किनारों पर, दुनियां के सभी तीर्थों पर, सभी मठों, मन्दिरों में, मकबरे तथा मस्जिदों में, कोई जगह मैंने नहीं छोड़ी। पर मुझे –''

बीजउ सूझै को नही बहै

दूलीचा पाइ॥ पृष्ठ - 936

ऐसा कोई भी संसार में नज़र नहीं आया जो सामने दलीचा डाल कर, आसन लगाकर ज्ञान दे सके।

गुरू नानक पातशाह छोटी उम्र में सच्चा सौदा, खरा सौदा करने के लिये, यदि सन्त रैण जी से मिले, जब महाराज जी उनके सम्मुख खड़े हुए तो उन्होंने यह बात कही, ''अब हम बाकी सारा कुछ अपने आप कर लेंगे, आप यहाँ से चले जाइये।'' बाद में साधुओं ने सन्त रैण जी से पूछा, ''महाराज! इस बालक ने इतने प्रेम से सेवा की है और आपने इसे दो मिनट के लिये भी बैठने नहीं दिया?''

सन्त जी बोले, ''प्यारे! तुम्हें नहीं पता? उसके अन्दर कितना तेज़ जलाल था? मैं सहन नहीं कर सकता था। फिर मैं श्री महंत होता हुआ, ऊँचे स्थान पर बैठा था और मैं यदि नीचे बैठता और उन्हें ऊपर बिठाता, फिर तो ठीक था। इस प्रकार यह बेअदबी थी। इसलिये मैंने जल्दी छुट्टी मांग ली।''

गुरू महाराज जी को संसार में कोई न मिला जो गुरू मन्त्र दे सकता। अतः आप अकाल पुरुष के द्वार पर पहुँचे। वहाँ पर अकाल पुरुष ने वचन किये, ''हे नानक! तूने मेरे नाम का अमृत प्याला पीया है। तूने मेरे हुक्म की सूझ पाई है। मैं पारब्रह्म परमेश्वर, जिसका कोई पारावार नहीं होता, न कोई आदि न कोई अन्त, न कोई दिशा न कोई side और तुम गुरू परमेश्वर।''

सो गुरू परमेश्वर संसार में आकर किसी के सामने झुक जाये, वह तो फिर करामात ही हुई। गुरू नानक साहिब सारी आयु में यदि किसी के आगे झुके तो केवल गुरू अंगद साहिब जी के सामने झुके हैं। कितने बड़े गुरसिख थे। गुरूआई मिलने से पहले आपका नाम भाई लहणा था। कितनी कठिन साधना आपने की, यह हमारे लिये एक आदर्श है। जिनके मनों में ऊँचा उठने का

शौक है, उनके लिये बड़े विस्तार के साथ हमने विचार किया है कि गुरसिख किस तरह धीरे-धीरे तरक्की करता है और किस तरह ऊँची मंजिल पर पहुँचता है।

आप दिन रात सेवा कर रहे हैं। सेवा भी ऐसी, जिसका कोई सानी ही नहीं था और गुरू महाराज जी सेवा से प्रसन्न होते जा रहे थे। सेवक जो होता है, जब तक सिर उतार कर गुरू के चरणों में नहीं रखता, तब तक सेवा परवान नहीं हुआ करती। शरीर का सिर नहीं उतार देना, अहंकार का सिर उतारना है। अपने आप का जिसने हमें 'मैं' बनाया हुआ है कि 'मैं' हूँ। उस 'मैं' को खत्म करना है और उस सेवक के गुण बताने के लिये भाई गुरदास जी ने इस तरह से फ़रमान किया है –

धारना - मुरदा होइ कै मुरीद बण जावणा ,
मुरदा होइ कै मुरीद बण जावणा - 4

मुरीद तीन प्रकार का होता है। एक मुरीद होता है। एक मुरीद-ए-साधक होता है। एक मुरीद-ए-फिदाई हुआ करता है। सिखों में एक सिख, दूसरा सन्मुख सिख, एक मरजीवड़ा सिख। जो मुरीद-ए-फिदाई और मरजीवड़ा सिख है, वह सिखी की सर्वोत्तम और सर्वोच्च मंजिल हुआ करती है। हम भी सिख बने हुए हैं। हमारे अन्दर कहीं न कहीं कोई कमी है, क्योंकि न तो हमारे अन्दर नाम चलता है, न ही हमें उच्च जीवन प्राप्त हो रहा है, न ही अन्दर रस आ रहा है। निराशा और उदासी में रहते हैं और महाराज जी ऐसा कहते हैं –

तन के तीन ताप होते हैं – आधि, बिआधि, उपाधि। मोह मिट जाये। मोह की सारी सेना काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार, ईर्ष्या, निन्दा, चुगली, वैर, ये सभी यदि शरीर में से खत्म हो जायें, तो समझ लो कि इसे गुरू लग गया अन्यथा नहीं –

मुरदा होइ मुरीदु न गली होवणा॥
भाई गुरदास जी, वार 3/18

बातों से तो कोई सिख नहीं बना करता, न ही मुरीद बन जाता है। यदि मुर्दा हो, तब बना करता है। कुछ एक के मन में यह शंका हुआ करती है कि मुर्दा तो कुछ भी नहीं करता। जहाँ पर मुर्दा अक्षर प्रयोग किया गया है, साध संगत जी! मुर्दे के कई अर्थ हुआ करते हैं। एक मुर्दा तो वह होता है, जिसके अन्दर से चेतन कला निकल जाये, फिर शरीर मुर्दा हो जाता है। एक मुर्दे वे हुआ करते हैं जो खूब खाते पीते हैं, अच्छे-अच्छे वस्त्र पहनते हैं, सुन्दर-सुन्दर मकानों में रहते हैं, अच्छी-अच्छी ऊँची-ऊँची पदवियों पर बैठे हैं, बड़े-बड़े कारोबार चलते हैं, दुनियां में उनका नाम मशहूर है, लेकिन उनके अन्दर नाम की तरंग नहीं चल रही, नाम से हीन है –

सो जीविआ जिसु मनि वसिआ सोइ।
नानक अवरु न जीवै कोइ॥ *पृष्ठ - 142*

एक मुर्दा वह है, जिसके अन्दर रूखापन है। भूल कर भी किसी को प्यार नहीं करते। न ही प्यार की कोई बात जानते हैं। सदा ही अपने स्वार्थ की बातें किया करते हैं –

बैर बिरोध काम क्रोध मोह।

झूठ बिकार महा लोभ ध्रोह॥ *पृष्ठ - 267*

ऐसे अवगुणों के कारण, बुरी बातों के अन्दर, जिन्होंने अपना जीवन बर्बाद कर लिया। महाराज जी कहते हैं, ''वे प्यार से विहीन, चाहे कितने भी धनवान क्यों न हों? बेशक उनका शरीर बहुत ही खूबसूरत क्यों न हो? बातचीत में चाहे कितने चतुर क्यों न हो? कितने ही सियाने हों? बढ़िया से बढ़िया वंश से सम्बन्ध क्यों न रखते हो? यदि उनके अन्दर प्यार नहीं, तो वे मुर्दे हुआ करते हैं।''

अति सुंदर कुलीन चतुर मुखि डिआनी धनवंत।
मिरतक कहीअहि नानका जिह प्रीति नही भगवंत॥
पृष्ठ - 253

ये जो मुर्दे हैं, ये सदा ही नुकसान में रहते हैं। इन्हें संसार में कोई रूहानी लाभ प्राप्त नहीं हुआ करता।

एक वह है, जो मुर्दा होकर भी जीवित रहता है। 'आपा' मार कर फिर ज़िन्दा हो जाता है। उसके लिये यहाँ पर संकेत है, जो अपनी हउमैं को मारना परवान कर लेते हैं, अपनी हउमैं को मार लेते हैं, 'मैं' को मार लेते हैं। कहते हैं, 'मैं' को मारकर जो सिख बना है, वह सही सिख है। अन्यथा बातों से सिखी नहीं आया करती, भेष बनाने से सिखी नहीं आया करती -

मुरदा होइ मुरीदु न गली होवणा॥
भाई गुरदास जी, वार 3/18

दूसरा गुण उसके अन्दर होता है -

साबरु सिदकि सहीदु भरम भउ खोवणा॥
भाई गुरदास जी, वार 3/18

चार बातें हो गईं। नोट करते जाना। पांचवा गुण होता है -

गोला मुल खरीदु कारे जोवणा॥
भाई गुरदास जी, वार 3/18

गुरू का गुलाम बन गया, संगत का गुलाम बन गया, महापुरुषों का गुलाम बन गया। जहाँ मर्ज़ी गुलाम को काम पर लगा दो, वह कभी ऐतराज़ नहीं करेगा। आधी रात में उठा दो, सारी रात उसे मत सोने दो, भूखा रख लो, कुछ भी कह लो, गुलाम क्योंकि बिक चुका है। उसका अपने शरीर पर कोई अधिकार नहीं है। उसकी कोई भी शिकायत किसी भी कचहरी में नहीं सुनी जायेगी क्योंकि वह तो पशु की तरह बिक चुका होता है और उसकी हालत कैसी हुआ करती है -

ना तिसु भूख न नीद न खाणा सोवणा॥
भाई गुरदास जी, वार 3/18

नींद का भी उसके साथ कोई लिहाज़ नहीं, न भूख और न खाना, न सोना -

पीहणि होइ जदीद पाणी ढोवणा॥
भाई गुरदास जी, वार 3/18

पीसना है या कोई और काम करना है, पानी ढोना है, उसने पानी भरते ही रहना है –

पखे दी तागीद पग मलि धोवणा॥

भाई गुरदास जी, वार 3/18

पंखा झुलाता है, चरण धोता है, स्नान आदि करवाता है –

सेवक होइ संजीदु न हसणु रोवणा॥

भाई गुरदास जी, वार 3/18

हंसना और रोना भी मना है। दोनों काम नहीं करने। रोना भी मना है और हंसना भी नहीं है। इस तरह से –

दर दरवेस रसीदु पिरम रसु भोवणा।

भाई गुरदास जी, वार 3/18

प्यार के रस में गुलतान रहता है। जब वह पार हो उतर जाता है –

चंद मुमारखि ईद पुगि खलोवणा॥

भाई गुरदास जी, वार 3/18

फिर मुबारिकें मिलती हैं।

जब हम महापुरुषों के उदाहरण देते हैं तो बेअन्त स्थानों से फूल चुनने पड़ते हैं। इस बात को समझाना पड़ता है। अपने इतिहास में से और भी अच्छे-अच्छे महापुरुषों के जीवन की झाकियां देखनी पड़ती हैं, ताकि बात अच्छी तरह से समझ में आ जाये कि कहाँ पर जाकर बात कर रहे हैं –

मनु बेचै सतिगुर कै पासि।
तिसु सेवक के कारज रासि॥ *पृष्ठ - 286*

हमारे कार्य तभी पूरे होंगे, जब हम अपना मन गुरू के पास बेच दें। जब मन बेच दिया, तो मन उस समय कोई फुरना नहीं करेगा फिर क्या रह जाता है? फिर तो रज़ा में शरीर चलता है, रज़ा में राज़ी रहता है, हुक्म में खुश, हुक्म में राज़ी, फिर कार्य रास हो जाया करता है।

अभी थोड़े समय पहले, लगभग सौ साल पहले की बात है। धुरी के पास एक छींटा वाला स्टेशन है। उन दिनों वह नाभा रियासत में आता था। वहाँ एक गाँव में एक महात्मा रहा करते थे। एक बार एक डाकुओं का टोला आया। उन्होंने सरकारी चोरी की, सरकार ने उनके पीछे गुप्तचर लगा दिये और पुलिस भी लगा दी। बाकी तो सारे भाग गये, पर इनका सरदार, शौचादि जाने के लिये, जंगल में गया तो अपने टोले से बिछुड़ गया। उसने एक ऊँची जगह पर चढ़कर देखा कि पुलिस तो पास आ गई, अब यदि भागूंगा तो पकड़ा जाऊंगा, अतः क्या किया जाये? यदि इनके हाथ आ गया तो मार-मार कर बेहाल कर देंगे, फिर सजाएं भुगतनी पड़ेगीं, पहले गुनाह भी कबूल करने पड़ेंगे। उस स्थान के पास ही महात्मा बन्दगी किया करते थे। उनके आश्रम में चला गया।

महापुरुषों के पास जाकर बोला, ''महाराज! मेरी रक्षा करो।'' महात्मा ने पूछा, ''क्या बात है?''

कहता है, ''महाराज! मैं डाकू हूँ और डाकुओं का सरदार हूँ। मेरे सभी साथी भाग गये। अब पुलिस मेरे पीछे लगी हुई है, आप मुझ पर कृपा करो। इस समय मुझे बचा लो।''

महात्मा बोले, ''देख प्यारे।''

चोर की हामा भरे न कोइ।
चोरु कीआ चंगा किउ होइ॥ ***पृष्ठ - 662***

चोरी करना, डाके मारना कोई अच्छी बातें नहीं हुआ करती। अच्छा! अब तू शरण में आया है, यह माला उठा ले और वहाँ जाकर बैठ जा और वाहिगुरू-वाहिगुरू करने लग जा। नेत्र मत खोलना, चाहे कोई भी आ जाये।

उसके बाद थोड़ी देर में, वहाँ गुप्तचर पहुँच गये, पुलिस भी आ गई। गुप्तचरों ने उसके पदचिन्हों को देखकर कहा कि वह इस तलैया के चारों ओर घूमा हुआ है, यह आदमी इधर की तरफ गया है, फिर यह जंगल की ओर गया, फिर यहाँ पर उसने पानी का प्रयोग किया और मुझे यह उसका पद चिन्ह दिखाई देता है। इस प्रकार के पद चिन्हों को देखते-देखते सन्त जी के आश्रम तक पहुँच गये।

सन्त जी के पास आ गये और कहते हैं, ''महाराज! यहाँ कोई डाकू आया है?''

महात्मा कहते हैं -

चोर साध सभ ब्रह्म पछानो।

सन्तों के लिये न तो कोई डाकू हुआ करता है, न ही कोई राजा होता है, उनके लिये तो सभी एक ही परमेश्वर का रूप हुआ करता है। यह छोटा सा आश्रम है और छोटी सी कुटिया है। इसके अन्दर घुस कर देख लो। हमारी दृष्टि में न कोई चोर है, न कोई बुरा आदमी है -

मन मेरे जिनि अपुना भरमु गवाता।
तिस कै भाणै कोइ न भूला जिनि सगलो ब्रहमु पछाता॥ ***पृष्ठ - 610***

पुलिस ने इधर उधर ढूंढा और देखा कि केवल एक ही आदमी दिखाई दिया, जो माला जप रहा है। वह बोले और तो कोई दिखाई नहीं देता, यह एक साधु सा बैठा है। हो सकता है, पद चिन्हों को परखने वाले को गलत फहमी हो गई हो। अतः डेरे में से पुलिस चली गई। उसके बाद महात्मा ने कहा, ''ए प्रेमी! तू डाके मारता है। दूसरों का कमाया हुआ धन जबरदस्ती छीनता है। तुझे पता है कि इस संसार से चले जाना है। जानता है या नहीं? तेरा बाप यहाँ रहा है?''

वह बोला, ''नहीं जी, वह तो मर गया।''

महात्मा, ''दादा?''

डाकू बोला, ''वह भी मर गया।''

महात्मा, ''पड़दादा?''

डाकू बोला, ''वह भी मर गया।''

सन्त ने पूछा, ''अब तू रहेगा या तूने भी मर जाना है?''

वह बोला, ''महापुरुष जी! यह तो संसार की रीत बनी हुई है। मनुष्य यहाँ पर आता है। थोड़े दिन रहकर फिर संसार से चला जाता है और जाने का भी कोई पक्का समय नहीं होता कि कितने समय बाद जाना है?''

महाराज जी कहते हैं, ''इसकी कोई मियाद नहीं है।''

धारना - इथे की मुनिआदां तेरीआं,
पाणी दिआ बुलबलिआ - 2, 2
पाणी दिआ जी, बुलबलिआ - 2, 2
इथे की मुनिआदां तेरीआं, ...-2

जैसे जल ते बुदबुदा उपजै बिनसै नीत।
जग रचना तैसे रची कहु नानक सुन मीत॥
पृष्ठ - 1427

नह बारिक नह जोबनै नह बिरधी कछु बंधु।
ओह बेरा नह बूझीऐ जउ आइ परै जम फंधु॥
पृष्ठ - 254

सन्त बोले, ''प्यारे! पानी में बुलबुला देखा है?''

डाकू, ''हाँ जी।''

सन्त, ''छोटे बड़े?''

डाकू, ''सभी देखे हैं, महाराज।''

सन्त, ''फिर कोई उनकी नींव होती है कि छोटा पहले फटता है या बड़ा। बस ऐसे ही इस मनुष्य का इस संसार में सफर होता है।''

नह बारिक नह जोबनै नह बिरधी कछु बंधु।
ओह बेरा नह बूझीऐ जउ आइ परै जम फंधु॥
पृष्ठ - 254

सन्त, ''इस बात को मानता है या नहीं?''

डाकू, ''मानता हूँ जी।''

सन्त, ''फिर तुझे नाम ने यहाँ पर बचा लिया। इस माला ने बचा लिया। अभी तू पाखण्डी है, तुझे नाम की कीमत पता नहीं है। इस नाम में बहुत बड़ी ताकत है। जब तू संसार से जायेगा, तब तेरे साथ, यह लूट खसोट कर इकट्ठा किया गया धन, साथ नहीं जायेगा, न ही कोई और वस्तु जायेगी। तेरे पापों की गठड़ी तेरे सिर पर रखी जायेगी और बहुत कठिन रास्ता है, जहाँ से रो-रो कर निकलना पड़ेगा-

बारि विडानड़ै हुंमस धुंमस कूका पईआ राही॥

पृष्ठ - 520

चीखें मारता हुआ मनुष्य जाता है। पश्चाताप करता हुआ जाता है कि मुझे मानस जन्म मिला था और यह मैंने क्या कर दिया? कितना गलत काम कर बैठा? फिर वह पश्चाताप भी कुछ नहीं करता। यदि बन्दगी की हो, नाम जपा हो तो-

जिह मारग के गने जाहि न कोसा।
हरि का नामु ऊहा संगि तोसा।
जिह पैडै महा अंध गुबारा।
हरि का नामु संगि उजिआरा।
जहा पंथि तेरा को न सिझानू।
हरि का नामु तह नालि पछानू।
जह महा भइआन तपति बहु घाम।
तह हरि के नाम की तुम ऊपरि छाम।
जहा त्रिखा मन तुझु आकरखै।
तह नानक हरि हरि अंम्रितु बरखै॥ *पृष्ठ - 264*

नाम ने साथ जाना है। नाम ने ही सहायता करनी है और कोई भी चीज़ तेरी सहायता करने में समर्थ नहीं है। न माँ ने, न पिता ने, न भाई ने, न किसी रिश्तेदार ने सहायता करनी है'' -

ओथै हथु न अपड़ै कूक न सुणीऐ पुकार।
ओथै सतिगुरु बेली होवै कढि लए अंती वार॥

पृष्ठ - 1281

वहाँ पर सिवाय नाम के और कोई भी सहायता नहीं कर सकता -

धारना - तेरी नाम ने सहाइता करनी,
औखी वेला-औखी वेला - 2, 2
तेरी नाम ने सहाइता करनी,
औखी वेला-औखी वेला - 4

कहने लगे, ''प्यारे गुरू की बात सुन।''

जिह मारग के गने जाहि न कोसा।
हरि का नामु ऊहा संगि तोसा।
जिह पैडै महा अंध गुबारा।
हरि का नामु संगि उजिआरा।
जहा पंथि तेरा को न सिझानू।
हरि का नामु तह नालि पछानू॥ *पृष्ठ - 264*

यहाँ पर भी नाम ने सहायता करनी है -

जा कउ मुसकलु अति बणै ढोई कोइ न देइ।
लागू होए दुसमना साक भि भजि खले।
सभो भजै आसरा चुकै सभु असराउ।
चिति आवै ओसु पारब्रहमु लगै न तती वाउ।

साहिबु निताणिआ का ताणु।
आइ न जाई थिरु सदा गुर सबदी सचु जाणु।
जे को होवै दुबला नंग भुख की पीर।
दमड़ा पलै न पवै ना को देवै धीर।
सुआरथु सुआउ न को करे ना किछु होवै काजु।
चिति आवै ओसु पारब्रहमु ता निहचलु होवै राजु॥

पृष्ठ - 70

यहाँ भी नाम सहायता करता है और दरगाह में भी नाम सहायता करता है और तूने नाम जपा नहीं है।

वह बोला, ''महाराज! फिर मेरा क्या हाल होगा?''

सन्त जी ने कहा, ''तेरा हाल बहुत बुरा होगा।''

धारना - घाणी पीड़नी निमाणी तेरी जिंदड़ी,
दरगह विच धरमराज ने - 2, 2
मेरे पिआरे, दरगाह विच धरमराज ने - 2, 2
घाणी पीड़नी निमाणी तेरी जिंदड़ी,.....-2

लै फाहे राती तुरहि प्रभु जाणै प्राणी।
तकहि नारि पराईआ लुकि अंदरि ठाणी।
संन्ही देन्हि विखंम थाइ मिठा मदु माणी।
करमी आपो आपणी आपे पछुताणी।
अजराईलु फरेसता तिल पीड़े घाणी॥ पृष्ठ - 315

ये वचन सुनकर भयभीत हो गया क्योंकि साधन सम्पन्न महापुरुषों के मुख से ये वचन निकल रहे थे और फिर प्रत्यक्ष देख भी लिया कि इतनी भारी पुलिस के होते हुए भी, मेरी रक्षा इस माला ने कर दी।

डाकू बोला, ''हे महापुरुष! फिर तो मैं बहुत बड़ा पापी हूँ। मुझे कोई प्रायश्चित करने की विधि बताओ। यदि आप आज्ञा दें तो मैं बर्फीले पहाड़ों में जाकर बैठ जाऊं और वहाँ पर अपने इस शरीर को गला लूँ। यदि हुक्म हो तो मैं किसी सूखे वृक्ष में खोल बना कर बैठ जाऊं और उसे आग लगाकर जीवित ही जल जाऊं या अन्य कोई प्रायश्चित बताइये। प्रायश्चित कर्मों के बारे में मैंने सुना है कि यदि कोई गलती हो जाये और उसका प्रायश्चित कर लिया जाये तो वह गलती माफ हो जाया करती है।''

महात्मा कहते हैं, ''प्रेमी! ये चीज़ें पापों को दूर नहीं कर सकतीं। पापों को दूर करने वाली तो बस एक ही चीज़ है। वह है सन्तों की सेवा, सन्तों की संगत।'' सन्तों की संगत में जाकर पापों का नाश हो जाता है। सेवा करने से नाम की प्राप्ति हो जाया करती है। अत: यह सेवा भी शुभ कर्म हों, तो प्राप्त होती है -

जिसके माथे पर यह सेवा के लेख लिखे हुए हैं, वही गुरू की सेवा कर सकते हैं –

गुरु मेरी जीवनि गुर आधारु।
गुरु मेरी वरतणि गुरु परवारु।
गुरु मेरा खसमु सतिगुर सरणाई।
नानक गुरु पारब्रहमु जाकी कीम न पाई॥

पृष्ठ - 1270

महात्मा बोले, ''तू ऐसे कर, मैं तो कुछ नहीं कर सकता। एक ब्रह्मवेत्ता महापुरुष छीटां वाले गाँव में रहते हैं, वहाँ पर चला जा। उनके बारे में, मैं पहले तुझे समझा देता हूँ और तू अपने आपको ऐसे समझ लेना कि आज से मैं मर गया। यदि पार होना है, तो तुझे ऐसे ही समझना पड़ेगा क्योंकि जब तक मनुष्य ज़िन्दा है, अपने आपको ज़िन्दा समझता है, तब तक सेवा का फल नहीं मिला करता।'' इस तरह फ़रमान करते हैं –

धारना - मान छडु के संतां दी सेवा कर लै,
जे तैं लैणा फल बंदिआ - 2, 2

पैरी पै पा खाक होइ छडि मणी मनूरी।
पाणी पखा पीहणा नित करै मजूरी।
त्रपड़ झाड़ि विछाइदा चुल झोकि न झूरी।
मुरदे वांगि मुरीदु होइ करि सिदक सबूरी।
चंदनु होवै सिंमलहु फल वासु हजूरी।
पीर मुरीदाँ पिरहड़ी गुरमुखि मति पूरी॥

भाई गुरदास जी, वार 27/19

सुगन्धि आयेगी। जिस प्रकार सिम्बल वृक्ष में कोई गुण नहीं होता, पर जब चन्दन के साथ लग जाता है तो उसमें भी सुगन्धि आने लग जाती है।

महात्मा बोले, ''प्यारे! यदि तूने सेवा करनी है तो जैसे तुझे कहा है, वैसे कर।''

पैरी पै पा खाक होइ छडि मणी मनूरी॥

भाई गुरदास जी, वार 27/19

वहाँ पर किसी चीज़ का मान मत करना। तू ताकतवर आदमी है। डाके मारे हुए हैं। तेरे अन्दर बहुत जबरदस्त हउमै है। मुर्दा बन जाना। मान बिल्कुल भी मत करना –

पाणी पखा पीहणा नित करै मजूरी॥

भाई गुरदास जी, वार 27/19

ये सभी सेवाएं करनी हैं –

त्रपड़ झाड़ि विछाइदा चुलि झोकि न झूरी॥

भाई गुरदास जी, वार 27/19

दरियां झाड़ते समय, अच्छे कपड़े पहनने वाला, एतराज करता है कि धूल उसके कपड़ों पर गिर जायेगी। यह गर्द (धूल) नहीं हुआ करती। यह तो अकसीर है। बिमारियां दूर करती हैं। वासनाएं

पूरी करती हैं। जहाँ परमेश्वर के प्यारे बैठ कर हरि यश कर लें, उस धरती का तो कण-कण पवित्र हो जाया करता है। वह सेवा और धूल तो भाग्यशालियों को मिला करती है।

गुरू दशमेश पिता ने एक अमीर बच्चे को बताया था, ''बेटा! तूने सेवा नहीं की, तू मुर्दा है। तेरा जीवन किसी काम का नहीं है।'' सो -

त्रपड़ झाड़ि विछाइदा चुलि झोकि न झूरी॥
भाई गुरदास जी, वार 27/19

चूल्हे में आग जलाता है, आखों में धुआं भी गिरता है, गर्मी भी लगती है, कहते हैं वहाँ पर झूरना मत। ऐसे मत कहना, मुझे किसी ने छोड़ा नहीं। वहाँ पर गुरू का धन्यवाद करना कि मेरे से सेवा ले रहे हैं, तप करवा रहे हैं -

मुरदे वाँगि मुरीदु होइ करि सिदक सबूरी॥
भाई गुरदास जी, वार 27/19

सिदक भी और सब्र भी रखना है। सन्तोष के साथ मुर्दे की तरह मुरीद हो जाना -

चंदनु होवै सिंबलहु .....॥
भाई गुरदास जी, वार 27/19

फिर क्या होगा? सिम्बल जो होगा, वह चन्दन बन जायेगा -

..... फलु वासु हजूरी॥
भाई गुरदास जी, वार 27/19

उसके अन्दर चन्दन के पास रहने के कारण, सुगन्धि आ जायेगी। उसमें वही चन्दन जैसी वासना आ जायेगी -

पीर मुरीदाँ पिरहड़ी गुरमखि मति पूरी॥
भाई गुरदास जी, वार 27/19

इस तरह से समझा कर, सन्त जी ने उस डाकू को महापुरुषों के पास भेज दिया।

कहने लगे, ''हमारी ओर से प्रार्थना कर देना। वह पूरे हैं। देखना, वहाँ सेवा करते हुए खीझाना मत।''

मुरदा होइ मुरीदु न गली होवणा॥
भाई गुरदास जी, वार 3/18

मुर्दा बनना पड़ता है। अतः वह वहाँ चला गया। साथ ही सन्त जी ने एक बात यह और बता दी थी कि वहाँ के जो श्रीमान हैं, उनकी एक पार्टी बनी हुई है, जो किसी भी नये आने वाले आदमी को टिकने नहीं देती। उनके आगे कोई आदमी ठहर नहीं सकता। यदि कहीं वे महापुरुषों का रूख देख लें कि वह उसे प्यार करते हैं, फिर तो उसे बिल्कुल ही नहीं टिकने देते। यदि तू उनसे कट गया तो सब कुछ बन जायेगा, यदि न कटा तो फिर बीच में ही रह जायेगा पर फिर भी तुझे बता देते हैं कि वृक्ष में बैठकर, आग लगाकर जलने की अपेक्षा यह साधन, फिर भी आसान है। हिमालय पर्वत पर जाकर बर्फों में गल जाने की अपेक्षा यह तरीका आसान और सुख देने वाला है।

उसने उसी समय दृढ़ इरादा कर लिया। यह कोई जरूरी नहीं होता कि बुरे आदमी सदा ही बुरे होते हैं। पहले बाल्मीकि जो था –

वाटै माणस मारदा बैठा बालमीक बटवाड़ा॥

भाई गुरदास जी, वार 10/19

फिर बाद में कितना महान, पूजनीय हो गया। गनका जो बुरी थी और जब महात्मा ने उसे रास्ता बता दिया, फिर वह कितनी महान बन गई। गुरू ग्रन्थ साहिब में उसका नाम आता है। इस प्रकार यदि बुरा आदमी पक्का इरादा कर ले फिर पूरा उतरता है। कोई शराबी है, वह शराब पीता है। पैसे बर्बाद करता है। यदि वह दृढ़ इरादा कर ले, फिर इस तरफ भी आगे ही बढ़ जाया करता है। वह नाम की शराब तक पहुँच जाता है। बीच में, दुविधा में पड़ा व्यक्ति, किसी काम का नहीं हुआ करता, न इधर का, न उधर का, बीच में ही पड़ा रहता है।

इस तरह उसने मन में पक्का इरादा कर लिया और वहाँ पर रहना शुरू कर दिया। महात्मा ने कहा था कि इस तरह 12 साल पूरे कर लेना। सन्त अधिकतर 12 सालीं बोला करते हैं। जब 12 साल बीत जाते हैं, फिर सन्त बोला करते हैं। इसलिये तू 12 साल बिता देना। अब वह वहाँ जाकर सेवा करने लग गया। अपना कुछ पैसा भी था, उसमें से खर्च करके, अपनी रोटी पानी का प्रबन्ध भी कर लेता तथा सन्तों को भी भेंट कर दिया करता। वस्त्रादि लेकर सन्तों को भेंट दे दिया करता। तीन साल तक तो उसके पास जो पैसा था, वह इसी पर निर्भर होकर खाता रहा, सेवा भी करता रहा, उसके बाद, उसके पास एक भी पैसा न रहा। इधर सेवा में कमी न आने दी। कभी भी उसे कहीं बैठे नहीं देखा। जो भी सेवाएं हैं, जैसे झाड़ू लगाना, पानी भरना, दरियां झाड़ना, सब्ज़ी वगैरा की गुड़ाई करनी, महापुरुषों के पशुओं की देखभाल करना, चारा काटना, आदि–आदि। कोई ऐसी सेवा नहीं थी, जिसे वह न करता हो। वह कभी खाली नहीं बैठता था। इस तरह तीन साल बीत गये।

इसके बाद सन्त जी ने पूछा, ''प्यारे! भोजन कहाँ किया करता है?'' कहता है, ''महाराज! मैं तो बाहर ही खाया करता हूँ।''

सन्त बोले, ''नहीं! लंगर में से भोजन किया कर। सेवा दिन रात यहाँ करता है और भोजन बाहर से खाता है। यहीं लंगर में से ही भोजन किया कर।''

इस तरह अब वह लंगर में से भोजन खाने लग गया। थोड़े दिनों के पश्चात उस ब्राह्मण टोली ने देखा कि इस पर तो सन्त जी कुछ मेहरबान हो गये लगते हैं और इसे जल्दी यहाँ से भगा दें, कहीं ऐसा न हो कि महापुरुषों के पास टिक जाने के बाद, फिर कहीं जाये ही ना? उन्होंने जब भोजन बनाना तो उसकी रोटी में सारा बूर (छान) जो होता था, वह मिला देना। जितनी भी दो चार रोटियां वह खाया करता, उनमें खूब बूर मिला देते। आखिर उसे भी पता चल गया। फिर दाल सब्जी भी कम देते। वह पानी के साथ घूंट भर–भर कर रोटियां खाता रहा। इस तरह से तीन साल और बीत गये तथा वे उसके साथ अपमान जनक वचन करते रहे। बहुत घटिया किस्म का बर्ताव करते रहे। यदि कहीं खड़ा होता तो गालियां निकालते। वह सभी कुछ सहन करता चला गया। वैसे शब्दों के बाणों को सहन करना बहुत कठिन होता है, कोई विरला होता है जो अपमान जनक वचनों को

सहन करता है। हर एक व्यक्ति सहन नहीं कर सकता। छह साल बीत गये। वे आपस में कहने लगे कि यह तो यहाँ से जाता ही नहीं, फिर वे भोजन में रेता डालकर देने लग गये और दाल में भी रेता डाल देते। वह बिना अच्छी तरह चबाये, निगल जाता। इसे भी पता चल गया कि वे रेत मिलाकर भोजन खिलाते हैं। तीन साल और बीत गये। बहुत कमज़ोर हो गया। जाने का नाम नहीं लेता। दिन रात सेवा करता है। सन्त देख रहे हैं कि इसे आग के सेक लग रहे हैं और वह पक्का होता जा रहा है। जो पाप इसके माथे पर मढ़े हुए थे, वे सभी जल रहे हैं, सड़ रहे हैं क्योंकि यह भी एक तप होता है। जब 9 साल बीत गये, वह जुण्डली कहती, सन्त जी तो भाई इस पर काफी कृपा दृष्टि रखते हैं, इससे ज्यादा ही प्यार करते हैं और यह भी किसी तरह से जाने का नाम नहीं लेता। इकट्ठे मिलकर सलाह करते हैं और शेर के बाल उठा लाये। उन बालों के छोटे-छोटे टुकड़े करके, आटे में मिलाकर खिलाने लग गये। जब इसने खाना खाया तो बाल गले में अटक गया। फिर इसने पहचान लिया कि इसमें तो शेर के बाल हैं, जो बहुत ही खतरनाक होते हैं। यदि शेर का बाल गले में से नीचे उतर जाये तो सारी नाड़ियों के अन्दर सूजन पैदा कर देता है। और वह सूजन निकलती नहीं। इसने रोटी को खूब सुखा लेना, फिर उसे डण्डे के साथ कूट कर बारीक कर लेना तथा कपड़े में से छान लेना और पानी के घूंट के साथ निगल जाना। इस तरह 12 साल बीत गये। साध संगत जी! यह कोई आसान काम नहीं है। बहुत मुश्किल है, ऐसे पढ़ लो -

धारना - जीउंदे मर जावणा,
सिखी कमाउणी औखी - 2, 2
सिखी कमाउणी औखी - 2, 2
जीउंदे मर जावणा, ...-2

पहिला मरणु कबूलि जीवण की छडि आस।
होहु सभना की रेणुका तउ आउ हमारै पासि॥

पृष्ठ - 1102

मरना कबूल कर ले और अपने आपको सभी से नीचे नम्बर पर समझ ले, फिर तो यह कमाई अर्थात सिखी का पालन हो सकता है अन्यथा नहीं। भाई गुरदास जी लिखते हैं -

पैरी पै पा खाकु मुरीदै थीवणा॥

भाई गुरदास जी, वार 3/19

पैरों की खाक बनकर मुरीद बनता है -

गुर मूरति मुसताकु मरि मरि जीवणा।
परहरि सभे साक सुरंग रंगीवणा॥

भाई गुरदास जी, वार 3/19

सभी रिश्ते नाते छोड़कर, गुरू के साथ रिश्ता जोड़ कर फिर गुरू प्यार में जीना होता है -

होर न झखणु झाक सरणि मनु सीवणा।
पिरम पिआला पाक अमिअ रसु पीवणा।

मसकीती अउताक असथिरु थीवणा।
दस अउराति तलाक .....॥

भाई गुरदास जी, वार 3/19

दसों इन्द्रियों, पांचो ज्ञानेन्द्रियां, पांचों कर्मेन्द्रियां, इन सभी विषयों को तलाक देना पड़ता है –

..... सहजि अलीवणा॥

भाई गुरदास जी, वार 3/19

सहज अवस्था में रहना पड़ता है –

सावधान गुर वाक न मन भरमीवणा॥

भाई गुरदास जी, वार 3/19

गुरू के वाक्य पर पूरा-पूरा सावधान रहना है। मन में किसी प्रकार का कोई संशय, कोई किन्तु-परन्तु, कोई तर्क, कोई भ्रम नहीं आने देना।

यहाँ मेरे पास एक प्रेमी आया। उसे मैंने कहा, ''तू ऐसे कर, तेरा जीवन बेकार जा रहा है, तू गुरू धारण कर ले। अमृत पान कर ले।''

वह कहता है, ''जी! ये बाकी इतनी सारी दुनियां है, यह तो अमृत पान नहीं करती।''

मैंने कहा, ''तू तो गुरू साहिब को सिर झुकाता है न? उनकी बात छोड़।''

कहता है, ''फिर उनका कैसे उद्धार होगा? अमुक धर्म वालों का?''

मैंने कहा, ''तेरे किसके साथ सम्बन्ध हैं?''

कहता है, ''गुरू के साथ।''

मैंने कहा, ''फिर गुरू तो इस तरह कहता है –''

गुरमंत्र हीणस्य जो प्राणी धिगंत जनम भ्रसटणह।
कूकरह सूकरह गरधभह काकह सरपनह तुलि खलह॥ *पृष्ठ - 1356*

जिसने गुरू मन्त्र नहीं लिया, वह तो कुत्ता, बिल्ला है, वह तो सूअर है, सांप है, गधा है। जब तक पाँच प्यारों के सामने पेश होकर अमृत पान नहीं करता, तब तक पांच प्यारे मन्त्र नहीं दिया करते। इस तरह वह और ही धर्मों की बातें, इधर-उधर की करता। अपने उद्देश्य के लिये जाना और गुरू की बाणी को, गुरू के वचन को नहीं मानता। अतः कहते हैं-

सावधान गुर वाक न मन भरमीवणा॥

भाई गुरदास जी, वार 3/19

मन को भ्रम में नहीं डालना। सावधान रहना है –

सबद सुतति हुसनाक पारि परीवणा॥

भाई गुरदास जी, वार 3/19

इस तरह से मुर्दा बनना पड़ता है। यदि मामूली सा भी अभिमान हो जाये तो बात नहीं बना करती। बड़े-बड़े महापुरुषों के जीवन में ऐसे अवसर आये हैं, जब वे खींझ गये। ज़रा सी भी रहत में ढील की, उसी समय उनका पतन हो गया।

एक गाँव है पांधे, लाहौर और कसूर जाने वाली सड़क के बीच में पड़ता था। वहाँ एक सैयद रहता था, उसका नाम बुल्ले शाह था। वह बड़े-बड़े महापुरुषों की संगत किया करता था। चाहे मुसलमान होता या हिन्दू। संगत करते-करते उसे यह पता चल गया कि जब तक कोई पूरा मुरशद नहीं मिलता मुरशद-ए-कामल, तब तक पार नहीं उतरा जा सकता क्योंकि मुरशद-ए-कामल के हाथ में परमेश्वर ने चाबी पकड़ाई हुई है और जब तक चाबी नहीं मिलती, तब तक अन्दर का ताला नहीं खुला करता। जब तक ताला नहीं खुलता, हमें आन्तरिक भेद का पता नहीं चलता, जहाँ परमेश्वर रहता है। वहाँ हम नहीं पहुँच सकते। अतः वह मुरशद की खोज करता हुआ, इधर-उधर भ्रमण कर रहा है। महाराज जी कहते हैं कि -

गुरमुखि धरती गुरमुखि पाणी।
गुरमुखि पवणु बैसंतरु खेलै विडाणी।
सो निगुरा जो मरि मरि जंमै निगुरे आवण जावणिआ॥

पृष्ठ - 117

निगुरा पुरुष जो है, वह पैदा होगा फिर मरेगा, मरता ही रहेगा -

सतिगुर बाझहु गुरु नही कोई .....॥ पृष्ठ - 435

और कोई गुरू नहीं बन सकता। यदि किसी मकैनिक को गुरू बना लो और कहो कि मैंने गुरू धारण कर लिया। अरे वह तो मकैनिक है, वह मकैनिकी का काम जानता है। रूहानियत का उसे ज्ञान नहीं है। यू. पी. में स्कूलों में मास्टर को गुरू जी कहते हैं। सभी बच्चे यही कहते हैं कि हमारे गुरू जी ने ऐसा कहा है। वह रूहानी गुरू नहीं है। वह तो विद्या पढ़ाने वाला गुरू है।

इस तरह बुल्ला गुरू की तलाश करता फिर रहा है। आखिर घूमते-घूमते पता चला कि एक अराईं है, (vegetable farmer) है, जिसका नाम अनायत शाह है। वह पूरा पहुँचा हुआ पूर्ण पुरुष है, फिर उसने सोचा कि मेरी जाति सैयद और उसकी अराईं है। जात-पात में काफी अन्तर था। यह ऊँची जाति का मोहम्मद साहिब के कुल से सम्बन्ध रखने वाला आदमी और वह एक मामूली सा सब्जियां लेकर बेचने वाला साधारण सा आदमी, उसे मैंने गुरू बनाना है? मन पक्का कर लिया कि मैंने तो चीज़ लेनी है, चाहे जैसे मर्ज़ी मिल जाये।

इस तरह चलते-चलते उसके पास पहुँच गया। उस समय अनायत शाह प्याज के पौधे लगा रहे थे। पौधा उखाड़ कर साथ ही क्यारी थी, जिसमें प्याज लगाये जा रहे थे। इसे देखा और सोचा कि कोई भला पुरुष आया है, अच्छे खानदान से सम्बन्ध रखने वाला है। वह भी वहाँ आकर बैठ गया और नमस्कार की।

अनायत शाह ने पूछा, ''क्या नाम है?''

कहता है, ''महाराज! मेरा नाम बुल्ला है।''

शाह जी, ''कैसे आना हुआ?''

बुल्ला, ''महाराज! मैं परमेश्वर को पाना चाहता हूँ।''

शाह जी कहते हैं, ''देख बुल्ले! परमेश्वर को पाना तो कोई बहुत मुश्किल नहीं है। उसे पाना तो बहुत सरल है। पर ऐसे करना है।'' इधर से प्याज उखाड़ना और उधर लगा देना।

शाह बोले, ''इधर से उखाड़ना, उधर लगा देना।''

संसार से मन को उखाड़ कर, हटाकर, रूहानियत में लगा देना, फिर परमेश्वर मिल जाया करता है।

इसके बाद वह सेवा करने लग गया। सेवा करने की तो सभी धर्म ताकीद करते हैं, सभी सेवा करते हैं और एक से बढ़ कर एक सेवा में भाग लेते हैं। बाबा फरीद की सेवा के बारे में आपने सुना होगा। 14 साल आपने अपने मुरशद की बहुत कठिन सेवा की, सारा दिन पानी ढोते, झाड़ू लगाते, भोजन बनाकर खिलाते, बर्तन मांजते और अमृत बेला में उठकर एक बजे पानी गर्म करते, फिर अपने मुरशद को स्नान करवाते। 14 साल बिता दिये। चौदहवें साल जब गुरू ने देखा कि इसकी परीक्षा तो लें। फिर परीक्षा देनी पड़ती है। उस समय बहुत कठिन पर्चा लिया और पास हो गये। इसलिये सेवा बहुत बड़ी बात है। गुरू घर में ऐसा फ़रमान है –

धारना - होर निहफल करनी जी - 2, 2
बिन सेवा धिग हत्थ पैर - 2, 2
होर निहफल करनी जी, ... -2

धिगु सिरु जो गुर ना निवै गुर लगै न चरणी।
धिगु लोइण गुर दरस विणु वेखै पर तरणी।
धिगु सरवणि उपदेस विणु सुणि सुरति न धरणी।
धिगु जिहबा गुर सबद विणु होर मंत्र सिमरणी।
विणु सेवा धिग हथ पैर होर निहफल करणी॥
भाई गुरदास जी, वार 27/10
पीर मुरीदाँ पिरहड़ी सुख सतिगुर सरणी॥
भाई गुरदास जी, वार 27/10

उसने भी, वहाँ पर ऐसी सेवा करनी शुरू कर दी जैसे मोल खरीदा हुआ गुलाम हो। बच्चों की सेवा करता है, पशुओं की सेवा करता है, खेती बाड़ी के काम में हाथ बटाता है, पीर की सेवा करता है, दिन रात सेवा करता है और साथ लोग ताने भी मारते हैं कि देखो, इसकी बुद्धि फिर गई कि सैयद होकर, मोहम्मद साहिब के खानदान से सम्बन्ध रखने वाला आदमी, एक अराईं के पास जाकर, गुलामों की तरह काम कर रहा है। साध संगत जी! मुर्दा बनना पड़ता है, यदि किसी से कुछ लेना हो।

इस प्रकार सेवा करते-करते जब काफी समय बीत गया, वह पीर इसकी सेवा से प्रसन्न हो गया। ऐसा करते-करते उनके रिश्ते में किसी का ब्याह आ गया। बच्चे कहते हैं, अनायत शाह को, ''पिता जी, आप घर पर रहो, हमने तो ब्याह में जाना ही है।''

वह कहते हैं, ''मुझे ये लूट लेगा। मैं अकेला हूँ। मुझे यह लूट लेगा।'' लड़के इस रमज़ को न समझ सके। वे बोले, ''कोई नहीं लूटता? तेरे पास है क्या जो तुझ से लूट लेगा?''

शाह जी ने फिर कहा, ''यह लूट लेगा।''

जब उनके बच्चे रमज़ न समझे और चले गये तो उनके पीछे से बुल्ला, बहुत सेवा करता है। एक दिन शाह के मन में आया और कहा, ''बुल्ले! एक पानी का गिलास ला।''

वह पानी का गिलास ले आया। आधा गिलास उन्होंने पी लिया और बाकी आधा गिलास बुल्ले को पकड़ाते हुए कहा, ''ले! यह आधा तू पी ले।'' पीते ही बुल्ले को पता चल गया कि उसके अन्दर अलौकिक शक्तियां प्रवेश कर गई हैं। बुल्ला बहुत शक्तिशाली हो गया, दूर दृष्टि हो गई। आवाज़ें सुनने लग गईं, लोगों के दिलों की बातें सुनने लग गईं। जब लड़के वापिस आए तो शाह कहते हैं, ''मुझे तो इसने लूट लिया।''

लड़के फिर भी न समझें कि क्या लूट लिया। फिर कुछ समय बाद उसके मन में आया कि रूहानी असूल यह है कि -

राम पदारथु पाइकै कबीरा गांठि न खोल्ह।
नही पटणु नही पारखू नही गाहकु नही मोलु॥

पृष्ठ - 1365

मैंने इसे इतनी बड़ी दात दे दी है क्या यह इसका ग्राहक भी है? पात्र भी है या नहीं? मन में विचार उठा कि इसका टैस्ट लिया जाये, कसौटी पर कस कर देखा जाये।

कहने लगे, ''बेटा बुल्ले! यहाँ से थोड़ी दूर पर मेरे मिलन सार, पीर रहते हैं। तू उनके पास वहाँ जा, पर शाम को घर जरूर लौट आना।''

बुल्ला चला गया, वहाँ पहुँचा तो तीसरा पहर हो गया। वहाँ पर बहुत भीड़ थी। यह मिल न सका। थोड़ा सा समय दिन छिपने में बाकी रह गया। उसके बाद उसे समय मिला। बुल्ले ने सोचा कि मेरे मुरशद ने कहा था कि घर वापिस लौट आना। अब मैं क्या करूं? वहाँ पर एक दीवार थी। उस पर चढ़कर बैठ गया। कहता है, ''चल घोड़े की चाल पर।'' दीवार को ही भगा कर ले आया। जब पीर ने पूछा कैसे आया है? उसने सारी बात बता दी। पीर कहते हैं, ''तू तो शक्तियां दिखाने लग गया।''

कुछ प्रेमियों का ख्याल है कि क्या कभी ऐसा हो भी जाता है? केवल बातें तो नहीं होतीं। यह बुल्ला तो अभी कल की बात है। महाराजा रणजीत सिंघ के समय से थोड़ा पहले हुआ है।

हमारे गाँव के पास एक जरग गाँव है। वहाँ पर एक महात्मा रहते थे। वह शेर की सवारी

किया करते थे। जो हमारे गाँव धमोट वाले महापुरुष थे, वह भी बड़े साधना सम्पन्न थे। एक दिन वह मिलने आया और धमोट वाले महात्मा दीवार पर बैठकर दाँतुन कर रहे थे। वह उधर से शेर की सवारी पर आ रहे थे। इधर इसने भी थापी दी और कहा, ''अरे! सन्त आ रहे हैं, चलो आगे बढ़कर उनकी अगुआई करनी चाहिये।'' वह दीवार सहित खेतों में पहुँच गया। वहाँ पर उतर कर दोनों मिले। जब हम छोटे-छोटे होते थे तो उस समय वह दीवार वैसी की वैसी खड़ी थी। अब मुरब्बे बन्दी होने के कारण पता नहीं, उन्होंने उखाड़ दी या वहीं पर ही हैं? इस तरह की आम बातें हो जाया करती थीं।

शाह ने सोचा कि बुल्ला तो शक्तियां दिखाने में लग गया। उस समय अपने पास बुलाया और ज़ोर से गोदी में भर लिया और सारी शक्ति खींच ली। खाली हो गया एक दम। उसके बाद, वह फिर भी काफी सेवा करता रहा। फिर मन में आया कि इसे शक्ति दे दें। अब तो यह पात्र बन गया होगा। उन्होंने इसे दोबारा शक्ति दे दी।

अनायत शाह बोले, ''अच्छा बुल्ले! अब मैं और तू इकट्ठे नहीं रह सकते और अब तू कसूर अपने गाँव चला जा। वहाँ पर जाकर रहो और उपदेश दिया करो। मैंने तुझे सारी शक्तियां दे दी हैं, ज्ञान भी दे दिया है।''

अब वह अपने नगर में आकर रहने लग गया। बाद में फिर इन्हें ख्याल आया कि देखें तो सही कि बुल्ला आगे भी निकला है या बीच में लटकता फिर रहा है। अपना लड़का भेज दिया और कहा, ''जाओ! बुल्ले को मिलकर आओ।'' जब उसका पुत्र वहाँ गया, बुल्ले ने बड़ी सेवा की। वह कई दिन वहाँ रहा और वह उसकी सेवा करता रहा। ऊँचे आसन पर बिठाता। जिस समय इसने वापिस घर आना था उस दिन बुल्ले के पास संगत बहुत आई हुई थी, इसलिये वह उठकर इसे बाहर तक छोड़ने भी न आया। वहीं पर गद्दी पर बैठे-बैठे ही कह दिया, ''अच्छा! पीर जी को मेरा नमस्कार कहना। सिर झुकाकर मेरी ओर से बेनती करना।'' यथा योग्य भेंट दी और विदा कर दिया।

घर आया तो पिता अनायत शाह ने पूछा, ''बेटा! हो आया?''

पुत्र, ''हाँ जी।''

शाह, ''उसने तेरी सेवा की थी?''

पुत्र, ''हाँ पिता जी, खूब सेवा की थी।''

शाह, ''यह बता, जब तू वहाँ गया था, वहाँ कौन बैठा था?''

पुत्र, ''उसकी संगत बैठी थी।''

शाह, ''तुझे कैसे मिला था?''

पुत्र, ''महाराज! उठ कर मिला था।''

पीर जी कहते हैं, ''जब तू वापिस आने लगा तो क्या उस समय उठकर, तुझे बाहर तक

छोड़ने आया था?''

पुत्र कहता है, ''नहीं पिता जी! उस समय उसने गद्दी पर बैठे-बैठे ही मुझे भेज दिया।''

पीर कहते हैं, ''अच्छा! इतना अभिमान उसमें आ गया कि उसने गुरू पुत्र का आदर नहीं किया।''

उस समय उसने बांह उठाई, सारी शक्ति फिर खींच लीं। बुल्ला वहाँ पर बैठा-बैठा ही खाली हो गया। जब बुल्ला दोबारा पीर के पास आया तो पीर जी ने कहा, ''बुल्ले! अब हमारे सामने मत आना। हमारे माथे मत लगना।'' बुल्ले का पीर साल बाद एक समागम किया करता था। उसमें वह एक नर्तकी से नाच तथा कवालियां सुना करता था और उस पर बहुत खुश होता था। बुल्ला उसके पास आया और उसे सारी बात बता दी। 12 साल पीर से दूर रहा। सामने नहीं आया। एक डेढ़ फर्लांग की दूरी पर रहता है। इसने पीर की याद में कव्वालियां गाते रहना फिर जाकर कहीं पीर को उस पर तरस आया और बुल्ले पर कृपा कर दी। साध संगत जी! इस तरह से -

मुरदा होइ मुरीद न गली होवणा॥

भाई गुरदास जी, वार 3/18

हमें तो इन बातों का पता ही नहीं कि हमारी परीक्षा भी होती है। कदम-कदम पर हमारी परीक्षा होती है और कदम-कदम पर हम फेल हो रहे हैं। हम मुर्दे नहीं बनते। अपने आपको मुर्दा नहीं बनाते। इसलिये हमारा कुछ नहीं बन पाता।

सो वह जो डाकू था, अब जिज्ञासु बन कर महापुरुषों के पास सेवा करता है। सेवा करते-करते 12 साल बीत गये। इतना कमज़ोर हो गया कि चलना भी दूभर हो गया, पर सेवा से पीछे नहीं हटा। वहाँ पर एक दिन लकड़ियां लेने जाता है। लकड़ियों का गट्ठड़ उठाया हुआ है और रास्ते में एक छोटा सा नाला पड़ता था। जब वह उस नाले को पार करने लगा, वह उसमें गिर गया। गड्ढे में गिर गया और कहने लगा, ''अरे मन! अभी तो कुछ बना ही नहीं और मेरी सेहत भी गई और पता नहीं काल किस समय आ जायेगा और कुछ भी नहीं बन पाया है?'' उस समय उसने फिर गट्ठड़ उठाया और उदास हो गया और चला जा रहा है। महापुरुष आगे बढ़कर लेने आये। सेवादार साथ लिया। कहने लगे, ''गट्ठड़ पकड़ लो इसके बाद उसने बुक्कल में ले लिया और अपने साथ ले गये।''

डेरे पर आकर कहने लगे, ''यह बता, जब तू वहाँ गिरा था, तो तूने क्या कहा था? सच-सच बताना।''

कहता है, ''महाराज! आप तो सभी कुछ जानते हो।''

कहने लगे, ''हमें बता।''

उस समय उसने सारी बात बता दी, ''महाराज! इस तरह शरीर कमज़ोर हो गया और मेरे से गट्ठड़ भी नहीं उठाया जा रहा और मैं गिर गया और मैंने कहा अभी तो मेरा बना कुछ नहीं, पता

नहीं शरीर ही न छूट जाये।''

उस समय महापुरुषों ने उस पर कृपा कर दी। सभी को पत्र लिख दिये। सारी संगत बुला ली। सुन्दर वस्त्र पहना दिये। एक और तख्तपोश बिछवा दिया। एक पर आप बैठे हैं, दूसरे ऊपर उसे बिठा दिया। उठकर नमस्कार कर दी कहते हैं, ''आओ साध संगत! अब तुम सभी इसको सिर झुकाओ।'' सभी से सिर झुकवा कर अपनी जगह पर बिठा दिया। दूसरे दिन वह शरीर छोड़ गये। सो इस तरह से –

मुरदा होइ मुरीदु न गली होवणा॥
भाई गुरदास जी, वार 3/18

जब मुरदा होकर बना, उस समय फिर वासना उठी, उसके अन्दर महापुरुषों वाली –

चंदनु होवै सिंमलहु फलु वासु हजूरी॥

इस तरह गुरू अंगद देव जी महाराज सेवा कर रहे हैं। साध संगत जी! सांसारिक बातों तथा सन्तों की बातों में बहुत फर्क हुआ करता है। इस तरह फ़रमान करते हैं –

धारना - चाल निराली है,
संतां दी दुनीआं नालों - 2, 2
संतां दी दुनीआं नालों - 2, 2
चाल निराली है, ... -2

भगता की चाल निराली॥ *पृष्ठ - 918*

संसार की चाल और है, भक्तों की चाल निराली है। संसार अपने स्वार्थ के लिये जीता है, स्वार्थ के लिये सम्बन्ध स्थापित करता है, स्वार्थ की जिन्दगी जीता है – काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के साये में जीता है। सन्त जो हैं –

चाला निराली भगताह केरी बिखम मारगि चलणा॥
पृष्ठ - 918

बहुत कठिन रास्ता है। कदम-कदम पर फिसलने का डर है। यदि फिसल जाये तो फिर कुछ हाथ नहीं लगता –

लबु लोभु अहंकारु तजि त्रिसना .....॥
पृष्ठ - 918

काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार पाँचों चोर – शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, राज-माल, रूप जात, यौवन, इन सभी से सम्बन्ध तोड़कर तथा इसके पश्चात तृष्णा, निन्दा, ईर्ष्या, चुगली, क्या संसार इन्हें छोड़ता है?

..... बहुतु नाही बोलणा॥ *पृष्ठ - 918*

बेअन्त बातें नहीं करते, मतलब की बात करते हैं –

खंनिअहु तिखी वालहु निकी .....॥ *पृष्ठ - 918*

यह चाल तो खण्डे की धारा से भी तीखी है, बाल से भी बारीक है –

.....एतु मारगि जाणा॥ पृष्ठ - 918

इसके ऊपर से चलना है -

गुरपरसादी जिनी आपु तजिआ .....॥ पृष्ठ - 918

जिसने 'मैं' को मार लिया, उसके अन्दर हरि के नाम की वासना समा जाया करती है -

..... हरि वासना समाणी।
कहै नानकु चाल भगता जुगहु जुगु निराली।।
पृष्ठ - 918

कबीर साहिब को देख लो, नामदेव जी को देख लो, अन्य किसी महात्मा को देख लो। त्रेता युग में वशिष्ट जी भी हुए और विश्वामित्र जी भी हुए। दोनों का राम चन्द्र जी के साथ सम्बन्ध था। विश्वामित्र जी उनके शस्त्र गुरू थे तो वशिष्ट जी आध्यात्मिक गुरू थे। जब भी वशिष्ट जी के पास, विश्वामित्र जी मिलने आते तो वह उन्हें राजर्षि कहकर सम्बोधित किया करते। वशिष्ट जी को बड़ा क्रोध आता और मन ही मन कहते कि मुझे ब्रह्मर्षि क्यों नहीं कहते। क्रोध में शाप देकर वशिष्ट जी के एक पुत्र को मार देते। इस प्रकार वशिष्ट जी के 100 पुत्र मार दिये। एक दिन वशिष्ट जी ने कह दिया, ''आइये ब्रह्मऋषि जी।'' विश्वामित्र बोले, ''यह बात आपने पहले क्यों न कही?'' वशिष्ट जी कहते हैं, ''पहले आप किसी और वेश में आया करते थे। राजाओं के वेश में शस्त्रधारी बनकर आया करते थे। इसलिये मैं आपको राजर्षि कहता था।''

विश्वामित्र जी के मन में बहुत पश्चाताप हुआ। अब किसी तरीके से वह दोष निकालना चाहते हैं। इनके जो पुत्र मारे थे और सारी रूहानियत भी खत्म हो गई। अन्त में वशिष्ट जी को गुरू धारण करने के लिये, उनकी चरण-शरण में पहुँचते हैं। पहले तो उन्होंने मना कर दिया पर इन्होंने खूब मन लगाकर सेवा शुरू कर दी। बहुत सेवा की। एक दिन फिर प्रार्थना की, ''महाराज! मैं आपको गुरू धारण करना चाहता हूँ।''

विश्वामित्र कहते हैं, ''गुरू धारण करना चाहता है?''

वशिष्ट जी बोले, ''हाँ, महाराज! मैं खीर लाया हूँ, आज आपके खाने के लिये।'' लेकर खड़ा हो गया।

विश्वामित्र बोले, ''अच्छा हम आयेंगे और खा लेंगे।''

ऐसे लिखा मिलता है कि सौ साल तक वहीं खड़े रहे फिर जाकर कहीं खीर खाई। दुनिया तो ऐसी बातें नहीं करती। सन्तों की बातें दुनियां से निराली हुआ करती हैं। इस तरह से-

मुरदा होइ मुरीद न गली होवणा॥
भाई गुरदास जी, वार 3/18

हम तो बातें बनाने वाले सिख बने हुए हैं, वास्तविकता तो हमारे अन्दर है ही नहीं। महाराज जी इस तरह से फ़रमान करते हैं -

धारना - गलीं असीं चंगीआ - 2, 2

आचारी बुरीआह - 2, 2

मनहु कुसुधा कालीआ बाहरि चिटवीआह॥
रीसा करिह तिनाड़ीआ जो सेवहि दरु खड़ीआह॥
नालि खसमै रतीआ माणहि सुखि रलीआह॥
होदै ताणि निताणीआ रहहि निमानणीआह
नानक जनमु सकारथा जे तिन कै संगि मिलाह॥

पृष्ठ - 85

जो दिन रात कभी भी एक सैकिण्ड के लिये भी परमेश्वर को नहीं भूलते, हम उनकी रीस करते हैं। साध संगत जी! हम तो उनसे बहुत पीछे गये हैं। हमसे जितनी मर्ज़ी चाहो किसी की निन्दा करवा लो। किसी को बुरा कहलवाना है, जितना मर्ज़ी कहलवा लो। बातों के सिख हैं-

रीसा करहि तिनाड़ीआ जो सेवहि दरि खड़ीआह॥

पृष्ठ - 85

जो द्वार पर खड़े सेवा करते हैं, हर समय डयूटी पर हाज़िर रहते हैं, जिन्होंने अपना तन, मन, धन सभी अर्पण कर दिया और अनजाने में भी कुछ नहीं चाहते। हम क्या करते हैं? हम तो हर एक काम के बदले पैसा चाहते हैं। पाठ करना हो तो पैसा चाहिये। गुरू घर की सेवा करनी हो तो हमें इतनी तनखाह चाहिये। कीर्तन करना हो तो 100 रूपये प्रति घंटा, 2000 रूपये प्रति घन्टा लेंगे फिर रीस, स्पर्धा हम उनसे करते हैं जिन्होंने अपना तन, मन, धन सभी कुछ अर्पण कर दिया है।

महाराज जी कहते हैं, दुनियां तो भरी पड़ी है, ऐसे लोगों से, पर परमेश्वर का असली सेवक तो कोई विरला है -

धारना - गल्लां वाले हैन घनेरे,
चाकर कोई कोई है - 2, 2
चाकर कोई कोई है - 4, 2
गल्लां वाले हैन घनेरे, ...-2

गला करे घणेरीआ खसम न पाए सादु॥ पृष्ठ - 474

बातों ही बातों से हम पूरे गुरसिख बने फिरते हैं, पूरे सेवक बने फिरते हैं, पर वास्तविकता से बहुत दूर हैं -

मुरदा होइ मुरीद न गली होवणा।
साबरु सिदकि सहीदु भरम भउ खोवणा॥
भाई गुरदास जी, वार 3/18

साबर होना, सिदकी होना, शहीद होना, ये तीन बातें समझो, इनका आपस में बहुत गहरा सम्बन्ध है -

गोला मुल खरीदु कारे जोवणा॥
भाई गुरदास जी, वार 3/18

एक महात्मा हुए हैं, उनका नाम सरमद था। आप आरमेनियां के रहने वाले थे। जवानी में आप व्यापार किया करते थे। भारत वर्ष से चीज़ें ले जाकर ईरान में बेचा करते थे। ईरान से आरमेनियां ले जाते और यहूदी मत का इन पर कुछ प्रभाव भी था। पर वास्तव में इनका कोई निश्चित धर्म नहीं था। जब भारत में आते तो सत्संग बहुत किया करते थे। यह ठट्टा गाँव सिन्ध में है। जब यहाँ आये तो यहीं पर अपना स्थायी निवास बना लिया। मन में एक लगन लग गई कि मुझे कोई पूरा मुरशद मिल जाये, कोई रंग में रंगा हुआ मिल जाये, तो मेरा भी उद्धार हो जाये।

अत: इन्होंने सन्तों, महात्माओं की सेवा करनी शुरू कर दी। सभी धर्मों की कई-कई मण्डलियां आतीं, उनकी खूब सेवा करते, सूफी सन्त, हिन्दू सन्त तथा अन्य सभी धर्मों के महात्मा इनके पास जाया करते थे। आप बहुत सेवा करते थे। सेवा करने के बाद जब महात्मा दो चार दिन बाद जाने लगते, तो आप काफी दूर तक छोड़ने जाया करते थे। जब उन्हें विदा करना तो आपने उनके चरण छूने और कहना, ''हे महापुरुष! मेरा एक सवाल है।'' फिर इस तरह से इसने प्रश्न पूछना –

धारना - मैनूं दसिओ सुहागण सहीओ,
किवें तुसीं राविआ राम पिआरा - 2, 2
राविआ राम पिआरा किवें तुसीं - 2, 2
मैनूं दसिओ सुहागण सहीओ, ...-2

प्रश्न करना, ''महाराज! आपको परमेश्वर, अल्ला-ताला, वाहिगुरू कैसे मिल गया? मुझे भी बताओ।''

देहु संदेसरो कहीअउ प्रिअ कहीअउ।
बिसमु भई मै बहु बिधि सुनते कहहु सुहागनि सहीअउ।
को कहतो सभ बाहरि बाहरि को कहतो सभ महीअउ॥ *पृष्ठ - 700*

कई महापुरुष कहते हैं कि भगवान बहुत दूर रहता है, कोई कहता है, बैकुण्ठ में रहता है। कोई कुछ कहता है तो कोई कुछ कहता है –

बरनु न दीसै चिहनु न लखीऐ सुहागनि साति बुझहीअउ॥ *पृष्ठ - 700*

दिखाई नहीं देता, उसका कोई चक्र-चिन्ह, वरण नहीं है और उन्होंने उसे जान लिया है –

सरब निवासी घटि घटि वासी लेपु नही अलपहीअउ।। *पृष्ठ - 700*

वह तो निर्लिप्त है और सभी के अन्दर बसता है –

नानकु कहत सुनहु रे लोगा संत रसन को बसहीअउ॥
पृष्ठ - 700

सो यह प्रश्न कर देता। महात्मा ने कुछ न कुछ यथा योग्य उत्तर देना, पर इसे तसल्ली न होती। आखिर यह सोच कर कि कभी न कभी तो कोई पूरा आयेगा, फिर सेवा करने में लीन हो जाता।

एक दिन एक पहुँचे हुए महापुरुष इनके पास आ गये। कुछ लोगों का ख्याल है कि सन्त

भीखा जी पहुँचे थे, कुछ किसी और सन्त का नाम लेते हैं पर कोई महापुरुष थे, वह तत्व वेत्ता, ब्रह्मज्ञानी, महापुरुष थे। जब उनसे यह प्रश्न पूछा। वे बोले, ''सरमद! तूने पहले भी किसी महापुरुष से यह प्रश्न पूछा है?''

कहता है, ''हाँ महाराज! पर मेरी तसल्ली नहीं हुई?'' महापुरुष बोले, ''देख, परमेश्वर को मिलने का रास्ता तो बहुत ही सरल है, कोई कठिन नहीं है। पहली बात तो यह है कि वह तेरे अन्दर रहता है, बाहर कहीं नहीं है। उसे कहीं बाहर मत ढूंढ –''

सभ किछु घर महि बाहरि नाही।
बाहरि टोलै सो भरमि भुलाही॥ *पृष्ठ - 102*

बाहर ढूंढने वाला, भ्रमों में पड़कर भूल जाता है पर इसमें एक बहुत बड़ी रूकावट है कि एक तो 'तू' बना हुआ है –

हउ हउ भीति भइओ है बीचो सुनत देसि निकटाइओ॥
पृष्ठ - 624

देख, है तो बिल्कुल पास, पर जो तूने 'मैं' की दीवार बना ली है कि 'मैं हूँ।' मैं अमुक सिंघ हूँ, इस 'मैं' का इतना पक्का अधिआस हो गया है। असल में हम कुछ भी नहीं हैं, ऐसे ही एक दीवार बना ली है –

भांभीरी के पात परदो बिनु पेखे दूराइओ॥ पृष्ठ-624

पतला सा पर्दा डाला हुआ है। यदि यह समाप्त हो जाये तो इसकी प्राप्ति हो जाती है –

धारना - आप गवाईऐ तां सहु पाईऐ - 2, 2

महात्मा कहते हैं, ''सरमद! इसके अन्दर एक और चीज़ है जिसे हउमै कहते हैं –''

धन पिर का इक ही संगि वासा
विचि हउमै भीति करारी।
गुरि पूरै हउमै भीति तोरी
जन नानक मिले बनवारी।। *पृष्ठ - 1263*

इसके अन्दर 'मैं' बनी हुई है। एक बेफज़ूल, खामखाह का पर्दा जीव ने अपने आप ही डाला हुआ है। इसकी हस्ती है नहीं। यह तो जब इसके चित्त पर परम चेतन का प्रकाश पड़ता है, तब चेतनता (awareness) आती है, फिर यह 'मैं' बनकर खड़ा हो जाता है और 'मैं' के कारण ही इसका परमेश्वर से बिछौड़ा हो गया –

आपु गवाईऐ ता सहु पाईऐ अउरु कैसी चतुराई॥
पृष्ठ - 722

फिर दूसरी बात यह है कि –

सहु नदरि करि देखै सो दिनु लेखै कामणि नउनिधि पाई॥ *पृष्ठ - 722*

है तो यहाँ पर वाहिगुरू ही, लेकिन झूठी 'मैं' ने परमेश्वर को ढक लिया। जैसे पानी के ऊपर काई आ जाये तो वह पानी को ढक लेती है। इसी तरह इस झूठी 'मैं' के प्रभाव ने परमेश्वर

की ज्योति को ढक लिया –

हउमै करी ता तू नाही तू होवहि हउ नाहि।।

पृष्ठ - 1092

जब मैं 'मैं' बन जाता है तो 'तू' वहाँ से खत्म हो जाता है। जब 'तू' हो तो 'मैं' खत्म हो जाती है –

बूझहु गिआनी बूझणा एह अकथ कथा मन माहि।।

पृष्ठ - 1093

बूझो, कहते हैं, बूझने का प्रयत्न करो –

जब हम होते तब तू नाही अब तूही मै नाही॥

पृष्ठ - 657

महात्मा बोले, ''सरमद! इसके लिये श्रृंगार बनाते हैं। कुछ भगवे वस्त्र डालते हैं। कुछ और अन्य प्रकार के वेश धारण करते हैं। ये जो वेश हैं, ये परमेश्वर को पसन्द नहीं आया करते। उसे पसन्द आने वाला जो भेष है, वह इस तरह का है –''

धारना - भै कीआं देह सिलाईआं नैणी,
भाव का कर श्रृंगारो - 2, 2
भाव का कर श्रृंगारो जी - 2
भै कीआं देह सिलाईआं नैणी, ...-2

महात्मा कहते हैं, ''सरमद! भय की सिलाईयां नेत्रों में डाल। जिसने श्रृंगार करना होता है, वह नेत्रों में सुरमा डालते हैं। पर तू अदब का सुरमा नेत्रों में डाल। भय दो प्रकार का होता है। एक तो चोर, डाकू, साँप, शेर आदि से भय। एक अदब (आदर-मान) का भय है। प्यार करने वाला अदब में रहता है। गुस्ताख नहीं हुआ करता। अतः अदब का सुरमा नेत्रों में डाल ले अर्थात प्यार में हर समय रह, परमेश्वर की ओर हर समय आकर्षित रह। हर समय तुझे मिलने की प्रतीक्षा रहे–

इआनड़ीए मानड़ा काइ करेहि।
आपनड़ै घरि हरि रंगो की न माणेहि॥ पृष्ठ - 722

है तो अन्दर, परन्तु प्यार का आनन्द क्यों नहीं लूटता?

सहु नेड़ै धन कंमलीए बाहरु किआ ढूढेहि॥

पृष्ठ - 722

इस तरह से जब तू उसे याद करेगा, वह आ जायेगा क्योंकि वह प्रेम का भूखा है –

साचु कहौं सुन लेहु सभै
जिन प्रेम कीओ तिन ही प्रभु पाइओ॥ त्व प्रसादि स्वयै

प्यार के बदले में वह प्यार ही देता है यदि तेरे अन्दर उसके प्रति आकर्षण होगा, तो वह भी तुझे आकर्षित करेगा फिर तेरा मेल हो जायेगा।

इस प्रकार महापुरुष उपदेश देकर चले गये। पहली बार में ही ब्रह्म ज्ञान में पहुँचा दिया।

ऐसा प्यार लगा कि जितनी भी धन दौलत थी, सन्तों की सेवा में खर्च करके, दिल्ली आ गया। अब दिल्ली में रहने लग जाता है। बड़ी दुनियां उसके दर्शन करने आती है। गुरू तेग बहादुर जी को शहीद करने से पहले, औरंगजेब ने इसे शहीद किया था। यहाँ पर वह अपनी बेपरवाही में रहता है। परमेश्वर के प्यार का रंग लग गया। हर वक्त उसके प्यार में रहता है। यहाँ तक नौबत आ गई कि शरीर की सुध-बुध भी न रही। वस्त्र पहनना भी भूल गया। निर्वस्त्र रहना शुरू कर दिया। औरंगजेब के पास इसकी शिकायतें पहुँचनी शुरू हो गईं कि एक फकीर यहाँ पर निर्वस्त्र रहता है। औरंगजेब ने कई बार उसे वस्त्र पहनने के लिये कहा। औरंगजेब ने बड़े काज़ी को जिसे कवि कहते थे, उसके पास भेजा और कहा, ''जाओ, तुम जाकर उसे कहो कि कपड़े पहन ले।''

वह कवि सरमद के पास पहुँचता है और उसे कहता है, ''सरमद! बादशाह का हुक्म है, तू कपड़े पहन ले। तुम वस्त्र क्यों नहीं पहनते?''

सरमद बोला, ''किसके कपड़े पहनूं, कवि भी शैतान हो गया।''

कवि को बहुत गुस्सा आया क्योंकि उसे भी उसने शैतान कह दिया, जो हर प्रकार के निर्णय करने वालों में से सबसे बड़ा, निर्णायक है। उसने भी आकर औरंगजेब के पास शिकायत कर दी, परन्तु उसने ध्यान न दिया। एक दिन औरंगजेब जामा मस्जिद जा रहा होता है। साथ ही उसके कवि भी था। थोड़ी दूर चलने के बाद काज़ी कवि संकेत करके कहता है, ''बादशाह सलामत! वह देखो, सामने नंगा खड़ा है।''

औरंगजेब ने एक-दो गज़ कपड़ा उसकी और फैंक कर मारा। हाथी पर सवार था और फकीर से कहा, ''फकीर सांई! इस वस्त्र से तन ढक ले, निर्वस्त्र अच्छा नहीं लगता।''

इसने वह कपड़ा उठाकर सिर पर बान्ध लिया। जब वह वापिस आया तो सरमद वैसे का वैसे ही निर्वस्त्र बैठा दिखाई दिया।

औरंगजेब कहता है, ''मैंने तुझे वस्त्र दिया था और तूने उसे सिर पर बान्ध लिया, पूरा तन क्यों नहीं ढका?''

सरमद बोला, ''औरंगजेब! तूने सिरोपा दिया है और सिरोपे सिर पर बान्धे जाया करते हैं, कमर पर नहीं बान्धे जाते। सिरोपे की बेअदबी होती है।''

औरंगजेब को कोई उत्तर न सूझा परन्तु अन्दर ही अन्दर मन से उसका अपमान करना चाहता है। एक दिन नमाज़ में जाते समय उसने वहाँ पर पास ही हाथी खड़ा कर दिया। कहता है, ''इसके साथ अच्छी तरह से बात करनी पड़ेगी क्योंकि यहाँ से नमाज़ी गुजरते हैं और यह नंगा बैठा रहता है। इसने तमाशा बनाया हुआ है।'' क्योंकि दोनों का तालमेल नहीं बनता था।

अत: औरंगजेब हाथी से उतर कर नीचे आया और सरमद के पास जाकर बोला, ''फकीर सांई! तू कम्बल क्यों नहीं ओढ़ता जबकि तेरे पास ही रखा है। तू यहाँ पर निर्वस्त्र क्यों बैठता है? अच्छा लगता है? यहाँ से सभी नमाज़ी गुजरते हैं।''

सरमद बोला, ''तू उठाकर मेरे ऊपर डाल दे। मेरे पास कम्बल डालने के लिये फुर्सत ही नहीं है।''

जब औरंगजेब कम्बल उठाकर उस पर डालने लगा तो क्या देखता है कि कम्बल के नीचे औरंगजेब के बाप का सिर पड़ा है, भाईयों के शीश पड़े हैं और बेअन्त शीश पड़े हैं। जितने कत्ल किये थे, सभी के शीश पड़े थे।

सरमद बोला, ''डाल मेरे ऊपर कम्बल। रूक क्यों गया? नीचे क्यों रख दिया? अब बता तेरे पापों को ढकूं या अपने तन को ढकूं?'' ऐसा महापुरुष था।

एक बार एक खत्रियों का लड़का उसके पास आता है। उसके माँ-बाप ने उसे फकीर सांई के पास भेजा और उसे कहा तेरा विवाह करना है, हमारे पास पैसे वगैरा नहीं है, अतः तू फकीर सांई के पास जाकर कुछ मदद माँग ला।

वह पीर के पास आता है और कहता है, ''पीर जी! मेरा विवाह है। दस हज़ार रूपये की ज़रूरत है।''

फकीर बोले, ''दस हज़ार तो बहुत ज्यादा होता है।''

लड़का बोला, ''जी! मेरे माता पिता ने इतने ही कहे हैं।''

तब फकीर बोला, ''कुछ सरकण्डे तोड़ ला।''

वह लड़का सरकण्डे तोड़ कर ले आया और पीर ने उनका पलंग बना दिया। उसे धागों के साथ अच्छी तरह बान्ध दिया।

सरमद ने उस लड़के से कहा, ''इसे सिर पर रख कर यहीं से ही कहता चला जा, औरंगजेब का तख्त दस हज़ार में बिक रहा है।''

जब उसने बोली लगाई तो सारे बाज़ार में शोर मच गया कि सरमद ने औरंगज़ेब का तख्त बिकवाना शुरू कर दिया। उस समय एक मीर जुमला औरंगज़ेब का हाकिम खड़ा था। उसने दस हज़ार रूपया देकर वह चीज़ ले ली। इस प्रकार औरंगजेब ऐसी बातें सुन-सुन कर तंग आ गया और उसके मन में विचार उठा और उसे कैद करवा दिया। पर वह फिर भी परवाह नहीं करता -

रंगि हसहि रंगि रोवहि चुप भी करि जाहि।
परवाह नाही किसै केरी बाझु सचे नाह॥ पृष्ठ - 473

सिवाय परमेश्वर के साधु किसी भी दुनियांदार की परवाह नहीं किया करते। वे बेपरवाह होते हैं। उस समय औरंगजेब ने हुक्म दे दिया कि इसे हथकड़ियां लगाओ, बेड़ियां भी डाल दो, गले में तौक भारी सा डाल दो ताकि इसकी गर्दन हमेशा झुकी रहे। ऐसी सख्त सजा का हुक्म दे दिया। उसके बाद उसने रिपोर्ट मंगवाई। सिपहसलारों ने कहा, ''बादशाह सलामत! उस पर तो कोई असर नहीं हुआ, वह तो वैसे का वैसा ही है।'' इसी समय के दौरान फ्रांस (ईरान) देश का एक राजदूत आ गया। उसने औरंगजेब से आकर प्रार्थना की, ''बादशाह! तेरे राज्य में चौदह सौ पढ़े लिखे व्यक्ति

हैं, जिन्हें उलमा कहते हैं और मेरे बादशाह ने सिफारिश भेजी है कि वहाँ पर जाकर सब्र और शुक्र के अर्थ पता करके आओ। इसलिये मैं आपके दरबार में यह प्रश्न पूछने आया हूँ।'' दूसरे दिन औरंगजेब ने सभा बुलाई और सभी को 'सब्र' तथा 'शुक्र' के अर्थ स्पष्ट करने को कहा। सभी उलेमां अर्थ करते हैं, पर उसकी तसल्ली नहीं होती फिर उस दूत ने कहा, ''मुझे पता चला है कि तेरी कैद में एक पीर सरमद रहता है। सुना है वह 'सब्र' और 'शुक्र' के अर्थ बता सकता है। इसलिये मुझे उससे मिलने की इजाज़त दी जाये।'' दूत को इजाज़त दे दी और वह सरमद से मिलने चला गया। जब वहाँ सरमद के पास पहुँचा तो सरमद कहता है, ''ऐसे करो, मुझे स्नान किये हुए काफी दिन बीत गये हैं, इसलिये एक मशक पानी की ले आ और दो गज़ कपड़ा भी ले आ, उसे मैं तहमत की तरह शरीर पर बान्ध लूंगा क्योंकि मैं निर्वस्त्र हूँ, फिर तेरे प्रश्नों का जवाब दूंगा।'' दूसरे दिन वह एक मशक पानी और दो गज़ कपड़ा ले गया। उसने स्नान किया और फिर कपड़ा तहमत की तरह बान्ध लिया।

फिर कहता है, ''हाँ पूछो, क्या पूछना है?''

वह बोला, ''सांई फकीर! मैं 'सब्र' और 'शुक्र' के मायने पूछता हूँ क्योंकि ऐसा बार-बार आता है -''

साबरु सिदकि सहीदु भरम भउ खोवणा॥
भाई गुरदास जी, वार 3य18

यदि मुरीद बनना है तो 'साबर' होना चाहिये। 'शुक्र' में रहने वाला, सन्तोष में रहने वाला और हमें इसके अर्थ पता नहीं चलते कि यह क्या होता है।

सरमद बोला, ''अभी बता देते हैं।'' कुछ देर चुप रहा इतनी देर में कोड़े लगाने वाला आ गया। इसे रोज़ाना सौ कोड़े लगाने का हुक्म दिया गया था। सरमद खड़ा हो गया और कोड़े लगाने वाला अपना काम शुरू करता है। वह साथ-साथ गिनती भी करता चला जा रहा है। इसने एक अंगुली ऊपर उठाई हुई है और 'नहीं' का संकेत कर रहा है। जब 50 कोड़े लग चुके तो जल्लाद सुस्ताने के लिये बैठ गया पर इस राजदूत की समझ में कुछ न आया।

सरमद राजदूत से बोला, ''तेरी समझ में आये अर्थ?''

दूत बोला, ''नहीं सांई! मुझे तो कुछ भी समझ में नहीं आया।'' मैं तो यहीं देखता हूँ कि आप पर ये कौड़े लगा रहे हैं और ये बड़े जालिम हैं।

सरमद बोला, ''अच्छा! अब तुझे समझा भी देंगे और दिखा भी देंगे।''

इस समय उसने राजदूत की तरफ हाथ का झटका मारा और उसके नेत्र खोल दिये। वे नेत्र खोल दिये, जिनसे गुप्त चीज़ें दिखाई देती हैं। क्या देखता है कि आवाज़ें आ रही हैं, जिस तख्त पर औरंगजेब बैठा है। आवाज़ कहती है कि उसे हुक्म दे, वह औरंगजेब के तख्त को उलटा दे। वह उसके महल को भी गर्क कर दे। बहुत से फरिश्ते देखे, जो सरमद के आगे हाथ जोड़े खड़े उसकी आज्ञा की इन्तज़ार कर रहे हैं। पर यह सभी को 'नहीं-नहीं' किये जा रहा है। जब सौ कौड़े पूरे हो

गये, तब इसने दूत से पूछा, ''अब अर्थ समझ में आ गया?''

दूत बोला, ''नहीं जी।''

सरमद ने कहा, ''देख, मैं इतनी ताकत का स्वामी हूँ कि यदि एक बार कह दूँ तो दिल्ली को मिट्टी में मिला कर रख दूँ। इतनी शक्तियों का मालिक होता हुआ भी मैं सब्र में हूँ और कोड़े खा रहा हूँ। इसे सब्र कहते हैं। ताकत अपने पास हो फिर भी दुख सहता रहे।''

दूत ने पूछा, ''शुक्र का क्या अर्थ है?''

सरमद बोले, ''वह भी तुझे अभी पता चल जायेगा।''

इतनी देर में एक सिपाही एक प्याला ले आया, जो पूरी तरह से नमक से भरा हुआ था और थोड़ा सा पानी था। वह पी गया और कहता है, ''अल्ला ताला, तेरा शुक्र है, तू मेरे लिये पानी भी भेजता है, बेशक नमक वाला ही भेजता है।''

फकीर सांई ने उसके नेत्र खोल दिये। क्या देखता है कि फरिश्ते बेअन्त प्रकार के पदार्थ खाने के लिये हाथों में लेकर खड़े हैं और फरियाद कर रहे हैं, फकीर सांई अंगीकार करो। पर वह कहता है, ''नहीं, जो कुछ अल्लाह ताला देता है, मुझे उसी में शुक्र है।'' इस तरह दूत को पूरी तसल्ली हो गई। साध संगत जी! इसे 'सब्र' और 'शुक्र' कहते हैं।

मुरदा होइ मुरीद न गली होवणा।
साबरु सिदकि सहीदु भरम भउ खोवणा॥
भाई गुरदास जी, वार 3/18

दूसरा होता है सिदक। गुरू छठे पातशाह महाराज कश्मीर चले गये। वहाँ पर एक गुरसिख के साथ जा रहे हैं। एक दिन आप जंगल में घुस गये और आपके साथ भाई निहाला चल रहा है। महाराज जी अचानक पीछे मुड़ना शुरू किया, भाई निहाला ने कहा, ''महाराज! आगे शेर वगैरा बहुत हैं और वे आदमी को देखकर ऊँचे-ऊँचे स्थानों से छलांगें लगाते हैं एक और रास्ता भी है, चलो उस दूसरे रास्ते से चलते हैं।''

महाराज जी कहते हैं, ''अच्छा भाई निहाला! तुम यहीं पर ही खड़े रहना, जब तक हम आते नहीं। हम दूसरे रास्ते से होकर अभी आते हैं।''

वहाँ से महाराज जी इधर-उधर घूम कर वापिस डेरे में पहुँच गये। दूसरा दिन भी बीत गया, तीसरा दिन भी बीत गया, चौथे दिन महाराज जी ने पूछा, ''भाई निहाला नज़र नहीं आ रहा?''

सेवक कहते हैं, ''सच्चे पातशाह! आपने वहाँ पर जंगल में खड़े होने का हुक्म दिया था। उसके बाद तो उसे देखा ही नहीं, पता नहीं कोई शेर वगैरा ही न खा लिया हो?''

महाराज जी उसी समय घोड़े पर चढ़कर एक दम जंगल में उस स्थान पर गये। वहाँ पर भाई निहाले की सुरत ऊपर चढ़ी हुई है और आवाज़ आ रही है -

सतिनाम-वाहिगुरू, सतिनाम-वाहिगुरू॥

जहाँ पर खड़ा किया था, वहीं पर ही खड़ा रहा। तीन दिन, तीन रातें बीत गईं। ऐसे सिख सिदकी सिख हुआ करते हैं। पाँच प्रकार की सिखी हुआ करती है। एक होती है 'भेष धारण' कर लेना, अच्छा लगता है, लोग सत श्री अकाल, कहकर निवाज़ने लग जाते हैं। अन्दर से कुछ नहीं होता, खाली होते हैं।

दूसरी होती है 'हिरस' की सिखी अर्थात लोभ लालच के कारण सिखी धारण कर लेना। उस जमात में चले जाना कि मेरा व्यापार चलेगा।

तीसरी तरह की सिखी में, सिख बार-बार पीछे मुड़कर देखता है। साधु तो बन गया। सन्तों के पास भी चला गया, फिर पीछे को देखता है। जो भी आता है, उनसे घर वालों का, मित्रों का हाल पूछता है। कहीं से मामूली सी भी खबर मिल जाये तुरन्त दौड़ पड़ता है।

चौथी सिखी को 'सिदकी सिखी' कहते हैं।

पांचवी सिखी 'भावना की सिखी' होती है।

सिदक की सिखी वह होती है, जिसमें सिर बेशक चला जाये पर सिदक न जाये। भावनी सिखी होती है, जिसमें गुरू को परमेश्वर समझना। इस प्रकार सिदक और भावनी की सिखी धारण करके भाई लहणा जी, गुरू नानक पातशाह जी की सेवा दिन रात कर रहे हैं। तीन साल बीत गये। बहुत कठिन साधना की जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। जिस प्रकार गुरू अमरदास जी महाराज ने साधना की थी, इसी तरह आप भी दिन रात गुरू नानक पातशाह जी की सेवा में रहते हैं। एक दिन गुरू नानक पातशाह ने कहा, ''भाई लहणा! तुम्हें यहाँ पर आये तीन साल बीत गये, घर बार, बाल बच्चे, कारोबार तुम्हारा बहुत फैला हुआ है। आपने कभी वापिस जाकर नहीं देखा।''

भाई लहणा जी कहते हैं, ''सच्चे पातशाह! मुझे तो कभी घर बार का कोई फुरना ही नहीं आया। जब से आपकी चरण शरण में आया हूँ, मेरे लिये तो सारी दुनियां आप ही हो। मेरा और कोई नहीं रहा सिवाय आपके।''

उस समय आपने हुक्म दिया, ''भाई! जाओ, जो कार्य अधूरे रह गये हैं, उन्हें पूरा कर आओ।'' आप बिछुड़ना तो नहीं चाहते पर हुक्म का पालन कर रहे हैं। उस समय नेत्रों से प्रेम के आंसू छलक रहे हैं, हाथ जोड़े हुए हैं, चरणों पर नमस्कार करके महाराज जी पर दृष्टि टिकाये हुए उलटे पैर चले जा रहे हैं। जहाँ तक देख सकते हैं, गुरू नानक पातशाह के दर्शन करते हैं। अन्त में घर पहुँच गये। अब घर आकर मन, चित्त नहीं लगता। हर समय आकर्षण रहता है। साध संगत जी! जिनके हृदयों में प्यार होता है, वे प्यारे के बिना जीवित नहीं रहा करते। महाराज जी का ऐसा फ़रमान है -

धारना - जीऊणा औखा है,
पिआरे गुरां तों विछड़ के - 2, 2
गुरां तों विछड़ के - 4, 2

जीऊणा औखा है, ...-2

कहते हैं, जिनका गुरू के साथ प्यार हो जाया करता है, उनका जीना दूभर हो जाता है –

जां सहु देखनि आपणा नानक थीवनि भी हरे॥

पृष्ठ - 1422

जैसे मुरझाये हुए पौधे को यदि पानी मिल जाये तो वह एक दम हरा-भरा हो जाता है। ऐसा ही प्यार सिख का गुरू के साथ हुआ करता है। सिख, गुरू का विछौड़ा सहन नहीं कर सकता और ऐसा ही फ़रमान आता है कि जिस प्रकार मछली पानी के बिना जीवित नहीं रह सकती, इसी प्रकार गुरसिख गुरू से बिछुड़ कर रह नहीं सकता –

धारना - गुरसिख मर जावे,
बाझ गुरां दे दरश तों - 2, 2
गुरसिख मर जावे,
बाझ गुरां दे दरश तों - 4

इस प्रकार यदि गुरू का दर्शन नहीं होता तो गुरसिख की मौत हो जाया करती है। मौत दो प्रकार की हुआ करती है। एक शरीर की मौत हो जाना और एक प्यार की मौत हो जाना।

महापुरुषों का ऐसा फ़रमान है कि जिस महापुरुष के साथ प्यार है, उसका सत्संग मनुष्य को ज़रूर करना चाहिये। यदि रोज़ नहीं कर सकता तो सप्ताह में एक बार ज़रूर करे। यदि कहीं दूर दराज़ रहता है तो दो महीने में एक बार जरूर दर्शन करे और ज्यादा दूर रहता है तो तीन महीने में एक बार ज़रूर करे। यदि फिर भी नहीं कर सकता तो साल में जहाँ बड़ा वार्षिक भण्डारा हो, वहाँ जरूर जाये। सो –

झखड़ु झागी मीहु वरसै भी गुरु देखण जाई॥

पृष्ठ - 757

जिनके अन्दर प्यार है, चाहे बरसात हो रही है या आन्धी चल रही हो, वे तो गुरू के दर्शन ज़रूर करके ही रहते हैं –

समुंदु सागरु होवै बहु खारा
गुरसिखु लंघि गुर पहि जाई। *पृष्ठ - 767*

जिउ धरती सोभ करे जलु बरसै
तिउ सिखु गुर मिलि बिगसाई॥ *पृष्ठ - 757*

जैसे धरती पर बरसात हो जाती है तो सभी पेड़ पौधों को होश आ जाती है, सारी वनस्पति खुशहाल और लहलहा उठती है। इसी प्रकार जब सिख गुरू से मिलता है तो उसके अन्दर चाव प्यार की लहरें उठनी शुरू हो जाया करती हैं –

सेवक का होइ सेवकु वरता करि करि बिनउ बुलाई।
नानक की बेनंती हरि पहि गुर मिलि गुर सुखु पाई॥

पृष्ठ - 758

सिख गुरू के पास जाकर अपने आपको बनाकर नहीं दिखाता। सिख तो सदा विनम्रता में रहता है। इस प्रकार आप हुक्म के बन्धे हुए घर आ गये। लोग बड़ी मान्यता देते हैं कि गुरू महाराज जी की सेवा करके आए हैं। गाँव का चौधरी भी मिलने आता है। जब चौधरी भाई लहणा जी से मिला तो आपने कहा, ''चौधरी जी! इधर आइये, चारपाई पर मेरे साथ बैठो।''

चौधरी बोला, ''अब मैं आपके सामने चौधरी नहीं रहा। आप गुरू नानक महाराज जी की सेवा करके आए हो अत: आप उच्च पदवी के हो और मैं तो छोटा हूँ।''

चारों ओर शोभा हो रही है, आदर मान हो रहा है, घर में भी सभी बहुत प्यार करते हैं पर आपका मन वहाँ पर नहीं लग रहा। भोजन इत्यादि कम खाने लग गये, रात-रात भर नींद नहीं आती, ठण्डी आहें भरते रहते हैं, आकर्षण पैदा होती रहती है। मन करता है अभी ही चला जाऊँ, पर उधर हुक्म बड़ा सख्त है। हुक्म के अन्दर बन्धे हुए बैठे हैं। जिसकी ऐसी अवस्था हो जाया करती है, उसे संसार नहीं समझ सका करता। कोई वैरागी पुरुष हो, जिसे विरह की चोट लगी हो, वही जान सकता है, दूसरे को पता नहीं चल सकता -

धारना - जिस तन लग्गीआं सोई तन जाणे,
किसे दी लग्गी कौण जाणदा - 2, 2
मेरे पिआरे, किसे दी लग्गी कौण जाणदा-2,2
जिस तन लग्गीआं सोई तन जाणे, ...-2

लागी होइ सु जानै पीर।
राम भगति अनीआले तीर॥ *पृष्ठ - 327*

आणीआं वाले तीर हुआ करते हैं -

हरि प्रेम भगति जन बेधिआ से आन कत जाही॥
पृष्ठ - 1122

जिसका मन, प्यारे की भक्ति के बाणों से बिन्ध गया वह और कहीं नहीं जा सकता -

मीनु बिछोहा ना सहै जल बिनु मरि पाही॥
पृष्ठ - 1122

मछली पानी का बिछौड़ा नहीं सह सकती, बिना पानी के मर जाती है -

हरि बिनु किउ रहीऐ दूख किनि सहीऐ
चात्रिक बूंद पिआसिआ॥ *पृष्ठ - 1122*

सुबह-सुबह ध्यान से सुनो, अमृत बेला से ही, पपीहा किस तरह से पिउ-पिउ लगभग तीन बजे से ही रटने लग जाता है, दिन निकलने तक बन्द ही नहीं होता क्योंकि उसे स्वांति बूंद पीने को नहीं मिली -

हरि बिन किउ रहीऐ .....॥ *पृष्ठ - 1122*

जो गुरू से प्यार करता है, वाहिगुरू के साथ प्यार करता है, वह भी इसी तरह से करता है -

कब रैनि बिहावै चकवी सुखु पावै .....॥

पृष्ठ - 1122

चकवी इच्छा करती है कि जल्दी-जल्दी रात खत्म हो और कब दिन निकले और वह सूर्य के दर्शन करे -

.....सूरज किरणि प्रगासिआ।
हरि दरसि मनु लागा दिनसु सभागा
अनदिनु हरि गुण गाही।
नानक दासु कहै बेनंती
कत हरि बिनु प्राण टिकाही।। *पृष्ठ - 1122*

हरि के बिना प्राण कहाँ पर टिकायें। इसी का मान चित्र खींचते हुए भाई सन्तोख सिंघ जी ने गुरू नानक प्रकाश में इस प्रकार वर्णन किया है -

कब आंगन कब बाहर जाहीं॥

कभी आंगन में जाकर बैठ जाते हैं तो कभी अन्दर कमरे में चले जाते हैं -

गुर पद पंकुज ढिग मन छोरा॥

मन में गुरू नानक पातशाह के चरणों का ध्यान धरा हुआ है -

तन आइओ थो घर की ओरा॥

शरीर तो यहाँ आ गया, पर मन को वहीं छोड़ आये। हृदय को वहीं छोड़ आये। दिल को वहीं छोड़ आये।

कैसे होइ चैन मन माही।
चंद चकोर चीत चित चाही॥

जैसे चकोर चन्द्रमाँ को चाहता है, ऐसी लालसा लगी हुई है कि मन में कैसे चैन आये -

लोचन कमल रहे अलसाए।

नेत्र सदा सजल रहते हैं, गीले हुए पड़े हैं -

बिन अपने प्रीतम रवि पाए।
किस सों कहै न रहै उदासा।
करत न सुध उर काज अवासा।
रहे अलप दिन बची खडूरे।
मनि चहि चलयो निकट गुर पूरे॥

किसी से कुछ नहीं कहते। अपने दिल का भेद किसी को नहीं बताते। उदासी धारण की हुई है। घर के कामों में भी कोई ध्यान नहीं देते, जिसके लिये गुरू नानक पातशाह ने भेजा था। कुछ दिन खडूर में रहे। हर समय मन में यही रहता है कि महाराज जी ने हुक्म तो दे दिया था और मैं अब जल्दी-जल्दी गुरू महाराज जी के पास चला जाऊँ क्योंकि सुरत वहीं पर लगी हुई है -

धारना - सुरतां उस दिस गडीआं जी,
जिस धरती गुरू नानक वसदा - 2, 2

सुरतां उस दिस गडीआं जी, ... -2

चैन न आवे इस मन मेरे राती होईआं वडीआं।
वतन विदेश ओपर अंगन ताघां गुर दिस गडीआं।
दरशन खैर मिले हर वेले होर मंगा सभ छडीआं॥

सभी मांगों को छोड़कर, बस एक मांग मांग ली कि मुझे हर समय दर्शन दीजिये। हे पातशाह! एक पल भर के लिये भी मेरा आप से विछौड़ा न हो -

बाह हुलारा हकलां मारां तकां चा चा अडीआं।
जित वल प्रीतम वसे पिआरा अखी उस वल टडीआं।
जिस धरती गुर नानक वसदा सुरतां उस वल गडीआं।

करतार पुर में, गुरू नानक पातशाह हर समय आँखों के सामने नज़र आते हैं। कभी देखते हैं कि महाराज जी अब इधर जा रहे हैं, अब ऐसे कर रहे हैं, अब संगत को दर्शन दे रहे हैं, एक पल भर के लिए भी नहीं भूलते -

चलो सहीओ हुण छेती चलीए मार उलांघां वडीआं।
जान जान विच तदों आवसी चरनी जा जद लग्गीआं।

जिन्हें प्यार की सूझ है, कभी विरह की चोट खाई है, वही इस दर्द को जान सकते हैं, बाकी संसार नहीं जानता। गुरू नानक पातशाह ने अपने सिखों को इस प्रकार का त्यागी नहीं बनाया कि घर बार छोड़ दें। आपने परवान गृहस्थ उदास का मार्ग चलाया है। गृहस्थ में रहो, पर आसक्ति किसी पर मत रखो। यदि डेरेदार डेरे में आसक्ति रखता है, तो उससे मन्द भागी और कोई नहीं हो सकता क्योंकि आसक्ति में तो पड़ गया। इसलिये उससे अच्छा तो गृहस्थी ही है। अत: परवान गृहस्थ उदास मार्ग है। गृहस्थ में रहते हुए व्यवहार वैराग सा रखना है। हर समय बिस्तर बान्ध कर रखना, जिस समय बुलावा आ गया, उसी समय चल पड़ना। वैरागी अवस्था में रहना है, किसी के साथ लम्बे झगड़े नहीं करने -

जिनी चलण जाणिआ से किउ करहि विथार॥

पृष्ठ - 787

संसार से चले जाना है। कोई भी लड़ाई, झगड़ा, फसाद, झंझट नहीं खड़ा करना। वरतन वैराग में रहना है कि यहाँ की किसी वस्तु ने मेरे साथ नहीं जाना। मेरे साथ तो केवल प्यारे का प्यार ही जायेगा।

दूसरी होती है मुख्य भक्ति। भक्ति में रहना। भक्ति नौ प्रकार की हुआ करती है। कीर्तन भक्ति, सिमरण भक्ति, श्रवण भक्ति, नमस्कार भक्ति, आचरण भक्ति, पूजा भक्ति, मित्र भक्ति, पत्नी या पति वाली भक्ति और दास्य भक्ति। इन सभी भक्तियों को प्रेम रूपी फल लगता है। उसे प्रेमा भक्ति कहते हैं। प्रेमा भक्ति के पश्चात परा भक्ति होती है। इसके अन्दर यह भाव रहता है कि हे सतगुरू सभी कुछ तेरा ही है, मेरा कुछ भी नहीं है। बाल-बच्चे, जमीन जायदाद, यहाँ तक की शरीर भी तेरा है। इसके बाद अपरा भक्ति हुआ करती है। अपना आपा खत्म कर देना। जिधर भी देखना उधर गुरू ही दिखाई देना और कोई नज़र न आना। यह मुख्य भक्ति है।

तीसरा होता है, निश्चय में ज्ञान रहना। घर में रहना पर घर में आसक्ति न होना। जैसा भी कार्य मिल जाये बस अपना फर्ज़ पूरा करना है। नाम जपना है, धर्म की कमाई करनी है। ऐसी किरत 'व्यवसाय' करना है जिसमें नाम बढ़े। ऐसी बेइमानी, ठगी, छल, फरेब, धोखेबाजी की कोई किरत न करना। फिर जो कुछ मिल जाये, उसे बांट कर खाना और प्रसन्न रहना। गुरू महाराज जी ने स्वंय खेती करके हमें यह उपदेश दिया है कि खेतीबाड़ी करनी चाहिये। खेती कर लेना, अनाज पैदा हो जाना, फिर सारा ही लंगर में लगा देना। लंगर ही चलता था। महाराज जी किसी से कोई भेंट नहीं लिया करते थे। गुरू नानक पातशाह जी कहते थे, ''माया हमारे से 12 कोस दूर है। भाई लहणा तेरे से 6 कोस दूर रहेगी। तीसरे तख्त पातशाह के समय एक मील दूर रहेगी और चौथे पातशाह के समय दरवाज़ा तोड़कर अन्दर घुस आयेगी। फिर बहुत कुछ होगा। स्वर्ण मन्दिर भी बनेगें, फौजें भी हो जायेंगी, सभी कुछ होगा।''

अत: खेती करना और जो कुछ उत्पन्न होना सारा लंगर में लगा देना। अपने लिये या बच्चों के लिये नहीं रखते थे। आप हमें असली किरत दिखा रहे थे। महाराज जी बर्हिमुख त्याग में विश्वास नहीं रखते अर्थात बाहर से दिखावे के लिये चीज़ छोड़ देना पर अन्दर से दिल उसे पाने की इच्छा करता रहे। आप कहते हैं कि दिल से, अन्दर से चीज़ को छोड़ो।

इस तरह से गृहस्थियों को बताते थे, ऐसे साधन करो जिनमें रस हो। रस से हीन कोई साधन मत करो। अमृत बेला में जागो, लिव में बैठो। समय पर सभी कार्य भी करो और सभी कार्य गुरू के समझ कर करो और लंगर का प्रबन्ध भी करो। इस तरह से गुरू महाराज जी ने स्वंय जीवन कैसे जीया जाता है, वह जीवन व्यवहारिक रूप में आप जी ने कर दिखाया और हमें भी वैसा ही जीवन जीने को कहा।

अत: गुरू अंगद देव जी महाराज, वहाँ पर रह न सके। कुछ दिन तो आज्ञा का पालन किया। इसके बाद बीबी अमरो का रिश्ता भेज दिया। बाकी उन्हें यह भी कह दिया कि आप जानें आपका काम जाने, मैं इस बात में कोई दखल नहीं दूंगा। महाराज जी के पास चले गये। जाकर नमस्कार की। इतने वैराग में आ गये कि आँसुओं से चरण ही धो दिये। महाराज जी पीठ पर हाथ फेरते हुए पूछते हैं, ''हे पुरखा! बहुत जल्दी आ गया।'' कहने लगे, ''पातशाह! मैं आपके बगैर नहीं रह सकता। मैं आपके बिना ज़िन्दा नहीं रह सकता। मुझे विछोड़ा मत दो।'' इस तरह प्रार्थना करके फिर सेवा में लीन हो गये।

एक बार काफी दूर दराज़ से, अफगानिस्तान, पेशावर, ईरान, लंका आदि से हज़ारों की संख्या में संगत आ गई और इधर इतनी तेज़ बरसात शुरू हो गई कि छतों में से पानी टपकने लग गया। लंगर वाली छत भी टपकने लग गई। धर्मशाला की छत में से भी पानी टपकने लगा। सारा ईंधन गीला हो गया, लंगर बनाने में भी बड़ी कठिनाई आ रही है। उस समय महाराज जी ने देखा कि संगत तो दो तीन दिनों से भूखी बैठी है। आपने श्री चन्द को बुलाया।

वह बोला, ''कहिये पिता जी?''

महाराज जी ने कहा, ''बेटा, संगत भूखी है।''

श्री चन्द जवाब देता है, ''फिर क्या किया जाये? ईंधन तो गीला है, अतः जल नहीं रहा। हम भी भूखे बैठे हैं, कुछ थोड़ा बहुत जो घर में पड़ा है, वही खा पी लेते हैं और इतना नहीं है, जिसे संगत में बांट सकें तथा संगत का पेट भर जाये। थोड़ा सा मामूली सा पड़ा है।''

महाराज जी कहते हैं, ''कोई और प्रबन्ध करो।''

श्री चन्द कहता है, ''क्या प्रबन्ध करें? बरसात की तो झड़ी लगी हुई है।''

महाराज जी ने कहा, ''इस वृक्ष पर चढ़ जाओ। इसे ज़ोर से हिलाओ और परमेश्वर अपने आप रिज़क भेज देगा। मिठाईयां आ जायेंगी तथा अन्य पदार्थ भी आ जायेंगे। जाओ संगत को खिला आओ।''

देखने लग गया।

महाराज जी ने कहा, ''जाता क्यों नहीं?''

कहता है, ''पिता जी! मुझे कुछ सन्देह हो रहा है क्योंकि आपकी उम्र 70 के आस-पास हो चुकी है, लगता है, आपके दिमाग में कुछ फर्क पड़ गया है।''

महाराज जी ने कहा, ''पर संगत का मामला है, इसलिये जाओ तुम।'' श्री चन्द बोला, ''पिता जी! मैं जाऊं? मैंने अपनी बेइज्जती करवानी है? कभी वृक्षों से भी मिठाईयां गिरती हैं?''

इसके बाद महाराज जी ने लखमी दास से कहा, ''बेटा, लखमीदास, तुम चले जाओ। तुमने सारी बात सुन ही ली है।''

लखमी दास कहता है, ''पिता जी! मैं नहीं जाता। बहुत बेइज्जती हो जायेगी। लोग भी इस पर हंसेंगे। आप ये कैसी बातें कर रहे हो? अगर पेड़ पर फल लगा हो और उसे झटका दिया जाये तो भी फल नीचे नहीं गिरता। बड़ी मुश्किल से कहीं एक-दो बेर गिरते हैं, थोड़े बहुत गिरते हैं और आप कहते हो कि लड्डू जलेबियां, बर्फियां, पेड़े इत्यादि झाड़ लो तथा और मिठाईयां झाड़ लो। वे वृक्ष पर लगी हुई हैं? आपने देखी हैं?''

कहना मानने की बजाए, जवाब दिये जा रहे हैं क्योंकि वे गुरू महाराज जी की महिमा नहीं जानते कि गुरू साहिब क्या हैं? साध संगत जी! पुत्र कोई भी नहीं जाना करता। न ही रिश्तेदार जानते हैं। पुत्र तो उन्हें केवल पिता ही जानते हैं। उन्हें यह मालूम ही नहीं होता कि कितने लोग उनका लाभ उठा रहे होते हैं। सो महिमा का पता नहीं है। यह बात प्रतीति, भरोसे विश्वास की हुआ करती है। जब तक प्रतीति न हो तब तक बात नहीं बना करती ऐसे पढ़ लो -

धारना - गुर की प्रतीति जी,
जिस दे मन विच है भाई - 2, 2
जिस दे मन विच है भाई - 2, 2
गुर की प्रतीति जी, ...-2

जा कै मनि गुर की परतीति।
तिसु जन आवै हरि प्रभु चीति॥ *पृष्ठ - 283*

सो प्रतीति विहीन, गुरू नानक पातशाह की महिमा को नहीं जानते। उस समय भाई लहणा जी भी पास बैठे थे।

महाराज जी कहते हैं, ''भाई लहणा! संगत कई दिनों से भूखी है। प्रभु सभी का राज़क है। सभी को देता है -

जिनि जीउ दीआ सु रिजकु अंबरावै।
सभ घट भीतरि हाटु चलावै॥ *पृष्ठ - 794*

जाओ, तुम जाकर संगत को तृप्त करो।''

उस समय हुक्म मान कर उठे और जाकर वृक्षों को हलूणा (झटके लगाना) दिया। सारी संगत जो हज़ारों की संख्या में थी, जितनी-जितनी जिसको ज़रूरत थी, पदार्थ उठा-उठा कर लिये जा रही हैं और सभी, कुछ ही देर में तृप्त हो गये।

गुरू नानक साहिब जिस समय रीठा साहिब गये थे, तो वहाँ पर संगत ने रीठे मांगे, तो रीठे खिला दिये। कड़वे रीठे भी मीठे बन गये। एक बार मरदाना कहता है, ''महाराज! अब मेरे से नहीं चला जाता। पहले कुछ खाने के लिये दो।'' महाराज जी कहते हैं, ''ये खा ले आक की ककड़ियां। पल्ले मत बान्धना।'' उसने खा लीं और सभी की सभी बहुत मीठी निकलीं। महाराज जी कहते हैं, ''भाई! रिज़क तो परमेश्वर ने देना ही है पर मनुष्य को विश्वास नहीं है। वह परमेश्वर पर विश्वास ही नहीं रखता। चौरासी लाख यौनियों में केवल एक मनुष्य ही है, जिसे परमेश्वर पर विश्वास नहीं है बाकी तो सारी सृष्टि को विश्वास है। आज जो लंगर खाकर गये हैं, कितने होंगे? मनुष्यों की अपेक्षा तो पन्छी करोड़ों गुणा अधिक हैं, बेअन्त हैं, पशु भी बेअन्त हैं। उनके कहीं हल चल रहे हैं या उनकी दुकानें बनी हुई हैं?''

बाबा फरीद जी जंगल में बैठे हैं। क्या देखते हैं? पन्छी आये और आकर चोगा चुगना शुरू कर दिया। हैरान हो गये कि यहाँ चोगा कैसे आ गया? जब पेट भर गया तो पंख फड़फड़ाने लगे और उठ कर वृक्षों पर बैठ गये। कहते हैं, ''अरे मनुष्य! तुझे धिक्कार है। तुझे विश्वास ही नहीं आता कि कल मिलेगा या नहीं। ये पन्छी ही तेरे से अच्छे हैं, जिन्हें परमेश्वर पर पूरा-पूरा भरोसा है। इस तरह फरमाते हैं-''

धारना - कंकर चुगदे थलां दे विच वसदे,
कंकर चुगदे - 2, 2
रब्ब दी ना आस छडदे पंछी-पंछी - 2, 2
कंकर चुगदे थलां दे विच वसदे .....-2

फरीदा हउ बलिहारी तिन्ह पंखीआ जंगलि जिन्हां वासु।
ककरु चुगनि थलि वसनि रब न छोडनि पासु॥
पृष्ठ - 1383

सो मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है, जिसे परमेश्वर पर भरोसा नहीं है। हाथ पैर मारता है, भागा फिरता है। इस तरह महाराज जी का हुक्म माना क्योंकि –

आगिआ सम नही साहिब सेवा॥

सबसे बड़ी सेवा यदि कोई गुरू की होती है तो वह आज्ञा का पालन करना होता है। बाबा श्री चन्द तथा बाबा लखमी दास ने आज्ञा न मानीं। यहीं से ही अन्तर पड़ना शुरू हो गया। अब समय इज़ाज़त नहीं देता। अब यहीं पर समाप्त करते हैं और फिर आगे महाराज जी ने चाहा तो इससे आगे विचार की जायेगी। अब सभी प्रेमी जो अभी तक नहीं बोले, वे भी अपनी रसना पवित्र कर लो।

– आनन्द साहिब –
– गुर सतोतर –
– अरदास –

11

अविनाशी ज्योति

सन्त वरियाम सिंघ जी
बानी वि. गु. रू. मिशन

शान.....।

सतिनाम श्री वाहिगुरू,
धंन श्री गुरू नानक देव जी महाराज!

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥
पृष्ठ - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥
पृष्ठ - 289

धारना - मेरी नमसकार गुरदेव कउ - 2, 2
गुरदेव कउ जी - 2, 2
सतिनाम जिस मंतर सुणाइआ - 2, 2
मेरी नमसकार,.....-2

नमसकारु गुरदेव को सतिनामु जिस मंत्रु सुणाइआ।
भवजल विचो कढि के मुकति पदारथि माहि समाइआ।
जनम मरण भउ कटिआ संसा रोगु वियोगु मिटाइआ।
संसा इहु संसारु है जनम मरन विचि दुखु सवाइआ॥
भाई गुरदास जी, वार 1/1

जम दंडु सिरौं न उतरै साकति दुरजन जनमु गवाइआ।
चरन गहे गुरदेव दे सति सबदु दे मुकत कराइआ।
भाउ भगति गुरपुरबि करि नामु दानु इसनानु द्रिढ़ाइआ।
जेहा बीउ तेहा फलु पाइआ॥
भाई गुरदास जी, वार 1/1

धारना - हरि के सेवक जो हरि भाए,
तिन की कथा निरारी रे - 2, 2
तिन की कथा निरारी रे - 4, 2
हरि के सेवक जो हरि भाए, ...-2

हरि के सेवक जो हरि भाए तिन्ह की कथा निरारी रे।
आवहि न जाहि न कबहू मरते पारब्रहम संगारी रे॥
पृष्ठ - 855

साध संगत जी! गर्ज़ कर बोलना, सतनाम श्री वाहिगुरू।

चित्त वृत्तियों को एकाग्र करो क्योंकि जब तक चित्त वृत्तियों का प्रवाह न रूके, तब तक सत्संग के जो अमोलक वचन हैं, वे हमारे मनों में नहीं बसा करते। सो सबसे आसान तरीका है कि

नेत्रों से गुरू स्वरूप के दर्शन करो, कानों से श्रवण करो। जब बारी आए तो गर्ज़ कर बोलो। ऐसा करने से वृत्ति एकाग्र हो जाती है, रस पैदा हो जाता है, फिर सत्संग का पूरा-पूरा लाभ प्राप्त हो जाता है। पीछे काफी समय से किसी का जो आदर्श संसार में बताया जा सकता है, वह भाई लहणा जी के जीवन से रूपमान हो रहा है, जिन्हें सिखी के पद चिन्ह बना कर बता दिया कि सिक्ख ने यदि गुरू के अन्दर समाना है तो इस रास्ते पर चला आये। रास्ता बता दिया जिसे 'गाढ़ी राह' अर्थात खुला रास्ता कहते हैं। इसके बारे में आप बहुत देर से व्याख्या सहित श्रवण करते आ रहे हो। पिछली बार बताया था कि यदि मुरीद बनना है तो -

मुरदा होइ मुरीदु न गली होवणा।
साबरु सिदकि सहीदु भरम भउ खोवणा।
गोला मुल खरीदु कारे जोवणा॥
भाई गुरदास जी, वार 3/18

इन तीन बातों की व्याख्या की थी। बहुत कठिन है सन्तोष भी हो और सिदक भी पूरा हो। जब सिदकी सिघों का हाल पढ़ते हैं, तो हैरानी होती है कि इतने-इतने सिदक वाले सिख हुए हैं, हम तो उनके आगे कुछ भी नहीं हैं, पर रास्ता तो खुला है न? जिसके मन में चाव जागता है, शोक पैदा होता है, वह इस सड़क पर चल सकता है जिसे खुला मार्ग 'गाढ़ी राह' कहा है। सच पर शहादत देने वाले दो प्रकार के शहीद हुआ करते हैं। एक ज़िन्दा शहीद होते हैं। दूसरे वे होते हैं जो अपने तक ही शहीदी देते हैं।

ज़िन्दा वे होते हैं, जो सच का जीवन जी कर दिखाते हैं। सारी जिन्दगी में ऊबते नहीं हैं, वे सच का जीवन जीते हैं। दुख भी आते हैं, सुख भी आते हैं, हानि और लाभ भी जीवन में आते हैं। निन्दा भी होती है तो प्रशंसा भी होती है। विरोधी भी आते हैं, जीवन में मित्र भी मिलते हैं। इन सभी के साथ टक्कर लेकर, जो इस उथल-पुथल के सागर में से पार हो जाये, कहते हैं, वह सिख हुआ करता है। इसलिये सिक्खी का पालन करना सबसे कठिन है और सबसे उच्च कोटि की बात है क्योंकि सिक्ख गुरू घर में एक दम गुरू रूप ही बन जाता है। गुरू अंगद साहिब जी सिखी के आदर्श के शिखर पर पहुँच गये और गुरू नानक पातशाह के साथ ओत-प्रोत हो गये और अब पता नहीं चल पाता कि गुरू नानक गुरू अंगद हैं या गुरू अंगद गुरू नानक हैं। कोई भी आज तक पता नहीं लगा सका। सभी का विचार है कि यह गुरू अंगद साहिब ही हैं, वे गुरू नानक साहिब आप ही थे। आश्चर्यजनक बात है, इसे अकथ कथा कहते हैं। जो बात कही न जा सके, समझाई न जा सके, उसे समझाने के लिये कुछ यत्न करने पड़ते हैं। इस तरह से पढ़ लो -

धारना - गुर गोर समावे जी - 2, 2
मुरदा होइ मुरीद जो - 2, 2
गुर मोर समावे जी, ...-2

मुरदा होइ मुरीदु सो गुर गोरि समावै॥
भाई गुरदास जी, वार 9/22
सबद सुरति लिव लीणु होइ ओहु आपु गवावै।

तन धरती करि धरमसाल मनु दभु विछावै।
लतां हेठि लताड़ीऐ गुर सबदु कमावै।
भाइ भगति नीवाणु होइ गुरमति ठहरावै।
वरसै निझर धार होइ संगति चलि आवै॥

भाई गुरदास जी, वार 9/22

सिक्ख का नकशा खींचते हुए आप बताते हैं कि सिक्ख तो बेअन्त होंगे, वोटें मांगने के लिये, अपनी अलग पहचान दिखाने के लिये, बेअन्त सिक्ख हैं। करोड़ों की संख्या में हैं पर महाराज जी कहते हैं, असल में सिक्ख तो कोई एक आध है – बहुत नहीं हैं –

कोटन मै नानक कोऊ नाराइन जिह चीत॥

पृष्ठ - 1427

सो जब तक वह मुरदा नहीं बनता, तब तक उसे सिखी का क, ख भी नहीं आता। पहली शर्त है गुरू के साथ इकमिक होने की कि –

मुरदा होइ मुरीदु सो .....॥

भाई गुरदास जी, वार 9/22

अब सवाल यह है कि मुर्दा कैसे बना जाये? मुर्दा बनने का कोई तरीका है? यदि तो हम कोई दवाई खाकर अपना अन्त कर देते हैं, इसका तो कोई लाभ नहीं? फिर तो गुरू की सेवा ही नहीं हो सकेगी क्योंकि चेतन कला शरीर में से निकल जाती है। इस शरीर के रहते हुए मुर्दा कैसे हो सकता है? दो बातें उसे जीवित रखती हैं, ध्यान से श्रवण करो –

एक तो हंगता है जिसे 'मैं' कहते हैं।

एक इसके अन्दर ममता है 'मेरी' है।

'मैं' और 'मेरी' ने इसे फंसाया हुआ है। है तो यह प्रभु ज्योति। जितने भी तुम यहाँ बैठे हो, सभी के अन्दर एक ही ज्योति है, एक ही शबद है।

हसति कीट के बीच समाना।

हाथी और चींटी में एक ही शबद बोलता है, किसी में भी कम या अधिक नहीं है। लेकिन हंगता और ममता ने कम और अधिक कर दिया। कोई गरीब है, कोई अमीर है। कोई धर्मात्मा है, कोई पापी है। कोई पूज्य है, कोई घृणा योग्य है। है एक ही ज्योति। ये हंगता और ममता ने खराब कर दिये हैं। हंगता कहते हैं 'मैं' को। जितनी बड़ी मैं होती है, उतने ही उसके अन्दर विकार भरे होते हैं। 'मैं' को दुख होता है। 'मैं' का अपमान होता है। कोई बुरा बोल दे तो 'मैं' गुस्से में आ जाती हूँ। 'मैं' को कमी होती है, 'मैं' मरती है, 'मैं' ही पैदा होती है। महाराज जी कहते हैं, जब तक तेरे अन्दर मैं है –

हउमै एहा जाति है हउमै करम कमाहि॥ पृष्ठ - 466

यह जो तुम अपना अस्तित्व समझता है कि 'मैं' हूँ और यह 'मैं' ही कर्म करती है फिर –

हउमै एई बंधना फिरि फिरि जोनी पाहि॥ पृष्ठ - 466

फिर इसी हउमैं के बन्धन पड़ जाते हैं फिर पैदा होता है, मर जाता है। यह जो चीज़ है यह फालतू है। वाहिगुरू ने यह नहीं दी थी। यह तो संसार की रचना शब्द के साथ हुई है –

ओअंकारि ब्रहमा उतपति।
ओअंकारु कीआ जिनि चिति॥ *पृष्ठ - 929*

जब इस सृष्टि का अस्तित्व कायम हुआ – शबद के द्वारा, उस समय इसके अन्दर awareness (चेतनता) आ गई। जिसे महाराज जी कहते हैं 'चित्त' हुआ। चित्त आते ही परम ज्योति को तो पहचान नहीं पाया, अपने आप का इसे पता लग गया कि 'मैं' कुछ हूँ। वह मैं शरीर के साथ मिलकर इसे खराब करती चली आ रही है और जब तक मैं का अभाव नहीं होता, तब तक यह जन्म मरण से नहीं छूट सकता। मैं के ही सारे झगड़े हैं जो इस संसार में हो रहे हैं। जब तक 'मैं' हूँ, झगड़ा कायम है। जब तक हउमै है, तब तक जन्म मरण पूरी तरह से गले पड़ा हुआ है। जब मैं मर गई, तब जन्म मरण भी खत्म हो जायेगा क्योंकि परमेश्वर में और हमारे अन्दर केवल 'मैं' का पर्दा है –

हउ हउ भीति भइओ है बीचो सुनत देसि निकटाइओ।
भांभीरी के पात परदो बिनु पेखे दूराइओ॥

पृष्ठ - 624

इसने हमें परमेश्वर से अलग किया हुआ है। दूसरा हमारे गले में ममता की जन्जीर पड़ी हुई है। ममता के साथ परिवार है, जायदाद है। ममता के कारण ही अपने आप को शरीर समझता है और शरीर के साथ जायदाद चिपटी हुई है। इन दोनों चीज़ों को मारना पड़ता है। जब तक ये दो बातें खत्म नहीं होतीं, तब तक यह मुरीद नहीं होता –

मुरदा होइ मुरीद सो गुर गोरि समावै॥

भाई गुरदास जी, वार 9/22

यहाँ पर सो कह दिया। बाकी मुरीद नहीं हैं, बाकी तो उम्मीदवार हैं, अभी मुरीद नहीं बन सके, अब गुरू के साथ इतना घुल मिल जाये। आपने कभी दो बाजे बजते हुए सुने होंगे जैसे हारमोनियम। उन दोनों की सुर एक होती है। दो बीनों की सुर भी एक ही होती है। दो बांसुरियां बजती हों, दोनों की सुर भी एक ही होगी। दो तबले बजते हों, यदि दोनों की सुर एक हो, तब तक तो ताल ठीक है, यदि सुरें अलग-अलग हों, फिर ताल ठीक नहीं बजती। यदि सारी संगत सुर में बोलती हो और एक आदमी बेसुरा बोलता हो तो उसकी आवाज़ अलग सुनाई देती है। बाकी सभी समाये हुए हैं। इसी तरह से अपनी सारी 'मैं' तथा 'मेरी' को मार कर गुरू के अन्दर समा जाये, यहाँ कब्र शब्द प्रयोग किया गया है अर्थात गुरू की कब्र में, गुरू के अन्दर समा जायेगा फिर वह क्या करे? कहते हैं –

सबद सुरति लिव लीणु होइ ओहु आपु गवावै॥

भाई गुरदास जी, वार 9/22

हमारा शबद पर सुरति का मार्ग है –

सुरति सबदि भवसागरु तरीऐ नानक नामु वखाणे॥

पृष्ठ - 938

शबद के बारे में हमें पता नहीं चलता कि शबद क्या है? हम कैसे समायें? जब तक गुरू की शरण में नहीं जाते तब तक शबद प्राप्त नहीं होता। गुरू पूरा हो तो शबद चल पड़ता है। यदि गुरू पूरा न हो तो शबद की सम्भाल नहीं होती। गुरू घर में पांच प्यारे शबद की दात देते हैं। इसे गुरू शबद कहते हैं, गुरू मन्त्र भी कहते हैं। जो गुरू देता है, वह गुरू शबद है। गुरू ग्रन्थ साहिब में गुरू मन्त्र और गुरू शबद के बारे में बार-बार आता है, उस मन्त्र के साथ हमने आन्तरिक शबद में लीन होना है। अन्दर से हमने सुरत को पकड़ना है। यदि शबद जीभ पर चलता है और सुरत नहीं पकड़ी गई, तब तक लवलीनता की अवस्था नहीं आती। धीरे-धीरे लिव चढ़ते-चढ़ते, जहाँ आज्ञा चक्र है, दोनों आँखों तक, नाक की जड़ में जब गुरसिख की वृत्ति पहुँच जाती है तो यहाँ आकर वह शबद धुन बन जाता है। वह धुन ही असली चीज़ है -

प्रथम ओअंकार तिन कहा।
सो धुन पूर जगत मो रहा॥

गुरू दसवें पातशाह लिखते हैं कि पहले निरंकार से ऐकंकार होकर, ऐकंकार जी ने शबद का उच्चारण किया, जिसे औंकार कहते हैं। उसने सबसे पहले औंकार की आवाज़ दी। परमेश्वर की आवाज़ कितनी ज़ोरदार होगी -

कीता पसाउ एको कवाउ॥ *पृष्ठ - 3*

उसे कवाओ भी कहते हैं -

एक कवावै ते सभि होआ॥ *पृष्ठ - 1003*

सारे संसार की रचना एक शबद से हुई है -

उतपति परलउ सबदे होवै।
सबदे ही फिरि ओपति होवै॥ *पृष्ठ - 7*

दिन रात, सभी शबद से उत्पन्न हो गये। यह बात हमारे आम लोगों के मनों में समझ में आने वाली नहीं है पर सांईस बहुत निकट पहुँच गई है। सांईस कहती है कि सारी रचना Big Bang एक बहुत बड़े धमाके से हुई है। Big Bang कहते हैं बहुत बड़ा धमाका हुआ है कोई, किसी ओर से आवाज़ आई है। आवाज़ कहाँ से आई, इस बात का सांईस को पता नहीं चल पा रहा क्योंकि उसके पास प्राकृतिक हथियार हैं, जो प्रकृति की अधिकतम सीमा तक ले जा सकते हैं। जहाँ प्रकृति नहीं है, केवल चेतन है, उसके बारे में सांईस नहीं बता सकती। लेकिन इसे पता चल गया है कि एक शबद हुआ और वह शबद फैलता चला गया। जहाँ-जहाँ फैलता गया, वहाँ-वहाँ रचना होती गई और उस शबद ने ही सारे संसार को धारण किया हुआ है -

नाम के धारे सगले जंत।
नाम के धारे खंड ब्रहमंड॥ *पृष्ठ - 284*

सो महाराज जी कहते हैं -

प्रथम ओअंकार तिन कहा।
सो धुन पूर जगत मो रहा॥

सबसे पहले औंकार की आवाज़ हुई।

वही धुन सारे संसार में पूर्ण रूप से अब भी कायम है क्योंकि शबद का ऐसा है कि जब आकाश में प्रवेश कर जाता है, फिर यह मरता नहीं है, यह चलता ही रहता है। इसमें आवाज़ मद्धम पड़ जाती है पर दिव्य शबद जो है, उसकी आवाज़ मद्धम नहीं होती, वह सारी प्रकृति में समाया हुआ है। हमारे अन्दर भी समाया हुआ है। उस शबद की हमने अन्दर से खोज करनी है। उसे एक शबद कहते हैं –

एकु सबदु मेरै प्रानि बसतु है बाहुड़ि जनमि न आवा॥

पृष्ठ - 795

सिद्धों ने पूछा, ''हे गुरू नानक! यह तो बता जो शबद उत्पन्न हुआ?''

सो शबद का कहा बास कथीअले॥

पहले वह कहाँ रहता था, ऐकंकार के अन्दर? महाराज जी कहते हैं, ''वह शून्य में रहता था। अफूर अवस्था में उसका ठिकाना था।'' निरंकार अपने आप ही सगुण है और स्वंयमेव ही निर्गुण है –

सरगुन निरगुन निरंकार सुंन समाधी आपि।
आपन कीआ नानका आपे ही फिरि जापि॥

पृष्ठ - 290

उस शबद के अन्दर हमने लिव लगानी है। पहले तो यह गुरू शबद है। गुरू शबद में जब तुम एकाग्र चित्त होंगे, परिश्रम करना पड़ता है। साध संगत जी! ऐसे चित्त नहीं लग जाता। यह ख्याल बिल्कुल छोड़ दो। यह तो गुरू कृपा ही किसी पर बहुत अधिक हो जाये, पूर्व जन्म की साधना कोई बहुत अधिक हो, तो फिर शबद मिल जाता है, वरना जल्दी नहीं मिलता। अन्यथा हमारे अन्दर हज़ारों आवाज़ें हैं, उनमें से उस शबद को ढूंढने के लिये बहुत ही एकाग्र चित्त होने की जरूरत है। चित्त एकाग्र हो, कोई फुरना न हो, सूक्ष्म से सूक्ष्म होता चला जाये, शरीर की सुध-बुध भूल जाये, श्वांस ही भूल जायें, फिर कहीं जाकर उस शबद का ज्ञान आता है। उस शबद तक जाने के लिये पांच सवारियां हैं, रास्ते हैं और बदलते जाते हैं। उन्हें पंच शबद कहते हैं। उनके शिखर पर वह शबद है। महाराज जी कहते हैं, उसके साथ लिव लगा –

शबद सुरति लिव लीणु होइ .....॥

भाई गुरदास जी, वार 9/22

जब वह शबद मिल जायेगा। पहले नीचे वाले भी ढूंढ लें। यदि नाम की ही धुन बन जाये तो भी लिवलीन हो जाता है, फुरना मर जाता है पर इस नाम ने, गुरू के शबद ने हमें उसी शबद में पहुँचा देना है, जिसे आदि शबद कहते हैं –

औअं आदि कथनी अनादि॥

जिसे गुरू नानक पातशाह ने ऐकंकार के बाद लिखा है। एक औंकार दोनों इकट्ठे कर दिये कि कोई अन्तर मत समझना कि ऐकंकार अलग है और शबद अलग है। दोनों एक ही हैं। उसी से ही सारा प्रसार हुआ है –

ओअंकार सैल जुग भए।
ओअंकार वेद निरभए। *पृष्ठ - 929*

यह जो ज्ञान है, यह सारा उसी शबद में से पैदा हुआ है। उसी में से ही ये शैल, गिरि, पहाड़, पर्वत आदि सभी उसी में से ही निकले हैं। उस शबद में जब हमारी सुरत लिवलीन होती है, यह उस गुरसिख के बारे में बात कर रहे हैं जो सिखी की पदवी पर पहुँचा हुआ है –

सबद सुरति लिव लीणु होइ ओहु आपु गवावै॥

भाई गुरदास जी, वार 9/22

फिर क्या होगा? उसके अन्दर से 'मैं' तो मर ही जायेगी क्योंकि –

हउमै नावै नालि विरोधु है दुइ न वसहि इक ठाइ॥

पृष्ठ - 560

या तो हउमै रहेगी या नाम रहेगा। जब तक मैं है तब तक 'नाम' नहीं है। जब नाम आ जायेगा फिर 'मैं' खत्म हो जाती है। फिर कहते हैं –

तन धरती करि धरमसाल .....॥

भाई गुरदास जी, वार 9/22

तन की धरती बना ले इसे धर्मशाला बना ले, आपा खत्म कर दे, धर्मशाल में तो धर्म बोया जाता है सो इस शरीर में किसानी कर –

मनु हाली किरसाणी करणी सरमु पाणी तनु खेतु॥

पृष्ठ - 595

यहाँ पर तन को खेत कहा है। भाई गुरदास जी ने तन को धर्मशाला कहा है। इस तन रूपी धर्मशाला में जो जैसा बोयेगा –

सतिगुर पुरखु अगंमु है, निरवैरु निराला।
जाणहु धरती धरम की, सची धरमसाला॥

भाई गुरदास जी, वार 34/1

यह धर्मशाला है। धर्म की धरती है। इसके अन्दर धर्म का बीज डाला जाता है। इसके अन्दर नाम वाला बीज डालते हैं।

तन धरती करि धरमसाल मनु दभु विछावै॥

भाई गुरदास जी, वार 9/22

और नीचे बैठने के लिये मन को बिछा कर क्योंकि मन यदि नीचे न आया तो उसने मरना नहीं है। इस पर ठण्डी और गर्म चीज़ का असर होगा। कभी गुस्सा आ जायेगा, कभी शान्त हो जायेगा। कभी खुश तो कभी गमी में चला जाता है। कभी उदास हो जाता है क्योंकि इसकी 'दभ' नहीं बिछाई, इसे नीचा नहीं किया।

लता हेठि लताड़ीऐ गुर सबदु कमावै॥

भाई गुरदास जी, वार 9/22

कहते हैं टागों के नीचे से कुचला जाता है। सिख, मान अपमान से रहित हो जाता है –

कोई भला कहउ भावै बुरा कहउ
हम तनु दीओ है ढारि॥ *पृष्ठ - 528*

कहते जाओ, यह तुम्हारे फर्ज़ हैं। भला करो या बुरा। मैं तो यह कहता हूँ कि –

कबीर सभ ते हम बुरे हम तजि भलो सभु कोइ।
जिनि ऐसा करि बूझिआ मीतु हमारा सोइ॥

पृष्ठ – 1364

इसे कुचला जाता है। कोई कड़वा वचन बोलता है, कोई उपमा करता है, वह दोनों बातों की परवाह नहीं करता –

लतां हेठि लताड़ीऐ गुर सबदु कमावै॥

भाई गुरदास जी, वार 9/22

वह शबद की साधना करता है। उसे और कोई मतलब नहीं होता – न खाने का, न पीने का, उस्तति का, न जानकारी का। वह तो गुरू के शबद की साधना करता है। साध संगत जी! गुरू के शबद की साधना करने के लिये एक जीवन तो बहुत थोड़ी चीज़ है, सैकड़ों जीवन यदि बार-बार मिलें, तब जाकर गुरू शबद की साधना सम्पन्न होती है। गुरू शबद की साधना करना सबसे कठिन कार्य है –

भाइ भगति नीवाणु
होइ .....॥ *भाई गुरदास जी,*
वार 9/22

फिर विनम्र हो जाये। उसके हृदय में प्यार पैदा हो जाये। उसके शरीर द्वारा भक्ति शुरू हो जाये। नौ प्रकार की भक्ति हुआ करती है। श्रवण भक्ति, कीर्तन भक्ति, सिमरण भक्ति, नमस्कार भक्ति, ध्यान भक्ति, पूजा भक्ति आदि। इन सभी भक्तियों को फल प्रेमा भक्ति का लगता है। जब प्रेमा भक्ति आ जाये 'भाई भगति' जब पैदा हो जाये, उसके बाद फिर 'परा भक्ति' आ जाती है। इसमें अपना कुछ नहीं रहता, सभी कुछ गुरू को अर्पण कर देता है। जब इससे भी ऊपर चला जाता है, तो स्वंय पूरी तरह से गायब हो जाता है और चारों ओर इसे परमेश्वर निरंकार ही नज़र आता है और दूसरा कुछ भी दिखाई देने से हट जाता है। सो –

भाइ भगति नीवाणु होइ गुरमति ठहरावै॥

भाई गुरदास जी, वार 9/22

गुरू ग्रन्थ साहिब में गुरू मत है। हमारे अन्दर अन्य पुस्तकों के अन्दर मनमति है। मनमति को तो अन्दर रूकने न दे। बहुत से प्रेमी मनमति द्वारा मारे गये। बेअन्त पुस्तकें लिखी हुई हैं और लिखे जा रहे हैं, दिन रात छापते जा रहे हैं। 'गुरमत' के साथ कितना मेल खाती हैं, कितनी मनमति के साथ मेल खाती है? इतना किसी के पास समय नहीं जो एक-एक किताब के बारे में बता सके। पढ़ लो पुस्तकें, पढ़ने में कोई नुकसान नहीं, पर मत अन्दर न ठहरने दे। यदि ठहरे तो केवल गुरू ग्रन्थ साहिब की मति ठहरे। इस तरह –

भाइ भगति नीवाणु होइ गुरमति ठहिरावै।
वरसै निझर धार होइ संगति चलि आवै॥

भाई गुरदास जी, वार 9/22

संगत में चलकर आये और फिर यहाँ पर आकर बरसे जैसे बरसात की झड़ी लग जाती

है। इस तरह प्रेम में आकर हरि यश में बरसे। उसके अन्दर परोपकार, क्षमा, धैर्य, हरियश, विनम्रता, प्रेमा भक्ति आदि गुण पैदा हो जाते हैं। संकल्प-विकल्प रहित हो जाता है। खुदी रहित हो जाता है और गुरू में एक रस, एक लिवतार होकर अभेद हो जाता है। फिर उसे अभेद गुरसिख कहते हैं। गुरू में समा जाता है। गुरू शबद की लिवतार में आपा गवाँ बैठता है। सारे फुरने खत्म हो जाते हैं, उसी का रूप बन बैठता है। संगत में आकर, तन मन से निस्वार्थ सेवा करता है। कुछ बन कर नहीं दिखाता। जो साध संगत में आकर सेवा करे और कुछ बन कर भी दिखाये तो महाराज जी कहते हैं, नहीं प्यारे! तेरी सेवा का मोल नहीं पड़ रहा, तू होश में आ। कुछ बन कर मत दिखाना। शुक्र में रह, और कह हे प्रभु! तूने मेरे जैसे को भी सेवा में लगा लिया, फिर सेवा का मूल्य पड़ता है। यदि कुछ बन कर दिखा दिया, फिर हउमै का परिवार बन जाता है।

हउमै के अन्दर की गई सेवा का कोई महत्व, कोई अर्थ नहीं हुआ करता। उसके अन्दर कुछ भी दुर्वचनों का, क्रोध का भाग न हो, प्रेमा भक्ति के अन्दर विनम्र होकर मन को रोकें। जब गुरू की गोर (कब्र) में समा जाता है फिर उसका सारा व्यवहार गुरू के साथ, जैसे सुर में सुर मिल जाती है, इसी तरह मिल जाता है। फ़रमान करते हैं कि -

दुइ दुइ अखी आखीअनि इकु दरसनु दिसै॥

भाई गुरदास जी, वार 9/16

दो आखें चीज़ों को देखती हैं। चीज़ें दो नहीं दिखाई देतीं। यदि आंख के कोर में अंगुली लगा दो फिर दो दिखाई देगीं, ऐसी हालत में एक चांद की बजाये दो-दो चांद दिखाई देते हैं और यदि आंख पर से अंगुली हटा लो तो फिर एक ही चांद दिखाई देगा। दोनों नेत्रों को एक ही दृश्य दिखाई देता है -

दुइ दुइ कंन वखाणीअनि इक सुरति सलिसै॥

भाई गुरदास जी, वार 9/16

दोनों कानों से एक ही बात सुनती है -

दुइ दुइ नदी किनारिआँ पारावारु न तिसै॥

भाई गुरदास जी, वार 9/16

नदी के दो किनारे हैं, बीच में पानी बह रहा है। नदी के दो टुकड़े नहीं होते, नदी एक ही है, किनारे तो कहने मात्र के लिये है -

इक जोति दुइ मूरती इक सबदु सरिसै॥

भाई गुरदास जी, वार 9/16

एक ज्योति बन जाता है। देखने में दो मूर्तियां लगती हैं कि एक गुरू है, एक सिक्ख है पर कहते हैं, दोनों मूर्तियां एक शबद के समान हैं। एक शबद जैसी है, जिससे जुड़े हुए हैं -

गुर चेला, चेला गुरू समझाए किसै॥

भाई गुरदास जी, वार 9/16

कहते हैं किसी-किसी को समझ आता है। चेला और गुरू एक ही हो जाया करते हैं। इस

प्रकार भाई लहणा जी का जीवन गुरू नानक पातशाह के साथ अभेद अवस्था वाला हो गया। जो सिख होता है, वह कोई विरला-विरला होता है। सारे सिख नहीं हुआ करते। जब सिख बन जाता है तो दिव्य दृष्टि जाग्रत हो जाती है। एक तो हमारी चर्म दृष्टि है। हम चमड़े वाली आखों से देखते हैं। एक और भी हमारे अन्दर दृष्टि है। कान और रसना भी और है, स्पर्श भी और है। जो बन्दगी करते हैं, उन्हें इस बात का ज्ञान है कि कान अन्दर भी हैं। आन्तरिक कान जो हैं, वह शबद नाद सुनता है। जब तक वृत्ति वहाँ तक नहीं पहुँचती, तब तक शबद नाद नहीं सुनता। बाहरी कान केवल बाहर की बातें सुनेगा। जब वृत्ति अन्दर चली जाती है तो बाहर की आवाज़ें सुनने से बन्द हो जाती हैं। जब आन्तरिक नेत्र खुल जाते हैं उन्हें दूसरा दिखाई देने से हट जाता है -

सभ महि एकु वरतदा जिनि आपे रचन रचाई॥

पृष्ठ - 954

एक ही नज़र आता है -

ए नेत्रहु मेरिहो हरि तुम महि जोति धरी
हरि बिनु अवरु न देखहु कोई।
हरि बिनु अवरु न देखहु कोई नदरी हरि निहालिआ।
एहु विसु संसारु तुम देखदे
एहु हरि का रूपु है हरि रूपु नदरी आइआ॥

पृष्ठ - 922

सो दिव्य नेत्र खुलते ही परमेश्वर के दर्शन होते हैं। दिव्य कर्ण खुलते ही, उसी समय आान्तरिक नाद, शबद धुन श्रवण होती है, आन्तरिक रसना खुलते ही एक अकह रस मिलता है। परमेश्वर के चार रूप हैं, जिसे प्रत्यक्ष रूप में पता चल जाता है कि वह परमेश्वर के निकट पहुँच गया है। जैसे बर्फ के पहाड़ के पास चले जायें, बेशक 100 मील दूर हों, बर्फ के पहाड़ से ठण्ड वहाँ तक महसूस होने लग जाती है। इसी तरह जब गुरसिख परमेश्वर के निकट पहुँचता है, उसे भी ऐसा ही अनुभव होता है। साध संगत जी! गुरू और परमेश्वर में कोई भेद नहीं है -

गुरु परमेसरु एको जाणु॥ *पृष्ठ - 864*

गुरू कह लो, परमेश्वर कह लो, बात एक ही हुआ करती है। कहने मात्र का अन्तर हुआ करता है। इसी तरह जब जिज्ञासु परमेश्वर के निकट जाता है, तो सबसे पहले रस आता है। दिव्य रसना जाग पड़ती है और उसे अमृत रस अन्दर से आना शुरू हो जाता है, वह बढ़ता-बढ़ता इतना अकह हो जाता है कि उसी में लीन हो जाता है, रस हावी हो जाता है, लगातार रस आता है।

दूसरा यह होता है कि उसे दिव्य शबद सुनने लग जाते हैं। उसकी वृत्ति आनन्दमयी बन जाती है। महीनों रस में बन्धा रहता है। जो दिव्य शबद सुनते हैं, उनकी वृत्ति में मस्त रहता है।

तीसरा दिव्य दृश्य दिखाई देने लग जाया करते हैं। उन नेत्रों से वे चीज़ें दिखाई नहीं देतीं, जो दिव्य नेत्रों से दिखाई देती हैं।

इसके पश्चात दिव्य स्पर्श जाग पड़ता है। इतने हिलोरें आती हैं कि सहन नहीं हो सकता। रस अन्दर बढ़ता चला जाया करता है। ये सभी बातें दिव्य दृष्टि खुलने से हुआ करती हैं –

नानक एक जोति दुइ मूरती सबदि मिलावा होइ॥

पृष्ठ - 30

सो जिसके अन्दर दिव्य दृष्टि पैदा हो गई, वह कोई विरला-विरला सिख है। ऐसे पढ़ लो –

धारना - सिख विरला कोई जी,
दिब द्रिसटि गुर धिआन धर - 2, 2
सिख विरला कोई जी, -2

दिब दिसटि गुर धिआनु धरि सिख विरला कोई॥

भाई गुरदास जी, वार 9/7

कहते हैं जिसकी दिव्य दृष्टि खुल जाती है और गुरू का ध्यान जिसके अन्दर परिपक्व हो जाये, ऐसा कोई विरला-विरला सिख होता है। यहाँ पर संशय उठता है कि ध्यान क्या हुआ क्योंकि भाई गुरदास जी लिखते हैं –

गुरमूरति गुरु सबदु है .....॥

भाई गुरदास जी, वार 24/11

सवैये के अन्दर यह लिखते हैं कि गुरू का जो साकार रूप है, उसका भी ध्यान धरना होता है। ध्यान चार प्रकार का हुआ करता है। पहला 'शबद' का ध्यान हुआ करता है। गलती से कुछ नेत्रों का ध्यान धरते हैं। आगे १ओंकार लिख लिया उसी का ध्यान धर लिया या वाहिगुरू लिख लिया, उस पर ध्यान करने लग गये। ऐसा नहीं है। शबद हमेशा Sound (आवाज़) ध्वनि को कहते हैं। शब्द भी दो प्रकार के होते हैं एक आहत शब्द, दूसरे अनाहत शब्द। पहले आहत शब्द वे होते हैं, जैसे मैं बाजे पर अंगुलियां फेरता हूँ और हाथ से पंखा फेरता हूँ, फिर यह आवाज़ निकलती है। दूसरे वे शब्द होते हैं, जो बिना वाद्य के बजते हैं, उन्हें अनाहद शब्द कहते हैं। जो अनाहद शब्द है जैसे गुरू मन्त्र की धुन है उसमें ध्यान धरना। गुरू के स्वरूप में ध्यान धरना। ऐसी साखी आती है कि गुरू सातवें पातशाह महाराज आज दीवान में सुशोभित है, आसा दी वार का कीर्तन हो रहा है। कीर्तन का भोग पड़ गया पर आप अभी तक उठे नहीं। संगत इन्तज़ार में बैठी है कि महाराज उठेंगे तो भोग प्रसाद बाटेंगे। जब तक आप तख्त से नहीं उठते, तब तक संगत भी नहीं उठ सकती। जब तक गुरू ग्रन्थ साहिब महाराज सुशोभित हैं, संगत का उठकर चले जाना, बेअदबी का प्रतीक हुआ करता है। गुरू को पीठ दिखाकर जाता है, खुशी लेकर नहीं जाता। यदि किसी को मज़बूरी हो तो मन के अन्दर ऐसा विचार ज़रूर करे, ''हे पातशाह! मुझे मज़बूरी जाना पड़ रहा है, मैं बहुत गलत काम करने चला हूँ, मुझे क्षमा करो, बख्श देना।'' यदि ऐसे ही छोड़कर चले जाओ तो बेअदबी हुआ करती है।

सो सारी संगत बैठी है - गुरू सांतवे पातशाह के चरणों में, समय बीतता चला गया, दस

बज गये, बारह बज गये लंगर तैयार हो गया। लांगरी सिंघ प्रसादा (भोजन) लेकर आ गया। अरदास करने के लिये खड़े हैं। सभी हैरान हैं कि महाराज जी के शरीर का कोई अंग हलचल नहीं कर रहा, उसी तरह अचल बैठे हैं, समाधि में लीन हैं। चार बज गये तब महाराज जी ने नेत्र खोले और कहा, ''धन्य गुरसिखी! धन्य गुरसिखी!! धन्य गुरसिखी!!!'' सभी के मन में ख्याल आया कि पता करें कि महाराज जी किसके बारे में फ़रमान कर रहे हैं।

उस समय संगत ने बेनती की, ''पातशाह! आप किस गुरसिख को धन्य-धन्य कह रहे हैं।''

महाराज जी कहते हैं, ''प्रेमियो! भाई गौंदा! काबुल में सिखी का प्रचार कर रहा है। आज वह अमृत बेला में स्नान करके दो बजे से हमारे चरणों के ध्यान में लीनता की सीमा से पार चला गया, फुरने रहित हो गया और हमारे चरण पकड़ लिये। यदि हम सिख को चरणों से छुड़ाते हैं तो सिख को दुख होता है, उसकी वृत्ति टूटती है। इसलिये हम चार बजे तक बैठे रहे। अब सिख ने नेत्र खोले हैं, सो हमने उस गुरसिख का सिदक देखकर, धन्न गुरसिखी! धन्य गुरसिखी!! धन्य गुरसिखी!!! कहा है।''

यह ध्यान गुरू के साकार का हुआ करता है। एक बार सभी पहाड़ी राजाओं की बैठक चल रही है कि गुरू गोबिन्द सिंघ जी पर हमला करके या तो उन्हें पकड़ लिया जाये या सीमा से बाहर निकाल दिया जाये। यदि देर कर दी तो वे पुनः ताकत इकट्ठी कर लेंगे। उस समय एक सियाना वज़ीर जिसका नाम देवी दास है, वह भी सभा में बैठा है। वज़ीर का कर्तव्य होता है कि यदि राजा गलत रास्ते पर जा रहा हो तो वह बेनती कर सकता है। बाकी तो उसके वश में कुछ होता नहीं है, प्रार्थना करना उसका कर्तव्य होता है। सच्ची बात उसने कह देनी है। मानना या न मानना राजा का काम होता है। वह बड़ा वज़ीर था। उसने खड़े होकर सारी सभा में कहा, ''मेरी एक प्रार्थना आप सभी ध्यान से सुन लो, मानना या न मानना आपका काम है।'' प्रार्थना में कहता है, ''महाराज! आप पहले यह देखिये कि गद्दी किसकी है? गुरू नानक पातशाह का राज है, उनकी गद्दी है जो शुलाकुल हैं, जिनकी दृष्टि में -''

न को बैरी नही बिगाना
सगल संगि हम कउ बनि आई॥ ***पृष्ठ - 1299***

कोई दूसरा है ही नहीं। वे सभी को ही अपना आपा कहते हैं। सभी को प्यार करते हैं। हर समय अरदास के बाद कहते हैं, ***'नानक नाम चढ़दी कला तेरे भाणे सरबत दा भला'*** वे भले हैं।

इन्होंने करके दिखा दिया है। गुरू छठे पातशाह को जहाँगीर की कैद में, ग्वालियर में काफी समय बीत गया। उसके पश्चात कुछ ऐसे कौतुक हुए, जिसके फलस्वरूप उसे गुरू महाराज जी को छोड़ना पड़ा। जब गुरू महाराज जी तैयार हुए तो पता चला कि वहाँ पर हिन्दुस्तान के 52 राजाओं को उम्र कैद में डालकर रखा हुआ है। वे बहुत ही दुखी हो रहे थे। कोई साधन छूटने का उन्हें नज़र नहीं आ रहा था। उस समय सभी ने मिलकर महाराज जी के चरणों में प्रार्थना की, ''पातशाह! हमारा उद्धार कब होगा? आप तो यमदूतों से भी छुड़वा देते हैं। यह तो इसी दुनियां में है, आप कृपा

करो।''

महाराज जी ने हरदास दरोगा से कहा, ''भाई! हमने बाहर नहीं जाना। जहाँगीर से कह दो, हम ग्वालियर के किले से बाहर नहीं निकलेंगे।'' उसने जाकर बादशाह से प्रार्थना की और अब जहाँगीर इतना मज़बूर है कि उसे सभी कैदी राजाओं को छोड़ना पड़ेगा। कहता है, ''क्या बात है? वे किला छोड़कर जाते क्यों नहीं? आज़ादी तो सारी दुनियां चाहती है। गुलामी कोई नहीं चाहता, सभी स्वतन्त्र होना चाहते हैं। इसलिये पूछो, क्या कारण है?'' महाराज जी के पास आकर प्रार्थना की।

महाराज जी कहने लगे, ''जब तक ये 52 राजे कैद से मुक्त नहीं होते, तब तक हम भी जेल से बाहर नहीं जायेंगे। उसने जाकर जहाँगीर से कह दिया। जहाँगीर ने बहुत सोचा कि युद्ध करके तो इन राजाओं को काबू में किया है, यदि इन्हें छोड़ दिया तो फिर ये इकट्ठे होकर विद्रोह कर देंगे। इन्हें पकड़ने के लिये पता नहीं कितने लोग मारे गये। उतना ही काम फिर बढ़ जायेगा। इस प्रकार महाराज जी के वचन को सुनकर दुविधा में पड़ गया। अन्त में एक रास्ता निकाल ही लिया।'' कहता है महाराज जी से कह दो, ''हमें कोई ऐतराज़ नहीं जितने राजा आपका पल्लू पकड़ कर बाहर आ जायेंगे, उतने छोड़ दिये जायेंगे।'' अब सोचने की बात है कि महापुरुषों के चोले के कितने पल्लू होते हैं और कितने लोग उसे पकड़ सकते हैं? यदि एक दूसरे के साथ चिपट-चिपट कर भी खड़े हों तो भी 10-15 से ज्यादा नहीं आ सकते।

महाराज जी ने हुक्म कर दिया, ''हमारे लिये 52 कलियों वाला कुर्त्ता सिलवाओ।'' आज कल वह कुर्ता राड़ा साहिब के निकट घुडाणी में रखा हुआ है। उसकी 52 कलियां हैं, नीचे से बहुत चौड़ा है, ऊपर से फिट है। उस समय सभी राजाओं ने उन 52 कलियों को पकड़ा और सारे राजा बाहर आ गये।

अत: मन्त्री ने राजा भीम चन्द को समझाया कि जो ऐसा गुरू है, उसके पौत्र हैं, गुरू गोबिन्द सिंघ जी और वे यह कहते हैं, ''हमने किसी की भी एक इन्च धरती पर भी कब्ज़ा नहीं करना। हम तो आये ही इसलिये हैं कि बन्दगी करने वाले धार्मिक लोगों का उद्धार करना है। बन्दगी करने वालों की संख्या बढ़ानी है। जो दुर्मति लोग हैं, अधर्मियों का संहार करना है, चाहे शस्त्र का प्रयोग करना पड़े या उपदेश से मान जायें। पर आप बताओ, आज तक गुरू गोबिन्द सिंघ जी ने किसी पर हमला किया है? कोई गाँव लूटा है? किसी राजा के ऊपर हमला किया है? तुम चढ़-चढ़ कर हमला करते हो फिर वे तुम्हारा मुकाबला करते हैं और फिर बड़ी हैरानी की बात यह है कि जब तुम्हारी फौज़ें भाग जाती हैं। उस समय वे बिल्कुल भी वार नहीं करते। आपने युद्ध में देखा भी होगा कि यदि किसी का शस्त्र टूट जाता है तो वह उस पर वार नहीं करते। बल्कि कहते हैं, जाओ, शस्त्र लेकर आओ फिर तुम्हारे साथ युद्ध करेंगे। जबकि वह घायल होकर गिर जाता है तो उस समय सिर धड़ से अलग कर सकते हैं, पर ऐसा कभी नहीं करते, वहीं पर ही छोड़ जाते हैं और हम शाम को अपने फौज़ियों को उठाकर लाते हैं। इतने महान नियमों के मालिक, आप तो सुलाहकुल हैं। आप ज़रा सोचो तो सही कि तुम किसके साथ लड़ाई करते हो?''

फिर दूसरा पक्ष ले लो। वे कहते हैं कि विदेशियों ने यहाँ पर आकर राज्य किया। 4-5

हज़ार साल पहले, यहाँ की जो संस्कृति थी उसे बढ़ाने के लिये इन्होंने यत्न किये हैं। कितना साहित्य तैयार किया है? किस तरह से आप जीवन को उच्च बना रहे हैं। आप एक दम उनके पीछे पड़े हुए हो और उनके कार्यों में रूकावट डाल रहे हो?

जब इस तरह के वचन सुने तो सभी को क्रोध आ गया। सभी कहते हैं, ''लगता है, यह उनका जासूस है जिसे हम दुश्मन कहते हैं और यह हमारे ऊपर ही इलज़ाम लगाता है, इसलिये जासूस को जासूसों वाली ही सजा दी जाये।'' सजा भी बता दी गई कि इसकी आखों में गर्म-गर्म सलाईयां फेर दो, अन्धा करके इसे पहाड़ की चोटी से गिरा दो।

वह बोला, ''ठीक है, तुम्हारी मर्ज़ी। मैंने तो रहस्य की बात बताई है। मेरा कर्तव्य है सच बोलना और सावधान कर देना। गुरू गोबिन्द सिंघ जी के साथ युद्ध करके, तुम्हें लाभ कुछ नहीं होगा। एक बहुत महान धर्म के विरूद्ध, जिस धर्म का जीवन आने वाला है, उसके अन्दर रूकावट बनोगे।''

उसने इतिहास में से बहुत से उदाहरण दिये पर किसी ने न सुनी। आखिर बान्ध लिया और जल्लादों को हुक्म दे दिया कि सलाईयां गर्म करके इसकी आखों में फेर दो ताकि इसके नेत्रों की ज्योति खत्म हो जाये और फिर पहाड़ की चोटी से इसे धक्का मार कर गिरा दो। अपने आप गड्ढे में गिर कर मर जायेगा। वह कहने लगा, ''महाराज! मेरा फर्ज़ है, मैं प्रधान मन्त्री हूँ। मैंने तो यह बताना है कि कहाँ गलत है या ठीक है। मानना न मानना आपका काम है।''

अन्त में पहरेदार बुलाये गये। पहाड़ की चोटी पर ले गये। जल्लाद जान पहचान वाले थे। वे अन्दर से बहुत दुख महसूस कर रहे हैं, पर हुक्म की तामील करना उनका फर्ज़ बनता है।

तब देवी दास से कहा गया, ''कोई इच्छा है?'' देवीदास बोला, ''देखो प्रेमियो! तुम्हें तो हुक्म मिला है, इसलिये तुम्हारा तो कोई दोष नहीं है, पर एक काम करना, मुझे थोड़ी देर एकाग्रचित हो जाने देना, जब मैं सिर झुकाऊंगा और फिर जब मैं सिर ऊपर करूं, तब तुम मेरी आखों में सलाईयां फेर देना, तब तक गर्म करने के लिये रख दो।''

सलाईयां गर्म करने के लिये रख दी गई और वह एकाग्रचित हो गया। ध्यान धरते ही गुरू गोबिन्द सिंघ महाराज जी के चरण कमलों में पहुँच गया। चरण कमलों का ध्यान धर के बैठा है, हाथ बान्धे हुए हैं, कह रहा है, ''पातशाह! तूने ही अब रक्षा करनी है और कोई नहीं कर सकता। तूने प्रहलाद की रक्षा की थी। जब उसे आग में बिठाया गया तो तूने ही रक्षा की थी। जब गर्म-गर्म थम्बे के साथ लगाया गया, तब भी तूने बचाया था। तूने ही बेअन्त भक्तों की रक्षा की है। मैं भी तेरी शरण में हूँ।'' उस समय जब उसने नमस्कार करके सिर ऊपर उठाया तो गर्म-गर्म सलाईयां आखों में फेर दी गईं। सां-सां की आवाज़ हुई, जलने की आवाज़ आई, नेत्र बन्द हैं। उन्होंने आपस में सलाह की कि इसे हम क्या धक्का दें, यह ऐसी विषम पहाड़ी पर चढ़ा हुआ है, इसने अपने आप ही गिर जाना है। हम कह देंगे कि हमने धक्का दे दिया था। जल्लाद उसे वहीं पर छोड़कर चले गये और वह आखें बन्द करके बैठा है। चरण कमलों का ऐसा आनन्द आ रहा है जिसका वर्णन नहीं

किया जा सकता।''

कबीर चरन कमल की मउज को कहि कैसे उनमान।
कहिबे कउ सोभा नही देखा ही परवानु।।

पृष्ठ - 1370

जब नेत्र खोले, तो एकदम हैरान हो गया कि मुझे तो सभी कुछ दिखाई देता है। मेरी आखों को तो कुछ भी नहीं हुआ है, न ही कोई तकलीफ हुई, न ही आखों से अन्धा हुआ। उस समय बिलासपुर की ओर पीठ कर ली और आनन्दपुर साहिब की ओर मुँह कर लिया। चलता-चलता आनन्दपुर साहिब पहुँच गया। कितना आनन्द है कितना शुकराना है उसके हृदय में! उसका अनुमान हम नहीं लगा सकते। गुरू दशमेश पिता जी के महलों में पहुँच गया और प्रार्थना की, ''मैंने महाराज जी के दर्शन करने हैं?'' पहरेदार कहते हैं, ''आज पातशाह, बाहर नहीं आये। अन्दर ही हैं, हम प्रार्थना कर देते हैं।'' उन्होंने जाकर प्रार्थना की, ''महाराज! बिलासपुर का वज़ीर आया है।'' महाराज जी कहते हैं, ''अन्दर ले आओ।''

अन्दर ले गये। जहाँ पर आप बिराजमान थे, देखकर दंग रह गया कि महाराज जी के चरणों पर पट्टियां बन्धी हुई हैं और उनके अन्दर से खून जमा हुआ है। उस समय यह दृश्य देखते ही हृदय कांप उठा। अरे मन! तूने चरणों का ध्यान धरा था तभी ऐसा हुआ है।

उस समय देवीदास ने नमस्कार की और कहा, ''पातशाह! चरणों पर खून के धब्बे क्यों हैं?'' महाराज जी मुस्करा कर बोले, ''देवी दास! किसी प्रेमी ने हमारे चरणों का ध्यान धर लिया, उसके नेत्रों में सलाईयां फेरी जानी थीं। वे उसके नेत्रों में नहीं फेरी गईं, हमारे चरणों में आ लगीं।''

तीसरा इतिहास यह बताता है कि भाई बिधि चन्द जब पट्टी से दोशाले लेकर आया तो उस समय चारों ओर से घिर गया। उसने गुरू छठे पातशाह का ध्यान धर कर, आग की भट्ठी में छलांग लगा दी। इधर लहरे गागे में गुरू महाराज जी बैठे हुए हैं। कहने लगे, पानी की मशक भर-भर कर लाओ। सभी प्रेमी मशकें भर-भर पानी की लाते हैं और महाराज जी के ऊपर डाले जा रहे हैं। इधर बिधि चन्द को ऐसा लगता है कि वह तो बहुत ठण्डी जगह पर बैठा है।

सो यह ध्यान शक्ति होती है। ध्यान की शक्ति द्वारा ही कछुआ अपने बच्चों का पालन करता है। कछुआ बाहर बरेती पर अण्डे देता है और आप पानी में रहता है। वह केवल ध्यान शक्ति द्वारा बच्चों को पालता है। सिमरण शक्ति द्वारा कूंज हज़ारों मीलों पर -

उडै ऊडि आवै सै कोसा तिसु पाछै बचरे छरिआ।
तिन कवणु खलावै कवणु चुगावै मन महि सिमरनु करिआ॥ *पृष्ठ - 10*

याद द्वारा अपने बच्चों का पालन करती है। इसे 'वातसल्य याद' कहते हैं। जैसे Remote Control (रिमोट कन्ट्रोल) की तारें जुड़ जाती हैं, ऐसे ही तारें जुड़ जाती हैं। हमारे राकेट बगैरा बाहर हज़ारों मीलों पर चले जाते हैं, लाखों मीलों तक भी चले जाते हैं, वहाँ तक भी रिमोट कन्ट्रोल द्वारा उनकी दिशा बदली जा रही है। मंगल तारा चौदह करोड़ कि. मी. दूर है। वहाँ पर राकेट पहुँचा

तो वहाँ पर उसकी एक बाजू सी बाहर निकल गई, वह काम नहीं कर रही थी। उसका यहाँ धरती पर बैठे-बैठे रिमोट कन्ट्रोल द्वारा पुर्जा ठीक कर दिया, उसकी बाजू जोड़ दी और फिर काम करने लग गया।

इस प्रकार जब मशीनें काम करती हैं और उनके अन्दर तार कोई नहीं होती, एक बैटरी होती है, उस बैटरी की शक्ति वहाँ पर पहुँचती है, फिर याद की शक्ति गुरू तक क्यों नहीं पहुँच सकती? इसी तरह सिमरण की शक्ति कैसे नहीं पहुँच सकती? कूंज अपने बच्चों को सिमरण शक्ति द्वारा पाल सकती है फिर गुरू महाराज जी ने सुखमनी साहिब की पहली अष्टपदी में फ़रमान किया है -

सिमरउ सिमरि सिमरि सुखु पावउ।
कलि कलेस तन माहि मिटावउ॥ *पृष्ठ - 262*

उस पर हमारा विश्वास नहीं जमता। यह मैंने ध्यान की बात कही है। पहला ध्यान शबद का होता है, दूसरा ध्यान साकार रूप का होता है, तीसरा ध्यान ज्योति का हुआ करता है, ज्योति स्वरूप समझ कर ध्यान धरना। चौथा ध्यान नहीं होता, उसे ज्ञान कहते हैं। सभी जगह परिपूर्ण वाहिगुरू में लीन होकर भक्ति करना, अपना आपा गवाँ देना और यह समझना कि अन्दर बाहर, मेरे चारों ओर वाहिगुरू ही है। जिसका मैं नाम लेता हूँ। वह सदा मेरे साथ ही है। सो -

दिब दिसटि गुर धिआनु धरि सिख विरला कोई॥
भाई गुरदास जी, वार 9/7

कोई विरला-विरला सिख है ऐसा -

दिब दिसटि गुर धिआनु धरि सिख विरला कोई।
रतन पारखू होइकै रतना अवलोई।
मनु माणकु निरमोलका सतिसंगि परोई।
रतनमाल गुरसिख जगि गुरमति गुण गोई।
जीवदिआं महि अमरु होइ सुख सहजि समोई।
ओतिपोति जोती जोति मिलि जाणै जाणोई॥
भाई गुरदास जी, वार 9/7

ज्योति में ज्योति मिल जाती है। ओत प्रोत हो जाता है। जैसे तन पर ताना लपेटा होता है और सर्वज्ञ वाहिगुरू आप ही जानता है, फिर संसार को बताता है। ऐसा कोई विरला सिख है, उसकी जो आन्तरिक अवस्था है, उसके बारे में इस तरह फ़रमान करते हैं -

राग नाद विसमादु होइ गुण गहिर गंभीरा।
सबदु सुरति लिव लीण होइ अनहदि धुनि धीरा।
जंत्री जंत्र वजाइदा मनि उनिमनि चीरा।
वजि वजाइ समाइ लै गुर सबद वजीरा।
अंतरिजामी जाणीऐ अंतरिगति पीरा।

गुर चेला चेला गुरू .....॥

भाई गुरदास जी, वार 9/8

एक पऊड़ी गुरू अंगद साहिब महाराज जी की लिव लीनता का ध्यान धर कर, भाई गुरदास जी ने उच्चारण की है क्योंकि ये सारा प्रसंग जो है जो बेनतियां की हैं, ये सभी उन्हीं के चारों ओर घूम रही हैं। इसे आन्तरिक अवस्था कहते हैं-

राग नाद विसमादु होइ .....॥

भाई गुरदास जी, वार 9/8

ये जो शब्द बाहर बजते हैं तथा अन्दर वाले शब्द है ये दोनों विस्मादी अवस्था में ले जाते हैं -

..... गुण गहिर गंभीरा॥
सबद सुरति लिवलीण होइ अनहद धुनि धीरा॥

भाई गुरदास जी, वार 9/8

अन्दर अनहद धुन बज रही है, सुरत शब्द में जो लीन हो जाती है -

जंत्री जंत्र वजाइदा मनि उनिमनि चीरा॥

भाई गुरदास जी, वार 9/8

जब कोई बाहरी शब्द भी बजता है, चाहे अन्दर का बजता है, गुरसिख का मन तुरिया अवस्था में पहुँच जाता है, उसी समय लीन हो जाया करता है -

वजि वजाइ समाइ लै गुर सबद वजीरा।
अंतरिजामी जाणीऐ अंतरिगति पीरा॥

भाई गुरदास जी, वार 9/8

जो आन्तरिक अवस्था है, उसे जर नहीं कर पाता। जब वह उसे ज़र करता है सो वाहिगुरू उस आन्तरिक पीड़ा को जानते हैं।

जो अन्दर सहन करने की पीड़ा हो रही है, रिद्धि-सिद्धि भी आ जाये, इसे सहन करना कठिन है। बीबी जी के पिता जी के बारे में भाई साहिब भाई रणधीर सिंघ जी लिखते हैं कि एक बार आप महाराज जी के ताबे में बैठे हैं, चंवर डुला रहे हैं। शबद के अन्दर वृत्ति ऐसी लीन हो गई कि सहन न कर सके, एक दम छत के साथ जा लगे। धीरे-धीरे नीचे उतरे, फिर सहन नहीं हुई, फिर ऊपर को चले गये। फिर धीरे-धीरे ऊपर छत के साथ दीवारों के साथ होते हुए अन्त में गुरू साहिब के सामने आकर लेट गये। 6 घंटे पड़े रहे और आपके शरीर में से इतना तेज़ प्रकाश निकला कि बाजे वालों के बाजे बजने बन्द हो गये। एक रूहानी कम्पन, सभी के अन्दर झन्कार सी बज उठी और कोई भी बोल नहीं पा रहा था। ऐसा अकह रस सभी ने देखा, जो कभी नहीं देखा था। 6 घंटे के बाद उन्होंने प्रार्थना करके उस अज़र को ज़र किया। इसे कहते हैं अजर को जर करना। बहुत कठिन है। जब नाम का प्रकाश होता है, वह धुन सुनी नहीं जाती। पहले पहल इसे सुनना ही बहुत कठिन होता है। जब सुनता है उसी समय आनन्द में चला जाता है, सहन नहीं होता।

एक बार महाराज जी यहाँ चण्डीगढ़ में बैठे थे। दीवान लग रहे थे। सैक्टर दस में कोठी रिहायश के लिये ली हुई थी। वहाँ पर एक प्रेमी आया, कोई पण्डित था। उसने कहीं राह चलते कीर्तन सुना। वह कहने लगा 'रूको' रूको। यह शबद की आवाज़ किसी साधना सम्पन्न महापुरुष की है। यह किसी आम रागी की आवाज़ नहीं है, रूक जाओ। वह रूक गया। कहता है, ''अन्दर घाव करती जा रही है।'' इतनी देर में वहाँ पर पहले भी एक और हिन्दू भाई खड़ा था। वह कहता है, ''जी, मैं हैरान हूँ। मेरा गुरू मथुरा में रहता है। एक बार मेरे गुरू ने यह बात बताई थी कि बन्दगी करने वालों के अन्दर से Radiation (किरणें) बाहर निकलती हैं, इस तरह अन्दर कोई ऐसी बेतार के समान असर होता है, वह सम्भाला नहीं जाता। वह बोला मुझे यह अनुभव हुआ है कि इस आवाज़ में शब्द की Radiation हो रही है।''

दूसरे दिन पूछते हुए वहाँ पर आ गये। हमने भी रात को दीवान में बताया था, ''भाई! जिसने भी मिलना हो, वह 10 सैक्टर कोठी नम्बर 15 में आ जाये।'' वह वहाँ पहुँच गये। वहाँ पर उसने दो वचन कहे। शास्त्री था, पढ़ा लिखा बहुत बड़ा विद्वान था।

कहते हैं, ''महाराज! सुनता है पर सुनाई क्यों नहीं देता? दिखता है, देखा क्यों नहीं जाता?''

महाराज जी ने कहा, ''पण्डित जी! अभ्यास नहीं है।''

यह बात किसी की समझ में न आई। उसने इतनी बात सुनी, नमस्कार की और दुआएं देता हुआ चला गया। सारी संगत हैरान है कि उसने एक बात कही और महाराज जी ने एक ही जवाब दिया और बीच में क्या बात हुई कुछ पता नहीं चला। बाद में महाराज जी से हमने पूछा, ''महाराज जी! इसका क्या सवाल था और आपका क्या जवाब था?''

महाराज जी कहते हैं, ''प्रेमियो! अनहद शब्द की सीमा से ऊपर जहाँ 'सो' शब्द का वासा है, जिसे एक शब्द कहते हैं, जब तक उसमें पहुँच नहीं होती, जिसे नाम की प्राप्ति कहते हैं। शब्द की प्राप्ति होने से क्योंकि वह आदि शबद है। सत शबद भी उसे कहा जाता है और उस सत शबद के साथ जीव की सुरत का सम्पर्क होता है, तब वह दिव्य शबद इतना शक्तिशाली होता है, उसके अन्दर इतना आनन्द होता है कि वह सहन नहीं हो पाता। वहाँ जो नाद बजता है, अनहद शबद नाद, वह दरगाही नाद हुआ करता है। उसे अंग्रेजी में Cosmic Music कहते हैं। वह दरगाह से आता है क्योंकि परमेश्वर के द्वार पर खड़े सभी गा रहे हैं -''

सो दरु तेरा केहा सो घरु केहा जितु बहि सरब समाले।
वाजे तेरे नाद अनेक असंखा केते तेरे वावणहारे॥

रहिरास साहिब

वहाँ पर राग चल रहा है। Music (संगीत) बज रहा है। परमेश्वर के द्वार पर अनहद राग बज रहा है। जब सुरत उस राग के साथ इकमिक हो जाती है, तब इस जीव के वश की बात नहीं कि वह उस धुन को सुन सके। कोई विरला-विरला होता है, जिसका अभ्यास पक्का हो गया हो वह बार-बार वहाँ पहुँच कर, उस अज़र को जर कर पाता है।

इसी तरह जब अन्दर प्रकाश होता है, उसे जर कर पाना भी बहुत कठिन होता है। सो पिता जी से पूछा, ''क्या बात हुई थी?'' आप बोले, ''गुरू नानक पातशाह का इतना प्रकाश अन्दर आया कि हमसे सहन न हो सका। शरीर सन्तुलन (गुरूता शक्ति रहित) खो गया और उसके बाद हमें कुछ पता नहीं रहा। हमारी तो अरदास ही थी, ''हे पातशाह! इस अज़र को जर लेना।'' सो यह जो पीड़ा है –

अंततिजामी जाणीऐ अंतरिगति पीरा॥

भाई गुरदास जी, वार 9/8

यह जो अन्दर पीड़ा होती है, वाहिगुरू ही इसे जानते हैं –

गुर चेला चेला गुरू बेधि हीरै हीरा॥

भाई गुरदास जी, वार 9/8

गुरू चेला है। गुरू अंगद साहिब चेले हैं और चेला ही गुरू बना हुआ है। दोनों में कोई अन्तर नहीं है। एक ही नज़र आते हैं।

सो, दो शब्द होते हैं – एक को आहत कहते हैं, दूसरे को अनाहद कहते हैं। अनाहद शब्द के अन्दर जब वृत्ति लीन हो जाती है फिर नाम रंग चढ़ता है, नाम के प्रति प्यार पैदा होता है, फिर जो गुरसिख पूरा है, वह अज़र को ज़र लेता है।

गुरू अंगद साहिब महाराज जी की प्रीत को, आन्तरिक वेदना को गुरू नानक साहिब जानते हैं – वह रज़ा तथा शुक्र में रहते हैं। एक ही जगह पर दोनों रहते हैं। जैसे बीन्धने वाला और बिन्धाने वाला दोनों हीरे होते हैं। इसी तरह से गुरू नानक पातशाह और गुरू अंगद देव जी महाराज में कोई अन्तर नहीं है। गुरू का सिख, गुरू का ही रूप बना हुआ है। गुरू दसवें पातशाह के बारे में लिखा हुआ है –

वाहु वाहु गोबिंद सिंघ आपे गुरु चेला।।

भाई गुरदास जी, वार 41/1

गुरू नानक देव जी महाराज पारस हैं, पारस के साथ स्पर्श करके पारस बनना कठिन है। **पारस सोना तो बना देता है पर पारस, पारस बनाता है ऐसा कभी नहीं सुना। सो गुरू नानक पातशाह जी पारस हैं, आपके साथ जो लोग हैं, उसे अपना रूप देते हैं।** ज्योति में ज्योति मिली हुई है। सुर ताल एक हो गये हैं इसे कहते हैं –

..... गुर गोरि समावै। भाई गुरदास जी, वार 9/22

चेला और गुरू प्रेम में पड़कर दोनों एक हो रहे हैं। दोनों का प्यार एक ज्योति बन गई है और देखने में मूर्तियां दो लगती हैं, गुरू नानक पातशाह ने इस प्रेम को अंगद देव जी के अन्दर इतना पैदा किया कि अंगद देव जी अब सर्वश्रेष्ठ बन गये। सहज में समाना, तुरिआ अवस्था में खेल रहे हैं। उस अवस्था को वर्णन करने के लिये भाई गुरदास जी ने इस तरह वर्णन किया है –

धारना – गुरमुख वडिआई,

पारस होइआ पारसों - 2, 2

पारसु होइआ पारसहु गुरमुखि वडिआई।
हीरै हीरा बेधिआ जोती जोति मिलाई।
सबद सुरति लिव लीणु होइ जंत्र जंत्री वाई।
गुर चेला चेला गुरू परचा परचाई।
पुरखहुं पुरखु उपाइआ पुरखोतम हाई।
वीह इकीह उलंघि कै होइ सहजि समाई॥

भाई गुरदास जी, वार 9/9

गुरू नानक देव जी के प्रेम ने तथा भाई लहणा जी की सेवा ने, गुरू नानक साहिब को इतना प्रसन्न कर दिया कि उन्होंने उन्हें अपना ही रूप बना लिया। तीन गुणों में से निकल कर तुरिया में निवास कर लिया। साध संगत जी! इस तरह तो सिखी का मार्ग है, सबसे श्रेष्ठ मार्ग है जो सन्त मत है, वह सुरत शबद है। सुरत को शबद के साथ मिलाना है। जब गुरू नानक साहिब जी से सिद्धों ने पूछा, ''हे नानक! एक बात हमारी समझ में नहीं आती कि तुम यह कहते हो कि जो गुरसिख होंगे, वे गृहस्थी भी होंगे, बच्चों का पालन पोषण भी करेंगे, अपना कर्तव्य भी निभायेंगे, राज भी करेंगे, व्यापार भी करेंगे पर हम तो हैरान होते हैं कि क्या ऐसा जीव पार हो सकता है?'' बिल्कुल भी नहीं हो सकता। ये तो माया के अन्दर सो जायेंगे। इनके अन्दर मोह, क्रोध, काम, लोभ, ईर्ष्या पैदा हो जायेगी। ये निन्दा करेंगे। किसी द्वारा प्रशंसा किये जाने पर खुश होंगे। वह कौन सी विधि है जिसके द्वारा तुम इन्हें पार करवाओगे? साध संगत जी! है भी बड़ा कठिन। बड़े-बड़े हार मान कर भाग गये। दोनों ही रास्ते कठिन हैं - यह भी कठिन है, वह भी कठिन है।

महाराज जी कहते हैं, हे नाथ जी! हमारा मार्ग तुम्हारे जैसे मार्ग की तरह नहीं है। न तो हमें प्राणायाम करवाने की जरूरत है, न नेती, न धोती, न बसती वगैरा करवाने की जरूरत है। हमने कपाली नहीं करवानी। हमने ऐसे साधन नहीं करवाने। हमारे सिख ने तो गुरू को प्यार करना है। प्यार के अन्दर वह शक्ति है कि जैसे-जैसे प्यार करते जाओ, उसका ध्यान हृदय में आना शुरू हो जाता है, उसके साथ लीन हो जाता है। सारा दिन उसके साथ रह सकता है। जब गुरू को प्यार करेगा तो गुरू का शबद हृदय में बस जायेगा। उसकी सुरत के साथ जब शबद लग गया फिर उसे बाहरी दुनियां की व्यास्तताएं कुछ नहीं कहतीं क्योंकि अन्दर सुरत इतनी दृढ़ हो गई कि वह काम करता हुआ भी, कोई काम नहीं कर रहा होता, बच्चों का पालन पोषण करता हुआ भी, वह पाल पोस नहीं रहा होता, सभी कर्तव्य पूरे करता हुआ भी, वह निर्लिप्त रहता है। अतः हमारा जो मार्ग है, वह सुरत शबद मार्ग है -

धारना - नानक नाम वखाणे जी,
सुरति शबद भव सागर तरीऐ - 2, 2
सुरति शबद भव सागर तरीऐ - 2, 2
नानक नाम वखाणे जी, ... -2

ममा मम सिउ काजु है मन साधे सिधि होइ।
मन ही मन सिउ कहै कबीरा मन सा मिलिआ न कोइ॥ *पृष्ठ - 342*

मन के ऊपर सुरत होती है। सुरत जब शबद के साथ लग जाती है, फिर मन कहीं नहीं भागता क्योंकि जब सुरत शबद में लीन होगी तो शबद में से रस निकलेगा। इस तरह गृहस्थ में रहते हुये, हमारे गुरसिख अपना रूहानी मार्ग तय कर लिया करेंगे पर लगन होनी चाहिये। सूझ बूझ वाले प्रेमियों की बड़ी शिकायत है कि हम केवल भेष के सिख रह गये। अन्दर से बिल्कुल खाली हो गये हैं। ये जो प्रार्थनाएं की गई हैं, ये सिख की आन्तरिक अवस्थाएं हैं, सिख के अन्दर गुरू का प्यार होता है। हर समय गुरू के प्यार में रहता है, गुरू की बात सुनता है, कभी वैराग से भर जाता है तो कभी आनन्द मग्न हो जाता है -

तै साहिब की बात जि आखै कहु नानक किआ दीजै।
सीसु वढे करि बैसणु दीजै विणु सिर सेव करीजै॥
पृष्ठ - 558

सो गुरू अंगद साहिब महाराज जी एक तरह से गुरू नानक साहिब के अन्दर लीन हो चुके थे। हर समय गुरू नानक साहिब की ओर चकोर की तरह पलकें लगाये रहते, हर समय उन्हीं की ओर निगाह रखते हैं, पलक झपकना भी भूल गये और समझते हैं कि यदि पलक झपकी, तो गुरू स्वरूप दूर हो जायेंगे। जहाँ महाराज जी बिराजमान होते हैं, आप वहीं ज़मीन पर नीचे ही बिराज जाते हैं। जहाँ महाराज जी जाते हैं, आप भी साथ ही जाते हैं। अमृत बेला में उठकर गुरू नानक पातशाह रावी में स्नान करने जाया करते थे। आप काफी देर तक पानी में खड़े रहा करते थे। आप जी ने डेढ़ पहर रात रहते उठकर स्नान करना। सर्दी हो या गर्मी, आप का यह नितनेम था। सर्दियों के दिनों में आप पानी में जाकर खड़े हो जाते, गुरू अंगद देव जी नदी के किनारे बैठे रहते और टकटकी लगाकर गुरू महाराज जी के चेहरे की ओर देखते रहते, फिर महाराज जी ने कहीं और चले जाना। लगभग दो मील की दूरी पर एक ओर पत्थर गाढ़ दिया और दूसरी तरफ भी गाढ़ दिया। सारा दिन, सारी रात चलते ही रहते, फिर एक सिरे पर चले जाते, वहाँ से फिर लौट आते, दूसरे सिरे पर चले जाते, फिर लौट आते। इन्होंने बीच में खड़े हो जाना, जिधर भी जाते आपने इन्हें देखते ही रहना। यदि आखों से ओझल होने लगते तो उतना ही आगे बढ़ जाते थे। ऐसा किसी को दिखाने के लिये नहीं करते थे। वह तो उनका आन्तरिक प्यार था, पर प्यार अनूठा हुआ करता है। दुनियावीं प्यार की कहानियां हम बता सकते हैं, लैला के प्यार की बात की जा सकती है, हीर रांझे के प्यार की कहानी सुनाई जा सकती है पर ये सभी अपूर्ण प्यार हुआ करते हैं। गुरू और शिष्य के प्यार का सानी, इस संसार में कोई नहीं हुआ करता। उसकी कथा को अकथ कहा है। इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - ओह अकथ कहाणी जी - 2, 2
पीर मुरीदां पिरहड़ी - 2, 2

रूपै कामै दोसती जग अंदरि जाणी।
भुखै सादै गंढु है ओहु विरती हाणी।
घुलि मिलि मिचलि लबि मालि इतु भरमि भुलाणी।
ऊघै सउड़ि पलंघ जिउ सभि रैण विहाणी।

सुहणे सभ रंग माणीअनि करि चोज विडाणी।
पीर मुरीदाँ पिरहड़ी ओहु अकथ कहाणी॥

भाई गुरदास जी, वार 27/5

मान सरोवर हंसला खाइ माणक मोती।
कोइल अंब परीति है मिल बोल सरोती।
चंदन वासु वणासुपति होइ पास खलोती।
लोहा पारसि भेटिऐ होइ कंचन जोती।
नदीआं नाले गंग मिलि होनि छोट अछोती।
पीर मुरीदां पिरहड़ी .....॥

भाई गुरदास जी, वार 27/6

उपर्युक्त कई प्रकार की प्रीतों का उल्लेख करने के बाद आप फ़रमान करते हैं कि –

पीर मुरीदां पिरहड़ी ओहु अकथ कहाणी॥

भाई गुरदास जी, वार 27/5

जैसे रूप और काम की दोस्ती है –

रूपै कामै दोसती जग अंदरि जाणी॥
भुखै सादै गंढु है ओहु विरती हाणी॥

भाई गुरदास जी, वार 27/5

भूख लगी हुई हो तो स्वाद के साथ दोस्ती पड़ जाती है। नींद आ रही हो तो रज़ाई के साथ प्यार हो जाता है –

मान सरोवर हंसला खाइ माणक मोती।
कोइल अंब परीति है मिल बोल सरोती।
चंदन वासु वणासुपति होइ पास खलोती॥

भाई गुरदास जी, वार 27/6

चन्दन के आस पास खड़ी हुई वनस्पति, सारी चन्दन बन जायेगी –

लोहा पारसि भेटिऐ होइ कंचन जोती।
नदीआं नाले गंग मिलि होनि छोत अछोती॥

भाई गुरदास जी, वार 27/6

यदि गन्दे नाले का पानी जो गंगा में आकर मिल जाता है, वह पवित्र पानी बन जाता है।

इस प्रकार आप जी सदा प्यार में रहते हैं। गुरू नानक पातशाह रोज़ जाते हैं और भाई लहणा जी भी साथ जाते हैं। एक बार बाबा बुड्ढा जी, सधारन जी, मनसुख जी तथा अन्य गुरसिखों के मन में ख्याल आया कि हम भी इनके साथ चलकर देखें। अमृत बेला में हम भी जाकर बैठ जायेंगे, गुरू महाराज जी तो किसी को मना नहीं करते। कोई भी वहाँ चला जाये, कोई भी वहाँ पर नदी में स्नान कर ले, पर लहणा जी तो गुरू नानक महाराज जी के पीछे-पीछे ऐसे रहते हैं, जैसे परछांई रहती है। एक सैकिन्ड के लिये भी अलग नहीं होते। ऐसा स्वाभाविक ही गुरू भाइयों के मन में आ जाया करता है। अत: आप भी सभी चले गये। महाराज जी ने रावी में स्नान किया और कुछ

देर वहीं खड़े रहे। इधर बहुत तेज़ ओले पड़ने शुरू हो गये, बहुत ठण्डी हवा चल पड़ी। सभी के सभी ठण्ड के मारे कांपने लग गये। जब ओले पड़ने लगे तो सभी के सभी एक गहरे वृक्ष की छाया के नीचे खड़े हो गये, परन्तु भाई लहणा जी वहीं नदी किनारे बैठे रहे। वहाँ पर बैठे-बैठे बेहोश ज़रूर हो गये, पर वहाँ से हिले नहीं। जब गुरू नानक पातशाह ने देखा तो आप पानी से बाहर निकल कर आये और अंगूठे के साथ स्पर्श करके पूछते हैं, ''पुरखा! जब सभी चले गये तो तुम उनके साथ क्यों नहीं गये? तूने भी चले जाना था, बच जाना चाहिये।''

भाई लहणा जी कहते हैं, ''पातशाह! मुझे तो पता ही नहीं कि जाना भी है या नहीं?''

प्यार में ऐसी मस्ती छाई हुई है कि मन, अन्दर ही अन्दर टिका हुआ है, कोई फुरना नहीं उठा रहा। आप तो एकटक, गुरू के नेत्रों की ओर देखे जा रहे हैं। इस तरह बाकी तो सारे वहाँ से लौट आये, आप अकेले रह गये। इधर महाराज जी ने बहुत भारी तपस्या शुरू कर दी, पहले भी की थी। ऐसा फ़रमान है, पढ़ो प्यार से -

धारना - रेत अक्क दा अहार करके गुरां ने,
रोड़ा दी विछाई करती - 2, 2
मेरे पिआरे, रोड़ां दी विछाई करती - 2, 2

रेतु अक्कु आहारु करि रोड़ा की गुर कीअ विछाई।
भारी करी तपसिआ वडे भागि हरि सिउ बणि आई॥
भाई गुरदास जी, वार 1/24

गुरू महाराज जी ने सारी रात घूमते रहना। गुरू अंगद साहिब साथ-साथ तथा धीरे-धीरे पहले आप लंगर में आकर भोजन करके, फिर बाहर चले जाया करते थे। फिर बाहर एक छोटी सी झौंपड़ी बना ली, जिसमें केवल आप ही आ सकते थे। आप कहते हैं, ''भाई लहणा! छोटी-छोटी पथरियां उठा कर लाओ।'' पथरियां मंगवा ली गईं। भाई लहणा जी कहते हैं, ''महाराज! क्या हुक्म है?'' आपने कहा, ''झौंपड़ी के अन्दर बिछा दो।'' हुक्म की तामील हुई। आपने वे पथरियां झौंपड़ी में बिछा दीं और जब भी महाराज जी ने विश्राम करना होता तो आप इस झौपड़ी में ही किया करते थे। अन्यथा घूमते रहते या पानी में खड़े हो जाया करते थे। आपने बहुत भारी तपस्या आरम्भ कर दी। कितनी बड़ी उम्र है। फिर आपने भोजन की मात्रा धीरे-धीरे कम कर दी और केवल एक ग्रास ही भोजन करने लग गये। अन्त में वह भी छोड़ दिया। फिर आप लौंग तोड़ लेते, कभी आक की डोडियां खा लेते, फिर वह भी बन्द कर दीं, फिर एक माशा रेता फांक लेते। तत्पश्चात वह भी छोड़ दिया। साध संगत जी! बड़ी भारी तपस्या की। गुरू महाराज जी आप तो पूर्ण थे, पर जैसे पी. टी. मास्टर आप पहले परेड करके दिखाता है, इसी तरह से आप करके दिखा रहे थे। आपको पता था कि कलयुग में जो जिज्ञासू हैं वे बहुत सोहल (पौरुष हीन) आते हैं। किसी ने कहना, ''मुझे जी, ऊबासियां आ रही हैं। मेरे से पाठ नहीं होता, मैं नाम नहीं जप सकता। मुझे ठण्ड लगती है जी, मुझे गर्मी बहुत लगती है जी, ऐसे जिज्ञासु होंगे फिर बताइये वे कैसे पार हो सकेंगे? हमें रास्ता दिखाने के लिये आपने भारी तपस्या शुरू कर दी। जितने भी उच्च कोटि के पहुँचे हुए महापुरुष हैं, उन सभी का जीवन पढ़ लो। बाबा फरीद का जीवन देख लो। उसे पढ़ कर विचार करके देखो। आप घर बार

छोड़कर जंगलों में चले जाते हैं। सारी-सारी रात खड़े रहते हैं। कई बार एक ही स्थान पर खड़े रहते हैं, चाहे बैठ जायें, खड़े हो जायें, चलते रहें, आन्तरिक वृत्ति सम रहती है।''

बाबा ज्वाला सिंघ जी इतना पैदल चला करते थे कि 25 पाठ जपुजी साहिब के पूरे हो जाया करते और 15 पाठ सुखमनी साहिब के तथा 5 बार पाँच बाणियों का नितनेम पूरा कर लिया करते थे। करके देख लो, कितना चलने में ये पाठ पूरे हो सकते हैं? इसी तरह से बहुत से महापुरुष 100-100 पाठ जपुजी साहिब के किया करते थे। चाहे चल कर करते या बैठ कर करते, तपस्या किया करते थे।

बाबा फरीद जी की परमेश्वर के साथ लिव लगी हुई है। आप खड़े हुए हैं। उधर से एक लुहार आ रहा है। कन्धे पर कुल्हाड़ा रखा हुआ है और आंखे मलता हुआ आ रहा है। पूरी तरह से दिखाई भी नहीं दे रहा है। बाबा फरीद को देखा और सोच रहा है अन्धेरे में कोई खड़ा हुआ है। बिल्कुल पास आ गया, कुल्हाड़े का दस्ता मारा यह देखने के लिये, लकड़ी सूखी है या गीली। यदि सूखी हुई तो काट लेंगे और गीली हुई तो छोड़ देंगे। सूखी लकड़ी पर कुल्हाड़ा मारने से आवाज़ से पता चल जाता है, जबकि गीली लकड़ी की आवाज़ कुछ और तरह की हुआ करती है। जब कुल्हाड़े का दस्ता मारा, बाबा फरीद अपनी लिव में खड़े थे तो आप दस कदम आगे की ओर जा गिरे, बड़ी मुश्किल से आप सम्भल सके। उस समय आपने उसे शाप नहीं दिया, उसे बुरा नहीं कहा। आप समझ गये कि यह भी कुछ खोज करने के लिये आया है और मैं भी खोज कर रहा हूँ। मेरी खोज और है, इसकी खोज और है। उस समय आपने इस तरह फ़रमान किया -

धारना - किते मार न गवाईं मेरे वीरना,
तैनूं भाल कोलिआं दी - 2, 2
मेरे पिआरे, तैनूं भाल कोलिआं दी - 2, 2
किते मार ना गवाईं मेरे वीरना ..... -2

कंधि कुहाड़ा सिर घड़ा वणि कै सरु लोहारु।
फरीदा हउ लोड़ी सहु आपणा तू लोड़हि अंगिआर॥

पृष्ठ - 1380

''प्यारे! कोई बात नहीं, तुझ से गलती से कुल्हाड़े का वार हो गया। देख, यदि कहीं सीधा मारता तो मेरी खोज तो बीच में ही रह जाती। मैं अपने साजन की तलाश में घूम रहा हूँ और तू कोयलों के लिये लकड़ियां ढूँढता फिर रहा है।''

अत: आपने इतनी घोर तपस्या की कि खाना पीना भी छोड़ दिया -

फरीदा रोटी मेरी काठ की लावणु मेरी भुख।
जिना खाधी चोपड़ी घणे सहनिगे दुख॥

पृष्ठ - 1379

कभी-कभी भोजन खाया करते थे। इनके जो दादा गुरू थे, उनका नाम मोऊदीन था। वे छह दिनों के बाद भोजन किया करते थे, तो आपने भी 6 दिनों बाद भोजन करना शुरू कर दिया।

पहले दिन भोजन लेकर रख लेते। छह दिनों के पश्चात उसे पानी में भिगो-भिगो कर, स्वाद से रहित करके भोजन खाया करते थे। ऐसा नहीं है कि वे पहुँचे हुए महान पीर नहीं थे बल्कि वे तो ऐसा करके दिखाकर, उपदेश दे रहे थे कि परमेश्वर की तलाश में सुस्त नहीं होना चाहिये। जब तक हम कठोर संघर्ष नहीं करते, तब तक वहाँ पर नहीं पहुँच सकते। जिन महापुरुषों ने यह संघर्ष किया है, उनके जीवन चरित्र पढ़ कर हैरानी होती है कि हम तो उनके सामने पासकी समान भी नहीं है। उनके द्वारा की गई कुर्बानियों तक पहुँचना तो क्या, हम उन्हें ठीक तरह से समझ भी नहीं सकते। हमारा जीवन तो इतना आराम-देय बन गया है कि पाठ में भी मन नहीं लगता क्योंकि अन्दर खोज नहीं है। अन्दर जिज्ञासा नहीं है, लगन नहीं है। लगन न होने के कारण शिकायत होती है कि मुझे पाठ करते समय नींद आती है क्योंकि हमारी रूचि नहीं है। इस तरफ जबरदस्ती लगाये जा रहे हैं। हमारी रूचि तो माया में, पैसों में है। पैसों के बारे में कह कर देख लो, ''लै भाई! एक बजे हम यहाँ रूपये बिखेरा करेंगे, जितने कोई उठा सकता है, उठा ले जाना। हम मना नहीं करेंगे। वे तो 24 घंटे लगातार वहाँ पर से नहीं हटेंगे। थोड़ी सी नींद आ भी जायेगी तो फिर जाग कर वहीं पहुँच जायेंगे क्योंकि उन्हें माया प्राप्ति की लगन लगी हुई है। इसी तरह से जो बन्दगी करने वाले होते हैं। उन्हें नाम धन इकट्ठा करने की लगन लगी होती है और वे सोचते रहते हैं कि उनका कोई भी स्वांस बिना नाम के व्यर्थ न चला जाये। मैं इतना नाम धन इकट्ठा करूं कि मैं नीचे न रह जाऊं। मेरा मानस जन्म व्यर्थ न चला जाये।

बाबा फरीद की घोर तपस्या करते-करते ऐसी अवस्था हो गई कि शरीर हड्डियों का ढांचा मात्र रह गया। सारा मांस सूख गया। उस समय आपके मन में थोड़ा सा इस प्रकार का विचार उठता है, ''हे प्रभु! तन तो सूख गया, खून भी सूखता जा रहा है, कहीं ऐसा न हो कि मुझे परमेश्वर मिले ही न? मेरे कैसे भाग्य हैं?'' अपने भाग्य को कोसते हुए इस प्रकार फ़रमान कहते हैं -

धारना - तन सुक्क के हड्डां दी मुट्ठी हो गया,
अजे वी न रब्ब बहुड़िआ - 2, 2
मेरे पिआरे, अजे वी न रब्ब बहुड़िआ - 2, 2
तन सुक्क के हड्डां दी मुट्ठी हो गया - 2

फरीदा तनु सुका पिंजरु थीआ तलीआं खूंडहि काग।
अजै सु रबु न बाहुड़िओ देखु बंदे के भाग॥

पृष्ठ - 1382

एक ओर कठिन तपस्या है तो दूसरी ओर शौक है कि जब तक परमेश्वर नहीं मिलता तब तक -

अगाहा कू त्राधि पिछा फेरि न मुहडड़ा॥ पृष्ठ - 1096

आगे पैर बढ़ाना है, पीछे नहीं लौटना -

जोबन जांदे ना डरां जे सह प्रीति न जाइ॥

पृष्ठ - 1379

यदि मेरा यौवन भी चला जाता है तो बेशक चला जाये, मुझे इसका भय नहीं है पर मुझे

मेरा प्यारा जरूर मिल जाये। इस तरह से आप तपस्या करते हैं। बाणी के अन्दर एक ऐसी अवस्था का फ़रमान है –

धारना – ओ कागा, एह दोए नैणां मत्त छेड़िओ -2, 2
मैनूं पिर देखण दी आस – 2, 2
ओ कागा, ...-2

कागा करंग ढढोलिआ सगला खाइआ मासु।
ए दुइ नैना मति छुहउ पिर देखन की आस॥

पृष्ठ – 1382

आपकी बाणी गुरू ग्रन्थ साहिब जी महाराज में जिज्ञासुओं को रास्ता बताने के लिये है कि प्यारे! ऐसे मत समझना, ठण्डा मत पड़ जाना। कमज़ोर मत पड़ जाना। हम कितने पौरुषहीन हो गये। कहते हैं, तुम्हारे लिये पाँच बाणियों का पाठ ही बहुत है? यही पूरा कर लिया करो। आनन्द साहिब की छह पऊड़ियां ही बता दीं। पर वह तो ऐसे कहता है कि जैसे कैपसूल होता है, ऐसे ही बाणी का भी कोई कैपसूल बना दो और एक कैपसूल खाते ही छुटकारा हो जाये। साध संगत जी! परमेश्वर ऐसे नहीं मिला करता। कठोर परिश्रम करना पड़ता है। जो परिश्रम करते हैं –

जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि।
नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि॥ पृष्ठ – 8

इस प्रकार का कठोर संघर्ष महाराज जी कर रहे हैं। वह तो पूर्ण हैं, आप ही परमेश्वर हैं, आपने सामने बातें हो चुकी हैं। अकाल पुरुष जो किसी को नज़र नहीं आता–

ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु॥

पृष्ठ – 7

वह गुरू नानक साहिब के सामने सांगोपांग हुए बातें कर रहा है, ''हे नानक! मैं पारब्रह्म परमेश्वर और तुम गुरू परमेश्वर।''

भारी करी तपसिआ वडे भागि हरि सिउ बणि आई॥
भाई गुरदास जी, वार 1/24

तप और तपस्या निरर्थक नहीं हुआ करतीं। निरर्थक वह होता है जो हठ पूर्वक किया जाये। या किसी रिद्धि-सिद्धि को प्राप्त करने के लिये किया जाये। जो प्यार से भर कर प्यारे के प्यार में आकर, जब वैराग में आ जाता है, तब ऐसी बहुत सी बातें हो जाया करती हैं। एक नहीं, अनेक महापुरुष करते हैं।

गुरू नानक पातशाह स्नान करके, रावी में खड़े हो गये, भाई लहणा जी के मन में विचार उठा और मन ही मन कहते हैं, ''अरे मन! तू किनारे पर बैठा रहता है और तेरा प्यारा पानी में खड़ा हुआ है। इतना ठण्डा पानी है कि हाथ भी नहीं लगाया जाता, ऊपर से ठण्डी-ठण्डी हवा चल रही है और तू किनारे पर बैठा है। तुझे भी चाहिये कि जैसे गुरू पानी में खड़ा है, तू भी ऐसे ही खड़ा हो जा।'' अतः आप भी पानी में घुस गये। थोड़ी देर बाद बेहोशी आ गई। महाराज जी ने एक दम बाहर निकाला, गर्मायश दी, सुरजीत किया और कहने लगे, ''पुरखा! यह क्या कर रहे थे?''

कहते हैं, ''पातशाह! आप इतनी कठिन साधनाएं, कठोर संघर्ष करते हो और मैं किनारे पर बैठा रहूँ? यह नहीं हो सकता।''

महाराज जी कहते हैं, ''पुरखा! ये जो कठोर साधनाएं मैं कर रहा हूँ, ये मैं अपने लिये नहीं कर रहा हूँ। यह धर्म का पन्थ है, जो इस रास्ते पर चलते हैं, उनके लिये पदचिन्ह बना रहा हूँ क्योंकि कलयुग का समय है। मनुष्य इतना पौरुषहीन हो जायेगा कि रजाई ओढ़ कर भी पाठ करेगा फिर भी वह ऊंघने लग जायेगा, उसे नींद आनी शुरू हो जायेगी।''

पहले तो रज़ाई नहीं छोड़नी, फिर नहाने से घबरायेगा। तो फिर तितिक्षा कैसे कर लेगा? अब हमारा जो सारा प्रचार है, हम कहते हैं कि महाराज जी ने हठ योग नहीं बताया। आपने जो हठ योग निरर्थक होता है, उसे बन्द किया है। साधना को बन्द नहीं किया। हठयोग में देखा जाये तो महिलाएं लंगर में भोजन पकाती हैं, जेठ का महीना होता है, गर्म हवाएं चलती हैं। कितनी भयंकर गर्मी पड़ रही होती है। यदि हठ की साधना न हो तो भोजन नहीं बन सकता कि हम तो सहज तप करेंगे। यदि ऐसा ही हाल रहा तो लंगर में भोजन नहीं बना सकेंगे। ऐसी बात नहीं कि बल्कि कठिन से कठिन सेवा सिक्खों ने की है।

महाराज जी कहते हैं, ''पुरखा! यह कठिन साधना मैं अपने लिये नहीं कर रहा।'' ऐसा फ़रमान करते हैं। पढ़ो प्यार से –

धारना - सिक्खां लई घालदा,
घालां इह करड़ीआं पिआरे - 2, 2
घालां इह करड़ीआं पिआरे - 2, 2
सिक्खा लई घालदा, ... -2

इस बात का सारे इतिहासों में उल्लेख है कि गुरू नानक पातशाह ने बहुत कठिन साधना शुरू कर दी थी। जब भाई लहणा जी से ये वचन सुने, ''पातशाह! आप ठण्डे पानी में खड़े हो और मुझे लगा कि मैं किनारे पर बैठा रहता हूँ अब मैं भी पानी में खड़ा क्यों न होऊं?'' यह सुन कर –

सुन बोले श्री प्रभ किरपाला।
हउ घालत जो घाल विसाला।
अनिक प्रकार जो तप करना।
सभ सिखन नित लखो अचरना॥

मुझे तप की जरूरत नहीं है। मैं तो आने वाले सिक्खों को बताना चाहता हूँ कि 70 साल की आयु में भी कितनी कठोर साधना की जा सकती है। गुरू अमरदास जी ने 71वें साल से लेकर 82वें साल तक कठिन साधना करके दिखाई थी। इस समय के दौरान एक सैकिण्ड के लिये भी नहीं सोये। दिन रात सेवा करते थे। कितनी महान पदवी प्राप्त की गुरू अंगद साहिब जी महाराज ने, कितनी कठोर साधनाएं कीं?

अत: गुरू नानक पातशाह कहते हैं, ''पुरखा! मैं यह साधना सिक्खों के लिये कर रहा हूँ।

ये सुस्त हो जायेंगे। कलयुग का समय आने वाला है, रज़ाई में बैठे-बैठे पाठ कर लिया करेंगे।''

अब तो और भी आसान हो गया, पहले से और भी अधिक सरल हो गया। टेप चला दो और आप सो जाओ।

जहाँ सुनते-सुनते नींद खुल गई, बस पाठ हो गया। दीवारों को पाठ सुनाते हैं, दिल को पाठ नहीं सुनाते।

गुरू नानक पातशाह कहते हैं, ''ऐसा समय आ जायेगा शरीर शिथिल पड़ जायेंगे पर साधना के बगैर कोई प्राप्ति भी नहीं होगी। ये सभी कठिन साधनाएं जितनी भी मैंने की हैं''

अनिक प्रकार जो तप करना।
सभ सिखन नित लखो अचरना॥

ये सभी हम सिक्खों के लिये ही कर रहे हैं -

जो मेरे महि सरधा धरही।
मन करि सबद कमावन करही॥

जो मुझ पर विश्वास करेंगे और श्रद्धा पूर्वक शबद की आराधना करेंगे, मन को टिका कर रखेंगे -

नानक पंथी जिन के नाम॥

जिन्हें नानक पंथी कहते हैं। साध संगत जी! हम ही नहीं हैं, सारा हिन्दुस्तान भरा पड़ा है। हम तो यहीं रह गये। यही ठीक नहीं होते। बाप ठीक हो जाता है तो लड़का ठीक नहीं होता, लड़का ठीक हो गया तो पोता ठीक नहीं होता। इस तरफ तो हम चले ही नहीं। पिता गिर जाता है, शराब पीने लग जाता है। हम तो यहीं तक ही सीमित रह गये। बाहर हमने किसी को क्या देना था? बाहर दूसरे धर्म वालों को देखो, ईसाई कहाँ तक पहुँच गये? सारी दुनियां में, सबसे ज्यादा ईसाई मत फैला दिया क्योंकि अकेला-अकेला ईसाई एक मिशनरी बना हुआ है। हम मिशनरी नहीं बनते। यदि हम बाहर जायेंगे तो उन्हें शराब पीकर दिखायेंगे और कहेंगे कि हमारे मुकाबले पर कोई पी नहीं सकता। लड़कर दिखायेंगे, उन्हें झगड़े करके दिखायेंगे।

सिक्खी का इतना महान ऊँचा आदर्श था कि आज सारा संसार सिक्खी में आ जाता क्योंकि यह सारी मानवता का सांझा आदर्श प्रस्तुत करता है। महाराज जी कहते हैं, जहाँ तक कोई जाता है, चलो उसको शाबाशी दी है। उसके आगे का रास्ता बता दिया महाराज जी ने, जहाँ पर पहुँचते ही सभी रूक गये। यदि मन्दिर में आरती करने की मनाही की गई तो महाराज जी ने आरती को बुरा नहीं कहा। महाराज जी कहते हैं कि इससे ऊपर एक और भी आरती है, उसे करना सीख लो। इसी तरह इस्लाम में नमाज़ पढ़ने को बुरा नहीं कहा बल्कि नमाज़ पढ़ते समय, उसमें भावलीन होने को कहा जैसे-

पहिला सचु हलाल दुइ तीजा खैर खुदाइ।
चउथी नीअति रासि मनु पंजवी सिफति सनाइ॥

पृष्ठ - 141

नमाज़ पढ़ो, पर ध्यान लगाकर पढ़ो। रोज़े रखो पर उसके महत्व को समझो। महाराज जी ने किसी भी कर्म को बुरा नहीं कहा। बल्कि हर कार्य में खरा उतरने को कहा है। यदि जनेऊ डालने को कहा है तो 'सत' का जनेऊ पहनने के लिये कहा है। इस तरह गुरू नानक पातशाह कहते हैं कि जिन्हें नानक पंथी कहते हैं –

नानक पंथी जिन के नाम।
वाहिगुरू जप रहित अकाम।
जो जम कउ नहि देखन पैहै।
सुख सो गति प्रापत तिन ह्वै है॥

इतना तप करके हमने बांट कर चले जाना है। बीस रूपयों का दान किया था, लंगर चलाया था। जब तक कलयुग रहेगा, गुरू नानक साहिब का चलाया लंगर बन्द नहीं होगा। दरगाह में से इतना ब्याज आ रहा है। लंगर की कमी वहाँ पर आती है, जहाँ हिसाब शुरू हो जाये कि आटा कितना आया है? दाल कितनी आई है? घी कितना बाकी पड़ा है? वहाँ पर लंगर बन्द हो जायेगा क्योंकि वह गुरू नानक का लंगर नहीं रहा। वह कमेटी का लंगर बन गया। जहाँ गुरू नानक पातशाह का लंगर है, वह अक्षय चलेगा –

देग तेग जग मै दोऊ चलै।
राख आप मुहि अउर न दलै॥ *(चौपई)*

देग और तेग दे दीं। देग दे दी अन्न की, तेग दे दी नाम की। नाम की तेग से काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार, ईर्ष्या, निन्दा, चुगली, वैर-विरोध, अन्दर के सारे दुश्मनों का खातमा हो जाता है। हर समय –

खालसा सो जो चढ़ै तरंग।
खालसा सो जो करै नित जंग॥

जो हर समय नाम के घोड़े पर सवारी करता है, कहते हैं, वह खालसा है। जो हर समय आन्तरिक शत्रुओं से जंग करता है, वह खालसा है।

ईसा जी ने दुनियां से जाते समय बेअन्त कष्ट सहन किये। फिर लोग कहते कि आप तो समरथ पुरुष हैं, फिर इतना कष्ट क्यों सहन कर रहे हो? वे बोले, ''मैं अपनी उमत के पाप लेकर जा रहा हूँ। एक जान बूझ कर करते हैं, एक अनजाने में गलती कर बैठते हैं, मैंने उन सभी पापों की सजा, अपने इसी शरीर में भोग कर जानी है।''

गुरू नानक पातशाह कहते हैं, ''इन्होंने सुस्त पड़ जाना है। इनके लिये हमने 20 रूपये दान के दिये, जिनसे आज तक लंगर चल रहे हैं। तप किया, हमारे जैसे जो पढ़ते ही नहीं और फेल होते हैं, उन पर भी रहमत कर दी। मरदाना और गुरू नानक पातशाह जा रहे हैं। जंगल खत्म ही होने में नहीं आ रहा। मरदाना कहता है, ''पातशाह! इतने सघन जंगलों में से चल रहे हैं और पता नहीं कितने दिन हो गये हैं, चलते-चलते?''

गुरू नानक पातशाह कहते हैं, ''तुझे खाने-पीने में तो कोई कठिनाई नहीं आती? जंगलों में

इतने फल फूल हैं, तू जी भर कर खाये जा।''

मरदाना बोला, ''पातशाह! इतने सघन भयंकर जंगलों में से आप गुजरते हो, किसी बस्ती के किनारे-किनारे चलो। उधर का रास्ता पकड़ लो।''

महाराज जी कहते हैं, ''मरदाना! वनों को बुरा मत कह। इन जंगलों में प्रभु के प्यारे बैठ कर, एक चित्त होकर, उसके साथ सुरत जोड़कर, आनन्द लूटते हैं। बड़े-बड़े ऋषि मुनि महात्मा जो आज तक हुए हैं, सभी ने जंगलों में जाकर कष्ट सहन किये, भक्ति की, एकान्त में बैठे, एकाग्र चित्त होकर प्रभु के दर्शनों की लालसा करते हैं।'' आपने फ़रमान किया-

देवतिआ दरसन कै ताई दूख भूख तीरथ कीए।
जोगी जती जुगति महि रहते करि करि भगवे भेख भए।
तउ कारणि साहिबा रंगि रते।
तेरे नाम अनेका रूप अनंता कहणु न जाही तेरे गुण केते॥ *पृष्ठ - 358*

सभी दर्शनों के लिये लालायित थे। ऐसे पढ़ लो -

धारना - दुख भुख ते पिआसां सहि के,
दर्शन तेरे लोचन मालका - 2, 2
दर्शन तेरा जी, लोचण मालका - 2, 2
दुख भुख ते पिआसां सहि के, ... -2

बड़ी-बड़ी तपस्याएं की, गुरू दशमेश पिता जी लिखते हैं -

इह बिधि करत तपसिआ भयो,
द्वै ते एक रूप होइ गयो॥

तेरे प्यार में रंगे हुओं ने ऐसी तपस्याएं की कि दो से एक बन गये -

तेरे नाम अनेका रूप अनंता
कहणु न जाही तेरे गुण केते।
दर घर महला हसती घोड़े .....॥ *पृष्ठ - 358*

घर भी छोड़ दिये। हाथी, घोड़े, सभी तेरे दर्शनों के लिये छोड़ दिये। भरथरी हरि राजा बड़े आराम से तख्त पर बैठा था। जब परमेश्वर से मिलने की लालसा उत्पन्न हुई, घर बार छोड़ दिया। जंगलों में चले गये। करपात्री अवस्था में चले गये। करपात्री उसे कहते हैं, जिसे यदि कोई खाना दे जाये तो खा लेता है, वस्त्र दे जाये तो पहन लेता है अन्यथा नंगा ही घूमता रहता है। बादशाह, राज्य का मालिक, कितने सुख साधन थे, पर अब परमेश्वर की प्राप्ति के लिये कहाँ-कहाँ जंगलों में मारा-मारा फिर रहा है। राजा गोपी चन्द ने पदमनी रानियों को छोड़ दिया था।

इब्राहिम आदम अफगानिस्तान का बलख बुखारे का रहने वाला था। आपके मन में परमेश्वर से मिलने का शौक पैदा हुआ। इतना सुखी था कि कहते हैं, सौ मन फूलों सेज बिछा कर सोता था। इसकी मालिन के मन में एक बार ख्याल आया कि मैं भी देखूं कि फूलों की सेज पर नींद कैसी आती है? वह पलंग पर फूल बिछाने के बाद लेट गई और लेटते ही तुरन्त नींद आ गई। उधर

इब्राहिम भी सोने के लिये आ गया और देखा कि आज तो मालिन मेरे पलंग पर सोई पड़ी है। उसने हन्टर उठा लिया और उसे मारना शुरू कर दिया। वह ज़ोर-ज़ोर से चीखें मारती है। उसके कपड़े फट गये। सारे शरीर में से खून बहने लगा। जब 8-10 हन्टर मारने के बाद, फिर हन्टर मारने शुरू किये तो प्रत्येक हन्टर के लगने पर रोती है, फिर ज़ोर-ज़ोर से हंसती है। इसने सोचा कि इसके हंसने में कोई न कोई रहस्य की बात होगी। उसने हन्टर रख दिया और बोला, ''मालिन तेरे रोने का कारण तो मेरी समझ में आ गया पर हंसने का रहस्य नहीं समझ में आया?''

मालिन बोली, ''महाराज! अगर जान बख्श दें तो मैं बताऊं।''

बादशाह बोला, ''हाँ जीवन दान दे दिया।''

मालिन बोली, ''महाराज! मैं कई सालों से आपकी सेज कर फूल बिछाती आ रही थी। मेरा मन यह कहता था कि इन फूलों पर कैसी नींद आती होगी? मैं बहुत थकी हुई थी, इसलिये लेट गई और मुझे नींद आ गई। पता नहीं दो मिनट, पाँच मिनट या घंटा लेटी रही, मुझे कुछ नहीं मालूम। हन्टर खाने तो स्वाभाविक ही थे, यदि मेरा गला भी काट दिया जाता तो भी कोई बड़ी बात न होती, क्योंकि मैंने गुस्ताखी की थी। अतः जब आप हन्टर से कौड़े लगाते थे, मैं रोती थी, दर्द होता था। यह देखो, सारे शरीर में से खून बह रहा है।''

बादशाह ने पूछा, ''फिर हंसती क्यों थी?''

मालिन बोली, ''मैंने मन से कहा, तू तो मान लिया मर जायेगी, कोई फर्क नहीं पड़ेगा। आप और कौड़े लगा लेंगे 50 या 100 कौड़े लगा देंगे? चमड़ी उधड़ जायेगी पर जो राजा कई सालों से इस पर सोता आ रहा है, उसे दरगाह में कितनी सजा मिलेगी?''

इतनी बात सुनते ही हन्टर नीचे रख दिया। आंखें खुल गई। अपना महल बेगाना लगने लग गया। अपना राज पाट पराया लगने लग गया। दरबार बुला लिया। वज़ीर, मन्त्री सभी बुला लिये, हृदय पर ऐसी चोट पड़ी, जिसे वैराग कहते हैं, तीव्र-तर-तम वैराग पैदा हो गया। नौ प्रकार का वैराग हुआ करता है और सबसे अन्तिम वैराग को तीव्र-तर-तम वैराग कहते हैं। बादशाह, मन्त्री को राज पाट, सभी कुछ सम्भाल कर कहता है, ''अब मैं तो अल्लाह की याद में जा रहा हूँ, उस अल्लाह ताला के दर्शन किये बिना वापिस नहीं लौटूंगा।'' इतना कहकर राजपाट छोड़कर चला आया। जगह-जगह खोजता फिर रहा है। कैलाश पर्वत पर भी गया, अन्त में घूमता-घूमता कबीर साहिब के पास आ पहुँचा।

कबीर साहिब कहते हैं, ''इब्राहिम! तुम राजा हो, मैं एक गरीब जुलाहा हूँ। मेरे घरवाले तो मेरी शिकायतें करते हैं कि हमें तो खाने के लिये चने देता है और यदि कोई अतिथि आ जाये तो उसके लिये रोटियां बनवा कर देता है। हमें कहता है, धरती पर सो जाया करो और उनके लिये चारपाईयां और सुन्दर सेजें बिछवाता है। मैं तो इतना गरीब हूँ और आप राजा हैं। हम दोनों की कैसे निभेगी?''

इब्राहिम बोला, ''महाराज! मैं गरीब से गरीब बन कर निभा लूंगा। आप कृपा करो।''

कबीर ने सेवा करने की इजाजत दे दी। इस तरह सेवा करते-करते छह साल बीत गये। एक दिन माता लोई जी कहती है, ''स्वामी! देखो, इसे छह साल बीत गये। सारा राज पाट छोड़कर आया है और आपने इसे अभी तक गुरू मन्त्र ही नहीं दिया।''

कबीर साहिब ने कहा, ''अभी यह पवित्र नहीं हुआ। इसके अन्दर मैल भरी पड़ी है।''

माता लोई बोली, ''कैसे पता चले कि इसके अन्दर मैल भरी पड़ी है?''

कबीर साहिब ने कहा, ''जब यह नहा कर आये तो तुम छत पर चढ़ कर, घर का कूड़ा कबाड़ इसके ऊपर फैंक देना। फिर जो कुछ यह बोले, मुझे बताना।''

माता लोई ने वैसे ही किया। वह नहा कर आ रहा था, उसके ऊपर एक दम कूड़ा फैंक दिया। उसके मुँह से अपने आप ही निकल गया, ''यदि मैं अपने राज में होता तो कूड़ा फैंकने का स्वाद चखा देता? क्या हुआ है बन्दगी करने आ गया, पर हूँ तो राजा ही? अभी मैंने राज पाट तो नहीं छोड़ा। मैं तो, परमेश्वर को मिलने आया हूँ।''

माता लोई ने सारी बात कबीर साहिब को बता दी। कबीर साहिब कहते हैं, ''लोई! अभी तो यह ज़िन्दा है। यह तो मुर्दों की राह है, जिन्दों की नहीं। मुर्दा जो होता है वह जीवित ही मरा हुआ होता है, फिर वह परमेश्वर के घर में ज़िन्दा हो जाता है। सदा के लिये अमर जीवन प्राप्त हो जाता है।''

छह साल और बीत गये। कबीर साहिब कहते हैं, अब कैसा लगता है?

माता लोई बोली, ''महाराज! मैं नहीं जानती। आप अपने आप ही देखो।''

कबीर साहिब कहते हैं, ''आज फिर कूड़ा फैंक देना।'' जब इब्राहिम नहा कर आ रहा था तो माता ने उसके ऊपर फिर कूड़ा फैंक दिया। उसने ऊपर नज़रें उठा कर देखा और बोला, ''माता! कितना उपकार कर दिया तूने मुझ पर। तूने तो मेरे ऊपर केसर बरसा दिया। सन्तों की धूलि मेरे ऊपर डाल दी। मेरे जैसे पापी पर इतनी कृपा!''

नाचने लग गया। वज़द में आ गया। तब माता लोई ने कबीर साहिब को जाकर बताया, ''वह तो नाचे जा रहा है, उसके तो धरती पर पैर नहीं टिकते। उसके अन्दर कोई ऐसी करन्ट (बिजली) पैदा हो गई है कि उसे कुछ पता नहीं चल रहा। उसका चेहरा एक दम लाल हो गया है।''

कबीर साहिब गये, जाकर एक दम गोद में भर लिया, उपदेश दिया -

जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी
तिसु गुरसिख गुरू उपदेसु सुणावै॥ ***पृष्ठ - 305***

उपदेश सुना देता है, जीव और ब्रह्म की एकता करवा देता है। सारी रिद्धियां-सिद्धियां दे दीं। एक दम पूरा बना दिया। महाराज जी कहते हैं, एक ऐसे हैं जो घर बार छोड़ कर गये -

दर घर महला हसती घोड़े छोडि विलाइति देस गए।

पीर पेकांबर सालिक सादिक छोडी दुनीआ थाइ पए॥

पृष्ठ - 358

दुनियां को छोड़ दिया। एक दुनियां में रहते हुए दुनियां को छोड़ना होता है। एक दुनियां से किनारा करके दुनियां को छोड़ना होता है -

साद सहज सुख रस कस तजीअले
कापड़ छोड़े चमड़ लीए॥ *पृष्ठ - 358*

फिर वे यह नहीं कहा करते कि सब्ज़ी में नमक और डाल दो, फिर वह यह नहीं कहते कि सब्ज़ी का घी में छोंक लगा दो। ये सभी बातें ज़िन्दा लोगों की हुआ करती हैं। जब दूसरी ओर से जीवित हो जाता है, फिर यह रस-कुरस छोड़ देता है। अन्दर ही इतना जबरदस्त रस होता है कि दुनियावीं रस की जरूरत ही नहीं रहती? सारे स्वाद छोड़ देता है। सुख भी छोड़ देता है। कपड़े पहनने भी छोड़ देता है, खालें पहन लेता है। इस तरह खालें पहन लीं -

दुखीए दरदवंद दरि तैरै नामि रते दरवेस भए॥

पृष्ठ - 358

नाम के प्यार में रंगे हुए, फिर लोग उन्हें दरवेश कहते हैं-

खलड़ी खपरी लकड़ी चमड़ी सिखा सूतु धोती कीन्ही॥ *पृष्ठ - 358*

हे साहिबा! तुझे रिझाने के लिये बेअन्त किस्म के भेष बनाये हैं -

तूं साहिबु हउ सांगी तेरा प्रणवै नानकु जाति कैसी॥

पृष्ठ - 358

मैं भी तेरा एक स्वांगी हूँ। स्वांग तो सभी होते हैं, सारे कपड़े उतार दो, यह भी एक भेष है। कपड़े पहन कर सिर पर पटका बान्ध लो, वह भी एक भेष बन जाता है, कुछ भी ऐसा कर लो, वही भेष बन जाता है।

गुरू नानक पातशाह कहते हैं, ''मरदाना! जंगलों की बुराई मत कर। इन्हीं जंगलों में बैठकर, प्रभु प्यारों ने बड़ी तपस्याएं की हैं और प्रभु के दर पर परवान हुए हैं।''

जिन्होंने भी कठोर साधनायें की, वे संसार के तारक जहाज बन गये -

धारना - जिन्हां घालीआं मुशकतां भारी,
दुनीआं उन्नां पिछे सुटती - 2, 2
पिआरिओ, दुनीआं उन्नां पिछे सुटती - 2, 2
जिन्हां घालीआं मुशकतां भारी, ... -2
जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि।
नानक ते मुख उजले केती छुटी नालि॥ *पृष्ठ - 8*

एक के बन्धन नहीं तोड़े, हज़ारों, लाखों, करोड़ों के बन्धन टूट गये। जिन्होंने कठिन साधनाएं की, नाम जपा, उनके पीछे चलकर उनके बन्धन छूट गये।

सन्त महाराज, बाबा अतर सिंघ जी मस्तुआणे वाले, आपको वैराग लग गया। आप छावनी में से नाम कटवा कर कुहाट छावनी से आ गये। पहले मन में यह धारण किया कि जहाँ पर गुरू

दशमेश पिता जी समाये हैं, नन्देड़ साहिब, वहाँ पर जाना है और पैदल ही जाना है। दिन रात नाम जपते हैं। शबद की सवारी ऐसी की कि सौ-सौ मील रोज़ पैदल चले जाते थे। जंगलों में से गुज़रते हुए वहाँ पहुँचे। वैराग बहुत था, लगन पूरी लगी हुई थी। आप जी ने वहाँ पर स्नान करके, छोटे-छोटे लगभग पौने दो सौ के करीब पत्थर रख लेने और जपुजी साहिब का पाठ शुरू कर देना। एक पाठ समाप्त होता तो आप एक पत्थर गोदावरी में फैंक देते। दूसरा पाठ पूरा होता, दूसरा पत्थर फैंक देते। इस तरह 175 पाठ जपुजी साहिब के रोज़ किया करते थे। वहाँ पर बैठ कर जपुजी साहिब के सवा लाख पाठ किये और एक साल सात महीने का समय लगाया। वहाँ से आप नगीना घाट चले गये। नगीना के बाद शिकार घाट गये। नगीना घाट में आपने सवा लाख पाठ किये। फिर जब शिकार घाट पहुँचे तो वहाँ पर भी तीन महीने रहे, पच्चीस हज़ार पाठ वहाँ पर किये, फिर आप कुहाट बन्नू की ओर आ गये। कल्लर कनोहे आये, वहाँ पर फुरना उठा कि अखण्ड साधना की जानी चाहिये। पहली बार चालीस दिन की साधना पर बैठ गये। न कुछ खाया, न पीया, बड़े यत्न किये। भोजन कम खाना पहले ही शुरू कर दिया। जब देखा कि भोजन किये बगैर कई दिन बीत गये फिर अरदास करके, अन्दर बैठ कर अखण्ड जाप में लग गये -

तिथै ऊंघ न भुख है .....॥ पृष्ठ - 1414

वहाँ पर न तो कोई ऊंघता है, न ही भूख लगती है। दोनों चीज़ें नहीं हुआ करतीं। पहली बार चालीस दिन तपस्या की। दूसरी बार फिर करने लगे तो जो सेवा किया करते थे उनमें एक माई भागभरी थी, एक वज़ीर सिंघ था। उन्हें कहते हैं, ''प्रेमियो! अब हमारा मन करता है, हम छह महीने किसी के साथ न बोलें।''

प्रेमी बोले, ''महाराज! कुछ थोड़ा बहुत खा पी लिया करो। शरीर पहले ही निर्बल हो गया है। चेहरा बेशक दग-दग करता है पर शरीर की हालत बहुत खराब होती जा रही है। कृपा करो। कुछ न कुछ खा लिया करो।''

जब उनका बहुत प्रेम देखा तो कहते हैं, ''अच्छा, फिर ऐसे किया करो। एक गिलास दूध का, तीसरे पहर एक गिलास ठन्डाई का, एक कटोरी दाल या सब्जी की रख जाया करो। यदि खा लिया तो ठीक, यदि न खाया तो, उठा कर ले जाया करो।''

छह महीने आप ऐसे ही करते रहो। इसके पश्चात आपने कहा, ''अब हमने एक साल नहीं बोलना।'' दोबारा एक साल के लिये फिर बैठ गये। ऐसी-ऐसी कठिन साधनाएं की नाम जपने वालों ने -

जिनी नामु धिआइआ गए मसकति घालि॥ पृष्ठ - 8

पंजाब का उद्धार कर दिया। सिक्खी का छींटा दे दिया। सन्त महाराज जी जब राड़ा साहिब ढक्की में आये तो उस समय आपने चार-चार फुट के गड्ढे खुदवा दिये। हुक्म यह था कि बन्दगी करनी है, सोना किसी ने नहीं है। सोने का समय केवल साढ़े ग्यारह बजे से डेढ़ बजे तक का था। उसके पश्चात उठो, उठ कर स्नान करो, फिर बन्दगी करो। सो आपने इसी तरह से बन्दगी की। नौ-नौ महीने के मौन व्रत रखे। साध संगत जी! मौन चार प्रकार का होता है।

पहला मौन होता है - मुँह से न बोलना। यह भी बहुत अच्छा है। निन्दा, चुगली, ईर्ष्या, फज़ूल बातों से मनुष्य बच कर शक्ति इकट्ठी कर लेता है पर इसमें एक बात यह देखी जाती है कि मनुष्य अपनी ज़रूरतें स्लेट या कागज़ या कापी पर लिख कर या इशारों द्वारा समझा कर पूरी कर लेता है।

दूसरा मौन होता है इन्द्रियों का। पहला मौन जो बताया है, वह बहुत अच्छा होता है यदि साथ और मौन रख लिया तो बहुत ही लाभदायक हो जाता है। इन्द्रियों के मौन से अभिप्राय है - नेत्रों से पर रूप को न देखना, कानों द्वारा किसी की निन्दा न सुनना, मन को वासनाओं से रोकना, हाथों द्वारा कोई बुरा काम न करना, पैरों द्वारा किसी बुरे स्थान पर चल कर न जाना, यह इन्द्रियों का मौन कहलाता है। कानों द्वारा हमने हरि यश श्रवण करना है।

तीसरा मौन मन का हुआ करता है। मन के मौन में किसी प्रकार का कोई फुरना नहीं उठने देना चाहिये। अफूर अवस्था में रहना है। यह सबसे कठिन मौन होता है। मौन तो रख लिया पर महाराज जी कहते हैं, मन का मौन बहुत ज़रूरी है।

चौथा मौन बुद्धि का हुआ करता है। उसमें ऐसा भाव रहता है कि जिधर भी देखता है, उधर ही परमेश्वर दिखाई देता है। परमेश्वर सत्य है और जगत नाशवान मिथ्या है। इस पाठ को याद करना। ऐसे उपदेश सभी सिघों को दिया करते थे और नौ-नौ महीने के मौन धारण किया करते थे तथा बहुत घोर तपस्या किया करते थे। पास ही नहर थी, पानी में जाकर खड़े हो जाया करते थे। पौष का महीना होता और आप पानी में जाकर खड़े हो जाते। पुल के गार्डर पर बिठा दिया करते थे और आप भी एक कपड़ा ओढ़ने के लिये रखते थे। खद्दर की हल्की सी चादर होती थी। सर्दी गर्मी हमेशा अपने पास वही खद्दर की चादर सी रखते थे और नहर के किनारे जाकर बैठ जाते।

एक बार मैंने प्रार्थना की, ''महाराज! आप का जीवन लिखने के लिये कहते हैं, मेरे पास चिट्ठी आई है।''

महाराज जी ने बताया, ''सन्तों के जीवन के बारे में किसी को पता नहीं होता, बस उन्हें स्वंय ही पता होता है।''

मेरे मुख से निकल गया, ''महाराज जी! आप जहाँ-जहाँ गये हो, वे तारीखें तो हमने अपने पास नोट कर ली हैं।''

महाराज जी ने कहा, ''यह सन्तों का जीवन नहीं हुआ करता जो कठिन साधना करते हैं, उनका पता नहीं चलता। वे गुप्त रूप में रहकर साधना करते हैं।'' स्वाभाविक ही आपके मुख से निकल गया, ''हमने नौ साल धरती पर पीठ नहीं लगा कर देखी।''

दुनिया सोते समय धरती के साथ पीठ लगाती है, पर महापुरुष कहते हैं कि हमने धरती को पीठ तक नहीं लगाई। एक-दो चार साल कह देना आसान है, लेकिन नौ साल का समय बिताना बहुत कठिन है। सो गुरू नानक पातशाह ने अपने गुरसिखों को कठोर साधना का उपदेश दिया था। अतः आपने खाना पीना बन्द कर दिया। पत्थरों की सेज पर पड़े रहते हैं। कई महीने बीत गये।

संगत बड़ी दूर-दूर से आती है, न्यारी कथाएं सुनती है। दर्शन नहीं होते। दूर ही बैठ जाती है। अन्त में काफी सारी संगत ने वहाँ पर निवास करना शुरू कर दिया और डेरा बाबा नानक की, वहाँ पर बीस हज़ार के करीब गिनती हो गई। बेअन्त भीड़ इकट्ठी होनी शुरू हो गई। जब सन्तों के आस पास जिज्ञासु हट जायें और भीड़ इकट्ठी होनी शुरू हो जाये फिर वे कोई कौतुक दिखाते हैं ताकि भीड़ भाग जाये।

कबीर साहिब के चौगिर्दे जब बहुत सी भीड़ इकट्ठी हो गई तो आपने एक कौतुक दिखाया। कबीर साहिब की एक वेश्या सेविका थी। उसे सभी पापों से छुटकारा दिलाकर पवित्र जीवन में ढाल दिया। उस दिन उससे कहा कि वह भी उनके साथ चले। उस वेश्या के साथ हो लिये, केश खोल दिये, गर्दन में दस्तार डाल ली, रंगदार बोतल हाथ में ले ली, थोड़ी-थोड़ी देर बाद मुँह से लगा लेते हैं और हल्ला-गुल्ला सा मचा देते हैं। सारे शहर में निन्दा होनी शुरू हो गई। वहाँ का राजा इनका परम सेवक था। उसे परखने के लिये आप वहाँ चले गये। उसके मन की दशा जानना चाहते थे। राजा ने इन्हें जब दूर से ही आते हुए देखा तो बहुत बुरा लगा। उसने पहले भी ये बातें सुन लीं थी, ''महाराज! तुम्हारा गुरू आज ऐसे करता फिर रहा है।'' चेले तो सही नहीं कर सकते। जो कच्चे शिष्य होते हैं, वे पहले हल्ले में भी झड़ जाते हैं। पक्के रह जाते हैं। कोई विरला होता है जो बच जाता है। सो जब कबीर साहिब दरबार में आए तो राजा ने उठकर इनका आदर मान न किया। अभी रानी ने फिर भी कहा, ''गुरू में दोष नहीं निकाला करते, गुरू निष्कलंक होता है। महाराज! कोई कौतुक कर रहे हैं। आप इन्हें गलत मत समझो।''

राजा बोला, ''यह देखो, मेरे सामने ही वेश्या की बाजू पकड़ी हुई है, केश खुले हुए हैं, शराब की बोतल हाथ में पकड़ी हुई है।''

जब कबीर साहिब और निकट आ गये तो राजा कहता है, ''कबीर, तू तो जुलाहे का जुलाहा ही रहा, मैंने तो तुझे ऐसे ही गुरू बना लिया। यदि मुझे ऐसा पता होता कि अभी तक तेरे मन से वेश्या का विचार नहीं गया और शराब भी पी लेता है और आज दिल खोल कर पी ली है तो मैं तुझे कभी भी गुरू न बनाता। मैं तेरा मान नहीं करता।''

कबीर साहिब ने शराब वहीं पर ही बिखेर दी। राजा को दुर्गन्ध आई और कहता है, ''यह क्या किया? तूने मेरा गलीचा खराब कर दिया।''

कबीर साहिब कहते हैं, ''हमने गलीचा खराब नहीं किया, बल्कि मन्दिर की आग बुझाई है। जगननाथ पुरी के मन्दिर को आग लग गई थी। जाओ, पता करके देख लो।'' इतना कहकर कबीर साहिब चले गये।

रानी ने राजा से कहा, ''महाराज! सवार भेजो, जाकर पता करके आए।''

सवार गये, उन्होंने जाकर वहाँ के पण्डितों से पूछा, उन्होंने बताया कि अचानक आग लग गई थी। ऐसा लगता था कि अब यह मन्दिर नहीं बचेगा। परन्तु हैरानी की बात है कि एक दम सारी की सारी अचानक ही बुझ गई। जब राजा को आकर सवारों ने बताया तो उसे बहुत पश्चाताप हुआ।

इसी तरह से गुरू नानक पातशाह के चारों ओर भीड़ इकट्ठी होनी शुरू हो गई। गुरू नानक पातशाह नहीं चाहते थे कि ऐसे तमाशबीन लोग इकट्ठे हो जायें। जहाँ सन्त होते हैं, वहाँ भीड़ कम हुआ करती है। जब चले जाते हैं तो बेअन्त दुनियां इकट्ठी होनी शुरू हो जाया करती है, फिर केवल सिर ही झुकाते रहते हैं, सिद्धान्त हट जाया करता है। पहले जैसी बात नहीं रहती, फिर तो मेले बन जाया करते हैं। दुनियां मेला देखने आया करती है कि कितना बड़ा इकट्ठ है? कौन-कौन बोलता है? अमुक का बोल बहुत अच्छा है, अमुक का बोल अच्छा नहीं है। रूहानी मार्ग दर्शन प्राप्त करने के लिये नहीं आया करते। महाराज जी ने हुक्म कर दिया कि अब लंगर एक वक्त मिला करेगा। जब एक वक्त लंगर मिलना शुरू हुआ तो कुछ ही दिनों बाद, हज़ारों लोग चले गये यह कह कर कि यहाँ कौन भूखा मरेगा? जब कम हो गये तो महाराज जी ने हुक्म कर दिया कि अब एक दिन लंगर की छुट्टी और एक दिन चला करेगा। ऐसे ही शुरू हो गया फिर कुछ और भी अपने-अपने घरों को चले गये। फिर महाराज जी ने कहा कि अब दो दिन लंगर बन्द रहा करेगा और तीसरे दिन केवल एक पहर मिला करेगा। जो बचे-कुचे थे, वे भी चले गये। जो अब थोड़े से अभी भी बच गये थे, महाराज जी ने उन्हें कहा कि हल चलाओ। इधर भूखे हैं, उधर हल चलाते हैं। दो दिन खाने के लिये भी कुछ नहीं मिलता था। बाहर दरिया का पानी पी-पी कर गुज़ारा किया करते थे। आपने गेहूँ बिजवा दी। जब गेहूँ पक कर तैयार हो गई तो महाराज जी ने कहा इसे काटकर इसकी ढेरियां लगवा दो। उन्होंने सारी गेहूँ की ढेरियां लगवा दीं। संगत ने कहा, ''महाराज जी! अब इसकी गहाई करें।'' महाराज जी कहते हैं, ''लंगर में से आग लेकर आओ।'' आग लाई गई और महाराज जी ने हुक्म दे दिया, सभी ढेरियों को आग लगा दो। कई तो झिझक गये, पीछे हट गये कि अन्न को जलायें? इतना बुरा काम हम करें? पता नहीं महाराज जी को क्या हो गया है कि अन्न को जला रहे हैं? अभी तो बहुत मेहनत के साथ खेती करवा रहे थे, स्वंय खेतों में जाकर खड़े होते थे, अब यह काम करने लग गये। उस समय महाराज जी की इस क्रिया को कोई न समझ सका। थोड़े से सिक्ख निकले जिन्होंने सभी ढेरों को आग लगा दी और महाराज जी ने ऐसा स्वांग शुरू कर दिया। इसके बाद आपने फिर भोजन करना शुरू कर दिया पर आपने क्रिया बदल दी। हाथ में एक कुतका ले लिया जिसे आम बोली में घोटना भी कहते हैं - नमक घोटना। जो सिक्ख शीश झुकाता है, इसकी पीठ पर जोर से मार देते और कहते, ''जा, जा, गुरू-गुरू करो। जा, भाग जा घर को।'' साध संगत जी! इसे कसौटी कहते हैं। जब सन्त या गुरू कसौटी लगा दें तो हर आदमी उसे सहन नहीं कर सकता। कोई विरला होता है जिसने मरना कबूल किया होता है जो गुरू की कब्र में समा गया होता है।

मुरदा होइ मुरीद न गली होवणा॥

भाई गुरदास जी, वार 3/18

वह भी गुरू की कृपा के कारण कसौटी पर खरा उतर सकता है, अन्यथा कसौटी सहन नहीं हो सकती -

धारना - जदों लगदी है राम कसौटी,
पास हुंदे मरजीवड़े - 2, 2
मेरे पिआरे, पास हुंदे मरजीवड़े - 2, 2

जदों लगदी है राम कसौटी, ...-2

कबीर कसउटी राम की झूठा टिकै न कोइ।
राम कसउटी सो सहै जो मरजीवा होइ॥ पृष्ठ - 948

कसौटी या परीक्षा कह लो। बच्चा पढ़ता है। साल भर पढ़ता है। अगली कक्षा में जाने के लिये परीक्षा पास करनी पड़ती है। परीक्षा देने के बाद ही पता चलता है कि पास है या फेल। कितने अंक लेकर पास होता है? गुरमत में तो 100 के 100 नम्बर लेने वाला पास होता है, 99 वाला भी फेल माना जाता है। सबसे कठिन कसौटी पार करना है। कसौटी इसलिये लगाई जाती है ताकि खरे और खोटे का पता चल जाये क्योंकि मनुष्य के अन्दर खरापन और खोटापन दोनों ही होते हैं। कसौटी लगाने पर, गर्म करने पर, ज्यों-ज्यों सोने को तपाते हैं, त्यों-त्यों वह शुद्ध सोना बनता जाता है। इसी तरह सिक्ख पर जब कसौटी लगती है, उस समय सिक्ख निखरता है, प्रकट होता है, उसकी सुगन्धि सारी दुनियां में फैलती है, वह उन्नति करता है।

सो गुरू पातशाह ने कसौटी लगा दी। एक दो सिक्ख नहीं थे, हज़ारों की संख्या में थे। ऐसा लिखा हुआ है कि 20 हज़ार इकट्ठे हो गये थे, फिर बेअन्त झड़ गये। भीड़ कम हो गई। गुरू महाराज जी के प्रति अश्रद्धा के भाव दिखाने लग गये और कहते, ''हैं! यह क्या हो गया?'' क्योंकि जमाल तो देखा था पर जलाल नहीं देखा था। जलाल वाला रूप धारण कर लिया -

धाणक रूपि रहा करतार।। पृष्ठ - 24

मैले कपड़े पहन लिये - शिकारियों वाला भेष बना लिया, गले में छुरा लटका लिया, साथ कुत्ते ले लिये कन्धे पर एक कुतका रख लिया। जो सिक्ख पास जाकर नमस्कार करता, तपाक से उसकी पीठ पर पड़ता और साथ ही साथ कहते, ''भाग जा यहाँ से, यहाँ क्या करता है?'' सभी हैरान हैं कि ये वही गुरू साहिब हैं, जो प्यार की मूरत थे, स्वंय ही प्यार थे, प्यार से सभी को बुलाते थे। यह क्या हो गया? कोई दिमाग में फर्क पड़ गया है। गुरू साहिब को क्या हो गया है? पानी में खड़े रहे हैं, इसलिये कुछ फर्क पड़ गया है। उस समय अश्रद्धक विचार पैदा होने शुरू हो गये, पर थोड़े से सिक्ख इन बातों से अभी भी बचे हुए हैं।

आज महाराज जी, बहुत ही जलाल में खड़े हैं जो भी पास आता है, उसे दौड़कर मारते हैं। जब तक वह भागता नहीं, तब तक पीठ पर मारे चले जाते हैं। जब बाबा बुड्डा जी पास गये और आपने कुतका मारा तो पास ही वृक्ष था, एक दम वृक्ष की ओट में छिप गये। महाराज जी इधर हुए तो आप उधर हो गये। पर कुतका सहन न कर सके। भाई साधारन, भाई भगीरथ, भाई मनसुख तथा अन्य गुरसिख जो बहुत नज़दीक थे, बचे हुए हैं। महाराज जी के कुतके की मार से दूर खड़े हैं। महाराज जी कहते हैं, ''तुम यहाँ से जाते क्यों नहीं? जाओ यहाँ से, सारे चले जाओ।'' आखिर नमस्कार की और चले गये। रास्ते में बातें करते जा रहे हैं कि महाराज जी को क्या हो गया? खूब अच्छे खासे थे। फिर भाई लहणा जी अकेले रह गये।

महाराज जी कहते हैं, ''लहणा! तूने नहीं जाना।'' दो चार कुतके जमा दिये और कहते हैं, ''जा, जाता क्यों नहीं? हुक्म क्यों नहीं मानता? तुझे डर नहीं लगता?''

उस समय आपने बड़ी विनम्रता पूर्वक प्रार्थना की, कहने लगे, ''पातशाह! वह भी तेरा रूप है और यह भी तेरा रूप है। मैं अनजान हूँ, मुझे नहीं पता चलता।'' इस तरह से फ़रमान करते हैं –

धारना – मैं की जाणा ओ, तेरी सार नूं – 2, 2
तूं तां किहड़िआं रंगां दे विच खेडदैं – 2, 2
तूं तां किहड़िआं रंगां दे विच खेलें मालका,
तेरी सार नूं, मैं की जाणा ओ, ...॥

आपे हरि इक रंगु है आपे बहुरंगी।
जो तिसु भावै नानका साई गल चंगी॥ पृष्ठ – 726

कहते हैं, ''पातशाह! यह भी तेरा रूप है, वह भी तेरा रूप है।''

ज़ोर से कुतका मारा और कहते हैं, ''तू नहीं जायेगा?'' सिर झुका दिया, ''पातशाह! यदि आपका हुक्म है जाने का, तो मैं हुक्म की पालना करने के लिये चला जाता हूँ। हुक्म मानता हूँ।''

आप धर्मशाला में लौट आये जहाँ पर सभी सिक्ख बैठे इन्तज़ार कर रहे थे। देखना चाहते थे कि भाई लहणा के साथ कैसा व्यवहार होता है?

जब लहणा जी आये तो सभी ने पूछा, ''भाई लहणा! फिर क्या हुआ? गुरू नानक पातशाह ने तुम्हारे साथ कैसा व्यवहार किया?''

भाई लहणा जी कहते हैं, ''गुरसिखो! ऐसी बात मन में मन विचारो। गुरू की शाबाशी, थपकी, गुरू का कुतका एक ही हुआ करता है। हमारी भलाई इसी के अन्दर है कि गुरू चाहे झिड़कियां दें, चाहे प्रशंसा करे, चाहे धक्के मारे या प्यार से पास बुलाए, दोनों बातें एक समान हुआ करती हैं। दोनों में ही गुरू का रस हुआ करता है –''

धारना – जे गुरू झिड़के तां मीठा लागे,
बखशे गुर वडिआई ऐ – 2, 2
बखशे गुर वडिआई ऐ – 4, 2
जे गुर झिड़के तां मीठा लागे, ...-2

भाई लहणा जी कहते हैं, ''प्यारे! यह भी गुरू महाराज जी की बख्शीश ही समझो। पहले जब प्यार की थापी लगाया करते थे, प्यार की बातें किया करते थे, वह भी बडप्पन है, दोनों को एक समान समझो।''

जे गुरु झिड़के त मीठा लागै
जे बखसे त गुर वडिआई॥ पृष्ठ – 758

जे सुखु देहि त तुझहि अराधी
दुखि भी तुझै धिआई॥ पृष्ठ – 757

पास बिठा ले तो भी पातशाह! तेरी आराधना करनी है –

जे पासि बहालहि ता तुझहि अराधी

जे मारि कढहि भी धिआई॥ पृष्ठ - 757

केतिआ दूख भूख सद मार।
एहि भि दाति तेरी दातार॥ पृष्ठ - 5

यह भी तेरी दात ही है। इस स्थान पर पहुँचना बहुत कठिन है -

जे लोकु सालाहे ता तेरी उपमा
जे निंदै त छोडि न जाई।। पृष्ठ - 757

यदि सारी दुनियां भी निन्दा करने लग जाये तो भी गुरसिख गुरू को नहीं छोड़ा करता। सारी दुनियां प्रशंसा किये जाये तो कहता है, ''गुरू का बड़प्पन है।'' इस तरह से समझाया। भाई लहणा जी कहते हैं, ''गुरसिखो! पीठ दिखाकर मत भागो, गुरू को पीठ दिखाकर भागना ठीक नहीं होता। प्यार की थपथपी का अपना रस था और कुतके का भी अपना रस है। बख्शीश तो गुरू कर ही रहा है।''

एक बार बाबा राम सिंघ नामधारी, आपके एक सौ मस्ताने हो गये और कई खुली बातें कर लेते। उनकी शिकायत हो गई। बाबा जी ने बुलाकर समझाया, पर मानते नहीं थे फिर आपने एक लाठी उठा ली और सभी को एक पंक्ति में खड़ा कर लिया और मरना शुरू कर दिया। एक तरफ से मारते हैं तो मरजीवड़े सिक्ख दूसरी तरफ का हिस्सा आगे कर देते हैं। कहते हैं, ''हे सतगुरू! इधर के पाप भी झाड़ दो।'' इधर मारते तो पीठ कर लेते और कहते इधर के भी पाप झाड़ दो। अब छाती के, महाराज, यह मुँह रह गया। आखिरकार मारते-मारते डण्डा ही टूट गया और डण्डा ले लिया वह भी टूट गया। पर वे पीछे नहीं हटे। कहते हैं, ''इनका भोजन पानी बन्द, लंगर में से नहीं देना।''

तीन दिन बीत गये। वहीं पर बैठे-बैठे वाहिगुरू-वाहिगुरू करते रहे। मन में कोई शिकवा नहीं, कोई उलाहना नहीं देते कि हमें इतनी मार पड़ी है और आपने रोटी भी बन्द कर दी। तीन दिन आपको (बाबा राम सिंघ जी को) भी बीत गये आपने भी भोजन न किया। फिर सारे प्रेमी इकट्ठे हुए और कहने लगे, ''बाबा जी! आप भी रोटी नहीं खा रहे क्योंकि आपके अन्दर इनके प्रति प्यार है। ये मस्ताने आपके साथ प्यार से बन्धे हुए हैं। अत: आप हुक्म दीजिये हम इन्हें भोजन खिलायें।'' हुक्म दे दिया कि इन्हें भोजन खिलाओ, जब उन्हें लाया गया तो पता नहीं जो दर्द हो रहा था, कहाँ गायब हो गया? भोजन खा लिया।

भाई लहणा जी कहते हैं, ''गुरसिखो! दोनों ही वरदान हैं। यदि वे कुतका मारते हैं तो भी बरकत है, यदि वे प्यार से थपकी देते हैं तो उसमें भी भलाई है। दोनों को समान समझो।''

इस तरह से संगत के दिल को हिम्मत बन्धा रहे हैं पर गुरू नानक साहिब बहुत भयानक रूप धारण किये हुए बैठे हैं।

अब समय इज़ाज़त नहीं देता। यहीं पर समाप्ति करते हैं। अब सारे प्रेमी आनन्द साहिब में बोलो, जो अभी तक नहीं बोले वे भी अपनी रसना पवित्र कर लें।

- आनन्द साहिब -
- गुर सतोतर -
- अरदास -

शान.....।

सतिनाम श्री वाहिगुरू,
धंन श्री गुरू नानक देव जी महाराज!

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥

पृष्ठ - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥

पृष्ठ - 289

साध संगत जी! आप दूर दराज़ से बहुत तपस्या करते हुए, यहाँ गुरू दरबार में पहुँचे हो। पूरा-पूरा फल तभी प्राप्त होता है यदि मन में श्रद्धा हो, हृदय में नम्रता हो। कानों से गुरू की बाणी श्रवण करो, बुद्धि से विचार करो, विचार करके हृदय में धारण करो और जब बारी आये तो गर्ज़-गर्ज़ कर शबद में बोलो। फल कितना होगा -

कई कोटिक जग फला सुणि गावनहारे राम॥

पृष्ठ - 546

ये जो विघ्न मुझे बताते हो कि ऐसा नहीं होता, वैसा नहीं होता, हरि यश पूरे प्रेम के साथ कर लो बीमारी भी खत्म, विघ्न भी खत्म क्योंकि जो सुनते हैं और गाते हैं, उनके पुण्य इतने बढ़ जाते हैं कि उन पुण्यों से जो छोटे मोटे विघ्न हैं, वे ऐसे हट जाते हैं जैसे नदी में पानी बहुत आ जाये, तो वह सभी कुछ बहा कर ले जाता है। इसलिये शबद में सभी प्रेमी बोला करो।

धारना - मेरा सुंदर सुआमी जी,
पिआरिओ मैं चरनां दी धूड़ी - 2, 2
मैं चरनां दी धूड़ी पिआरे - 2, 2
मेरा सुंदर सुआमी जी, ... -2

हउ बिसमु भई जी हरि दरसनु देखि अपारा।
मेरा सुंदरु सुआमी जी हउ चरन कमल पगछारा।
प्रभ पेखत जीवा ठंढी थीवा तिसु जेवडु अवरु न कोई।
आदि अंति मधि प्रभु रविआ जलि थलि महीअलि सोई।
चरन कमल जपि सागरु तरिआ भवजल उतरे पारा।
नानक सरणि पूरन परमेसुर तेरा अंतु न पारावारा॥

पृष्ठ - 784

धारना - हरि के सेवक जो हरि भाए,
तिन की कथा निरारी रे - 2, 2
तिन की कथा निरारी रे - 4, 2

हरि के सेवक जो हरि भाए, ... -2

हरि के सेवक जो हरि भाए तिन की कथा निरारी रे।
आवहि न जाहि न कबहू मरते पारब्रहम संगारी रे॥

पृष्ठ - 855

साध संगत जी! गर्ज कर बोलना सतनाम श्री वाहिगुरू। कारोबार संकोचते हुए आप दूर दराज़ से, फरीदकोट से, सतलुज के किनारे से, माछीवाड़ा, अम्बाला, यू. पी. आदि से इस पवित्र स्थान पर, जहाँ हर समय भजन होता रहता है, लगातार अखण्ड पाठ हो रहे हैं - वाहिगुरू मन्त्र, मूल मन्त्र, जपुजी साहिब तथा गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अखण्ड पाठ हो रहे हैं, सभी दुखों तथा क्लेशों को दूर करने वाले पवित्र स्थान पर आप पहुँचे हो। थोड़ा सा समय जो हमें मिला है, उसे मन चित्त लगाकर, एकाग्र होकर श्रवण करो, हमें बहुत बढ़िया मार्ग दर्शन मिल जायेगा। सिक्खी पालन करने का पता चल जायेगा। कोई दो महीने पहले 6 मई से एक विचार शुरू हुई थी। वह यह थी कि गुरू अंगद साहिब महाराज, जिनका पूर्वला नाम भाई लहणा था। आप आए तो धुर से पूरे ही थे पर सिक्खी पालना और साधना के लिये थोड़ा सा पर्दा धारण किया हुआ था। आप जी उनकी कथा श्रवण कर रहे हो। जिन्होंने पहले नहीं सुना, उन्हें मैं संक्षेप में प्रार्थना करता हूँ कि गुरू अंगद साहिब जी महाराज, जिनका नाम भाई लहणा था, आप देवी के उपासक थे। पूरा सतगुरू नहीं मिला था। जब पूरे सतगुरू का पता चला और आकर एक ही बार दर्शन किये अपना सभी कुछ गुरू के चरणों पर अर्पण कर दिया। कुछ भी बाकी न रखा। उन्हीं के ही हो गये।

वहीं पर रहकर आप सेवा करते हैं। सेवा करते-करते कई साल बीत गये। गुरू नानक पातशाह जी की वृत्ति उन दिनों ऐसी है कि जिसे देखकर और सुनकर हैरानी होती है कि महाराज जी ने कितना तप किया। आप सारा दिन, सारी रात रावी के किनारे घूमते रहते हैं, बैठते नहीं हैं, आराम नहीं करते, सोते नहीं क्योंकि सोना तो हमारे हिस्से में आया हुआ है। महापुरुषों के हिस्से में सोना नहीं हुआ करता। वे तो सदा जागते ही हैं। संसार सोया करता है, गुरमुख हमेशा जागते हैं। मनमुख सोये पड़े हैं। जागते हुए भी सोये पड़े हैं। सोये हुए भी सोये पड़े हैं।

महाराज जी के साथ ही भाई लहणा जी रहते हैं। महाराज जी ने बहुत कड़ी साधना की थी -

रेतु अक्कु आहारु करि, रोड़ा की गुर कीअ विछाई॥
भाई गुरदास जी, वार 1/24

बड़ी कठिन तपस्या आखिर में शुरू कर दी। वह इसलिये की, कि हमें पता चल जाये कि सिक्खी पालन करना ऐसे आराम परस्ती का काम नहीं है, इसके अन्दर साधना, तपस्या, त्याग, अपना आपा कुर्बान करना पड़ता है। वह उपदेश देने के लिये आप सारी-सारी रात, अमृत बेला से लेकर पहर रात तक पोह माघ की ठण्ड में भी पानी के अन्दर रावी में खड़े रहते थे। भाई लहणा जी बाहर बैठे रहते थे। इस तरह की कठिन साधना करते-करते गुरसिक्खी इतनी ताकतवर हो गई, इतनी जबरदस्त हो गई कि ऐसा लगता था कि सभी पहुँचे हुए हैं, कोई भी कम नहीं। न भाई मनमुख जी,

न बाबा बुड्ढा जी, न भाई भगीरथ जी, न भाई सधारन जी, न भाई कमलिया जी, न भाई दुनीचन्द जी, सभी एक से बढ़कर एक थे। जब बड़े बच्चे बड़ी कलासों में चले जायें तो पेपर भी बड़ा मुश्किल डाला जाता है। छोटी जमातों में तो पर्चा भी बड़ा आसान होता है।

गुरू नानक पातशाह ने धर्म पंथ चलाने के लिये यह देखने के लिये कि पूरा कौन है, बेशक आप जानते थे पहले दिन ही कह दिया था, ''अच्छा भाई! तू लहणा (लेनदार) हमने तेरा देना।'' सिक्खी सिरे पर पहुँच गई। एक को छांटना था, जिसके अन्दर गुरू महाराज अपनी ज्योति को टिका सकते। छोटे-मोटे शरीर में महाराज जी की ज्योति नहीं टिकनी थी। जो जीव 'जीवकोटि' से ऊपर उठकर 'ईश्वर कोटि' में पहुँचा, उसके अन्दर सत्ता नहीं होती कि 'ईश्वर कोटि' की ज्योति अपने अन्दर समा ले। भाई लहणा जी धुर दरगाह से भेजे हुए ईश्वर कोटि के, जिस तरह गुरू नानक महाराज जी थे, ठीक वैसे ही आप थे, पर अभी पर्दा पड़ा हुआ था। गुरू नानक साहिब को पता था कि यदि उनकी ज्योति टिकनी है तो इन्हीं के अन्दर टिक सकती है और किसी में समर्थ नहीं है। स्कूलों में भी परिक्षाएं होती हैं। रूहानी जगत में भी इम्तहान होते हैं। जो सियाना गृहस्थी है, वह भी अपने बच्चों की परीक्षा लेता है कि कौन सा बच्चा योग्य है और कौन सा योग्य नहीं है?

आप जी ने हुक्म दिया कि लंगर एक समय बांटा जाये बीस हज़ार गुरसिख संगत, गुरू नानक पातशाह के पास डेरा बाबा नानक में रहती थी। उस समय लंगर एक वक्त का कर दिया। जिन्हें दो तीन बार दिन में खाने की आदत थी केवल रोटियां खाने के लिये ही इकट्ठे हुए थे, वे जगह छोड़कर जाने शुरू हो गये। किसी को कोई काम याद आ गया, किसी को कुछ हो गया भाव खिसकने लग गये। थोड़े से रह गये। संख्या कम हो गई, वैसे भी महापुरुष संख्या को पसन्द नहीं करते। Quality गुणों, खूबियों को पसन्द करते हैं। Quantity बहुलता, संख्या को पसन्द नहीं करते। वे संख्या को नहीं देखा करते कि कितने आये हैं, वे तो यह देखा करते हैं कि इनमें से कितने पहुँचे हुए हैं? कितने ऐसे हैं जिन्होंने माया के चक्कर को पार कर लिया है? थोड़े से रह गये। फिर गुरू महाराज जी ने हुक्म कर दिया कि अब एक दिन छोड़कर लंगर चला करेगा। और भी छोड़कर चले गये फिर हुक्म हुआ कि दो दिन के बाद एक दिन लंगर चलेगा। और भी कम हो गये। सैकड़ों की संख्या में रह गये फिर गुरू पातशाह ने हुक्म दे दिया कि लंगर रोज़ चलेगा, खेती करो, ताकतवर बनकर काम करो। बेअन्त हल बना लिये क्योंकि डेरा बाबा नानक का चक्क हज़ारों एकड़ को बुवाई जुताई कर डाली। फसलें बो दीं, गेहूँ का बीज डाल दिया। सभी के सभी बढ़ चढ़ कर मेहनत के साथ अपने-अपने खेतों की देखभाल कर रहे हैं। जब फसल कट कर तैयार हो गई तो महाराज जी ने यह देखना चाहा कि इनके अन्दर हुक्म मानने की कितनी शक्ति है? महाराज जी ने हुक्म दिया, ''एक जगह इकट्ठी करके ढेर लगा दो।'' जब जगह-जगह पैड़ (ढेर) लगा दिये फिर पूछा, ''महाराज! खलियान बना दे?'' कहते हैं, ''नहीं, इन सभी को आग लगा दो। कोई पैड़ नहीं छोड़ना, सब को आग लगा दो।'' सारे हैरान कि बड़ी मेहनत से तो गेहूँ उगाई है, हज़ारों एकड़ जमीन में गेहूँ बोई गई है, दिन-रात एक करके, गोड़ाई की, सिंचाई की, कटाई की। यह आशा रखते थे कि हमारे खेत में अधिक से अधिक फसल हो और गुरू महाराज जी देखकर कहें, ''वाह भाई वाह! शाबाश, पर यह कैसा हुक्म कर दिया, महाराज जी ने, गेहूँ के ढेरों को आग लगा दो।'' कुछ तो पीछे हाथ करके

खड़े हो गये। थोड़े से उनमें से निकले, जिन्होंने उसी समय आग लगा दी। महाराज जी ने देख लिया कि हुक्म मानने में कुछ कामयाब हैं, इनके अन्दर त्याग भी है पर अभी परीक्षा खत्म न हुई।

कुछ दिनों के पश्चात आप जी ने ऐसी क्रिया की कि एक झौंपड़ी में रहना शुरू कर दिया। पत्थरों की सेज बिछा ली, किसी को अपने पास नहीं फटकने देते यदि कोई पास आता है और शीश झुकाता है, तो कन्धे से पकड़ कर पीछे धक्का मारते हैं और कहते हैं, ''अरे भले आदमी, गुरू गुरू जप। मेरे पास क्या करने आया है? चल यहाँ से?'' सभी हैरान हैं कि महाराज जी का रवैया तो एक दम बदल गया। पहले गेहूँ को आग लगवा दी, अब धक्के मारने शुरू कर दिये। अन्त में नौबत यहाँ तक आ गई कि गुरू महाराज जी ने एक कुतका जिसे घोटना कहते हैं, जिधर से उसे पकड़ते हैं, वह हिस्सा तो पतला होता है और दूसरा हिस्सा भारी होता है। वह कुतका हाथों में ले लिया। अब जो भी सिक्ख शीश झुकाने आता है और जब शीश नंवाता है तो महाराज जी पीठ पर पूरे ज़ोर से कुतका मारते हैं। सभी हैरान होते हैं कि महाराज जी ने यह कैसा काम शुरू कर दिया। उस समय काफी सिक्खों का निश्चय डगमगा गया और कहते हैं, ''महाराज जी! दिन रात जागते रहे हैं, चलते रहे हैं, इसलिये महाराज जी के दिमाग में कुछ फर्क पड़ गया है। श्री चन्द से बातें करते हैं, बाबा लखमी दास से बातें करते हैं, माता जी से बातें करते हैं कि महाराज जी को क्या हो गया? कहते हैं, कुछ पता नहीं चलता, उम्र काफी हो गई है, शायद कुछ दिमाग में फर्क पड़ गया हो, पर गुरू पातशाह की रूप रेखा को देखकर कोई कुछ कह नहीं पा रहा। भय लगने लग गया क्योंकि पूरे जलाल में आ गये। महापुरुषों के दो रूप होते हैं - एक जमाल होता है, एक जलाल होता है। जमाल होता है - प्रसन्नता, जलाल होता है - पूरा रौब। ये दोनों चीज़ें ही सहन नहीं होतीं। जब जलाल देखते हैं तो कोई भी सामने नहीं आता, नेत्रों से नेत्र नहीं मिला सकता। कोई वचन नहीं करता। इस तरह से महाराज जी ने यह खेल रच ली। साध संगत जी! यह खेल देखनी बहुत कठिन होती है। हम तो कहानियां सुना सकते हैं, पर हमारे ऊपर ज़रा सी कसौटी पड़ जाये, हम तो मामूली सी कसौटी भी सहन नहीं कर सकते। क्या हुआ? अमृतपान कर लिया पर शराब की बोतल सामने पड़ी हो, उसे देखकर ही डांवाडोल हो जाते हैं। बड़ी-बड़ी कसौटियों को कैसे सहन कर सकते हैं, तरक्की कैसे होगी? पहली जमात में फेल हो गये और स्कूल छोड़ दिया, हमारा तो यही हाल है। हम अब बातें करते हैं पी. एच. डी. की जिसकी पढ़ाई तो परले सिरे पर पहुँची होती है। अतः समझने की कोशिश करना और महाराज जी कृपा करें, कहीं हमें भी यहाँ तक पहुँचना नसीब हो जाये।

उस समय बहुत से सिक्ख डांवाडोल हो गये। आपस में बैठकर बातें करते हैं, ''महाराज जी को क्या हो गया? जिस प्रकार आन्धी के आने पर वृक्ष आदि हिलने लगते हैं, ऐसे ही सिक्ख भी डगमगा गये। अन्दर की बात कहते हैं, सभी के मनों में यही बात समाई हुई है, कुछ एक को छोड़कर कि महाराज जी के दिमाग में कोई फर्क पड़ गया है।''

इसी तरह गुरू दसवें पातशाह महाराज जी ने जब परीक्षा ली, आप जी श्री साहिब लेकर खड़े हो गये और तख्त पर खड़े होकर शीश मांगे। उस समय सियाने-सियाने भी घबरा गये क्योंकि सियानेपन और भरोसे में जमीन आसमान का अन्तर होता है। सियानापन तो कारण देखता है, वह

परख करता है। जो भरोसा होता है, वह कारण नहीं देखा करता, वह तो अन्धे की तरह चलता है, जहाँ तेरी मर्ज़ी है, फैंक दे, कूएं में फैंक दे, मार दे, रख ले, पर मैं तेरे पीछे चलने से नहीं हटूंगा। जो अक्ल होती है, वह कदम-कदम पर तुलना करती है। अक्लमन्द फेल हो जाया करता है, भरोसे वाला पास हो जाया करता है। रूहानी कार्य में अक्ल साथ नहीं दिया करती, थोड़ा समय साथ रहती है -

गिआनी सानूं होड़दा ते, वहिमी ढोला आखदा ए।
''मारे गए जिन्हां लाईआं बुधों पार तारीआं॥''
डा. भाई वीर सिंघ जी

फिर जवाब देते हैं -

''बैठ वे गिआनी! बुद्धि मंडले दी कैद विच,
वलवले दे देश साडीआं लग गईआं यारीआं।''
डा. भाई वीर सिंघ जी

हम तो प्यार के देश में पहुँच गये। अब हमारे पास कोई कारण नहीं है क्यों, कहाँ, क्या, कैसे ये हमारे पास नहीं हैं। चार कक्के होते हैं अर्थात चार अक्षर 'क' से शुरू होने वाले क्यों, कहाँ, क्या, कैसे, इनमें से हमारे पास कोई भी नहीं है।

उस समय जो पूरे होते हैं, वे हैरान होते हैं कि महाराज जी की कैसी क्रिया है पर जैसे वृक्ष डांवाडोल होते हैं, तूफान और आन्धी में, ऐसे उनके मन डगमगा गये। शक हो गया कि महाराज जी का दिमाग खराब हो गया।

गुरू दसवें पातशाह ने जब श्री साहिब बाहर निकाल ली तो उस समय मसन्द डांवाडोल हो गये। माता जी के पास गये, कहने लगे, ''माता जी! गुरू महाराज, साहिबजादों को क्या हो गया? उन्होंने तो सिक्खों को मारना शुरू कर दिया। आप जाकर दखल दो, समझाओ उन्हें कि यह क्या करने लग पड़े? इस तरह से तो सारे सिक्ख भाग जायेंगे। इस तरह हम हज़ार का इकट्ठ बताते हैं, वे भागने शुरू हो गये। कहते हैं पता नहीं, कहीं नीचे उतर आये तो कितनों को मार देंगे। अभी तो कह रहे हैं, शीश दो।'' उस समय कायर लोगों ने ऐसी दलीलें दीं कि माता जी का हुक्म हो तो हम गुरू महाराज जी को बान्ध कर, साहिबजादा जी को गुरू बना देते हैं। जो व्यक्ति पूजा का धान खाता है, वह इतना डांवाडोल हो जाता है क्योंकि उसके अन्दर श्रद्धा, भरोसा नहीं हुआ करता। बाकी तो सिक्ख गुरू के पास आते हैं और कहते हैं कि जी, मेरा अमुक काम हो जाये, मेरी अमुक इच्छा पूरी हो जाये, मेरी बीमारी दूर हो जाये वे तो पहले ही डांवाडोल होते हैं। काम हो गया तो ठीक, पर फिर भी नहीं मानना। यदि न हुआ फिर तो पहले की तरह छुट्टी है ही। साध संगत जी यह बहुत मुश्किल है। ऐसा फ़रमान करते हैं -

धारना - माइआ इह सतिगुर दी,
सहिणी है बहुती औखी - 2, 2
सहिणी है बहुती औखी - 2, 2
माइआ इह सतिगुर दी, ...-2

गुरू की माया, परमेश्वर द्वारा डाली गई माया, मुरशद की तरफ से डाली गई माया, सन्तों की ओर से डाली गई माया, कोई विरला होता है जो उस माया को समझ पाता है वरना कच्चा आदमी तो सहन ही नहीं कर सकता और पक्का भी डांवाडोल हो जाता है क्योंकि धुर से आई है –

धुर की भेजी आई आमरि॥ *पृष्ठ - 371*

जो किसी से न जीती जाये, वह माया है, धुर से आई हुई –

नउखंड जीते सभि थान थनंतर॥ *पृष्ठ - 371*

सारी सृष्टियां, सारे आकाश, सारे पाताल इस माया ने जीत लिये –

तटि तीरथि न छोडै जोग संनिआस।
पड़ि थाके सिंम्रिति बेद अभिआस॥ *पृष्ठ - 371*

सो माया बड़ी प्रबल है। सभी बड़े-बड़े विद्वान जो गुरू नानक पातशाह के साथ रहे, सारी बातें प्रत्यक्ष देखकर यह मानते हुए कि गुरू नानक साहिब गोबिन्द रूप हैं, फिर भी डांवाडोल हो रहे हैं। जैसे वृक्षों के पत्ते आन्धी आने पर झड़ जाते हैं, इसी तरह से विश्वास के पत्ते झड़ रहे हैं। कहते हैं, क्या पता दिमाग ही खराब हो गया हो? ये बातें अभी सोच ही रहे थे कि गुरू नानक पातशाह फिर आ गये।

धर्मशाला में ही आ गये। कुतका हाथ में है। आगे छुरियां लगाई हुई हैं, दो तीन कुत्ते साथ लगाये हुए हैं, शिकारियों जैसे मैले कपड़े पहने हुए हैं, हाथ में भी छुरा लिया हुआ है। नेत्र जलाल के कारण लाल हुए पड़े हैं, पलक झपकते नहीं है, जिसकी ओर देखते हैं, उसी की ओर दौड़कर भागते हैं। सभी डर गये कि यह क्या हुआ? इस तरह से सभी आगे-आगे भागते हैं। महाराज जी जिधर भी जाते हैं, पास कोई नहीं फटकता, दूर-दूर धर्मशाला खाली कर दी। उसके पश्चात महाराज जी जंगल की ओर चल पड़े। शिकारी कुत्ते अपने साथ लिये हुए हैं और इस तरह से पढ़ते जा रहे हैं –

धारणा - धाणक रूप रहा करतार - 2, 2
धाणक रूप रहा करतार - 2, 4

ऐसा बोलते हुए जा रहे हैं, पास कोई नहीं आता। गुरू अंगद पातशाह अकेले ही पीछे-पीछे जा रहे हैं। संगत फिर धर्मशाला में इकट्ठी हो गई –

एकु सुआनु दुइ सुआनी नालि।
भलके भउकहि सदा बइआलि।
कूड़ु छुरा मुठा मुरदारु।
धाणक रूपि रहा करतार॥ *पृष्ठ - 24*

भाई लहणा जी पीछे-पीछे जा रहे हैं। गुरू नानक साहिब ने फिर पीछे मुड़ कर देखा कि जो आ भी रहे हैं, और तो अभी बहुत दूर हैं, वे भी अभी काफी फासले पर हैं, पर यह हमारे बहुत निकट आ रहा है। पास आता देख कर वहीं खड़े हो जाते हैं। जोर से कुतका मारते हैं और

भाई लहणा जी चुप-चाप सहन कर लेते हैं।

महाराज जी कहते हैं, ''जब सारे ही चले गये, तू क्यों नहीं जाता?''

भाई लहणा जी कहते हैं, ''सच्चे पातशाह! मैं कहाँ जाऊं? मुझे बता दो।''

महाराज जी कहते हैं, ''जहाँ वे बैठे हैं, वहाँ जा। हमारा हुक्म मान। तुरन्त जा। पीछे मुड़कर मत देखना।''

कहते हैं, ''पातशाह! एक प्रार्थना है।''

महाराज जी कहते हैं, ''क्या है?''

भाई लहणा कहते हैं, ''मेरे से रहा नहीं जायेगा।''

जिउ मछुली बिनु पाणीऐ किउ जीवणु पावै।
बूंद विहूणा चात्रिको किउ करि त्रिपतावै।
नाद कुरंकहि बेधिआ सनमुख उठि धावै।
भवरु लोभी कुसम बासु का मिलि आपु बंधावै।
तिउ संत जना हरि प्रीति है देखि दरसु अघावै॥

पृष्ठ - 708

''पातशाह! कहाँ जाऊँ? मेरा कोई ठिकाना नहीं है, सिवाय तेरे चरणों के कोई जगह नहीं है तेरे दर्शन के बगैर मेरा कोई जीवन नहीं है। सो पातशाह! मैं कहाँ जाऊं?''

महाराज जी कहते हैं, ''जाता है या नहीं?'' कुतका लेकर आते हैं। कहते हैं, ''जाओ वहाँ, जहाँ पर संगत बैठी है। पीछे लौट कर मत देखना। दौड़ते ही चले जाना।''

हुक्म की तामील कर ली। पूरे जोर के साथ भागे आ रहे हैं। धर्मशाला में बैठे सिक्ख देख रहे हैं कि भाई लहणा जी भी भागे आ रहे हैं, पता नहीं क्या हो गया? आप धर्मशाला में आ गये। सभी पूछते हैं, ''भाई लहणा! सांस फूला हुआ है, बताओ तो सही, खैर खरियत तो है?'' भाई लहणा जी कहते हैं, ''बैठो, बातें करते हैं।'' सारे बैठ गये। फिर कहते हैं, ''बताओ क्या हुआ? हम क्या करें? आप गुरू महाराज जी के बहुत नज़दीकी हैं, हम सब से अधिक निकट आप उनके साथ रहे हैं। आप बताओ, आपके साथ कैसा बर्ताव हुआ?''

भाई लहणा जी ने कहा, ''कुछ भी तो नहीं हुआ। गुरसिखो! क्यों डांवाडोल होते हो? यह डगमगाने वाली जगह नहीं है। गुरू के पास शाबाशी भी होती है और कुतका भी होता है। जो रस प्यार की थपकी में लूटते हो, वही रस आज इस कुतके में भी लूटो। जो यह स्वरूप धानक का धारण किया है, शिकारियों जैसा, यह भी उसी का रूप है जिसके सामने हम पहले नमस्कारें करते थे। डगमगाओ मत।''

इस तरह से हिम्मत बढ़ाते हैं। धीरज बन्धाते हैं -

धारना - जे गुर झिड़के ता मीठा लागै,

बखशे गुर वडिआई - 2, 2

जे गुर झिड़के ता मीठा लागै.....॥ पृष्ठ - 758

जिसने झिड़की को खुशी-खुशी मान लिया, वह पास हो गया। उसने नम्बर ले लिये। जो नम्बर ही नम्बर चाहता है, प्रशंसा ही प्रशंसा चाहता है कि मुझे ऐसा कहें कि तू तो बहुत सेवा करता है, प्रेमी! तू तो बहुत अच्छा है, तेरा गले का सुर बहुत सुरीला है, तू कीर्तन बहुत बढ़िया करता है, तू कथा बहुत अच्छी करता है, तू तो संगत की सेवा भी बहुत बढ़िया करता है। यह बड़प्पन है, प्रशंसा है और यह बड़प्पन अच्छा लगता है। जब गुरू झिड़कता है, फिर वह जगह छोड़कर भाग जाता है। मुरशद-ए-कामल की सेवा बहुत कठिन हुआ करती है।

जे पासि बहालहि ता तुझहि अराधी.....॥

पृष्ठ - 757

यदि पास बिठा लेगा तो गुस्ताख नहीं होता कि श्रद्धा होकर बराबर का बन जाऊँ। यह भी तेरी कृपा है पातशाह! कि तू पास रखता है मुझे। क्या पता आप कब कह दो कि मेरे से दूर हो जा? मेरे पास मत आया कर -

जे पासि बहालहि ता तुझहि अराधी
जे मारि कढहि भी धिआई॥ पृष्ठ - 757

यदि डण्डे मार कर मुझे बाहर भी निकाल दे, फिर भी मैं तुझे ध्याऊंगा, फिर ऐसा नहीं कि मैंने वहाँ जाना नहीं कि वे तो मुझे घूर-घूर कर देखते हैं, बहुत झिड़कियां देते हैं -

जे लोकु सलाहे ता तेरी उपमा .....॥ पृष्ठ - 757

यदि लोग मुझे कहते हैं कि तू अच्छी जगह जाता है तो यह तेरी ही उपमा है, यदि मेरी निन्दा करते हैं कि वहाँ क्यों जाता है? वहाँ क्या है, फिर भी महाराज मैं छोड़ कर नहीं जाता -

..... जे निंदै त छोडि न जाई॥ पृष्ठ - 757

साध संगत जी! वही गुरू नानक पातशाह हैं, दीन दुनियां के मालिक -

आपि नाराइणु कलाधारि जग महि परवरियउ॥

पृष्ठ - 1395

आज तुम्हारे इरादे, निश्चय, डांवाडोल हो रहे हैं। निरंकार में भी कभी कोई दोष होता है? वह तो पूर्ण है, यह तो स्वांग किया है। मैं आपके चरणों में प्रार्थना करता हूँ, ध्यान से श्रवण करो।

कहते हैं, ''सारे महापुरुष, वाहिगुरू स्वंय स्वांग रच कर परीक्षा लिया करते हैं। जब तक रूहानी परीक्षा नहीं होती, तब तक यह निश्चय ही नहीं आता कि पास है या फेल है।''

अपने आप घर पर पढ़ते रहो तो पता नहीं चलता कि पास हूँ या फेल। पता तो तभी चलता है, जब पेपर होता है।

भाई लहणा जी संगत को समझाते हुए कहते हैं कि आदि जुगादि से परीक्षायें होती आई हैं। ध्यान से सुनो, त्रेता युग में एक राजा हुआ है जिसका नाम हरिचन्द था। वह हरिचन्द सत्यवादी

था। कुछ भी हो जाये, पर झूठ नहीं बोलता था। जो मुख से वचन कह दिया, चाहे जान चली जाती पर वचनों का पालन जरूर करता था। बहुत महान दानी था। इन्साफ पूरा करता था। जब मातलोक में इसका तप बढ़ा, इन्द्र का जो राज्य है, वह पांचवे छठे स्वर्ग में है। पहला गन्धर्व लोक है फिर 'देव गन्धर्व' लोक होता है, फिर 'पितृ लोक' होता है, फिर 'स्वर्ग लोक' इसके बाद 'इन्द्र लोक' आता है। यह पांचवे स्थान पर है। यहाँ पर अनेक प्रकार के सुख हैं। अपने संसार से दस अरब गुणा ज्यादा सुख, इन्द्र लोक में है। यदि सौ यज्ञ पूरे निर्विघ्न हो जायें तो इन्द्र की पदवी के लिये उम्मीदवार हो जाया करता है। कोई विरला ही है जो सौ यज्ञ पूरे करता है, वरना बीच में ही विघ्न पड़ जाया करता है, फिर दोबारा एक-दो से शुरू करना पड़ता है जैसे चालीसा रखते हैं। उनतालीस दिन पाठ कर लिया, चालीसें दिन भी कर लिया। यदि इकतालीसें दिन नहीं किया तो फिर से शुरू करना पड़ता है अन्यथा वह व्रत टूट जाया करता है। अधूरा माना जाता है। इसी तरह इन्द्र की पदवी है।

जब इन्द्र को पता चला कि राजा हरि चन्द का प्रताप इतना बढ़ रहा है कि उसकी तपस मेरे तक पहुँचने लग गई। उस समय उसके मन में बड़ी चिन्ता उठी।

एक दिन हरिचन्द राजा के पास, विश्वामित्र जी आ गये और उन्हें कुछ ईर्ष्या हो गई क्योंकि जो हरिचन्द था, वह वशिष्ट जी का सेवक था। इसका पिता जो त्रिशंकु था, वह विश्वामित्र का सेवक था। उसने कहा, ''पिता तो मुझे मानता है और यह चला गया वशिष्ट जी के पास।'' ईर्ष्या साधु सन्तों में भी आपस में हो जाया करती है। कोई एक-आध ही मुक्त होता है। संसार में कोई विरला होता है जो इन बातों से ऊपर उठता हो, अन्यथा सारा संसार इन्हीं बातों में फंसा हुआ है क्योंकि माया पीछा नहीं छोड़ती। माया के हाथ बहुत लम्बे हैं, यह दूर तक वार करती है। आकाश लोक तक माया जाती है। आकाश स्वर्गों को कहते हैं। विष्णु लोक तक पहुँचती है, जिसे बैकुंठ धाम कहते हैं, उससे भी ऊपर जहाँ से सच खण्ड शुरू होता है, वहाँ पर माया का असर नहीं पड़ता, न ही काल का वश चलता है।

इस प्रकार विश्वामित्र के मन में ईर्ष्या है। इन्द्र से जब मिला तो वहाँ पर हरिचन्द राजा की बात चल पड़ी। कहने लगे, ''महाराज! ऐसा सुना है कि राजा हरिचन्द सत्यवादी है और विश्वामित्र ने भी कहा है कि हाँ, सत्यवादी है।'' वह कहते हैं, ''हो नहीं सकता कि मनुष्य होकर फिर सत्यवादी हो। मैं इस बात को नहीं मानता। ऐसा हो नहीं सकता। जब तक उसकी परीक्षा नहीं ली जाती, बस तब तक ही वह सत्यवादी है। यदि परीक्षा में पास हो जाये, कसौटी पर खरा उतर जाये, फिर तो कुछ पता चल सकता है।'' दोनों ने सलाह की कि चलो परीक्षा लेते हैं।

हरिचन्द राजा रोज दान किया करता था। विश्वामित्र जी ब्राह्मण बन कर सबसे पहले राजा के द्वार पर आकर खड़ा हो गया। राजा हरिचन्द बाहर आये, चरणों में नमस्कार की और कहा, ''हे ब्राह्मण देवता! कैसे पधारना हुआ?'' चरण धोये, बड़ी सेवा की, चरणामृत लिया। फिर दोबारा प्रार्थना की, ''महाराज! बताइये क्या हुक्म है?''

ब्राह्मण रूप में विश्वामित्र जी बोले, ''राजन! हुक्म तो कोई नहीं है, बस हमारा मन करता

है कि चार-छह महीने आपकी गद्दी पर बैठ कर देखना चाहते हैं क्योंकि कई बार हमारे मन में विचार उठा है कि राजा लोग कैसे राज्य करते हैं? कितना सुख मिलता है उन्हें? इसलिये हमें चार महीने के लिये अपना राज पाट दे दो।''

राजा बोला, ''ठीक है महाराज! राज्य आपको सौंप दिया। जब तक आपका मन करे, राज्य कीजिये। जब आपका मन भर जाये तो लौटा देना, यदि न भरे तो मत देना। आपकी मर्ज़ी है।'' अब वचन कर दिया। राज्य ले लिया फिर ब्राह्मण बोले, ''राजन! आपको मालूम है कि जो दान देता है, उसे दक्षिणा भी देनी पड़ती है?''

राजा बोला, ''हाँ महाराज! मुझे मालूम है।''

ब्राह्मण रूप में विश्वामित्र जी कहते हैं, ''फिर दक्षिणा में एक हज़ार मोहरें दो।''

उसी समय खजानची को हुक्म दिया कि राजकोष में से एक हज़ार मोहरें दक्षिणा में दे दो। परन्तु ब्राह्मण देवता नाराज़ हो गये और कहते हैं, ''तू तो बड़ा मूर्ख बादशाह है। तेरे बारे में सुना था कि तू तो सत्यवादी है पर तू तो झूठवादी है। तूने मुझे राज्य दिया है या नहीं?''

राजा बोला, ''हाँ महाराज! दिया है।''

ब्राह्मण बोले, ''फिर अब तेरा क्या रह गया? क्या ये खजाने अब तेरे हैं? यहाँ की चीज़ें तेरी हैं? जो वस्त्र तूने पहने हुए हैं, बस यही तेरा है। अब तू मुझे एक हज़ार मोहरें दक्षिणा दे वरना मैं समझूंगा को तू मिथ्यिावादी है और तेरी निन्दा करूंगा कि यह ढोंगी है, कोई सत्यवादी नहीं है।''

हरिचन्द ने तुरन्त कहा, ''महाराज! आप नाराज़ मत होइये। मेरे से गलती हो गई। मेरे मुख से अचानक ही ये वचन निकल गये, सो मुझे क्षमा करो। मैं एक महीने के अन्दर-अन्दर आपको दक्षिणा दे दूंगा।''

विश्वामित्र बोले, ''देखो, अपने इस राज्य में से किसी से मांगना नहीं है। किसी से सहायता नहीं लेनी क्योंकि यह राज्य अब मेरा हो गया है। अच्छा यही है, तुम अब इस मेरे राज्य की सीमा से जल्दी से जल्दी बाहर निकल जाओ।''

उस समय हरिचन्द ने अपनी रानी तथा राजकुमार पुत्र को साथ लिया और काशी नगरी की तरफ चल पड़ा। रास्ते में कोई रोटी पानी नहीं देता क्योंकि विश्वामित्र राजा का हुक्म था कि कोई भी इसकी मदद नहीं करेगा। मेरे राज्य में कहीं भी रोटी पानी नहीं खाना। भूखे प्यासे तीनों चले जा रहे हैं। चलते-चलते पैरों में छाले पड़ गये। कई दिनों से भूखे प्यासे चले जा रहे हैं क्योंकि राज पाट लुट जाने के कारण सारे अधिकार भी खत्म हो गये। इस तरह कई दिनों तक चलने के बाद, दूसरे राज्य में प्रवेश कर गये। रास्ते में जंगल में चलते-चलते कोई फल वगैरा मिल जाता तो खा लेते, वरना वृक्षों के पत्ते खाकर ही गुजारा करते और चलते-चलते काशी पहुँच गये। वहाँ पहुँचे तो विश्वामित्र जी फिर मिल गये और कहते हैं, ''कितने दिन बीत गये? याद रख, पन्द्रह दिन बीत गये हैं और पन्द्रह दिन ही बाकी रहते हैं, मेरी दक्षिणा जल्दी से जल्दी दे दो अन्यथा मैं तेरी निन्दा

करूंगा। तेरा दान तुझे वापिस कर दूंगा और फिर तुझे दोष लगेगा।''

तब हरिचन्द बोला, ''महाराज! आप क्रोध न करें। मैं बहुत जल्दी आपको दक्षिणा दे दूंगा।''

इतना कह कर तीनों आगे चल पड़े। गली-गली में घूम रहे हैं। आवाज़ें लगा रहे हैं कि हम बिकाऊ हैं, कोई हमें खरीद लो, मोल ले लो हमें। लोग देखकर हैरान होते हैं कि इसकी शक्ल सूरत तो राजा महाराजा जैसी लगती है। इसके साथ जो स्त्री है, वह भी राजकुमारी जैसी लगती है और पुत्र राजकुमार जैसा लगता है। कौन सी ऐसी बिपता इन पर आ पड़ी कि ये अपने आपको बेचने के लिये मज़बूर हो रहे हैं? सारा दिन गलियों में घूमते रहे, कोई सौदागर न मिला। रात हो गई। धरती पर थोड़ी सी जगह साफ की और वहीं पर सो गये। रानी बैठी हुई है, नींद नहीं आती।

रानी कहती है, ''महाराज! क्या हाल होगा?''

राजा ने कहा, ''क्या होगा? घबराओ मत। डगमगाओ मत। अपनी परीक्षा हो रही है और बात वही हुआ करती है जो परमेश्वर को रूचती है।''

धारना - ओहीओ गल चंगी है,
भाउंदी जो तैनूं मालका - 2, 2
भाउंदी जो तैनूं मालका - 2, 2
ओहीओ गल चंगी है, ... -2

जिन्दगी में बेअन्त घटनायें घटित होती हैं, पर कोई विरला ही होता है, जिसके मन में यह बात रहती हो कि वही बात अच्छी है जो मालिक को पसन्द हो। वह मेरे हित की बात हो रही है -

सुखु दुखु तेरी आगिआ पिआरे दूजी नाही जाइ।
जो तूं करावहि सो करी पिआरे अवरु किछु करणु न जाइ॥ *पृष्ठ - 432*

धरती के ऊपर दरिया बहते हैं, कमल का फूल आकाश में खिल सकता है -

भाणै थल सिरि सरु वहै कमलु फुलै आकासि जीउ।
भाणै भवजलु लंघीऐ भाणै मंझि भरीआसि जीउ॥
पृष्ठ - 762

सो महाराज जी कहते हैं -

जो तुधु भावै साई भली कार।
तू सदा सलामति निरंकार॥ *पृष्ठ - 5*

राजा रानी ने मिलकर कहा, ''यह बात बहुत अच्छी है। हमें डगमगाना नहीं चाहिये।''

गुरू ग्रन्थ साहिब में इस राजा का उल्लेख मिलता है। बड़े प्यार से लिखा है -

तिनि हरीचंदि प्रिथमी पति राजै कागदि कीम न पाई॥
पृष्ठ - 1344

कहते हैं, ''इतने पुण्य किये कि कागज़ों पर लिखे नहीं जा सकते। उनका मूल्य कोई नहीं बता सकता। महिमा बहुत बढ़ गई।''

अउगणु जाणै त पुंन करे किउ किउ नेखासि बिकाई॥

पृष्ठ - 1344

यदि इसके अन्दर अवगुण होते तो वह पुण्य क्यों करता? क्यों जाकर बिकता? इस तरह प्यार से पढ़ो -

धारना - हरी चंद दे पुंनां दी महिमा बहुती,
पुंन करदा आप विकिआ - 2, 2
मेरे पिआरे, पुंन करदा आप विकिआ - 2, 2
हरी चंद दे पुंनां दी महिमा बहुती, ...-2

तिनि हरीचंदि प्रिथमी पति राजै कागदि कीम न पाई॥

पृष्ठ - 1344

बहुत बड़े राज्य का मालिक था। इतने पुण्य किये कि उन्हें कागज़ों पर लिखा नहीं जा सकता और न ही उनकी कीमत आकी जा सकती है -

अउगणु जाणै न पुंन करे किउ किउ नेखासि बिकाई॥ पृष्ठ - 1344

मण्डी में जाकर क्यों बिकता क्योंकि महाराज जी का फ़रमान है कि -

पुंन दान का करे सरीरु।
सो गिरही गंगा का नीरु॥ पृष्ठ - 952

जो शरीर को ही पुण्य दान पर लगा दे, वही असली गृहस्थी हुआ करता है। सो वे बोली देते हुए फिर रहे हैं, कोई नहीं खरीदता। फिर बाज़ार में चले गये। पुराने जमाने में रिवाज़ था, जब गुलाम बनाकर बेचा करते थे तो उसे एक तख्ते पर खड़ा कर दिया जाता था, फिर बोली लगाया करते थे। एक ढोलकी ढोल बजाता रहता था और बेअन्त भीड़ इकट्ठी हो जाती थी। इस तरह लोगों के बिकने का बाज़ार लगता था। गुरू नानक पातशाह भी यू. पी. में जाकर बिके थे, जहाँ हमारे फार्म हैं, वहीं कहीं आस पास बिके थे। आजकल वहाँ पर बहुत बड़ा गुरूद्वारा बन गया है, अत: इन्हें तख्ती पर खड़ा कर दिया। घरवाली और बच्चा भी दोनों साथ हैं। आप ही बोली लगा रहा है कि यदि कोई खरीददार हो तो 500 मोहरों में ये बिकाऊ हैं। उस समय एक पण्डित आया, उसके साथ बहुत से शागिर्द हैं। मन ही मन कहता है, ''कोई मुसीबत का मारा हुआ लगता है, पर चक्र चिन्ह से लगता है कि कोई बड़ा आदमी है, कोई नुक्सान हो गया लगता है या कोई और विपता आ पड़ी लगती है।''

उसने पूछा, ''प्रेमी! तुम अपने आपको क्यों बेच रहे हो? कोई खास तकलीफ है?''

कहते हैं, ''हाँ जी, हमने किसी का 500 मोहरों का कर्ज़ा देना है। इसलिये इन्हें 500 मोहरों में बेच रहा हूँ।''

उस पण्डित ने पाँच सौ मोहरें देकर रानी और बच्चे को खरीद लिया।

रानी कहती है, ''हे ब्राह्मण देवता! मेरी एक प्रार्थना जरूर स्वीकार कर लो। एक तो मैं किसी पर-पुरुष का जूठा नहीं खाऊंगी और दूसरा पर पुरुष की सेवा नहीं करूंगी। मैं पतिव्रता नारी हूँ। हमारे ऊपर मुसीबत आ पड़ी है, इसलिये बिकना पड़ रहा है।''

उधर से विश्वामित्र आ गये, कहते हैं, ''मेरी दक्षिणा दे।''

हरिचन्द बोला, ''ये पाँच सौ मोहरें तो तैयार हैं, बाकी फिर ले जाना।''

विश्वामित्र बोले, ''तुम देर कर रहे हो। झूठे हो तुम सत्यवादी नहीं हो।''

हरिचन्द को बहुत ताड़ना दी और वह दोनों हाथ जोड़े कह रहा है, ''मुझे थोड़े दिन की मोहलत और दे दो। अभी तो दस दिन और रहते हैं। दस दिनों के अन्दर-अन्दर आपकी दक्षिणा मिल जायेगी।'' दिन बीतते जा रहे हैं और ये रूकावट डाले जा रहे हैं। ऐसी माया फैलाते हैं कि दुनियां देखने तो आती है पर खरीदता कोई नहीं।'' फिर हरिचन्द स्वंय ही तख्त पर खड़े होकर बोली लगाता है, ''मैं बिकाऊ हूँ, कोई मुझे खरीद लो। मुझे ले जाओ।'' अन्त में एक चण्डाल आया जिसके पास बहुत से सूअर थे। इसके साथ-साथ श्मशान भूमि का चौकीदार भी था। तीसरा जिसे मृत्यु दण्ड मिलता तो उसका सिर काटना, कत्ल करना भी उसका काम होता था।

वह बोला, ''अरे मनुष्य! कितने पैसे में बिकना है?''

हरिचन्द बोला, ''पाँच सौ मोहरों में।''

चण्डाल बोला, ''ठीक है।'' तभी विश्वामित्र आ गये। पाँच सौ मोहरें उन्हें दक्षिणा की और दे दीं और वह वहाँ से इन्द्र के पास जा पहुँचे। विश्वामित्र ने इन्द्र से कहा, ''अभी तक तो डांवाडोल हुआ ही नहीं।''

इन्द्र कहता है, ''और कठिन कसौटी लगाओ।''

योजना बनाई गई। थोड़े दिन बीत गये। वह अपनी डयूटी दे रहा होता है। सारा दिन सूअर चराता है। रात को श्मशान भूमि में जाकर पहरा देता है। टैक्स लिये बिना, किसी को संस्कार नहीं करने देता। इधर ऐसी कसौटी लगी कि इन्द्र तक्षक नाग का रूप धारण करके आ गया और राजकुमार बाग में खेल रहा होता है। जब वह खेलता हुआ वृक्ष के पास आया तो उसने डंक मार दिया और वह वहीं पर ही मूर्च्छित होकर गिर गया। रानी को पता चला कि उसका पुत्र बाग में मरा पड़ा है। वह छुट्टी लेती है पर पण्डित की पत्नी बड़ी सख्त है। वह बोली, ''देख, उस मरे हुए पुत्र को मेरे घर मत लाना। यहाँ से बाहर निकल जा। पता नहीं तू कितनी बद किस्मत है। मेरा घर भी खराब कर दिया। मेरे बाग में मुर्दा। मेरा तो बाग ही भ्रष्ट हो गया। जल्दी निकल, मेरे घर से भाग जा।''

उस समय वह बेचारी पुत्र की लाश को लिये चल पड़ती है। इसे कुछ पता नहीं कि उसका पति कहाँ है? कैसे बिका है? आपस में कोई सम्पर्क नहीं। उस समय संसार में परमेश्वर के सिवाय उसका और कोई नहीं है। नेत्रों से जल बह रहा है, पुत्र का प्यार बार-बार कचोटता है। सोच रही है कि संस्कार कैसे करूंगी? चलती-चलती श्मशान भूमि में पहुँच गई। यह देखकर बहुत हैरान

हुई कि उसका पति पहरा दे रहा है। वहाँ पर एक चिता जल रही होती है। इसके मन में ख्याल आया कि वह पुत्र का संस्कार इसी चिता में फैंक कर कर दे। जब संस्कार करने के लिये आगे बढ़ी, उसी समय वह ज़ोर से कड़क कर बोला, ''कौन है तू? जो यहाँ पर आकर बिना टैक्स दिये संस्कार कर रही है?'' इतना कहकर और निकट आ गया।

वह बोली, ''मैं आपकी रानी हूँ, यह आपका पुत्र है।''

हरिचन्द बोला, ''ठीक है, यह मेरा पुत्र है पर इस समय मैं डयूटी पर हूँ और मेरा धर्म है कि इमानदारी के साथ नौकरी करूं।''

हम सुन तो लेते हैं पर रिश्वतें भी बहुत लेते हैं। नौकरी तो नहीं करते, कोताही करते हैं। मालिक पूरे पैसे देता है, फिर भी काम नहीं करना, वफादारी नहीं।

तब ऐसा वक्त नहीं था, उस समय नौकरी का भी धर्म हुआ करता था। वह बोला, ''मेरा धर्म है। यदि मैं इसे निभाने में कोताही करूंगा तो मेरा धर्म भ्रष्ट हो जायेगा।''

रानी बोली, ''यह आपका पुत्र है।''

हरिचन्द राजा बोला, ''ठीक है, मेरा पुत्र है पर इस समय मैं तेरा पति नहीं हूँ। मैं इस जगह का रखवाला हूँ। मैंने अपना कर्तव्य निभाना है। जाओ, कहीं से टैक्स के लिये पैसे लेकर आओ, फिर संस्कार करने दूंगा।''

शाम हो गई। धीरे-धीरे रात भी आ गई। कहीं से कोई भी टैक्स के लिये पैसा नहीं मिलता। कफन भी नहीं मिलता। आधी साड़ी फाड़ कर बच्चे के मृत शरीर पर डाल दी। लड़का सामने पड़ा है। रोये जा रही है। रोते-रोते उस बेचारी के आंसू भी सूख गये। अब चुप करके पत्थर की मूर्ति बनी हुई बैठी है। इतनी देर में कुछ चोर, डाका मारने वाले पास से निकले। वे बोले यह श्मशान की देवी बैठी है। चलो, इसके गले में एक हार ही डाल देते हैं। राजा के महलों में चोरी की और रानी का हार उसके गले में डाल कर चले गये। वे तो बहुत दूर निकल गये, इसे कुछ भी पता न चला। इधर सिपाही चोरों की तलाश करते हुए आ पहुँचे। उन्होंने आगे बढ़कर देखा कि इसके गले में हार पड़ा है। उन्होंने इसे पकड़ लिया। उसने बहुत हाथ पैर जोड़े, प्रार्थनाएं कीं, ''मेरा तो पुत्र मरा पड़ा है। मुझे तो कुछ भी पता नहीं कि मेरे गले में यह हार कौन डाल गया? मुझे तो अभी पता चला है।''

सिपाही कहते हैं, ''नहीं, नहीं। तू चोरों के साथ मिली हुई है, बता कहाँ हैं?'' राजा के पास पकड़ कर ले आते हैं, राजा ने कोई बात न सुनी।

राजा बोला, ''इसे अभी कत्ल कर दिया जाये।''

फिर श्मशान भूमि में ले आते हैं। हरिचन्द की डयूटी कत्ल करने की लग गई। पता चल गया कि उसने अपनी रानी का कत्ल करना है। एक तरफ डयूटी है तो एक तरफ प्यार है। एक ओर 'सत' है एक और मोह है। साध संगत जी! बहुत कठिन कसौटी है -

धारना - लग गई कसवटी ओ,
सहिणी है बहुती औखी - 2, 2
लग गई कसवटी ओ, ... -2

कबीर कसउटी राम की झूठा टिकै न कोइ।
राम कसउटी सो सहै जो मरि जीवा होइ॥

पृष्ठ - 1366

एक तरफ राजकुमार जिसे लाड प्यार से पाला, जिसे देख-देख कर जीता था। एक सैकिन्ड के लिये आखों से ओझल करने को तैयार नहीं था, आज आखों के सामने मरा पड़ा है। संस्कार का कोई प्रबन्ध नहीं हो रहा। एक तरफ रानी है, जो पतिव्रता स्त्री है। इतना प्यार था कि आपस में एक दूसरे के साथ, एक प्राण दो देह वाली बात थी। आज उसकी गर्दन काटनी है। राजा भी आया, अन्य लोग भी इकट्ठे हो गये। हरिचन्द का जो मालिक कालू था वह कहीं किसी काम के कारण बाहर गया हुआ था, इसलिये कत्ल करने का काम भी आज इसे ही करना था। रानी को उसी तरह से मैले-कुचैले कपड़ों में पकड़ कर ले आये। अब उसे एक पल में कत्ल कर देना है।

हरिचन्द बोला, ''महारानी! मैं इस समय तेरा पति नहीं हूँ। मैं अपने मालिक का गुलाम हूँ और इस समय 'सत' का प्रश्न है। 'सत' पर चलने के लिये बेशक सभी की जान चली जाये, तो कोई परवाह नहीं पर 'सत' कायम रहना चाहिये. उसमें झूठ नहीं आना चाहिये। दिखावा नहीं आना चाहिये।''

फिर हरिचन्द ने रानी को लकड़ी के ऊपर गर्दन रखने को कहा। उसने झुक कर गर्दन लकड़ी के तख्ते पर रख दी। जब उसने पूरे ज़ोर के साथ मारने के लिये तलवार चलाई और तलवार कान के पास से निकल कर, नीचे आने ही वाली थी कि किसी बड़े शक्तिशाली हाथ ने तलवार पकड़ ली, हैरान रह गया, प्रकाश हो गया, शंख बजने शुरू हो गये, ध्वनियां बजनी शुरू हो गईं, जय-जयकार होने लग गई, फूलों की वर्षा होने लग गई। क्या देखते हैं? भगवान दर्शन दे रहे हैं। राजा को भी पता चल गया कि वह तो राजा हरिचन्द है। वह भी बड़ा हैरान हुआ ''हैं! मेरे राज्य में एक चण्डाल के घर में बिका?'' तभी इन्द्र और विश्वामित्र भी आ गये और पश्चाताप करने लगे, कहते हैं, ''राजन! हमने तुम्हें बहुत तंग किया। हमें क्षमा कर दो।''

गुरू अंगद साहिब कहने लगे, ''साध संगत जी! तुम तो आज ही गुरू नानक पातशाह से दूर हो गये। इतनी सी बात देख कर ही? अपना मन मज़बूत करो। पुराने बुजुर्गों के इतिहास को याद करो। यह तो सिर धड़ की बाजी हुआ करती है। गुरू का प्यार पाना आसान नहीं हुआ करता, इसमें तो सभी कुछ कुर्बान करना पड़ता है।''

एक राजा था, उसका नाम शिवि था। उसके यज्ञों की महिमा बहुत बढ़ गई। यज्ञ करने से इनका फल स्वर्ग लोकों में पहुँचना शुरू हो जाया करता है। इन्द्र के मन में फिर ईर्ष्या हुई। वह सोचता है कि इसका भी सत तोड़ना चाहिये क्योंकि इसकी महिमा भी बहुत बढ़ रही है। उस समय उसने अग्नि देवता और धर्मराज से कहा, ''तुम जाकर इसे अपने सत से गिराओ।'' इतना कहते ही

अग्नि देवता, एक बाज बन गये और धर्मराज कबूतर बन गया। बाज ने कबूतर पर झपटा मारा और कबूतर राजा शिवि की गोदी में जा गिरा। राजा बोला, ''मैं तुम्हें मारूंगा नहीं बल्कि जीवन दान देता हूँ।'' इतनी देर में बाज आ गया। बाज कहता है, ''राजन! यह तो मेरा भोजन है, तुम इसे जीवन दान दे रहे हो।''

राजा शिवि बोले, ''अब तो मैंने वचन दे दिया, इसके बदले में, मैं तुम्हें किसी अन्य जानवर का मांस दे देता हूँ।''

बाज कहता है, ''यदि मांस देना ही है तो अपनी देह से दो।''

तुरन्त तराजू मंगा ली। एक पलड़े में कबूतर बिठा दिया और दूसरे में अपनी बाजू से मांस काट कर चढ़ाना शुरू कर दिया। जब बाजू का मांस पूरा काट दिया तो देखा कि कबूतर वाला पलड़ा तो हिलता तक भी नहीं। फिर उसने एक जंघा का मांस भी काट कर रख दिया। फिर भी कबूतर वाला पलड़ा भारी। इस तरह से उसने जंघा और बाजुओं का मांस टुकड़े-टुकड़े करके रख दिया पर कबूतर वाला पलड़ा भारी ही रहा।

बाज बोला, ''राजन! यह मांस तो कबूतर के भार के बराबर हुआ नहीं। पूरा करके दे।''

अन्त में जब वह गर्दन काटने लगा कि मैं अपने आप ही काट कर दे दूँ और बोला, ''यह ले तू सारा ही मुझे खा ले।'' उसी समय भगवान प्रकट हो गये, देवताओं ने अपने असली रूप में दर्शन दे दिये।

सो गुरू अंगद देव जी महाराज कहने लगे, ''देखो, कितनी-कितनी सख्त कसौटियों से निकले हैं और तुमने तो अभी से ही डांवाडोल होना शुरू कर दिया। ये जो कसौटियां होती हैं, ये कोई छोटी मोटी चीज़ नहीं हुआ करतीं।'' इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - सिर धड़ दी बाजी ला के,
पिआरे, प्रेम कमाईदै - 2, 2
प्रेम कमाईदै, पिआरे प्रेम कमाईदै - 2, 2
सिर धड़ दी बाजी ला के, ... -2

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ।
सिरु धरि तली गली मेरी आउ।
इतु मारगि पैरु धरीजै।
सिरु दीजै काणि न कीजै॥ *पृष्ठ - 1412*

कहते हैं, ''साध संगत जी! सिर धड़ की बाजी लगाने पर, प्यार पूरा निभता है। तुम तो ज़रा सा कुतका खाकर ही डर गये। गुरू साहिब का स्वरूप देख कर ही डर गये।''

साध संगत जी! कोई-कोई हुआ करता है जो इन बातों में से गुजर सकता है। एक राजा उसका नाम रंति देव था। वह रघुवंशी राजा था। संक्रन्ती राजा का पुत्र था, यह भी महान दानी हुआ है। बहुत दान करता था। इतना दान किया कि खज़ाने खाली हो गये। किसी को भी खाली हाथ नहीं

लौटाते थे। प्राकृतिक तौर पर एक बार वर्षा न हुई। अकाल पड़ गया और यह राजपाट छोड़कर चला गया। कहीं भी अन्न खाने को न मिले। लगातार 48 दिन भूखे बीत गये। साथ में रानी और राजकुमार भी हैं। तीनों 'सत' की मूर्ति हैं। तीनों ही भूखे हैं, परमेश्वर का भजन किये जाते हैं, यदि मालिक भेज देगा, तो खा लेंगे। कोई बात नहीं। घबराना या डगमगाना नहीं है।

आज एक निर्जन जंगल में बैठे हैं। अचानक देखते हैं कि आसमान से तीन थाल उतरे। एक राजा के सामने आ गया, एक रानी के सामने और एक राजकुमार के सामने आ गया। उस समय इन्होंने नमस्कार की। जो आस्तिक होते हैं वे मुँह में ग्रास डालने से पहले, जिसने वह भोजन भेजा होता है, उसे अर्पण किया करते हैं। हम भी ऐसे ही करते हैं। भोजन करने से पहले अरदास होती है। मन ही मन प्रार्थना करते हैं, ''सच्चे पातशाह! मेरे जैसे जीव का भी तू पालन पोषण कर रहा है। मेरे जैसे अकृत्घन को भी तू रोज़ी रोटी दे रहा है। पातशाह! यह तेरा दिया हुआ है। तू स्वीकार कर। भोग लगाओ चाहे दृष्टि भोग लगा दो।'' कहते हैं, जो इस तरह प्रार्थना किये बगैर भोजन करता है, वह पाप का अन्न खाता है। हमेशा भोजन करने से पहले, गुरू को अर्पण करना चाहिये। भोग लगवाओ, बेनती करो। यहाँ तक लिखा हुआ है कि अन्यथा वह तो पाप की कमाई हुआ करती है। विष्ठा के समान होता है, जो भोजन बिना अरदास किये खाया जाता है।

सो वे बहुत धन्यवादी हुए। तीनों ने नेत्र बन्द कर दिये और प्रार्थना कर रहे हैं, ''हे प्रभु! आप इतने दयालु हैं कि इस निर्जन वन में भी हमारे लिये भोजन भेज रहे हैं।'' जैसे ही नेत्र खोले तो देखते हैं कि सामने एक ब्राह्मण खड़ा है। दोहाई दे रहा है, ''राजन! अकेले ही भोजन खा रहे हो। मुझे भी थोड़ा सा दे दीजिये। मैं बहुत भूखा हूँ। मुझे जरूर खिलाओ।'' राजा ने उसी समय अपना थाल, ब्राह्मण के आगे कर दिया और कहा, ''ले प्यारे! हम इन दो थालों से ही गुज़ारा कर लेंगे। यह तुम खा लो।'' उसने थाल ले लिया और उसने सारा भोजन खा लिया। ये बाकी दो थालों के भोजन को तीन हिस्सों में बांटकर, अभी खाने का इरादा ही बना रहे थे, अभी ग्रास मुँह में भी नहीं डाला था, इतनी देर में एक शूद्र आ गया। उसने आकर हाय दुहाई मचा दी, कहता है, ''मैं 7 दिनों से भूखा हूँ, मुझे कहीं से भी खाने को कुछ नहीं मिला। देखना, मुझे भी साथ मिला लो।'' राजा ने अपना हिस्सा, उसी समय उसे दे दिया। कहता है, ''चलो, अब जो शेष भोजन बचा है, हम इसी को खाकर गुज़ारा कर लेंगे।'' इसके बाद एक आदमी और आया, वह बोला, ''मैं और मेरा एक कुत्ता है। राजन! हम कई दिनों से भूखे हैं। हमें भी कुछ खाने के लिये दो।'' उसने रानी वाला थाल उसके सामने कर दिया। वह उसने खा लिया और बोला, ''मैं कुत्ते को क्या दूँ?'' तब राजा ने राजकुमार वाला थाल भी दे दिया और हाथ जोड़ लिये तथा बोला, ''चलो, हम पानी ही पी लेंगे।'' जब पानी पीने लगे तो एक आदमी और आ गया। कहता है, ''मैं बहुत प्यासा हूँ, मुझे भी पानी पीने को दीजिये। पानी के बिना मेरी जान निकल रही है।'' उन्होंने पानी भी दे दिया। राजा धन्यवाद करता है, अरदास में खड़ा हो गया, ''तू कितना दयालु है कि ऐसे हालातों में भी हमसे दान करवा रहा है।'' इतना कहने की देर थी कि उसी समय भगवान प्रकट हो गये।

भगवान कहते हैं, ''जाओ राजन! हम तुम से बहुत प्रसन्न हैं, तुम परीक्षा में सफल हुए।''

सो ऐसा कोई-कोई व्यक्ति होता है। इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - कोई विरले-विरले बंदे,
सहिंदे ताओ कसवट्टी दा - 2, 2
सहिंदे ताओ कसवट्टी दा - 4, 2
कोई विरले-विरले बंदे, ... -2

हैनि विरले नाही घणे फैल फकड़ु संसारु॥

पृष्ठ - 1411

बहुत कम लोग हैं, साध संगत जी! हमारा हाल तो बहुत ही बुरा है यदि विचार करने लगे तो कहीं भी नम्बर नहीं आता। हमारा तो ज़ीरो नम्बर आता है, कसौटी तो एक तरफ रही। परमेश्वर ने दातें दी हुई हैं, सभी वरदान परमेश्वर से मिलते हैं पर यदि एक भी वापिस ले ले, तो हम चीखें मारते हैं, रोते हैं, उलाहने देते हैं। कोई कहता है जी, सत्संग में जाता था, इसके साथ ऐसा नहीं होना चाहिये था। कोई कुछ कहता है, कोई कुछ कहता है।

दस बसतू ले पाछै पावै।
एक बसतु कारनि बखोटि गवावै।
एक भी न देइ दस भी हिरि लेइ।
तउ मूड़ा कहु कहा करेइ॥ पृष्ठ - 268

फिर कहते हैं, मूर्ख क्या करें। कोई विरला-विरला होता है जो कसौटी के ताव को सहन कर पाता है। सब नहीं सहन कर सकते।

एक राजा द्वापर युग में हुआ। उस समय द्वापर खत्म हो रहा था और कलयुग शुरू होने वाला था क्योंकि -

बाबाणिआ कहाणीआ पुत सपुत करेनि॥ पृष्ठ - 951

बुजुर्गों की कहानियां हमें भी रास्ता दिखाती हैं। हमारी कसौटी कितनी है? यदि शराब की ही कसौटी लग जाये; यहाँ पर अमृतपान करवाया तो एक प्रेमी मेरे पास आया। कहता है, ''जी! बड़ी मुश्किल हो गई?''

मैंने पूछा, ''क्या हो गया?''

कहता है, ''जो सैनी माजरे का ठेका है, वह हमें पार नहीं होने देता।''

मैंने कहा, ''क्यों? ठेका तुम्हारे रास्ते में सड़क पर आ कर खड़ा हो जाता है?''

कहता है, ''नहीं जी, वह ठेकेदार बाहर बाजू निकाल लेता है, फिर हमें देखकर ज़ोर-ज़ोर से आवाज़ें लगाता है। शराब की बोतल हमें दिखा कर कहता है कि आपको मैंने मुफ्त पिलानी है।''

मैंने कहा, ''फिर?''

कहता है, ''जी, फिर मन कर आता है और हम फिर टूट कर पड़ते हैं, ठेके पर।''

यह हमारी हालत है और कसौटियां तो हमने क्या सहन करनी हैं? नितनेम करना नहीं, अमृत बेला में जागना नहीं, उठकर स्नान करना नहीं, सेवा करनी नहीं, गुरू घर आना नहीं। इसके सिवाय हम क्या सहन कर सकते हैं? बाकी बातें तो बहुत उच्च श्रेणियों की हैं। बड़ी-बड़ी कसौटियों को सहन करते आये हैं।

एक राजा मोर ध्वज था। वह राजा द्वापर के अन्त तथा कलयुग के शुरू में हुआ। जिस समय महाभारत का युद्ध समाप्त हुआ तो पाण्डवों ने राजसूय यज्ञ करना था। उसके लिये उन्होंने अवश्मेघ घोड़ा छोड़ दिया। दिल्ली से वह घोड़ा चला और अफगानिस्तान करांची से होता हुआ राजस्थान के राजाओं के राज्यों को पार करता हुआ, चलता-चलता केरल पहुँच गया। वहाँ पर कृष्ण महाराज कहने लगे, ''अर्जुन! इस राजा को जीतना बहुत कठिन है।''

अर्जुन कहता है, ''महाराज! मैं तो बड़ा हैरान था जब आज हम सैर करने इस शहर में गये, तो देखा कि यह तो सारा शहर एक जैसा है, एक जैसे घर हैं, एक जैसा पहरावा है, एक जैसा भोजन है। हम कैसे राजा के राज्य में आ गये, ऐसा भला राजा कौन है? जहाँ पर छोटा बड़ा ही नहीं है।''

भगवान कहते हैं, ''यह राज्य चन्द्र हंस राजा का है। चन्द्रहंस ब्रह्मज्ञानी है और निर्गुण का उपासक है। इसके साथ यदि तूने युद्ध किया, तो इसे तू युद्ध में जीत नहीं सकेगा क्योंकि निगुर्ण ब्रह्म पूरी शक्तियों वाला होता है।''

अर्जुन कहता है, ''महाराज! आप मेरे साथ हैं।''

कृष्ण महाराज कहते हैं, ''हाँ, पर मैं साकार रूप में हूँ और वह निर्गुण का उपासक है।''

अर्जुन बोला, ''महाराज! यदि इसने घोड़ा पकड़ लिया तो फिर क्या होगा?''

कृष्ण कहते हैं, ''घोड़ा तो यह जरूर पकड़ेगा।''

जब घोड़ा छोड़ा गया तो राजा के सिपाहियों ने पकड़ लिया। राजा चन्द्र हंस को खबर कर दी, वह पहुँच गया। अर्जुन कहता है, ''घोड़ा छोड़ दो।'' वे कहते हैं, ''नहीं, हमने घोड़ा नहीं छोड़ना।''

कृष्ण महाराज अर्जुन को कहते हैं, ''इसके साथ किसी भी कीमत पर युद्ध मत करना। यहाँ पर मैं और तुम हार जायेंगे क्योंकि यह निर्गुण ब्रह्म का पुजारी है। यह मेरे निर्गुण स्वरूप को मानता है। हर एक में परमेश्वर देखता है। सारी प्रजा, जहाँ तक इसका राज है, कोई भी गरीब नहीं, कोई भी अमीर नहीं। पहनने के लिये एक जैसे वस्त्र हैं, एक जैसा खाना पीना है, एक जैसी जमीन है, सभी को एक जैसे अधिकार हैं। यह स्वंय भी उनकी तरह ही रहता है। यह कोई राजा नहीं, नाम मात्र का ही राजा है। यह तो साधु ब्रह्मज्ञानी महापुरुष हैं।''

अर्जुन कहता है, ''महाराज! फिर पार कैसे हों?''

भगवान कृष्ण बोले, ''जब कल यह युद्ध करने आयेगा तो तुम नमस्कार करना, उस समय मैं इसके हृदय में प्रवेश कर जाऊंगा।''

दूसरे दिन जब युद्ध करने गये तो अर्जुन ने राजा को नमस्कार की, उसने भी नमस्कार की। इतनी देर में कृष्ण महाराज जी की प्रेरणा से वह बोला, ''ठीक है अर्जुन! तुम भी भगवान को मानते हो? बताओ क्या चाहते हो?''

अर्जुन बोला, ''मेरा घोड़ा पार करा दो।''

राजा बोला, ''जाओ! हम आज से मित्र हुए।'' और घोड़ा पार करा दिया। वहाँ से चलते-चलते जब मणिपुर पहुँचा तो वहाँ पर मोरध्वज राजा भी अश्वमेघ यज्ञ कर रहा था। उसके पुत्र का नाम ताम्रकव था। वह भी अपनी फौजें लिये घूम रहा था। दोनों का आपस में मुकाबला हो गया। आखिर युद्ध तो होना ही था। देखते-देखते युद्ध शुरू हो गया और उसने युद्ध में कृष्ण जी तथा अर्जुन दोनों को मूर्च्छित कर दिया। जब उसने अपने पिता को जाकर बताया कि ऐसे-ऐसे हाल हुआ और मैं घोड़ा साथ ले आया हूँ।

पिता बोला, ''बेटा, तूने तो बहुत बुरा किया। हम तो इनके उपासक हैं।''

पुत्र कहता है, ''ठीक है, उपासक तो उपासक की जगह। पर ये तो युद्ध में ललकार रहे थे। जब युद्ध बन्द कर देंगे, तो उपासक बन जायेंगे।''

दूसरे दिन फिर युद्ध हुआ। कृष्ण महाराज जब बाण मारते हैं, तो चार बार वाह-वाह कहते हैं।

अर्जुन बोला, ''महाराज! बड़ी प्रशंसा कर रहे हो।''

कृष्ण जी ने कहा, ''अर्जुन! प्रशंसा न करूं? मैं तेरे काल तथा त्रिलोकी के भार पर बैठा हूँ। जब उसका बाण लगता है, तो हाथ पीछे हट जाता है। उसके अन्दर बड़ी ताकत है, इसलिये मैं प्रशंसा कर रहा हूँ।''

दूसरे दिन इन्होंने ब्राह्मण का भेष बनाया और राजा के पास चले गये। राजा दान कर रहा था। उसने देखा कि ये ब्राह्मण आए हैं। उठकर खड़ा हुआ, नमस्कार की और पूछा, ''क्या चाहते हैं आप? मुझे बताइये।''

वे बोले, ''राजन! हम आपके पास ही आ रहे थे। यह मेरा चेला है और मैं ब्राह्मण हूँ। रास्ते में हमें शेर मिला, वह बोला मैं तुम्हें खाऊंगा। हमने कहा कि हम राजा को मिल आयें, हमें छोड़ दे। हम वचन देते हैं कि तुझे मनुष्य का मांस जरूर देंगे। सो वह शेर भी हमारे साथ है, हमें मांस चाहिये।''

राजा कहता है, ''कोई बात नहीं, मनुष्य का मांस दे देते हैं, यह कोई बड़ी बात नहीं।''

ब्राह्मण बोले, ''मनुष्य का मांस नहीं लेना। हमें तो राजा के पुत्र का मांस चाहिये।''

उन दिनों राजा सत्यवादी हुआ करते थे। प्रतिज्ञा कर ली और बोला, ''बताओ कैसे लेना है?''

ब्राह्मण बोले, ''उसके शरीर का आधा हिस्सा लेना है और आरे में चीरने के लिये, एक तरफ तेरी रानी और दूसरी ओर तुम अपने पुत्र राजकुमार को अपने हाथों से आरा रख कर चीरोगे तब हम स्वीकार करेंगे।''

जैसे ही सिर पर आरा रखा गया, अभी मामूली सा ही आरा स्पर्श हुआ था कि राजकुमार की बांई आंख से जल बह निकला। उसी समय ब्राह्मण देव बिगड़ गये और बोले-

''राजन! तुम तमोगुणी दान कर रहे हो। हमने तमोगुणी दान नहीं लेना। सतोगुणी दान लेना है।''

जो व्यक्ति खींझ कर दान दे, दुखी होकर दान दे, बुरा माने, निन्दा करे, वह तमोगुणी दान, पाप का कारण बनता है। लेने वाला और देने वाला, दोनों पाप के भागीदार होते हैं।

राजकुमार बोला, ''मैं इसलिये नहीं रो रहा। कम से कम आप कारण तो पूछिये?''

ब्राह्मण वेश में कृष्ण जी बोले, ''क्या कारण है, बताओ?'' राजकुमार कहता है, ''मेरी बांई आंख में पानी इसलिये आया कि दायां हिस्सा तो तुमने शेर को खिला देना है और बायां हिस्सा किसी काम न आया? मेरा शरीर तो सफल न हुआ, किसी लेखे में न आया?''

जब इस तरह की दृढ़ता देखी तो भगवान तुरन्त प्रकट हो गये। शरीर पहले जैसा ही कर दिया।

गुरू अंगद साहिब कहने लगे, ''प्यारे! देखो कितने महान बुजुर्ग हुए हैं हमारे और तुम तो कुतका खाकर ही डगमगा गये। गुरू साहिब का भेष देखकर डांवाडोल हो गये।'' इसके विपरीत पक्का निश्चय हो, गुरू की कृपा हो, फिर तो पार हो जाते हैं। जिनका इरादा कच्चा होता है, वे पार नहीं हो पाते।

धारना - कच्चे झड़ जांदे ने,
सहिणी कसवट्टी औखी - 2, 2
सहिणी कसवट्टी औखी - 4, 2
कच्चे झड़ जांदे ने, ...-2

रते सेई जि मुखु न मोड़ंन्हि जिन्ही सिञाता साई।
झड़ि झड़ि पवदे कचे बिरही जिन्हा कारि न आई॥

पृष्ठ - 1425

पक्का दृढ़ इरादे वाला ही पार होता है, कच्चा कमज़ोर इरादे वाला पार नहीं कर सकता? यदि मनुष्य कहे कि वह पार हो जायेगा? साध संगत जी नहीं, कसौटी लगने पर पता चलता है।

गुरू दसवें पातशाह जी महाराज के समय गुरसिक्खी बहुत जवान हो चुकी थी और शिखर

पर पहुँच गई थी। जहाँ पर पहुँच कर सिक्ख डगमगाते नहीं। इन दिनों आप आनन्दपुर साहिब में संगतों को रूहानी उपदेश के साथ-साथ शस्त्र विद्या का भी अभ्यास करवा रहे हैं। आस-पास के राजाओं के साथ झड़पें होती रहतीं। अन्त में एक बहुत बड़ी बैठक 22 धार के राजाओं की हुई। अपने साथ सरहन्द सूबे की फौजें भी साथ मिला लीं। कहते हैं, ''बार-बार हमला करने की बजाये, एक ही बार मिलकर हमला करो और गुरू गोबिन्द सिंघ जी को यहाँ से उजाड़ दो और पकड़ लो। गिरफ्तार करके औरंगजेब के हवाले कर दो। अन्यथा रोज़-रोज़ का झगड़ा रहेगा कि कभी बिलासपुर वाला राजा लड़ रहा है, तो कल को अमुक धार का राजा लड़ रहा है। एक ही बार ज़ोर लगाकर देख लो।'' उस समय डेढ़ लाख फौज़ इकट्ठी कर ली। खूब लड़ाईयां लड़ीं, पर पास न फटकते। उधर तो दुस्साहसी सूरमा थे। साध संगत जी! जो दुस्साहसी सूरमा होते हैं, वे करामातें दिखा देते हैं, फिर गुरू महाराज जी का बल हो और गुरू गोबिन्द सिंघ महाराज जी की दृष्टि हो, फिर तो कोई भी सामने नहीं आ सकता। बहुत भयानक युद्ध हुए। अनेक लोग मारे गए। अन्त में यह फैसला हुआ कि किले को घेरा डाल दो। राशन खत्म हो जायेगा। तब इन्हें पकड़ लेंगे। फिर घेरा डालकर बैठ गये। दो महीने घेरा डाले बीत गये। सिंघ बाहर निकलते हैं, जहाँ पर उनका राशन रखा होता है, वहाँ पर जाकर हमला कर देते हैं और राशन उठा लाते हैं। अन्त में खन्डूर का राजा केसरी चन्द कहता है, ''क्यों कायरों जैसी बातें करते हो? हमारे बुजुर्ग तो मर मिटते थे और तुम ऐसी ओछी बातें कर रहे हो? उनके साथ थोड़े से लोग हैं और वे भी किले के अन्दर लड़ते हैं।'' दूसरे राजा ने कहा, ''किला बहुत मज़बूत है, इसे तोड़ना बहुत कठिन है। मैदान में आकर लड़ें तो हमें भी पता चल जाये, फिर हम उनका मुकाबला करें। अब तो वे लड़ते हैं और किले में घुस जाते हैं।'' एक कहता है, ''तुमने उनकी लड़ाई देखी है? शस्त्र कैसे चलते हैं, नेज़े कैसे चलते हैं? तलवारें ऐसे चमकती हैं, जैसे बिजली चमकती हैं।'' राजा केसरी चन्द बोला, ''हम ये बुजदिल बातें नहीं सुनते।'' योजना बनाई गई कि कल को हाथी को मस्त करके, किले का दरवाज़ा तुड़वाना है। सारी डेढ़ लाख फौज़ इकट्ठी करके हमला कर दो। कितने मर जायेंगे? एक बार दरवाज़ा टूट गया, फिर हमने नहीं जाने देना। इस तरह योजना बना ली गई। फौज़ें इकट्ठी होनी शुरू हो गईं।

जासूस बिजला सिंघ ने गुरू दशमेश पिता जी के पास आकर प्रार्थना की, ''पातशाह! फौज़ें डेरे उठा रही हैं, मोर्चे छोड़कर जा रही हैं। पता नहीं कोई नई योजना बना रहे हैं? आप अर्न्तयामी हैं महाराज! विचार कर लीजिये।'' महाराज जी उसी तरह से बेपरवाह होकर बैठे हैं। कोई बात नहीं करते। इधर सारी फौज़ें इकट्ठी होती जा रही हैं। जो उनके जत्थेदार थे, वे कहते हैं, ''अब ये सिक्ख इधर-उधर हल चल कर रहे हैं। चलो इनसे राशन छीन लो। जितना लूट सकते हैं, लूट लो।'' उन्होंने मिलकर हल्ला बोल दिया। बहुत से सिक्ख मार दिये। काफी सारा राशन भी लूट लिया। उसके बाद फिर इकट्ठे हो गये। एक हाथी मंगवाया फिर महाराज जी को आकर बताया, ''सच्चे पातशाह! हाथी मंगवा लिया है। बहुत बली हाथी है। योजना यह बन रही है कि हाथी के सिर पर तवे बान्धेंगे, सारे शरीर पर लोहा मढ़ेंगें ताकि कोई तीर न लगे। बर्छे का असर न हो, तलवार का वार न चले। सारी सून्ड में से, केवल एक हाथ ही बाहर रखी है और उसमें भी 5-6 फुट की तलवार तैयार की है जो इसके साथ बान्ध देंगे।''

पातशाह! हाथी को मढ़ने के लिये, लोहा ही लोहा लाया गया है। चारों ओर लोहे की चादरें बान्ध देनी हैं। सभी सिंघ बैठे हैं। कल के लिये योजना बन रही है। इतनी देर में, दुनी चन्द जो मांझे का मसन्द था, भाई शालों का लड़का, वह आ गया। उसने आते ही महाराज जी को शीश नंवाया। महाराज जी कहते हैं, ''यह देखो, हमारा हाथी कितना बड़ा है। पचास इन्च तो उसके डोले हैं, बावन-तरेपन इन्च की छाती है। यह तो खुद ही हाथी से भी अधिक ताकतवर है। यह कल लड़ेगा, तुम चिन्ता मत करो।''

दुनी चन्द ने बात सुन ली। मस्त हाथी से लड़ने की बात सुनते ही मुँह पीला पड़ना शुरू हो गया। मन ही मन कहता है कि हम तो संगत को यहाँ पर लेकर आते हैं और गुरू महाराज जी ये क्या करने लग रहे हैं? वैसे अपने आपको कहा करता था कि उसके मुकाबले का सूरमा सारे पंजाब में और कोई नहीं है। कहता था कि यदि मैं दोनों हाथों से तलवार मारूं, तो जवान के ज़र्रा बख्तर (लोहे के कवच) काट कर, घोड़े की काठी भी काट कर, घोड़े की पीठ काटती हुई, धरती में, एक हाथ अन्दर घुस जाती है। बहुत शेखी बघारता था। महाराज जी को पता था कि वक्त आने पर इसे परखेंगे। साध संगत जी! उस समय कसौटी लग गई। दम फूल गया। थोड़ी देर गुरू साहिब के पास बैठा। पानी की प्यास लगी। उठकर पानी पीने चला गया। डेरे में पहुँच गया और चारपाई पर लेट गया।

सेवादार पूछते हैं, ''क्या बात है? कुछ तबीयत ढीली है क्या?''

दुनीचन्द जी ने कहा, ''नहीं, भाई दया सिंघ जी से मिलना है।''

भाई दया सिंघ जी का पता किया। पता चला कि वह अपने डेरे में हैं और वह डेरे में मिलने चला गया।

वहाँ जाकर कहता है, ''भाई दया सिंघ! देख, हम दोनों माझे के रहने वाले हैं, तुम लाहौर के हो और मैं पट्टी का हूँ। यह देख, गुरू साहिब क्या करने जा रहे हैं? हमें ही मरवाने लग गये।'' भाई दया सिंघ को अपने साथ मिलना चाहा।

दुनी चन्द आगे कहता है, ''मुझे कहते हैं, कल तू हाथी से लड़ना। हाथी से लड़ना कोई आसान खेल है? मैं कितनी सेवा करता हूँ? कितने सिक्ख लेकर आता हूँ? कितनी भेंट लेकर आता हूँ? मुझे यही फल मिलना था कि हाथी से मरवाना है?''

भाई दया सिंघ जी कहते हैं, ''दुनी चन्द! तुम हिम्मत मत हार। बल तो गुरू महाराज जी का ही काम करेगा, तेरे से तो यह काम करवाना है। तेरी तो खूब नेक-नामी होगी।''

कहता है, ''मरने के बाद होती रहे, ऐसी नेक-नामी।'' उसने देखा कि भाई दया सिंघ जी तो साथ नहीं मिलते, फिर बाबा बुड्ढे किआं के पास चला गया, बाबा गुरबख्श सिंघ तथा बाबा राम कुंवर के पास भी गया।

उन्हें कहता है, ''देखो, आप रामदास के रहने वाले हो, मैं भी माझे का हूँ और तुम भी

माझे के रहने वाले हो। देखो, गुरू साहिब क्या करने जा रहे हैं? मुझे मरवाने जा रहे हैं। इनसे पहले गुरूओं को देखो, गुरू नानक साहिब से ही देख लो, कोई लड़ाई लड़ता था? इन्हें तो लड़ने का शौक ही चढ़ गया है।''

इस प्रकार निन्दा करता है। पता नहीं कितनी बातें बोल गया। वे कहते हैं, ''अरे गुरमुख! यह तो गुरू की माया है। तू हिम्मत मत हार, तुझे तो शाबाशी मिलेगी।''

साध संगत जी! नहीं मानता क्योंकि सतगुरू की माया को ऐरा-गैरा नहीं सहन कर सकता। इस तरह से फ़रमान है -

धारना - इह माइआ सतिगुरू दी,
पिआरिओ झलणी है अति औखी - 2, 2
झलणी है अति औखी पिआरे - 2, 2
इह माइआ सतिगुरू दी, ...-2

कहता है, ''बाबा जी! आपके अन्दर तो शक्ति है, जिसको तिलक लगा दो, वही गुरू हो जाता है।''

दुनी चन्द कहता है, ''फिर?''

अब अक्ल काम कर रही है, भरोसा काम नहीं कर रहा।

बाबा जी कहते हैं, ''प्यारे! यह तो सतगुरू की माया है। तुम ताकतवर बनो। हिम्मत करो। हौंसला रखो। तुझे कोई मरवाने के लिये कह रहे हैं? बल तो उन्होंने ही देना है।''

दुनी चन्द कहता है, ''नहीं! मैं देखता हूँ, कुछ नहीं करते। ये देखो, कितने सिंघ रोज़ाना शहीद होते हैं, ऐसी बात होती तो एक भी शहीद न हो।''

इस तरह की कच्ची और ओछी बातें कीं। माझे के और भी जो अच्छे-अच्छे सिंघ थे। उनके पास भी जाता है। दूसरों को भी बहकाता है। जब किसी ने भी साथ न दिया तो अपने डेरे में आकर बैठ गया। वहाँ पर जिस संगत को साथ लेकर आया था, सारी बुला ली।

कहता है, ''अच्छा भाई प्रेमियो! हमारा तो दो टूक काम हो गया। गुरू तो मुझे मरवाने चला है। मुझे मरने के लिये कहा है और मेरे साथ तुम सभी ने जाना है और हम तो सभी मर गये, ऐसा समझ लो। हमें गुरू की भी ज़रूरत है न? हम यहाँ से चलकर धीरमल को गुरू बनाते हैं। मेरे साथ माझे की बड़ी संगत है। यहाँ पर लड़कर क्यों मरें?''

योजना बन गई। आधी रात हो गई। बड़ी-बड़ी रस्सियां ले लीं। जहाँ देखा, कि पहरेदार कम हैं, उस जगह अन्धेरे में रस्सी डाल ली और किले के बाहर उतारना शुरू कर दिया। आप ऊपर खड़ा होकर उतारे जा रहा है और काफी सारे लोग बाहर उतार दिये अन्त में आप उतरने लगा। जब आधी दीवार किले की उतर आया तो रस्सी इसका बोझ सहन न कर सकी क्योंकि बहुत भारी भरकम शरीर था, रस्सी टूट गई और वह धड़ाम से नीचे गिरा और टांग टूट गई। हाय-हाय करने लग गया। साथ के सिक्ख कहते हैं, ''शोर मत मचाओ, पकड़ कर ले जायेंगे। इस समय चुप-चाप सहन

कर लो, आगे जाकर देख लेंगे।'' वहाँ से कोई चारपाई ले आये, उस पर लिटा कर बाहर लेकर आ गये। साध संगत जी, जो कच्चे होते हैं, वे ऐसे झड़ जाते हैं –

धारना – कच्चे झड़ गए सिदक तों हीणे,
पिट्ठ दे के सतिगुरू नूं – 2, 2
मेरे पिआरे, पिट्ठ दे के सतिगुर नूं – 2, 2
कच्चे झड़ गए सिदक तों हीणे, ...-2

झड़ि झड़ि पवदे कचे बिरही जिन्हा कारि न आई॥
पृष्ठ – 1425

गुरू दशमेश पिता जी को पीठ दिखाकर चले जा रहे हैं। इनमें बहुत से के मन डांवाडोल हो रहे हैं, कह रहे हैं, ''मरना तो फिर भी है। कितनी बड़ी गलती की कि गुरू जी को ऐसे मौके पर पीठ दिखाकर चले आये।'' इस तरह चलते-चलते माझे पहुँच गये। अपने घर पहुँच गया। वहाँ पर जब लोगों को पता चला तो बेअन्त संगत मिलने आती है। हर एक यही कहता है, ''तूने तो यह बहुत बुरा काम किया।'' पत्नी और सेवादारों से कहा कि उसे कोई न मिलने आये।

सेवादार कहते हैं, ''महाराज! आपकी चारपाई बाहर बिछी है, इसलिये आपसे सभी मिलेंगे।''

दुनी चन्द कहता है, ''मेरी चारपाई यहाँ से उठाकर कोठड़ी में डाल दो।'' चारपाई उठाकर कोठड़ी में डाल दी। उसमें एक काला नाग रहता था। टांग तो पहले ही टूटी हुई है, हाय-हाय करता रहता है। चारपाई अन्दर डालकर जब बिठाया और इसने टांग नीचे रखी, तुरन्त काले नाग ने डस लिया।

ज़ोर से चिल्लाया, ''खा लिया साँप ने, अरे मैं मर गया।''

उस समय सियाने लोग कहते हैं, ''दुनी चन्द, मौत तो रूक नहीं सकती, पर सारी ज़िन्दगी की की गई मेहनत अन्त में गवाँ दी। अब तो तेरी यह मौत निन्दनीय है। यह कोई प्रशंसनीय मौत नहीं है।''

धारना – किउं जनम गवा लिआ ओ, मूरखा,
गुरां तों बेमुख हो के – 2, 2
गुरां तो बेमुख हो के मूरखा – 2, 2
किउं जनम गवा लिआ ओ, ...-2

मनमुखि आवै मनमुखि जावै।
मनमुखि फिरि फिरि चोटा खावै।
जितने नरक से मनमुखि भोगै गुरमुखि लेपु न मासा हे॥ *पृष्ठ – 1073*

सभी कहते हैं, ''प्यारे! मौत तो टलनी नहीं थी और अब गुरू से भी विमुख हो गया।''

इधर गुरू दसवें पातशाह जी को सुबह ही सिंघों ने बताया, ''महाराज! आपका हाथी तो भाग गया।''

महाराज जी कहते हैं, ''वह मौत के भय से भागा है। यहाँ पर तो मौत टल जानी थी, पर अब तो वहाँ पर जाते ही तैयार खड़ी मिलेगी।''

सेवकों ने कहा, ''महाराज! अब क्या होगा?''

महाराज जी कहते हैं, ''हमारा शेर, बचितर सिंघ खड़ा है।''

नाम लेने की देर थी। जयकारे बुलाने लग गया। चाव चढ़ गया कि महाराज जी ने आज मुझे अपना बल देना है। चरणों में शीश झुकाकर नमस्कार की।

कहता है, ''पातशाह! मेरे अन्दर बल नहीं है, आप बल देंगे तो फिर एक हाथी तो क्या, कुछ भी करवा लो।''

उधर हाथी को सवा मन शराब पिलाकर, उसकी सून्ड के साथ तलवार बान्ध कर, सभी बर्छियां अपने हाथों में लेकर उसे दरवाज़े की ओर हांकते हुए ला रहे हैं।

सिंघ कहते हैं, ''महाराज! हाथी नज़दीक ही आ गया है।''

महाराज जी ने कहा, ''कोई बात नहीं, हमारा शेर भी जाने को तैयार खड़ा है।''

महाराज जी ने सग्तहालय (तोशेखाने) में से नागनी मंगवाई फिर बताया कि किस तरह इसके मारना है। सारी बात समझा दी।

इधर उदय सिंघ से कहा, ''जब वह हाथी को घायल कर देगा तो हाथी पीछे हटेगा। उस समय हफड़ा-दफड़ी मच जायेगी और तेरा काम क्या है?''

उदय सिंघ कहता है, ''महाराज! जैसे आपका हुक्म हो।''

महाराज जी ने कहा, ''तूने केसरी चन्द का सिर लाना है। वह बहुत घमण्डी है, इसके अन्दर बड़ा अभिमान आ गया है।''

ऐसा ही हुआ। फौज़ें निकट आ गईं। जब हाथी लोहगढ़ किले के दरवाज़े पर सिर से टक्कर मारने लगा, उस समय, घोड़े पर सवार होकर अकेला सिंघ बचितर सिंघ ही बाहर आया। उधर से हाथी आता है, इधर से यह शेर जाता है. जाते ही इसने रकाब पर पैर टिका कर पूरे ज़ोर के साथ गुरू कलगीधर का ध्यान धर कर नागनी मारी और वह तवों को चारती हुई हाथी के सिर में जा घुसी। हाथी ज़ोर-ज़ोर से चिंघाड़ता हुआ, पीछे की ओर लौट पड़ा। फौज़ों को रौन्दता हुआ भाग निकला। हफड़ा-दफड़ी मच गई। उस समय उदय सिंघ ने थोड़े से सिंघों को साथ लेकर केसरी चन्द का सिर धड़ से अलग कर दिया। इस प्रकार करने कराने वाला तो गुरू होता है, बस निश्चय डगमगा जाया करता है।

एक बार ऐसा ही वचन संगत में चल पड़ा कि सिक्ख गुरू का तेज़ कौन सहन कर सकता है? परीक्षा तो होती ही है पर भाई मन्झ जैसी परीक्षा किसी ने पास नहीं की। साध संगत जी, वह बहुत कठिन पेपर था। उस दिन भाई गुरदास जी बैठे हैं, बाबा बुड्ढा जी बैठे हैं और भी बड़े-बड़े

नामी सिक्ख भाई विधि चन्द जी, भाई जेठा जी, भाई भगतू जी, भाई बहिलो जी, भाई पराना जी, भाई परागा जी, भाई लाल जी, भाई मईया जी आदि पूर्ण ब्रह्मज्ञान की अवस्था वाले सिक्ख बैठे हैं तो वचन चल पड़ा कि सिक्ख गुरू की कसौटी सहन कर सकता है या नहीं। सभी चुप हो गये। कहते हैं, ''बताओ महापुरुषो, आप यहाँ इतनी महान, बड़े-बड़े महापुरुष बैठे हो?'' सभी कहते हैं, ''गुरू की कसौटी तो बहुत कठिन होती है, वह तो तभी सहन होती है, यदि गुरू कृपा करे। वैसे सिक्ख में अपना बल कोई नहीं होता कि गुरू द्वारा लगाई गई कसौटी पर खरा उतर सके।''

उस समय भाई गुरदास जी कहते हैं, ''नहीं, मैं इस बात से सहमत नहीं हूँ।''

फिर सभी ने पूछा, ''आपकी क्या राय है?''

भाई गुरदास जी ने कहा, ''देखो, यदि दानों को भून दिया जाये तो वे दोबारा हरे नहीं हुआ करते। जिसे ब्रह्मज्ञान हो जाये और पुराने संस्कारों के दाने भुन जायें, वह सिक्ख कभी नहीं डगमगाया करता।''

बाकी कहते हैं, ''नहीं, चाहे ब्रह्मज्ञान भी हो जाये, कितनी बड़ी प्राप्ति क्यों न हो जाये, गुरू की कृपा के बगैर सिक्ख कायम नहीं रहा करता। सिक्ख में ताकत नहीं है।''

जब यह वार्ता चल रही थी तो गुरू छठे पातशाह पास ही बैठे, ये बातें सुन रहे थे। ये वचन सुनकर मुस्करा पड़े। उधर सभी सिक्ख इसी मत के हामी हैं कि नहीं, गुरू की कृपा के बिना पार नहीं हो सकता पर भाई गुरदास जी का मत है कि जो सच्चे दिल से सिक्ख बन गया, जिसे ज्ञान प्राप्त हो गया, जिस पर गुरू की कृपा हो गई, वह सिक्ख कसौटी सहन कर लेता है। इस तरह कहते हैं -

धारना - कदे सिक्ख सिदकों ना डोले,
धरती बेशक डोल जाए - 2, 2
मेरे पिआरे, धरती बेशक डोल जाए - 2, 2
कदे सिक्ख सिदकों न डोले, ...-2

जे माँ होवै जारनी किउ पुतु पतारे।
गाई माणकु निगलिआ पेटु पाड़ि न मारे।
जे पिरु बहु घरु हंढणा सतु रखै नारे।
अमरु चलावै चंम दे चाकर वेचारे।
जे मदु पीता बामणी लोइ लुझणि सारे।
जे गुर साँगि वरतदा सिखु सिदकु न हारे॥
भाई गुरदास जी, वार 35/20

धरती उपरि कोट गड़ भुइचाल कमंदे।
झखड़ि आए तरुवरा सरबत हलंदे।
डवि लगै उजाड़ि विचि सभ घाह जलंदे।
हड़ आए किनि थंमीअनि दरीआउ वहंदे।
अबरि पाटे थिगली कूड़िआर करंदे।

साँगै अंदरि साबते से विरले बंदे॥

भाई गुरदास जी, वार 35/21

बाबा बुड्ढा जी कहते हैं, ''भाई गुरदास जी, आप बहुत उच्च अवस्था के गुरसिख हो, गुरू को परवान हो। आपने एक तरफ से गुरू ग्रन्थ साहिब जी का अनुवाद किया है। अपनी बाणी में आपने टीका लिखा है, पर हमारा तो यही मत है कि जब तक गुरू की कृपा न हो, तब तक सिक्ख कुछ नहीं कर सकता। सिक्ख की कोई ताकत नहीं कि वह गुरू की माया के आगे ठहर सके।'' और आपने फ़रमान किया है कि -

जे माँ होवै जारनी किउ पुतु पतारे॥

भाई गुरदास जी, वार 35/20

माँ बुरी है तो कभी पुत्र निन्दा नहीं किया करता -

गाई माणकु निगलिआ पेटु पाड़ि न मारे॥

भाई गुरदास जी, वार 35/20

यदि गाय हीरा खा ले तो उसका पेट फाड़ कर मारते नहीं हैं कि हीरा निकाल लें -

जे पिरु बहु घरु हंढणा सतु रखै नारे॥

भाई गुरदास जी, वार 35/20

यदि किसी स्त्री का पति खराब है, अन्य घरों में जाता है पर वह अपना सत बनाये रखती है। वह तो अपना सत कभी खराब नहीं करती -

अमरु चलावै चंम दे चाकर वेचारे।
जे मदु पीता बामणी लोड़ लुझणि सारे॥

भाई गुरदास जी, वार 35/20

यदि ब्राह्मणी शराब पी ले तो सभी कहते हैं, ''नहीं, भाई बात मत करो, बेइज्जती हो जायेगी।''

जे गुर साँगि वरतदा सिखु सिदकु न हारे॥

भाई गुरदास जी, वार 35/20

इसी तरह यदि गुरू स्वांग रच ले तो सिक्ख सिदक नहीं हारा करता। साध संगत जी! उस समय ये बातें चल रही थीं। गुरू छठे पातशाह ने सारी रीत बदल दी। पहले जिस समय कथा हुआ करती थी, उसकी जगह घुड़-सवारी आदि होने लग पड़ी, शस्त्र विद्या शुरू हो गई। पैंदे खां को सिखाने के लिये रख लिया। वह महाराज जी के साथ व्यायाम करता है। जो पहले मुखिया सिक्ख थे, वे बुरा मनाने लग पड़े और कहने लगे, ''यह क्या हो गया? गुरू महाराज ने नया ही रास्ता चला दिया।'' भाई गुरदास जी ने इस पर एक वार लिखी है, जिसमें आपने लिखा है कि बाहर चले जाते हैं, शिकार खेलते हैं, राजाओं की तरह रहते हैं, कलगियां लगाते हैं, शस्त्र पहनते हैं, यह क्या हो गया, गुरू वालों को?'' इधर एक महिला जिसका नाम कौलां था, जो ब्रह्मज्ञान की अवस्था की थी। वह सांई मीयां मीर जी की मुरीद थी और घर में कोई ऐसा क्लेश हुआ कि उसकी जान को खतरा हो गया। उसने मीयां मीर जी से कहा, ''मेरी रक्षा करो।'' मीर जी ने कहा, ''तेरी रक्षा केवल गुरू हरगोबिन्द साहिब ही कर सकते हैं और कोई नहीं कर सकता।'' गुरू हरगोबिन्द साहिब जी उसे

अपने यहाँ ले आये। इस बात पर बहुत क्लेश छिड़ गया। बड़े-बड़े सिक्ख डांवाडोल हो गये। कहते हैं, ''देखो जी, नया ही काम शुरू कर दिया। कौलां को ले आये। उसे अलग मकान बनवा कर दे दिया। उसके पास जाकर बैठते हैं।'' इस प्रकार बातें होती रहीं। भाई गुरदास जी कहते हैं, ''देखो, गुरू के स्वांग हुआ करते हैं और सिक्ख सिदक नहीं हारा करता।'' उन्होंने एक पउड़ी दूसरी कही –

धरती उपरि कोट गढ़ भुइचाल कंमंदे॥

भाई गुरदास जी, वार 35/21

जब भूचाल आता है तो उस समय पहाड़, किले सभी कांपते हैं।

झखड़ि आए तरुवरा सरबत हलंदे॥

भाई गुरदास जी, वार 35/21

जब आन्धी तूफान आता है तो सारे वृक्ष हिलते हैं –

डवि लगै उजाड़ि विचि सभ घाह जलंदे॥

भाई गुरदास जी, वार 35/21

जब उजाड़ में आग लग जाती है तो सारी घास जल जाती है –

हड़ आए किनि थंमीअनि दरीआउ वहंदे॥

भाई गुरदास जी, वार 35/21

जब बाढ़ आ जाती है तो फिर उसके सामने बान्ध नहीं ठहरता, जिधर पानी के बहाव का जोर पड़ता है, उसे काट कर ले जाता है –

अंबरि पाटे थिगली कूड़िआर करंदे॥

भाई गुरदास जी, वार 35/21

जो आसमान को टाकियां लगाते हैं, वे आदमी झूठे कहलाते हैं –

साँगै अंदरि साबते से विरले बंदे॥

भाई गुरदास जी, वार 35/21

विरले-विरले आदमी होते हैं जो इस स्वांग में ठीक तरह से रह जाते हैं। बाबा बुड्ढा जी कहते हैं, ''भाई गुरदास जी! हमारे अन्दर तो इतनी ताकत नहीं है, आपमें यह ताकत है। हम तो डगमगा जाते हैं। हाँ, गुरू सहायता करे, गुरू पीठ पर हाथ रखे तो स्वांग में साबित रहा जाता है।''

गुरू छठे पातशाह जी ने ये सभी वचन सुन लिये। उस समय महाराज जी के मन में ख्याल आया कि बाकी सभी गुरू आसरा चाहते हैं पर भाई गुरदास जी अपनी निज ताकत में विश्वास रखते हैं, निज सिदक पर भरोसा रखते हैं। इसलिये इनके मन में हउमैं का बीज अंश मात्र रह गया है। हम तो ऐसे ही कह दिया करते हैं कि हम तो करोड़ों गुणा घटिया है। यहाँ पर बहुत ऊँची बात हो रही है। एक निर्मल अहंकार होता है जो अन्त में रह जाता है। उसका भी यदि नाश हो तो परमेश्वर मिला करता है। अन्यथा अधूरा रह जाया करता है। सो महाराज जी ने विचार किया कि इसके अन्दर अंश मात्र अभी भी हउमै रह गई है, यह हमारे पास रहता है और सभी से अच्छा भी

है, इसलिये हमारा कर्तव्य बनता है कि इसके अन्दर से यह भी निकाल दें। यदि यह हउमैं न निकाली तो इनका परमेश्वर से वियोग हो जायेगा।

यदि अन्दर हउमैं रह जाये, चाहे अंश मात्र ही रह जाये, परमेश्वर से मिलाप नहीं हुआ करता। फ़रमान है कि –

हउमै करत भेखी नही जानिआ।
गुरमुखि भगति विरले मनु मानिआ॥
हउ हउ करत नही सचु पाईऐ।
हउमै जाइ परम पदु पाईऐ॥ *पृष्ठ - 226*

महाराज जी ने विचार किया कि बाकी तो सभी गुरू का आसरा चाहते हैं और भाई गुरदास जी अपने निज आसरे पर विश्वास रखते हैं और इनके अन्दर बीज मात्र हउमै रह गई है, 'अहम' रह गया है। सूरज प्रकाश में भी ऐसा फ़रमान है –

अपर सरब गुर आश्रा चहैं।
निज बिसास गुरदासहि कहैं।
यांते बीज मात्र अहंकार।
है इस बिखै सु बुरो बिकार॥
श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ 3047

यदि यह किसी के अन्दर भी आ जाये तो एक लहर सी चली आती है। साध संगत जी, जो यह कहता है, 'मैं' करता हूँ, कोई भी कह दे, मेरा भाषण अच्छा है, मेरा कीर्तन अच्छा है, उसके अन्दर बीज मात्र अहंकार रह जाया करता है और फिर –

हरि जीउ अहंकार न भावई वेद कूकि सुणावहि॥
पृष्ठ - 1089

कहते हैं, इसके अन्दर तो विकार रह गया। यह –

रहिबो सदा समीप हमारे।
चहीअहि उर ते मूल उखारे॥
श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ 3047

कहते हैं, यह हमारे पास रह रहा है, हर समय साथ रहता है, सिक्खों को उपदेश देता है। यह हमारा फर्ज़ बनता है कि इसके अभिमान को जड़ से उखाड़ दें –

इम हंकार बिनास्यो जेन।
तउ हम को चहीअति हति देनि॥
श्री गुर प्रताप सूरज ग्रन्थ 3047

यदि इससे स्वंय यह अहंकार नहीं निकलता तो हमारा कर्तव्य बन जाता है कि हम इसका अहंकार खत्म कर दें –

देहिं कसौटी, सहै कि नांही।
करहिं क्रिती कुछ परखन मांही॥

गुरू महाराज कहते हैं, चलो कसौटी लगाकर देखते हैं, परखते हैं कि वास्तव में रह जाता है या नहीं। उस समय गुरू महाराज जी ने अच्छी तरह विचार किया, फिर कुछ समय के लिये बात टाल दी। किसी के साथ कुछ भी न बोले, सुनकर चुप हो गये। इस तरह महीना बीत गया। इसी समय के दौरान एक प्रेमी ईरान की तरफ से अरब से आया। उसने आकर प्रार्थना की महाराज! उस इलाके में घोड़े बड़े सुन्दर मिलते हैं।

महाराज जी कहते हैं, ''देखो भाई! हमें भी घोड़े चाहियें। कुछ सिक्खों के लिये तथा दो हमारे लिये भी चाहियें। कहाँ से खरीदने चाहियें?''

कोई कहता, मुलतान में बहुत बढ़िया घोड़े मिलते हैं, कोई कहता गुज़रात के बहुत अच्छे होते हैं। अन्त में इस निर्णय पर पहुँचे कि काबुल के घोड़े बहुत बढ़िया हैं। काबुल के आगे बलख-बुखारे के घोड़े तो कमाल के हैं। वहाँ की मण्डियों में ईरानी नस्ल के घोड़े बिकते हैं। यदि उन पर बैठ जाओ और वे रेविआ चाल से चल पड़े तो चाहे पानी का कटोरा हाथ में रख कर पी लो, एक बूंद भी धरती पर नहीं गिरेगी। यदि वे सरपट दौड़ते हैं तो उनका मुकाबला पन्छी भी नहीं कर सकते। हवा से बातें करते हैं।

महाराज जी ने कहा, ''फिर जाओ, ऐसे घोड़े खरीदो।'' उस समय संगत पर दृष्टि डाली और भाई गुरदास जी की ओर संकेत किया।

भाई गुरदास जी दोनों हाथ जोड़ कर खड़े हो गये। महाराज जी कहते हैं, ''देखो, आप सबसे पुराने गुरसिख हो।

बाकी तो सभी नये-नये हैं। सभी को अलग-अलग डयूटियां मिली हुई हैं। आप जाओ और बहुत सुन्दर घोड़े खरीद कर लाओ। मोहरें ले जाओ पर ऐसे करना, पहले घोड़े छांट लेना। हम तुम्हारे साथ हैं, जो घोड़ों की चाल-ढाल, भाव मोल आदि से परिचित है, भेज रहे हैं। ये घोड़े छांट लेंगे, उनकी चाल वगैरा देख लेंगे, उन्हें दौड़ा कर भी देख लेंगे फिर जो पसन्द आयें, उन्हें हमारे पास भेज देना। जब हम मन्ज़ूरी देंगे, तब आपने इन घोड़ों का मूल्य देना है।''

उस समय गुरू महाराज जी ने दस खच्चरों पर पचास हज़ार मोहरें लदवा दीं। काफी धन हो जाता है। आज कल तो एक मोहर का मोल बहुत है।

इसके बाद महाराज जी ने कहा, ''पैसों का ध्यान रखना। इन्हें सील कर दो, इन पर मोहरें लगा दो और वहीं जाकर खोलना। बड़ी सावधानी से रहना।'' हिसाब किताब रखने के लिये दुनी चन्द जी को साथ भेज दिया। यह भी कहा कि इनको साथ ले जाना क्योंकि ये वहाँ के रहने वाले भी हैं और सियाने आदमी हैं। इस तरह चलते-चलते काबुल पहुँच गये। वहाँ पर कुछ दिन इधर उधर हालात देखे और पता चला कि अमुक दिन मण्डी लगेगी और वह मण्डी दो तीन महीने चलेगी, फिर वहाँ से अच्छे-अच्छे घोड़े खरीदेंगे। अब जब आगे बढ़े तो अभी थोड़ी सी मन्ज़िल ही तय की होगी कि पीछे से एक घुड़सवार सन्देश लेकर आ गया। कहता है, ''दुनी चन्द जी! आपके घर डाका

पड़ गया है। आपकी पत्नी घायल हो गई है। आप घर वापिस चलो और सरकार कहती है कि चल कर बताओ कि कौन-कौन सा नुकसान हुआ है।''

दुनी चन्द जी कहते हैं, ''अब जो डाका पड़ना था, वह तो पड़ गया। अब तो मैं गुरू साहिब की डयूटी पर जा रहा हूँ और वापिस नहीं जाऊंगा। जाओ घर वालों को कह दो जो कुछ लिखवाना है, लिखवा दें।''

अभी कुछ एक मंजिल ही तय की थी कि फिर वही घुड़सवार आ गया और कहता है, ''महाराज! आपकी पत्नी बीमार हुई और मर गई। सभी आपका इन्तज़ार कर रहे हैं। कैम्प को यहीं रोक दे और जाकर संस्कार करवा आओ।''

दुनी चन्द कहते हैं, ''प्यारे जी! अब वह तो मर गई, तुम खुद ही संस्कार कर दो। जाओ, मेरी ओर से सब ठीक है।''

फिर दो मंजिलें और तय की होंगी फिर सन्देशा आ गया, ''दुनी चन्द जी! आपका पुत्र बीमार होकर मर गया है। घर सूना हो गया है। क्या हुक्म है?''

दुनी चन्द जी कहते हैं, ''पुत्र का संस्कार कर दो और संगत हमारे घर रहती ही है। संगत को अभी वहीं रहने दो।''

भाई गुरदास जी देख रहे हैं कि सिक्ख में कितना सिदक है। चलते-चलते मण्डी पहुँच गये। वहाँ पर घोड़े छांट लिये, उन्हें खूब अच्छी तरह दौड़ा कर देख लिया, अच्छी-अच्छी नस्ल के, पसन्द करके, गुरू महाराज जी के पास भिजवा दिये। सौदागरों के साथ बातचीत तय हो गई कि जितने मन्जूर हो जायेंगे, उनका मोल दे देंगे, जो वापिस आ जायेंगे उनका मोल नहीं देंगे। सौदागर भी मान गये, वे पठान थे। उन्होंने देख लिया कि इनके पास माल बहुत है, भागेंगे नहीं, धोखा नहीं देंगे।

गुरू महाराज जी ने घोड़ों पर चढ़ कर देखा और परवानगी दे दी कि ठीक है; इनका मोल दे दो। जब मन्जूरी मिल गई तो भाई गुरदास जी उस व्यापारी को साथ लेकर तम्बू में आ गये। उन्हें वहीं पर बाहर बिठा दिया और आप मोहरें गिनने के लिये तम्बू के अन्दर चले गये। आपने कहा कि एक-एक पेटी खोलते चले जायेंगे और पैसे गिनते चले जायेंगें।

भाई गुरदास जी ने अन्दर जाकर देखा कि बाहरी सील ठीक-ठाक है। व्यापारी भी बाहर बैठे हैं। ताला खोलने के बाद जब उसमें हाथ डाला तो दंग रह गये कि मोहरों की जगह पत्थर भरे पड़े हैं। पैरों तले ज़मीन खिसक गई। अब क्या होगा? ये तो पठान लोग हैं, ये तो छोटी सी गलती पर ही आदमी को मार देते हैं। इन्हें घोड़ों का मोल नहीं मिलेगा तो हमें मार डालेंगे। फिर मन ही मन कहते हैं, ''चलो, हो सकता है खजान्ची ने कोई गलती कर दी हो। दूसरी सील खोल कर देखते हैं। जब दूसरी पेटी खोली, उसमें भी ठीकरे भरे हुए निकले। तीसरी पेटी में भी यही हाल था।'' इस तरह दस की दस पेटियों में से पत्थर (ठीकरियां) ही निकलीं। तब उन्होंने सौदागरों से कहा, ''आप ऐसे कीजिये, हमें मोहरें गिगने में अभी थोड़ी देर लगेगी, इसलिये आप सामने वाले तम्बू में बैठ जाइये।'' उन्होंने भी सोचा कि अब पेटियां तो हमारे सामने खोल ही ली हैं, गिनकर दे देंगे। व्यापारी

बोले, ''ठीक है, हम तम्बू में उधर बैठ जाते हैं।'' साढ़े चार घंटे बीत गये, जिसे डेढ़ पहर भी कहते हैं।

इधर भाई गुरदास जी ने सोचा कि अब तो मारे जायेंगे। यहाँ से सही सलामत घर नहीं जा सकेंगे। बहुत बेइज्जती होगी। अब क्या होगा? गुरू साहिब ने मोहरें दी थीं। मैंने अच्छी तरह देख कर ली थीं। सील भी मैंने अपने हाथों से की थीं। लगता है रास्ते में किसी ने, कहीं सन्दूकों की अदला बदली कर ली। किसी ने मोहरों की जगह पत्थर (ठीकरे) रख दिये। डांवाडोल हो गये। विश्वास में छेद हो गया कि कहीं गुरू महाराज जी ने तो नहीं बदल दीं, हो सकता है मुझे पता ही न चला हो, पर गुरू महाराज जी तो ऐसा कर ही नहीं सकते। बुरी तरह से डगमगा रहे हैं, सिदक को खड़ा होने के लिये कहीं स्थान नहीं मिल रहा। उस समय पीछे से तम्बू फाड़ा और बाहर निकल गये और अब आखें बचा कर भागे जा रहे हैं फिर पहाड़ की जब उतराई पार कर गये तो और तेज़ भागना शुरू कर दिया कि कहीं पकड़ न लें?

इस तरह साढ़े चार घंटे आपको चलते-चलते, भागते-भागते बीत गये तो आप सोलह मील दूर निकल आये थे। उधर सौदागरों ने बाहर बैठे गुरमुखों से पूछा, ''क्या बात अभी तक आप से पैसे नहीं गिने गये? डेढ़ पहर बीत गया।'' गुरमुख अन्दर आये तो देखते हैं कि पेटियां खुली पड़ी हैं और मोहरें उसी तरह से चमक मार रही हैं।

गुरमुखों ने उन्हें कहा, ''आप अन्दर आ जाओ। उनका तो पता नहीं कहाँ चले गये? हमें समझ नहीं आ रही कि क्या हुआ? वैसे भी पेटियां सारी की सारी खुली पड़ी हैं, आप अपने पैसे गिन लो।''

सौदागरों ने खुद गिनती शुरू कर दी और जितने घोड़े भेजे थे, उनके मोल भाव करके, जितने पैसे बनते थे, ले लिये। बाकी मोहरों को उसी तरह पेटियों में बन्द कर दिया गया। इस तरह से गुरमुख, गुरू साहिब के पास से वापिस लौट आए। उन्होंने आकर गुरू महाराज जी को सारी व्यथा सुनाई। कहते हैं, ''सच्चे पातशाह! पता नहीं चला कि भाई गुरदास जी कहाँ चले गये?''

महाराज जी मुस्करा पड़े, कहते हैं, ''कोई बात नहीं, सब ठीक है।''

उधर भाई गुरदास जी चलते-चलते अमृतसर के निकट जब पहुँचे तो गुरू साहिब के दर्शन करने नहीं गये। उन्हें तो चाहिये था कि जाकर माफी मांग लेते और बता देते कि सच्चे पातशाह! ऐसे घटना घटित हो गई, मैं तो डर के मारे वापिस आ गया हूँ। पीछे जो सिक्ख रह गये, पता नहीं उनके साथ क्या बीती होगी? वहाँ जाने की हिम्मत ही न पड़ी। साधुओं वाला भेष बनाया हुआ है। जूतियां टूट फूट गई हैं, नंगे पांव हैं, पैसा कहीं से मिलता नहीं। मांग-मांग कर रोटी खाते हैं। शरीर भी काफी कमज़ोर हो गया है। अन्त में काफी पहुँच जाते हैं। काफी में गुरू महाराज जी की सिक्खी सेवकी थी। जब वहाँ के मसन्द को पता चला कि भाई गुरदास जी आए हैं तो उन्होंने राजा को सूचना दे दी कि बहुत उच्च कोटि के महापुरुष, गुरू महाराज जी के परवान गुरसिखों में से, जो नम्बर एक में आते हैं, आपके शहर में आये हुए हैं। राजा ने बड़े आदर पूर्वक आपको राज दरबार में बुलाया। सत्संग शुरू हो गया। हज़ारों की गिनती में संगत आनी शुरू हो गई। बड़े-बड़े विद्वान आते

हैं, वे सवाल पूछते हैं। भाई गुरदास जी उनके जवाब देते हैं। जितने भी कवित्त, सवैये आप जी ने लिखे, वे सभी वहीं पर उच्चारण किये थे।

इस तरह से काफी समय बीत जाता है पर मन में वैराग पैदा हो गया, ''हे सतगुरू! कभी मैं भी आपके दर्शन कर पाऊंगा? मैं तो बिछुड़ गया। मेरे कर्मों ने आपसे बिछोड़ा डाल दिया। बार-बार इस तरह से प्रार्थना करते हैं -

धारना - खोटे करमां ने विछोड़ा तैथों पा लिआ,
कृपा करके मेल लै गुरा - 2, 2
कृपा करके ओ, मेल लै गुरा - 2, 2
खोटे करमां ने विछोड़ा तैथों पा लिआ, ...-2

बार-बार प्रार्थना करते हैं।'' नेत्रों से आंसू रूकने का नाम नहीं लेते। बेशक बेअन्त संगत आती है, मान्यता बहुत है। सारा शहर मानता है पर साध संगत जी! सतगुरू की माया कोई सहन नहीं कर सकता? यह माया बहुत ताकतवर है, कोई नहीं सहन कर सकता। इस तरह से फ़रमान है -

धारना - माइआ बलवान जी,
बंदा किआ करे वेचारा - 2, 2
बंदा किआ करे वेचारा - 2, 2
माइआ बलवान ओ, ... -2

इन्हि माइआ जगदीस गुसाई तुम्हरे चरन बिसारे॥
पृष्ठ - 857

इस माया ने ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सारा संसार, सारा आकाश, सभी देवता, भ्रमित कर दिये -

तपु करते तपसी भूलाए।
पंडित मोहे लोभि सबाए।
त्रै गुण मोहे मोहिआ आकासु।
हम सतिगुर राखे दे करि हाथु। पृष्ठ - 370

सरपनी ते ऊपरि नही बलीआ।
जिनि ब्रहमा बिसनु महादेउ छलीआ॥ पृष्ठ - 480

भाई गुरदास जी भी छल में आ गये। बार-बार प्रार्थना करते हैं, ''पातशाह! मुझे याद है जिस समय मेरे साथी गुरसिखों ने कहा था कि गुरू की कृपा के बिना कोई नहीं बच सकता। गुरू से बिछुड़ कर आदमी पता नहीं कहाँ से कहाँ चला जाता है। हे पातशाह! मुझ पर कृपा करो।'' उधर महाराज जी आकर्षित होते हैं। तब महाराज जी ने अपना एक सिक्ख बुलाया और कहा, ''हमारी एक चिट्ठी काशी ले जाओ और वहाँ जाकर राजा को दे देना।'' सिक्ख चिट्ठी लेकर काशी पहुँच जाता है। राजा को चिट्ठी पेश कर दी। चिट्ठी में लिखा हुआ है, ''राजन! आपके यहाँ, हमारा एक चोर रहता है, जिसका नाम गुरदास है। पता करो, वह हमारी अवज्ञा करके गया है, उसे जन्जीरों से बान्ध कर

हमारे सामने पेश करो।'' तब राजा ने पूरे राज्य में ढिंढोरा पिटवा दिया, ''कोई गुरदास नाम का चोर है, वह हाजिर हो।'' काफी छानबीन के बाद पता चला कि गुरदास नाम का कोई चोर नहीं मिल रहा।

दूसरा दिन शुरू हुआ। सत्संग चल रहा है। राजा ने भाई गुरदास जी को चिट्ठी दिखाई। राजा बोला, ''महाराज! एक बहुत बड़ी समस्या सामने आ खड़ी है। इस नगरी में गुरू महाराज का एक चोर रहता है। मैंने ढिंढोरा भी पिटवाया, पर कोई न मिला। मेरे लिये बड़ी शर्म की बात है कि मैं गुरू महाराज जी के चोर को न पकड़ सका और गुरू महाराज जी का यह हुक्म भी आया है।''

भाई गुरदास जी ने हुक्मनामा पढ़ा। पैरों नीचे धरती खिसक गई पर खुशी भी हुई कि अब गुरू महाराज जी के चरणों में जा लगूंगा। गुरू बख्शविन्द है, क्षमा कर दिया करता है। उसी समय उठकर खड़े हो गये। हज़ारों की संख्या में संगत बैठी है। किसी की परवाह नहीं की। गलती महसूस हो गई मैंने कहा था कि –

जे गुर साँगि वरतदा सिखु सिदकु न हारे॥
भाई गुरदास जी, वार 35/20

अत: अब बहुत बढ़िया मौका है, जो होना है, हो जाने दो। गुरू के चरणों में जाकर गिर जा। कितनी देर ऐसे बैठा रहेगा। यह तो गुरू महाराज जी ने कोई कौतुक रचा है।

उस समय खड़े होकर कहते हैं, ''राजन! मैं चोर हूँ। मेरे हाथ पाँव बान्ध दो और ले चलो। चिट्ठी कौन लेकर आया है?''

राजा ने कहा, ''एक मेवड़ा आया है।''

सिक्ख ने देखा और बड़ी हैरानी से कहा, ''भाई गुरदास जी! आप यहाँ?''

भाई गुरदास जी कहते हैं, ''हाँ, मैं गुरू का चोर हूँ।''

राजा को विश्वास नहीं होता। वह मानता ही नहीं कि वह चोर है। राजा कहता है, ''आपने काशी के बड़े-बड़े पण्डितों, विद्वानों को जीत लिया। आप इतने महान पुरुष हैं। सभी आपके चरणों में शीश झुकाते हैं। आप गुरू के चोर नहीं हो सकते?''

भाई गुरदास जी कहते हैं, ''हाँ, हाँ, मैं गुरू का चोर हूँ। देर मत करो, अब मेरे हाथ बान्ध दो।''

खुद जाकर रस्सा ले आये, हाथ बन्धवा लिये। मेवड़े के हाथ में रस्सा पकड़ा दिया और कहते हैं, ''मेरे हाथ बान्ध कर ले चलो।''

संगत दंग रह गई। एक दम सन्नाटा छा गया। साध संगत जी! यह बहुत कठिन बात है। खूब मान्यता हो रही हो, वह कभी भी इस बात को सहन नहीं कर सकता कि उसकी मान्यता को ठेस पहुँचे। यह तो भाई गुरदास जी का जिगर था, जो सारी संगत में खड़े होकर कहते हैं, ''मैं चोर हूँ। मेरे हाथ बान्ध दीजिये।'' दूसरे दिन तैयारी हो गई। हज़ारों की संगत भी साथ चल पड़ी। संगत

कहती है, ''हम भी साथ चलेंगे।'' राजा कहता है, ''मैं भी चलूंगा।'' जब काफी दूर तक चले गये तो भाई गुरदास जी ने काफी संगत को हाथ जोड़ कर, प्रार्थना करके वापिस लौटा दिया, फिर भी सात सौ के लगभग साथ चल पड़े। राजा कहता है, ''महाराज! रास्ता बहुत लम्बा है। इसलिये अभी हाथ खोल देते हैं। वहाँ चलकर, जब गुरू महाराज जी के पास पहुँचेंगे तब बान्ध देंगे।'' मेवड़े ने भी कहा, ''महाराज! तामील अमृतसर चल कर हो जायेगी। अब इस समय आप खुले हाथ चलो।''

पहले तो आप न मानें फिर संगत की इच्छा देखकर हाथ खुलवा लिये। इस तरह से मंजिल-दर-मंजिल सफर तय करते हुए, जब दरबार साहिब के निकट पहुँचे तो साध संगत जी! फिर धरती पर शीश झुकाते हैं, वहाँ की मिट्टी उठा-उठा कर अपने ऊपर फैंकते हैं, जहाँ गुरू चरणों का स्पर्श प्राप्त था। कहते हैं, ''हे धरती तू धन्य है, पवित्र है, जहाँ मेरे सतगुरू रहते हैं। कितनी बड़ी भूल की कि मैं इस पवित्र धरती को छोड़कर चला गया।'' अन्त में जब गुरू महाराज जी के पास गये तो दोनों हाथ बन्धे हुए हैं। रस्सा मेवड़े के हाथ में पकड़ाया हुआ है और दूर खड़े हैं। महाराज जी का दरबार सजा हुआ है।

महाराज जी कहते हैं, ''भाई! यह कौन है? इसे नज़दीक लाकर पेश करो।''

गुरदास जी नज़दीक लाये गये। महाराज जी पूछते हैं, ''गुरदास! तेरा सिदक कहाँ है? उस दिन तो तू इतनी बहस कर रहा था और बड़े-बड़े उदाहरण दे रहा था। अब हमें जवाब दे? हम तुझ से उत्तर मांगते हैं?''

चुप करके खड़े हुए हैं। शर्म के मारे गर्दन नीचे झुकाई हुई है। महाराज जी बार-बार पूछते हैं कि जवाब क्यों नहीं देता। बोलता क्यों नहीं? हमें अपने सिदक की बात बोल कर बता।

उस समय भाई गुरदास जी के मुख से बड़ी ही विनम्रता के साथ इस प्रकार की प्रार्थना की गई -

धारना - किहड़ा बोल ओ, बोलां मालका - 2, 2
तेरी गती ना होर कोई जाणे - 2, 2
तेरी गती ना होर कोई जाणे
मालका - बोलां मालका -2
किहड़ा बोल ओ, ...-2

जउ गरबै बहु बूंद चितंतरि,
सनमुख सिंध सोभ नहीं पावै।
जउ बहु उडै खग धारि महां बल,
पेखि अकास रिदै सुकचावै॥
जिउ ब्रहमंड प्रचंड बिलोकत,
गूलर जंत उडंत लजावै।
तूं करता हम कीए तिहारे जी,
तो पहि बोलन किउ बनि आवै॥

कबित्त भाई गुरदास जी, 527

पातशाह! मैं कैसे बोल सकता हूँ?

जउ गरबै बहु बूंद चितंतरि
सनमुख सिंध सोभ नहीं पावै॥

कबित्त भाई गुरदास जी, 527

एक बूंद, समुद्र के मुकाबले गर्व करे। समुद्र के सामने बूंद गर्व करती शोभा नहीं देती -

जउ बहु उडै खग धारि महां बल
पेखि आकास रिदै सुकचावै॥

कबित्त भाई गुरदास जी, 527

यदि पक्षी बड़ी ताकत धारण करके उड़ता है पर आकाश को देखकर सकुचा जाता है। हिम्मत हार जाता है और कहता है कि आकाश तो कभी समाप्त ही नहीं होता -

जिउ ब्रहमंड प्रचंड बिलोकत,
गूलर जंत उडंत लजावै॥

कबित्त भाई गुरदास जी, 527

यदि गूलर की खोह में से निकला हुआ जन्तु कहे कि मैं ब्रह्मण्ड का भेद पा लूं, तो कैसे पा सकता है?

तू करता हम कीए तिहारे जी,
तो पहि बोलन किउ बिन आवै॥

कबित्त भाई गुरदास जी, 527

पातशाह! आपके सामने तो बोलना बनता ही नहीं है। आपके पास यदि कुछ बोलना चाहिये भी तो बस यहीं बोलना पड़ता है -

धारना - मेरे वरगा ओ, दीन कोई ना - 2, 2
तेरे वरगा ना दइआल होर जग्ग ते - 2, 2
तेरे वरगा ना दइआल होर जग्ग ते वाहिगुरू,
दीन कोई ना,
मेरे वरगा ओ, ...-2

तो सो न नाथु, अनाथ न मो सरि,
तो सो न दानी, न मो सो भिखारी।
मो सो न दीन, दइआल न तो सरि,
मो सो अगिआनु, न तो सो बिचारी।
मो सो न पतित, न पावन तो सरि,
मो सो बिकारी न तो सो उपकारी।
मोरे है अवगुन, तू गुन सागर,
जात रसातल ओट तिहारी॥

कबित्त भाई गुरदास जी, 528

पातशाह! मुझ से बुरा इस संसार में और कोई नहीं है। सिदक कैसे रह सकता है? सिदक

रखना बहुत मुश्किल है?

धारना - किआ सिक्ख विचारा जी - 2, 2
जे गुर भरमाए सांग कर - 2, 4

जे माउ पुतै विसु दे तिस ते किसु पिआरा।
जे घरु भंनै पाहरू कउणु रखणहारा।
बेड़ा डोबै पातणी किउ पारि उतारा।
आगू लै उझड़ि पवे किसु करै पुकारा।
जेकरि खेतै खाइ वाड़ि को लहै न सारा।
जे गुर भरमाए साँगु करि किआ सिखु विचारा॥
भाई गुरदास जी, वार 35/22

यदि दीपक में तेल हो तो बत्ती जलती है वरना सारी जल जाती है -

वाइ मंडल जिउ डोरु फड़ि गुडी ओडाए।
मुह विचि गरड़ दुगारु पाइ जिउ सपु लड़ाए।
राजा फिरै फकीरु होइ सुणि दुखि मिटाए।
साँगै अंदरि साबता जिसु गुरू सहाए॥
भाई गुरदास जी, वार 34/23

महाराज जी प्रसन्न हो गये। कहते हैं, ''इसके हाथ खोल दो।''

भाई गुरदास जी दौड़कर चरणों में लिपट गये। महाराज जी ने उठाकर छाती से लगा लिया।

महाराज जी कहते हैं, ''गुरसिख! धन्य है। एक गया था, सात सौ लेकर आया है। भाई गुरदास जी को ऐसा मत कहना कि कसौटी पर खरे नहीं उतरे थे। माया इतनी प्रबल है कि कोई भी इसके आगे नहीं ठहर सकता। छोटे मोटे, साधारण आदमी नहीं रह सकते। कोई विरला होता है जो टिक सकता है।''

संसार में तो सभी बातें करते हैं। भाई लहणा जी समझाते हैं, ''प्रेमियो! कसौटी लगी हुई है -

जे सुखु देहि त तुझहि अराधी दुखि भी तुझै धिआई।
जे भुख देहि त इत ही राजा दुख विचि सूख मनाई।
तनु मनु काटि काटि सभु अरपी विचि अगनी आपु जलाई॥ *पृष्ठ - 757*

घबराओ मत, कसौटी लगी हुई है। इस तरह से हम तो सभी मान करते हैं। साध संगत जी! बिल्कुल नहीं। यदि गुरू की कृपा हो, तो बचते हैं, वरना बचना बहुत मुश्किल है।''

धारना - गल्लां वाली दुनीआं बहुती,
कसवट्टी सहिंदा कोई ना - 2, 2
कसवट्टी सहिंदा कोई ना - 4, 2
गल्लां वाली दुनीआं बहुती, ...-2

कबीर कसउटी राम की झूठा टिकै न कोइ।

राम कसउटी सो सहै जो मरि जीवा होइ॥

पृष्ठ - 1366

इस तरह गुरू अंगद साहिब जी महाराज सभी गुरसिखों को जिनमें बड़े-बड़े बाबा बुड्ढा जी जैसे, भाई दुनी चन्द जैसे, भाई भगीरथ जैसे, उनको कह रहे हैं, ''प्रेमियो! घबराओ मत। गुरू की कसौटी लगी है।''

अब समय इज़ाजत नहीं देता। कल के दीवान में इस पर आगे विचार की जायेगी। अब सभी प्रेमी आनन्द साहिब में बोलो। जो अभी तक नहीं बोले, वे भी अपनी रसना पवित्र कर लो।

आनन्द साहिब
गुर सतोतर
अरदास

12

शान...।

सतिनाम श्री वाहिगुरू,
धंन श्री गुरू नानक देव जी महाराज।

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।
डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥
पृष्ठ - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।
नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥
पृष्ठ - 289

आपे पटी कलम आपि उपरि लेखु भि तू।
एको कहीऐ नानका दूजा काहे कू॥ पृष्ठ - 1291

धारना - जलि थलि महीअलि भरपुरि लीणा,
आपे सरब समाणा जी - 2, 2
आपे सरब समाणा जी, - 4, 2
जलि थलि महीअलि भरिपुरि लीणा, ... -2

पुड़ु धरती पुड़ु पाणी आसणु चारि कुंट चउबारा।
सगल भवण की मूरति एका मुखि तेरै टकसाला।
मेरे साहिबा तेरे चोज विडाणा।
जलि थलि महीअलि भरिपुरि लीणा आपे सरब समाणा।
जह जह देखा तह जोति तुमारी तेरा रूपु किनेहा।
इकतु रूपि फिरहि परछंना कोइ न किस ही जेहा।
अंडज जेरज उतभुज सेतज तेरे कीते जंता।
एकु पुरबु मै तेरा देखिआ तू सभना माहि रवंता।
तेरे गुण बहुते मै एकु न जाणिआ मै मूरख किछु दीजै।
प्रणवति नानक सुणि मेरे साहिबा डुबदा पथरु लीजै॥ पृष्ठ - 596

धारना - हरि के सेवक जो हरि भाए,
तिन की कथा निरारी रे - 2, 2

तिन की कथा निरारी रे - 4, 2

हरि के सेवक जो हरि भाए, ...-2

हमारी कथाएं और तरह की होती हैं। हम दुनियांवी मनुष्य हैं, फर्शों पर रहने वाले हैं, अर्शों पर रहने वालों की कथाएं और हुआ करती हैं। हमारी कथाएं रस-रहित हुआ करती हैं, अन्धकार से भरी होती हैं। उनकी कथाएं रस से भरी होती हैं और निरा ही प्रकाश भरा होता है।

ऐसी ही एक वार्ता बहुत से प्रोग्रामों में हम सुनते आ रहे हैं। गुरू अंगद साहिब महाराज आप पूर्ण थे पर सिक्खी का नाटक, हमें सिखाने के लिये कि सिक्खी कैसी होती है? यह आपको करना पड़ा।

कल आपने श्रवण किया था कि गुरू नानक पातशाह ने जब यह देखा कि सारी जिन्दगी के प्रचार से, बड़ी उच्च स्तर वाले त्रिकाल दर्शी गुरसिख सिक्ख मण्डल में आ गये हैं और एक से बढ़कर एक, उच्च कला में विचरते हैं, कोई भी कम नहीं है, तो उस समय यह ज़रूरी हो गया कि इनमें से एक को छांटा जाये। अतः आपने लंगर कम करवा दिया, जिसके फलस्वरूप बहुत से सिक्ख चले गये। फसल को आग लगवा दी, फिर और भी चले गये। कौतुक किया, आपने कुतका हाथ में ले लिया, धानक रूप धार लिया, छुरियां सामने लगा लीं, साथ में कुत्ते ले लिये और एक ही वचन गाते चले जा रहे हैं -

धाणक रूपि रहा करतार॥ *पृष्ठ - 24*

यदि कोई पास आकर शीश झुकाता है तो दोनों हाथों को कन्धे पर रख कर पीछे को धक्का मार देते हैं और कहते हैं - ''जा, जा। गुरू, गुरू जप।'' किसी को भी पास नहीं फटकने देते। बोलते नहीं हैं। सारी रात रावी के किनारे-किनारे घूमते रहते हैं। इन बातों के कारण तथा बाहर रहने से सन्देह बढ़ गया और सबसे ज्यादा शक तब हुआ, जब आप ने शिकारियों जैसे कपड़े पहन लिये, हाथ में कुतका ले लिया, कुत्ते साथ लगा लिये और जो भी पास आता है, उसे पूरे ज़ोर से कुतका मारते हैं। इस तरह बहुत से तो वहाँ से भाग गये, भाई लहणा जी जो गुरू महाराज जी के साथ रहते हैं, जैसे परछाई रहती है, उन्हें भी बड़े कड़क कर कहा कि तू जाता क्यों नहीं? आपने कहा, ''महाराज! कहाँ जाऊँ?''

महाराज जी कहते हैं, ''जाओ, जहाँ सभी गये हैं। चल, जल्दी जा।''

उस समय ध्यान आया कि हुक्म मानना है। चाहे किसी भी अवस्था में हैं, फिर भी समरथ हैं, हुक्म दे रहे हैं। यह सब भुलाने के लिये इनका ही रचा हुआ स्वांग है। अतः आप धर्मशाला में आ जाते हैं।

वहाँ आने पर सिक्ख पूछते हैं कि भाई लहणा जी, आपके साथ क्या बीती?

आपने कहा, कुछ नहीं, गुरू महाराज जी की प्यार से भरी हुई थपकियां और जलाल से भरे हुए कुतके, एक ही रूप हैं, दो नहीं हैं। वह भी बख्शीश है और यह भी बख्शीश है।

कोई विरला होता है जो यह समझता है कि यदि गुरू कुतकों से मारे तो वह भी बख्शीश होती है। ऐसे कितने उदाहरण हैं। बदौशीं गाँव में एक महापुरुष वीरम दास जी हुआ करते थे। आप निवृत्ति पक्ष के थे। संसार निवृत्ति वालों का भी पीछा नहीं छोड़ता क्योंकि स्वार्थ के संसार में बिमारियां, हानियां, लड़ाईयां, झगड़े, फसाद, लालच बेअन्त किस्म के विघ्न होते हैं। सन्त बन्दगी

करते हैं। वे लोग उनके पास भी जाना शुरू कर देते हैं। सन्त कहते हैं कि तुम भी नाम जप लो। तुम भी ऐसे ही कर लो। पर उन्होंने आप नाम नहीं जपना, इस रास्ते पर नहीं चलना। वहाँ पर जाकर कहते हैं कि कोई वचन कर दो, कोई आर्शीवाद दे दें। उनके पास एक सोटा हुआ करता था। यदि कोई उनके निकट आता तो अपना सोटा, बड़ी ज़ोर से पीठ पर मारते थे। आम तौर पर तीस चालीस फुट की दूरी से लोग दर्शन किया करते थे। सट्टा खेलने वाले ज्यादा आया करते थे। आपने उन्हें ईंटें उठा कर मारना, भगा देना, फिर वे दूर जाकर बैठ जाते, जहाँ पर पत्थर न पहुँच सकते। कई बार वे उनके पीछे भी भागते पर थोड़ी दूर जाकर वे फिर वापिस लौट आते और कहते कि देखो आज बाबा कौन सा नम्बर बोलता है। नम्बर क्या बोलना होता था, कोई सहज स्वभाव वचन निकल जाता, उसी नम्बर को ही दांव पर जाकर लगा देते और कहते कि हम तो बाबा जी से सुनकर आये हैं। इसलिये आपने वृत्ति यह धारण की हुई थी कि मायारूपी मक्खियां पीछे पड़ी हुई हैं, जितनी उड़ाई जायें, उतनी ही ठीक हैं।

महाराजा पटियाला भुपिन्दर सिंघ जी के काफी समय तक कोई सन्तान न हुई। किसी ने बताया कि आप बदौशी वाले सन्त जी के पास जाओ। आप कार पर सवार होकर चल पड़े। उनके साथी अहलकार वज़ीर कहते हैं कि महाराज! कार यहीं पर ही खड़ी कर दो, यहाँ से पैदल ही चल कर जाओ। एक काफी बड़ा खेत जुता हुआ पड़ा था, उसमें मिट्टी के काफी से डले पड़े थे। उस खेत में सन्त जी आकर बैठ गये। राजा नंगे पाँव कभी चला नहीं था। डलों पर चलना नहीं आता था, बड़ी मुश्किल से गिरता-गिरता वहाँ पर पहुँच गया। उस दिन सन्त जी ने कहा आज छोटा डण्डा मत लाओ, बड़ा सा बांस लेकर आओ। जब महाराजा पटियाला ने पास आकर शीश झुकाया तो उन्होंने बड़े ज़ोर से पीठ पर बांस मारा। इन्हें यह बता दिया गया था कि महाराज! जब तक वे उठने के लिये स्वंय न कहें, तब तक लेटे रहना। जब वे खुशी-खुशी कहें, ''जा, भाग जा, फिर उठना।'' क्योंकि जो बिचौले होते हैं, वे बड़े-बड़े काम करवा देते हैं। सन्त परमेश्वर तथा लोगों के बीच मध्यस्थता करते हैं, परमेश्वर रूप-रंग, रेख-भेख से न्यारा, जो किसी को दिखाई नहीं देता, हर जगह होता हुआ भी, ये मध्यस्थता करने वाले, उससे मिला देते हैं, भाव प्रकट कर देते हैं। साथियों ने कहा, 'उठना मत।' एक बांस मारा, दूसरा मारा, गिनते जा रहे हैं और लेटे हुए हैं, उठते नहीं हैं। जब बारह-तेरह बांस लगा लिये फिर उन्होंने कहा, ''अब बस ही नहीं करनी। भाग जा यहाँ से।'' इस प्रकार आप उठे, दोनों हाथ जोड़े, नमस्कार की, चले आये। इसके बाद उनके सन्तान उत्पन्न हुई।

अत: भाई लहणा जी कह रहे हैं कि प्रेमियो! सारी जिन्दगी हम इनके प्यार की थपकियां लेते रहे हैं और इनके जमाल के प्रकाश का आनन्द लूटते रहे हैं, रस का आनन्द लूटते रहे, अब जलाल के कुतके भी खाओ। यह भी कोई बुरी बात नहीं है। कुतका इतनी ज़ोर से लगता है कि सहन नहीं हो पाता। बड़ी कठिनाई से सहन होता है। आप सभी को बार-बार दिलासा देते हैं कि यह गुरू ने स्वांग रचा है। इससे भ्रमित नहीं होना।

कल बड़ी लम्बी विचार की थी कि जब गुरू कसौटी लगा देता है फिर सिक्ख के लिये उसे सहन करना बड़ा कठिन हो जाता है। साध संगत जी! बहुत कठिन होता है कसौटी पर खरा उतरना। न तो सन्तों की कसौटी सहन होती है और न ही गुरू की कसौटी सहन होती है क्योंकि दोनों ही बेलाग होते हैं। इनकी यह कोई इच्छा नहीं होती कि कोई उनके पास आये।

एक बार कबीर साहिब ने संगत पर कसौटी लगाई। संगत काफी इकट्ठी होने लग गई थी। आपने सोचा कि ये ऐसे तो जायेंगे नहीं इन पर कसौटी लगाई जाये। वहाँ उस शहर में एक वेश्या रहती थी। आप का उपदेश सुनकर वह उच्च जीवन की धारणी बन गई थी, पर लोगों की नज़रों में

वेश्या ही थी। लोग आन्तरिक अवस्था को जानते ही नहीं हैं।

कबीर साहिब ने एक दिन उसे साथ लिया और एक हाथ में रंगीन पानी की बोतल, शराब जैसी ले ली और थोड़ी-थोड़ी देर के बाद मुँह से लगा लेते और शोर मचाते हुए शहर में से गुज़र रहे हैं। इस तरह पूरे शहर का चक्कर लगा दिया। जितने कच्चे सेवक थे, सभी कहते हैं कि कबीर साहिब को क्या हो गया? उस शहर का राजा भी उनका सेवक था। उसके महलों की ओर चले गये। राजा ने दूर से देखा कि गुरू जी आ रहे हैं। रानी को बुलाया और कहा कि देखो, यह इन्हें क्या हो गया?

रानी ने कहा, ''महाराज! इनका कोई कौतुक होगा?'' राजा कहता है, ''कोई कौतुक नहीं है। मुझे सेवकों ने पहले ही बता दिया है कि आज पता नहीं कबीर साहिब को क्या हो गया है, वेश्या को साथ लिये बाज़ार में घूम रहे हैं, एक हाथ में शराब की बोतल पकड़ी हुई है, उसे मुँह से लगाते हैं, फिर शोर मचाते हुए चले आ रहे हैं।''

रानी ने कहा, ''महाराज! आप भरोसा रखो।''

राजा बोला, ''इसका सिदक (भरोसा) रखूं। यह जाति का जुलाहा था, जुलाहे का जुलाहा ही रहा। वही काम कर दिया। मैंने तो समझा था कि वह बहुत महान व्यक्ति है।''

रानी बार-बार समझाती है कि नहीं महाराज! गुरू पर तर्क नहीं किया करते। सन्तों पर तर्क करने पर छह कलाएं वैराग की नष्ट हो जाया करती हैं। एक कला वैराग की कई जन्मों के पश्चात प्राप्त होती है। रूहानी जीवन बिल्कुल खत्म हो जाया करता है। यदि गुरू पर तर्क कर दो तो सारा जीवन खत्म हो जाता है तथा कई जीवन भ्रष्ट हो जाते हैं। पर राजा के मन में तर्क है।

कबीर साहिब उसी तरह से झूमते हुए, बालों को बिखेरे हुए, उसके महलों में चले आ रहे हैं, धरती पर पैर भी लड़खड़ाते हुए से टिका कर चल रहे हैं, चिल्लाते हुए, शोर मचाते हुए आ रहे हैं। राजा ने जब देखा, तो खड़ा न हुआ। राजा की भौहें चढ़ गईं, माथे पर त्यौरियां चढ़ गईं। होठों को दातों के बीच में रख कर काटता है, मन में ख्याल आता है कि मैं सभी कुछ कह दूँ, पर फिर सोचता है, कुछ दिमाग काम कर रहा है। कबीर साहिब ने राजा के गलीचे पर बोतल बिखेर दी। हवा के झौंके के साथ शराब जैसी मुश्क आई।

इस पर राजा बोला, ''कबीर! यह क्या किया तूने? मेरा इतना कीमती गलीचा खराब कर दिया।''

कबीर साहिब कहते हैं, ''तेरा गलीचा खराब नहीं हुआ, हमने तो जगननाथ पुरी के मन्दिर की आग बुझाई है।''

रानी की कबीर साहिब पर पूर्ण श्रद्धा थी, अत: राजा से कहती है, ''महाराज! यदि कोई वचन करना हो, तो पहले सोच विचार करना जरूरी है। बिना विचारे कोई वचन नहीं करना चाहिये। आपके मुख से यह फ़रमान हुआ है कि मन्दिर की आग बुझाई है, पहले आप यह पता करवा लो, फिर बाकी बातें बाद में करेंगे।''

कबीर साहिब इतना कह कर वापिस चले जाते हैं और इधर राजा ने घुड़सवार भेजा कि जाकर देख कर आओ कि मन्दिर में आग लगी थी या नहीं। घुड़ सवार गये, पता चला कि आग लगी थी और आकर राजा को खबर दी कि महाराज पता चला है कि थोड़ी देर पहले मन्दिर में अचानक आग लग गई थी और बुझने की भी कोई उम्मीद नहीं थी, पर पता नहीं क्या हुआ,

परमेश्वर की ऐसी कृपा हुई कि अचानक ही बुझ गई।

फिर तो राजा ने बहुत ही पश्चाताप किया कि मैंने अपने गुरू को बहुत बुरी-बुरी गालियां दी हैं और मेरे मन में उनके प्रति कितनी घृणा पैदा हो गई। इस प्रकार राजा भी कसौटी सहन न कर सका।

इसी तरह भाई लहणा जी कहते हैं कि गुरसिखो! यह गुरू का स्वांग है। घबराओ मत। भरोसे में रहो। कोई बिरला ही होता है जो कसौटी को सहन कर सकता है। बहुत कठिन काम है। कोई भी संत यदि अपने पास इकट्ठी हो चुकी भीड़ को दूर करना चाहे तो उनके लिये मामूली सी बात होती है, सारी संगत पीछे हट जाया करती है, कोई बिरला ही बड़े दिल वाला रह जाता है, बाकी तो भाग जाया करते हैं।

देखते-देखते गुरू नानक साहिब वहाँ पर धर्मशाला में भी पहुँच गये और आते ही कहने लगे, ''तुम यहाँ पर क्या कर रहे हो? यहाँ से जाते क्यों नहीं? मैंने जब तुम्हें कहा है, यहाँ से चले जाओ?''

दौड़कर, उन्हें कुतका मारते हैं। जो सिदकी सिख थे, वे तो वहीं पर ही खड़े रहते हैं, बाकी के कोई इधर भागता है, कोई उधर भागता है, सभी वहाँ से भाग जाते हैं? महाराज जी उन्हें भी कुतके से मारते हैं और कहते हैं कि तुम जाते क्यों नहीं? पर कोई भी जवाब नहीं देता। उसके बाद महाराज जी फिर जंगलों की ओर निकल गये। भीड़ आपके पीछे-पीछे चल पड़ी, यह देखने के लिये कि महाराज जी किधर जाते हैं? आगे चलकर लोगों ने देखा कि धरती पर लाखों की संख्या में रूपये बिखरे पड़े हैं। वे उन्होंने उठाने शुरू कर दिये। गठड़ियां बान्ध-बान्ध कर घर ले जाने लगे। बहुत से तो बस पैसा इकट्ठा करने में ही व्यस्त हो गये। गुरू महाराज जी बड़ी तेज़ी के साथ चले जा रहे हैं। अब केवल उनके साथ तीन ही रह गये। वे महाराज जी के पीछे-पीछे चले जा रहे हैं। महाराज जी पीछे मुड़कर देखते हैं तो उन्हें कुतका मारते हैं, रूक जाते हैं। जब फिर चलते हैं, तो वे भी उनके पीछे-पीछे चल पड़ते हैं। साध संगत जी! बाकी प्रेमियों पर तो माया का असर चढ़ गया। एक-दो-चार नहीं, इस माया ने तो सारे संसार को मोहित किया हुआ है। इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - इस माइआ मोहणी ने,
पिआरिओ, मोह लिआ जग्ग सारा - 2, 2
मोह लिआ जग्ग सारा पिआरे - 2, 2
इस माइआ मोहणी ने, ... -2

माइआ ममता मोहणी जिनि विणु दंता जगु खाइआ।
मनमुख खाधे गुरमुखि उबरे जिनी सचि नामि चितु लाइआ॥ ***पृष्ठ - 643***

संसार में ऐसे बड़े-बड़े विद्वान हुए हैं जिन्होंने दावे के साथ घोषणा कर दी कि हमें ज्ञान प्राप्त हो गया है, हम किसी द्वारा मोहित नहीं किये जा सकते। वेद व्यास जी का एक शिष्य जैमिनी था। इसने छह शास्त्रों में से एक न्याय शास्त्र की रचना की है। उस शास्त्र में इसने यह लिख दिया कि जब मनुष्य को ज्ञान हो जाये फिर वह माया द्वारा मोहित नहीं हो सकता। माया का कोई एक रूप तो है नहीं। जो कुछ भी तुम देखते हो, यह सभी माया है। जिस वस्तु का नाम है, रूप है, वह माया ही है। नाम तो परमेश्वर का भी है पर वास्तव में वह, बे-नाम है, सभी नामों का आधार

है, वहाँ पर माया नहीं है। जो उसके आधार पर हैं, उन सभी को माया कहते हैं। पुत्र, मकान, धन दौलत, अपना शरीर, पत्नी, पुरुष सभी कुछ माया के रूप हैं। पद की माया, स्तुति की माया, ये बातें मनुष्य को सदा मोहित करती रहती हैं, उन्हें इन जजालों से बाहर नहीं निकलने देतीं। इसके अन्दर इतनी ताकत है कि व्यक्ति को बाहर नहीं निकलने देती, बल्कि उन्हें भंवर में फंसा देती हैं और बाहर निकले हुओं को भी अन्दर फैंक देती है।

जब जैमिनी ने ग्रन्थ पूरा कर लिया तो वह वेद व्यास जी के पास ले गया। आप बड़े अनुभवी महापुरुष थे। साध संगत जी! व्यास जी कारक थे। जो कारक पुरुष होते हैं, वे चार अरब बत्तीस करोड़ वर्षों की आयु तक सुख भोगते हैं। ब्रह्मज्ञानी और होते हैं। ब्रह्मज्ञानी, कारक से भी उच्च कोटि का महापुरुष होता है। वे विदेह मुक्त नहीं हुआ करते। वह मुक्त तभी होता है, जब निम्न स्तर की मुक्ति उसके पास हुआ करती है –

ब्रहमगिआनी कउ खोजहि महेसुर।

नानक ब्रहमगिआनी आपि परमेसुर॥ पृष्ठ - 273

जब उसने अपने ग्रन्थ को, वेद व्यास जी को पढ़ाया और उनके अन्दर लिखे सूत्र सुनाए तो वेद व्यास जी ने कहा, ''जैमिनी! यह अमुक पंक्तियां इसमें से काट दो, भाव ग्रन्थ में से निकाल दो क्योंकि परमेश्वर जितना ताकतवर है, उसकी माया भी उतनी ही ताकतवर है।''

जैमिनी ने कहा, ''नहीं, यह नहीं हो सकता। जब दाने भुन जायें तो फिर हरे नहीं हो सकते।''

वेद व्यास जी ने कहा, ''ऐसी बात नहीं है। माया में इतनी शक्ति है कि वह भुने हुए दानों को भी हरा कर सकती है।''

दोनों में तकरार हो गई। व्यास जी ने सोचा कि यह ऐसे नहीं मानेगा, इस पर कसौटी लगाकर इसे परखा जाये। फिर आप जी ने एक माया का जाल फैला दिया। शाम का समय है, जंगल में एक महिला के रोने की आवाज़ें आ रही हैं। बड़ी मर्मभेदी आवाज़ें हैं। वह उस समय अकेली है। जैमिनी अपने आश्रम में अकेले बैठे हैं। उसने महिला की आवाज़ सुनी। मन में आया कि इसकी सहायता करनी चाहिये, पता नहीं इस अबला को क्या दुख है? फिर भी मैं इन्सान हूँ, कोई पत्थर तो हूँ नहीं? इस प्रकार आप में दया आई और दया के वशीभूत हुए, उस महिला के पास जाकर बोले, ''ऐ लड़की! क्या बात है? क्यों रो रही है?''

वह महिला बोली, ''बात यह है मुनि जी! यहाँ पर इस जंगल में से, मैं और मेरा पति बाहर आ रहे थे। एक शेर ने मेरे पति को खा लिया। मैं अकेली रह गई हूँ, रास्ता भी भूल गई हूँ किधर जाऊँ? इधर-उधर से जंगली जानवरों की भयानक आवाज़ें आ रही हैं। इस जंगल में भील जाति के लोग तथा बड़े-बड़े राक्षस रहते हैं। पता नहीं मेरा क्या हाल होगा? मुझे कोई सहारा नहीं नज़र आ रहा। अब मैं पुकार-पुकार कर परमेश्वर को याद कर रही हूँ कि हे प्रभु! मुझे कोई सहारा दो, मुझे कोई मार्ग दिखाओ।''

जैमिनी के दिल में दया उपजी और आश्रम में उसे साथ ले आया। आज पहला दिन था कि आश्रम में किसी महिला को लाया गया हो। उसे तसल्ली दी और अपना कमरा आराम करने के लिये दे दिया और कहा, ''ऐसे करना, अन्दर से दरवाज़ा बन्द कर लेना। इधर राक्षस बहुत आते हैं, वे अनेक प्रकार की मनुष्यों जैसी आवाज़ें बोलते हैं, पर तूने सुबह होने से पहले दरवाज़ा नहीं

खोलना। चाहे वे मेरी तरह ही क्यों न बोलें। मैं भी अगर कहूँ, तो भी दरवाज़ा नहीं खोलना।''

इस तरह उसे अच्छी तरह दृढ़ करवा दिया और कमरे में ठहरा दिया और आप साथ वाले कमरे में ठहर गया। वह लड़की, देवों की ऋचाएं बड़े प्यार के साथ, मधुर स्वर से गाने लग गई। रात का समय था, जब संगीत की ध्वनि इसके कानों में पड़ी तो वह सुनने के लिये दरवाज़े के पास आकर खड़ा हो गया और ऋचाएं सुनने लगा। माया ने अपना प्रभाव डाला। मन में विचार उठा कि दरवाज़ा खुलवा लें। बुरे विचार मन में उठने लगे। जब न रहा गया तो आवाज़ लगाई, ''ऐ लड़की! दरवाज़ा खोल, मैं जैमिनी बोल रहा हूँ।''

उसने कहा, ''मैं तो सुबह दिन निकलने पर ही दरवाज़ा खोलूंगी। इससे पहले नहीं खोलती।''

जैमिनी को गुस्सा आया और क्रोधित होकर बोला, ''तुम मेरे कमरे में जबरदस्ती घुस कर बैठ गई हो, दरवाज़ा क्यों नहीं खोलती? मैं दरवाज़ा तोड़ दूंगा।''

वह कहती है, ''आपने ही तो कहा था कि सुबह दिन निकलने से पहले दरवाज़ा नहीं खोलना। अब चाहे जो कुछ करना है, करो।''

अन्त में छत पर चढ़ गया और ऊपर से एक मोरी (बड़ा सुराख) खोद डाली। जब अन्दर जाने लगा, जल्दी में, तो कन्धे तो उसके अन्दर नीचे उस मोरी में से निकल कर लटक गये और बाजू बाहर रह गईं। अब वहीं पर ही लटका रह गया। आधा छत के अन्दर और आधा बाहर। न नीचे निकल सकता है, न ऊपर जा सकता है। बीच में फंसा रह गया। सारी रात उलटा लटकता रहा। सुबह होते ही व्यास जी आ गये और आवाज़ लगाई, ''बेटा, जैमिनी कहाँ है तू?'' देखा तो छत में लटका हुआ है। बहुत शर्मिन्दा होता है। बोलता कुछ नहीं है। लड़की ने दरवाज़ा खोल दिया। तोरी की तरह लटका देखकर, सहारा देकर उसे बाहर निकाला।

व्यास जी कहते हैं, ''क्यों बेटा? मैंने तुझे क्या कहा था और उस समय तुमने मुझे क्या कहा था? यदि गुरू की कृपा न हो तो माया से बच नहीं सकता; कसौटी में से पार नहीं निकल सकता। सिर्फ वही पार हो सकता है जिस पर गुरू की कृपा हो और कोई पार नहीं हो सकता।''

कहता है, ''महाराज ठीक है। मैं भूल गया था।''

यदि कसौटी लग जाये तो फिर इस माया में से कोई विरला ही निकल सकता है। इस तरह से केवल तीन रह गये, बाकी सब चले गये। उसके बाद गुरू महाराज जी ने बाबा बुड्ढा जी तथा दुनीचन्द जी से कहा कि तुम जाते क्यों नहीं? जाओ, सभी जाओ। दोनों इसी बात पर अड़ गये कि जब लहणा जी जायेंगे, तभी हम जायेंगे। जब लहणा जी अकेले थे, तो महाराज जी ने घूर कर देखा।

पुन लहिणे की दिस गुर हेरा।

ठांढो धरम न तस घनेरा॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

क्या देखते हैं? बिल्कुल वैसे के वैसे ही खड़े हैं, मामूली सा भी डर नहीं है। बेशक महाराज जी ने खूब डराया, पर वह डरे नहीं।

रिस कर तिस को बचन उचारा॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

बड़े गुस्से में आकर वचन किया -

किउं ठांढे अब जाहु सिधारा॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

यहाँ पर खड़े हुए क्या कर रहे हो? तुम जाते क्यों नहीं? उस समय आपने दोनों हाथ जोड़ लिये और कहा, ''पातशाह! मैं कहाँ जाऊं? चाँद, सूरज, तारे, समुद्र, धरती, पहाड़, मरूस्थल, दरिया, आसमान, पाताल तथा और जहाँ तक मेरी निगाह जाती है, मेरा कहीं भी ठिकाना नहीं है। पातशाह! यदि मेरे लिये स्थान है तो बस केवल तेरे चरणों में ही है। सभी कुछ छोड़ दिया है, यदि संसार में कुछ रखा है तो केवल तेरे चरण रखे हैं और मुझे कोई आसरा नहीं है।''

इस तरह प्यार से पढ़ो -

धारणा - मैं किथे जावां ओ, मालका,

मैनूं ठउर न कोई - 2, 2

मैनूं ठउर न कोई मालका - 2, 2

मैं किथे जावां ओ, मालका, ...-2

सगल दुआर कउ छाडि कै गहिओ तुहारो दुआर।

बांहि गहे की लाज अस गोबिंद दास तुहार॥

रहरासि साहिब

किसही कोई कोइ मंजु निमाणी इकु तू।

किउ न मरीजै रोइ जा लगु चिति न आवही॥

पृष्ठ - 791

हे पातशाह! संसार में और कोई स्थान नहीं, सिवाय तेरे चरणों के -

कहित भयो गुर ठहुर न कोई।

कित को जाहुं शरन प्रभ तोही॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

लहणा जी कहते हैं, ''मैं कहाँ जाऊँ? कोई जगह हो तो मैं जाऊँ? मुझे तो सारी सृष्टि में, समुद्रों में, नदियों में, सूर्य और चन्द्रमा में, वनस्पतियों में, किसी घर में, कहीं भी कोई स्थान नज़र नहीं आता। यदि कोई जगह है तो बस तेरे चरणों में ही जगह है।''

ऐसी अवस्था में, जो महापुरुषों के अति प्यारे होते हैं, उनसे पूछ कर देखो, उनकी क्या हालत होती है, बस वही जानते हैं, बाकी लोगों को तो कहानियां ही लगती हैं।

निजामुद्दीन औलिया बाबा फरीद जी के समकाली थे। बहुत उच्च कोटि के साधना सम्पन्न तथा बेपरवाह थे। सात बादशाहियां उनके होते हुए पूरी हो गईं पर अपनी दरगाह में किसी बादशाह को पैर नहीं रखने दिये। एक बादशाह उनका प्रेमी था, उसने पास ही एक मकान बनवा लिया। सारा दिन वहीं खिड़की में बैठा उनके दर्शन करता रहता था। उसने बहुत सन्देशे भेजे कि मुझे अपने यहाँ चरण रखने दीजिये, पर औलिया साहिब हर बार मना कर देते और कहते कि हमारे यहाँ पर राजा नहीं आ सकता। यह बेपरवाही हुआ करती है -

रंगि हसहि रंगि रोवहि चुप भी करि जाहि।

परवाह नाही किसै केरी बाझु सचे नाह॥ पृष्ठ - 473

उन्हें संसार की बिल्कुल भी परवाह नहीं हुआ करती थी। वे तो स्वार्थ से ऊपर उठे हुए होते हैं। संसार में, सभी वासनाओं का शिकार होते हैं, सभी के अन्दर कोई न कोई वासना चल रही होती है, पर सन्तों के हृदयों से वासनाओं का अन्त हो चुका होता है।

मनोनाश, वासना ख्वै, तत्वज्ञान, उनके अन्दर होता है जब ये तीन गुण किसी के अन्दर आ जायें तो वह पूरा साधु हुआ करता है। आपका एक मुरीद खुसरो जो राज कवि था, वह सात बादशाहों के दरबार में भी कवि रहा। जब वह सेवा मुक्त हुआ तो उसने सारा सामान दो सौ ऊटों पर लादा और अपने घर बदायूं को चल पड़ा। बहुत बड़ा काफिला साथ जा रहा है। इधर एक और कौतुक हुआ। इधर तो खुसरो औलिया से इज़ाज़त लेकर घर को चल पड़ता है और बहुत बड़ा काफिला ऊटों का सामान लेकर साथ जा रहा है, उधर कोई व्यक्ति औलिया के पास दिल्ली जाता है। वहाँ पर जाकर प्रार्थना करता है कि पीर साहिब! मेरी लड़की की शादी है, आप मेरी सहायता करो। औलिया ने कहा, ''प्यारे! हमारे पास जो कुछ भी आता है, चाहे हज़ार आये या दस हज़ार, हम तो उसी समय दे दिया करते हैं। इकट्ठा नहीं किया करते। धन का इक्ट्ठा हो जाना, अधिक माया का जुड़ जाना, कलह क्लेश की जड़ होती है, उसे जल्दी ही खत्म करने की बात करनी चाहिये। हम माया को अपने पास नहीं रखा करते। तुम ऐसे करो, जो चढ़ावा कल आयेगा, वह तुम सारा ले जाना।'' वह कहता है, ''पीर जी! एक दिन के चढ़ावे से तो कुछ भी नहीं बनेगा।'' फिर पीर ने कहा, ''तीन दिन तक ठहर जाओ, जितना आयेगा सारा ले जाना।'' कोई ऐसा कौतुक हुआ कि तीन दिनों तक कोई भी, एक पैसा भी चढ़ावे में न आया। यह भी ताक में बैठा रहा कि शायद अब कोई सिर झुकाने आयेगा और चढ़ावा चढ़ायेगा। पर तीन दिन तक कोई न आया। आखिर दुखी होकर बोला, ''औलिया जी! मेरी किस्मत तो बहुत अधिक बुरी है। सुना है यहाँ पर माया के ढेर लगे होते हैं, पर जब मेरी बारी आई तो कोई भी नहीं आया।''

औलिया ने कहा, ''प्यारे! बता अब हम क्या करें?''

वह बोला, ''महाराज! आपने अपनी शक्ति से रोक दिया।'' जब काम नहीं बनता तो फिर सन्तों पर दुनियां, सन्देह करने लग जाती है।

औलिया ने कहा, ''नहीं! शक्ति से नहीं रोका, आया ही कोई नहीं।'' फिर कहते हैं कि अच्छा तुम खाली मत जाओ मेरी चरण पादुकाएं (जूतियां) ले जाओ।

जूतियां उसने ले लीं। वह भी बदायूं का रहने वाला था। बड़ी जल्दी-जल्दी चला और खुसरो के काफिले में जा मिला। जब वह काफिले में पहुँचा तो वहाँ पर जूतियों की चर्चा चल पड़ी। अमीर खुसरो के कानों में बात पहुँच गई। मन ही मन बड़ा खुश हुआ कि मेरे मुरशद की जूतियां हैं। चाहे जिस मर्ज़ी कीमत पर लेनी पड़ें, ले लूंगा। उसने उस आदमी को बुलाया, उससे जूतियां ले लीं। पहले उसने उन्हें शीश पर रखा, फिर नेत्रों से लगाया, फिर ज़ोर से छाती के साथ रख कर दबाया।

फिर उस प्रेमी से कहता है, ''प्यारे! बेचनी हैं यें?'' प्रेमी बोला, ''मैं देख रहा हूँ कि तुम्हें इन जूतियों के साथ प्यार है, तुम ले लो।''

अमीर खुसरों ने कहा, ''ये जूतियां कोई साधारण जूतियां नहीं हैं। इसके अन्दर बेअन्त

बरकतें हैं। फिर मत कहना कि मेरे साथ धोखा हो गया?'' उसकी समझ में फिर भी बात न आई।

वह बोला, ''आपने जितने पैसे देने हैं, दे दो।''

अमीर खुसरो कहता है, ''यह मेरी सारी जिन्दगी की कमाई, इन दो सौ ऊटों पर लदी हुई है, यह सारी ले ले और मुझे यह चरणपादुकाएं (जूतियां) दे दे।''

सारा काफिला उसके हवाले करके जूतियां ले लीं और सिर पर रख कर वापिस औलिया के पास आ गया।

निजामुद्दीन औलिया ने पूछा, ''खुसरो! तुम वापिस क्यों लौट आये?''

अमीर खुसरो कहता है, ''औलिया जी! मैं जा ही नहीं सकता था। आपने मुझ पर बड़ी कृपा की कि जूतियां भेज कर मुझे वापिस बुलवा लिया।''

इस प्रकार आपने वहाँ रहना शुरू कर दिया। धीरे-धीरे बहुत उच्च अवस्था प्राप्त कर ली। सन्तों के यहाँ तो बहुत रहते हैं पर कोई-कोई विरला निकलता है, जो उच्च अवस्था को प्राप्त कर जाता है, बाकी तो नीचे ही रह जाते हैं। उस तरह के बत्तीस मुरीद उनके पास रहते थे। औलिया ने सोचा कि इन पर कसौटी लगाकर देखते हैं कि कौन खरा उतरता है? आज आप अपने 32 मुरीदों को साथ लेकर दिल्ली शहर की ओर चल पड़े और चलते-चलते वेश्याओं के बाज़ार में घुस गये। एक वेश्या के घर का द्वार खुला देखकर, औलिया जी स्वंय तो ऊपर चढ़ गये और मुरीदों को नीचे खड़ा होने को कह दिया। उधर औलिया जी ने जैसे ही वेश्या पर दृष्टि डाली तो उसकी मन्द दृष्टि समाप्त कर दी और वह बार-बार हाथ जोड़ती है तथा सिर झुकाती है। दृष्टि डालने की देर थी कि उसके सारे पाप झड़ गये, उसे एक दम निर्मल कर दिया।

हाथ जोड़कर प्रार्थना करती है, कहती है, ''महाराज! कोई सेवा बताइये। आप यहाँ ऐसे स्थान पर आ गये, जहाँ पर नर्क ही नर्क है।''

औलिया ने कहा, ''बीबी! हमें तुझसे एक काम आ पड़ा। ये जो मेरे मुरीद नीचे खड़े हैं, इन्हें भगाना हैं। तेरे पास कोई तरीका है? इन्हें यहाँ से भगा दे, यहाँ पर कोई न ठहरे।''

वह बोली, ''अभी लो महाराज! यह तो मामूली सी बात है।'' इतना कह कर उसने उस समय स्वांग रचा। कभी शराब की बोतल मंगाती है तो कभी कबाब मंगाती है। नीचे खड़े मुरीदों को ऐसे लगा कि वह सभी कुछ औलिया के लिये ही लाया जा रहा है। साथ ही साथ वह बोलती भी जा रही थी कि वह तो औलिया ने पी ली और बोतल लाओ। बढ़िया सा कबाब भी लाओ। अब दूसरी बोतल पी रहे हैं आदि-आदि। आधी रात होते-होते बीस तो चले गये। उसके बाद कुछ ने सोचा कि औलिया ने यह तो ठीक नहीं किया, ऐसा कहते-कहते सभी चले गये, केवल दो ही रह गये।

सुबह चार बजे तो उनमें से एक बोला, ''खुसरो! यह औलिया तो मार्ग से भटक गया। इसके पीछे क्या चलें? इसने तो वेश्या के यहाँ रात बिताई है। चल चलें।''

खुसरो बोला, ''मैंने तो नहीं जाना।''

दूसरा भी चला गया, अब खुसरो अकेला ही रह गया। उस महिला ने जाकर औलिया से कहा, ''महाराज! एक रह गया। वह नहीं जाता। बाकी तो सारे चले गये।''

औलिया ने कहा, ''उसे भी भगाओ। उसकी खूब पिटाई करो।''

वेश्या के सेवादार डण्डे लेकर उसकी पिटाई करने लग गये। पर वह फिर भी नहीं जाता।

वहीं पर ही लेट गया, कहता है, ''बेशक मुझे मार दो, पर मैं यहाँ से नहीं जाऊंगा।''

औलिया ने कहा, ''उसे घसीट कर दूर फैंक आओ।''

इस तरह उसे बाज़ार में भी काफी दूर तक घसीट कर फैंक आये। सारे शरीर पर घाव हो गये। पर वह फिर चलकर आ गया। सेवक उसे घसीट कर फिर फैंक आते हैं, वह फिर आ जाता है। जाता नहीं है।

अन्त में वेश्या ने कहा, ''महाराज! वह नहीं जाता। उसे कई बार घसीट-घसीट कर फैंक आये हैं। पर वह फिर आ जाता है।''

इतनी देर में औलिया बाहर निकल आए। कहते हैं, ''खुसरो! तू यहाँ से क्यों नहीं जाता? जहाँ सारे चले गये, तू भी चला जा।''

खुसरो कहता है, ''औलिया जी! जिनका कोई न कोई ठिकाना था, वे तो सभी चले गये। जिनको किसी न किसी का सहारा था, वे तो चले गये पर मेरा तो इस संसार में तेरे चरणों के सिवाय और कोई स्थान नहीं है। मैं कहाँ जाऊं?''

तब औलिया भी वज़द में आ गया। रूहानी कांग उठ खड़ी हुई। ज़ोर से गोदी में भर लिया। एक दम उसी समय पूरा कर दिया।

इसी तरह भाई लहणा जी प्रार्थनाएं करते हैं कि सच्चे पातशाह! जिनका कोई ठिकाना था, वे तो चले गये।

कहित भयो गुर ठहुर न कोई॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

मेरा तो ठौर (ठिकाना) ही कोई नहीं है -

कित को जाहुं शरन प्रभ तोही॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

मैं तो आपकी शरण में आ गया हूँ, अब कहाँ जाऊँ?

गुरू महाराज कहते हैं, ''जाता है या नहीं?'' भाई लहणा जी कहते हैं, ''नहीं महाराज! मेरा तो और कोई ठौर ही नहीं है। बताइये, मैं कहाँ जाऊँ?''

सुनत कहयो गुर जे नहिं जावहु।

तब बिलंभ बिन मुरदहि खावहु॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

गुरू महाराज कहते हैं, ''लहणा! ठिकाना तुझे भी नहीं मिल रहा और मुझे भी नहीं मिल रहा। इस मामले में हम दोनों एक ही हैं।'' इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - मैनूं दिसदा टिकाणा ना,

जिथे आपणी जोत टिकावां - 4, 2

साध संगत जी! तीन रह गये। तीनों में से शरीर एक चाहिये। वह शरीर चाहिये, जिसके अन्दर गुरू महाराज जी अपनी ज्योति टिका सकें। तब आपने कहा कि यदि नहीं जाना तो वह देख सामने मुर्दा पड़ा है, वह खाओ। साध संगत जी, बड़ा मुश्किल काम है। कहानी सुनना बहुत आसान है, पर व्यवहार में खरा उतरना बहुत कठिन है –

धारना – परचा पै गिआ गुरां वलों औखा,
तन मन डोलण लगिआ – 2, 2
मेरे पिआरे, तन मन डोलण लगिआ – 2, 2
परचा पै गिआ गुरां वलों औखा, ...-2

कबीर कसउटी राम की झूठा टिकै न कोइ।
राम कसउटी सो सहै जो मरि जीवा होइ॥

पृष्ठ – 1366

इम्तहान आ गया। मरजीवड़ा ही पास होता है। दूसरा पास नहीं हो सकता। जितना बड़ा मुरशद होता है, उतनी कठिन परीक्षा हुआ करती है।

बाबा फरीद जी ने बारह साल तक तप किया था। ऋद्धियां-सिद्धियां आ गई थीं, शक्तियां आ गई थीं। माँ को मिलने आ रहे हैं। रास्ते में एक महिला मिली और उन्होंने इससे पीने के लिये ज़ोर से कड़क कर पानी मांगा तो उस महिला ने कह दिया, ''फरीद! ये चिड़ियां नहीं हैं जिन्हें मार कर जिन्दा कर देगा।'' जंगल में कहीं फरीद के कहने पर चिड़ियां मर गई थीं, जो उसने जिन्दा कर दी थीं। फिर उसने सोचा कि यह लड़की तो घर गृहस्थी में रहती हुई भी मेरे से अधिक शक्ति रखती है।''

फरीद ने कहा, ''पानी पिलाओ।''

वह महिला बोली, ''दरवेश सांई, ठहर ज़रा।'' यह कह कर जो और आ रहे होते हैं, उन्हें तो पानी पिला देती है। पर फरीद को नहीं पिलाती।

कुछ देर बाद जब उसने पानी पिलाया तो फरीद ने पूछा, ''मुझे पानी क्यों नहीं पिला रही थी?''

कहती है, ''दरवेश! तेरे पास आंख नहीं? तू देख लेता, मैं क्या कर रही थी?''

फरीद हैरानी से बोले, ''हैं, तुम कुछ कर रही थीं?''

महिला बोली, ''हाँ! आंख है तेरे पास?''

फरीद बोले, ''नहीं, वह आंख मेरे पास नहीं है।''

उसने कहा, ''मेरी बहन के घर को आग लग गई थी। उसका घर यहाँ से आठ दस मील दूर है और मैं बार-बार पानी उंडेल रही थी ताकि उसके घर की आग बुझ जाये। यदि विश्वास नहीं है तो जाओ, पता कर लो।''

फरीद ने पता किया फिर लौट आया और बोला, ''बीबा! घर गृहस्थी में रहते हुए, इतनी

महान शक्ति तुम्हारे पास है, यह कैसे प्राप्त हुई?''

वह बोली, ''बाबा! हम स्त्रियों का जो परमेश्वर है, वह हमारा पति हुआ करता है। मैं अपने पति को परमेश्वर रूप समझती हूँ, मानती हूँ और उनकी सेवा करती हूँ। उनके तप से ये तुच्छ शक्तियां हमें प्राप्त हो जाती हैं। आप तो साधु हो, बारह साल तप करके आये हो, आपको कुछ भी प्राप्त नहीं हुआ?''

यह सुनकर वह हैरान रह गया। पुनः फिर वहीं से वापिस लौट गया और जाकर फिर तपस्या शुरू कर दी।

फरीदा तनु सुका पिंजरु थीआ तलीआं खूंडहि काग।

अजै सु रबु न बहुड़िओ देखु बंदे के भाग।

कागा करंग ढढोलिआ सगला खाइआ मासु।

ए दुइ नैना मति छुहउ पिर देखन की आस॥

पृष्ठ - 1382

ऐसी अवस्था हो गई। मुर्दों की तरह बन गये। आवाज़ आई कि -

फरीदा जंगलु जंगलु किआ भवहि वणि कंडा मोड़ेहि।

वसी रबु हिआलीऐ जंगलु किआ ढूढेहि॥

पृष्ठ - 1378

फरीदा जिसे तू ढूंढता फिर रहा है, वह तो तेरे अन्दर बसता है। मुरशद-ए-कामल की शरण में जा। किसी पूरे को ढूंढ ले, बख्शीश प्राप्त किये हुये मिल ले, जो उससे मिला हुआ हो, वही तुझे मिला देगा। जंगलों में परमेश्वर नहीं मिला करता। परमेश्वर तो तेरे अन्दर है। तेरी आंख बन्द पड़ी है, वह आंख खुलवा ले। महापुरुषों के संग से खुल जाती है। फिर तुझे हर जगह परमेश्वर नज़र आने लग जायेगा। फरीद जी बख्तियार काकी के पास चले गये। वहाँ पर जाकर उसे मुरशद बनाया। चौदह साल सेवा करते-करते बीत गये। पहले दिन वचन हुए थे। इसने शक्तियां दिखाईं। मुरशद ने उन शक्तियों की ओर देखा तक नहीं, ऐसे ही फोकट आदमी आ गया है। उसके बाद चौदह साल लगे। मुरशद दोबारा इसके साथ बोले तक नहीं। पर सन्तों को सब कुछ पता होता है कि कौन सेवा करता है? कौन नाम जपता है? किसको लगन लगी है? किसे लगन नहीं है? कौन दिखावा करता है? वे सभी कुछ जानते हैं। मुरशद के मन में दिल से प्यार था उसके प्रति, उसे पता था कि डेरे में, आश्रम में यदि कोई है, जिसको लगन लगी है तो वह केवल फरीद ही है, आज उसकी साधना सम्पन्न होने जा रही थी, वह पूरी होने जा रही थी, अतः पेपर दे दिया। परीक्षा लेनी शुरू कर दी। रात को इतनी तेज़ बरसात हुई, इतनी तेज़ आन्धी चली और मूसलाधार वर्षा हुई कि जहाँ पर इसने गड्ढे में आग दबा कर रखी हुई थी, उसमें भी पानी भर गया।

फरीद अपने नियमानुसार उठे और अपने मुरशद के स्नान के लिये पानी गर्म करने के लिये, जहाँ पर आग दबाई हुई थी, देखने गया तो एक दम दंग रह गया कि गड्ढे में तो पानी भरा पड़ा है और सारी आग बुझी पड़ी है। सोच में पड़ गया कि अब क्या करूं? सोचता है कि मेरी चौदह साल की यह सेवा, बारह साल का पहला तप, बारह सालों का दूसरा तप, यदि मैं आज फेल

हो गया तो मेरी अठतीस साल का तप तथा सेवा बेकार हो जायेगी। बहुत सोचता है। फिर ख्याल आया कि चलो शहर में चलता हूँ, कहीं से आग की चिन्गारी ले आऊं, फिर आकर पानी गर्म करके अपने मुरशद का स्नान करवाऊँ फिर देखता है कि बाहर तो कीचड़ बहुत है, गीला हो जाऊंगा। फिर साथ ही साथ कहता है –

फरीदा गलीए चिकड़ु दूरि घरु नालि पिआरे नेहु।

चला त भिजै कंबली रहां त तुटै नेहु॥ पृष्ठ – 1379

इस प्रकार विचार करता है –

धारना – जे चलदां तां भिजदी है कंबली,

जे चलदां,.....,

रहिंदां नेहुं टुटदा मेरा, मेरा,

रहिंदां नेहुं टुटदा, जे चलदां – 2, 2

जे चलदां तां भिजदी है कंबली, ...-2

फरीदा गलीए चिकड़ु दूरि घरु नालि पिआरे नेहु।

चला त भिजै कंबली रहां त तुटै नेहु॥ पृष्ठ – 1379

बाहर बरसात हो रही है, सर्दी का महीना है। समस्या खड़ी हो गई। ठण्ड के मारे हाथ पांव भी बाहर नहीं निकाले जाते। चारों ओर बाहर कीचड़ ही कीचड़ है। अब यदि स्नान नहीं करवाता तो चौदह सालों का नियम टूटता है। उस समय फैसला करता है कि चाहे जो मर्ज़ी हो जाये यह मेरा प्यार नहीं टूटना चाहिये।

धारना – मेरी टुटे ना प्रेम वाली डोरी,

भिज्ज भावें जावे कंबली – 2, 2

मेरे पिआरे, भिज्ज भावें जावे कंबली – 2

वाहवा-वाहवा, भिज्ज भावें जावे कंबली – 2

मेरी टुटे ना प्रेम वाली डोरी, ...-2

भिजउ सिजउ कंबली अलह वरसउ मेहु।

जाइ मिला तिना सजणा तुटउ नाही नेहु॥

पृष्ठ – 1379

तन पर कम्बली ओढ़ ली, भीगते हुए, धीरे-धीरे कदम रखते हुए, अजमेर शरीफ की तरफ जा रहे हैं। इधर उधर बाज़ार में देखते हैं। रात का एक बजा हुआ है। सभी के घरों में अन्धेरा छाया हुआ है। कोई भी जाग नहीं रहा। सभी सोये पड़े हैं। मूसलाधार बरसात हो रही है। बड़ी तेज़ हवा चल रही है।

थोड़ा आगे गये तो देखते हैं कि एक घर की खिड़की में से किसी दीपक की लौ नज़र आ रही है। यदि अन्धेरा हो तो फिर बेशक एक ही दीपक क्यों न जलता हो, दूर-दूर तक दिखाई

देने लग जाता है। वहाँ पर जाकर दस्तक दी। दरवाज़ा खटखटाया आवाज़ आई, ''कौन?''

कहता है, ''मैं फरीद हूँ। मुरशद का मुरीद।''

फिर आवाज़ आई, ''फरीदा! जिस दरवाज़े को तुम खटखटा रहे हो, यह पीरों, मुरीदों का द्वार नहीं है। यहाँ पर पीर मुरीदों का कोई काम नहीं? यहाँ तो नरकों के टिकट मिलते हैं।''

सेज सोहनी चंदनु चोआ नरक घोर का दुआरा॥

पृष्ठ - 642

फरीद ने कहा, ''बीबी, मैं समझा नहीं।''

वह बोली, ''फरीदा! यह तो वेश्या का घर है।''

फरीद बोले, ''बीबा, बेशक वेश्या का घर होगा पर आज मुझे तुझसे काम है। कृपा करके नीचे उतर कर आ और मेरी प्रार्थना सुन ले।''

नीचे उतर आई। मुरशद ने उस वेश्या का दिल भी इतना कठोर कर दिया, उसे भी अपनी शक्ति बख्श दी और वह कड़क कर बोलती है, ''क्या काम है? यहाँ पर आकर मेरा द्वार क्यों खटखटाया है?''

वह बोले, ''बीबा, मेरे मुरशद के स्नान का समय हो गया है। मेरी आग बुझ गई है। मैंने पानी गर्म करना होता है, अतः मुझे थोड़ी सी आग दे दे।''

वह बोली, ''आग चाहिये? आग कहीं तुझे मुफ्त मिल जायेगी क्या?''

फरीद कहते हैं, ''बीबा, जो कुछ तू मांगना चाहती है, माँग ले।''

वह बोली, ''तुझे अपने शरीर का कोई अंग देना पड़ेगा।''

फरीद बहुत खुश हुआ। मन ही मन कह रहे हैं कि यह तो बहुत सस्ता सौदा है। यदि शरीर का अंग देने पर आग मिल जाये और मुरशद खुश हो जाये, मुरशद मान जाये फिर तो यह सौदा बहुत ही सस्ता है। इस तरह पढ़ लो -

धारना - सिर दितिआं जे मुरशद मंन जाए,
सिर दित्तिआं,
सिर दित्तिआं जे मुरशद मंन जाए,
हस्स के सीस वारीए, पिआरिओ,
पिआरिओ, हस्स के सीस वारीए,
सिर दित्तिआं -2

जउ तउ प्रेम खेलण का चाउ।
सिरु धरि तली गली मेरी आउ।
इतु मारगि पैरु धरीजै।
सिरु दीजै काणि न कीजै॥ *पृष्ठ - 1412*

पहिला मरणु कबूलि जीवण की छडि आस।
होहु सभना की रेणुका तउ आउ हमारै पासि॥

पृष्ठ - 1102

फरीद खुश हो गये कि यह तो बहुत सस्ता सौदा है। यदि शीश भी मांग लिया तो भी सस्ता सौदा है। शीश मांगता है न मुरशद?

वैशाखी का दीवान सजा हुआ है। अचानक गुरू दशमेश पिता जी, श्री साहिब निकाल कर तख्त पर खड़े हो गये और आवाज़ दी कि एक शीश चाहिये, आओ कोई सिख! एक, दो, तीन, चार, पाँच, भाग-भाग कर आते हैं कहते हैं इतना सस्ता सौदा? हमारा गुरू खुश हो जायेगा, शीश देने पर प्रसन्न हो जायेगा। शीश तो बहुत छोटी सी वस्तु है और हम उसे देने को तैयार हैं। यदि मुरशद प्रसन्न हो जाये, यह शरीर मुरशद के काम आ जाये, फिर कोई भी बात मुश्किल नहीं होती, यह सौदा तो बहुत सस्ता है। हमारा तो यह हाल है कि हम तो छोटी सी बात पर ही अपना शीश कुर्बान करने को तैयार रहते हैं। इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - सीस वढ्ढ के बणा देवां मूड़ा,

गल्लां जो सुणावे तेरीआं - 2, 2

मेरे साहिबा! गल्लां जो सुणावे तेरीआं - 2, 2

सीस वढ्ढ के बणा देवां मूड़ा.....-2

तै साहिब की बात जि आखै कहु नानक किआ दीजै।

सीसु वडे करि बैसणु दीजै विणु सिर सेव करीजै॥

पृष्ठ - 558

प्यारे की, मुरशद की कोई बातें सुना दे तो मन करता है कि उसे अपना शीश उतार कर, उस पर बिठायें। इस तरह बाबा फरीद कहते हैं कि यह तो बहुत ही सस्ता सौदा है। शरीर का अंग देना तो कोई मुश्किल बात नहीं है। बेशक शरीर का कोई भी अंग क्यों न मांग ले।

बाबा फरीद ने कहा, ''बीबा! यह शरीर हाज़िर है बता, शरीर का कौन सा अंग तुझे चाहिये?''

वह बोली, ''अपनी एक आंख की पुतली दे दे।''

अपने मुरशद का धन्यवाद किया कि एक आंख की पुतली देना तो कोई मुश्किल बात नहीं है। आंख सामने कर दी और कहते हैं, ''यह ले बीबी, निकाल ले।''

वह बोली, ''नहीं, अपने हाथों से निकाल कर दे।'' जाकर प्लेट लाकर पकड़ा दी।

फरीद ने दोनों अंगुलियां आखों में घुसेड़ी, पुतली निकाली और उसके हवाले कर दी। अपनी दस्तार फाड़ कर, उससे आंख पर पट्टी बान्ध ली। आग लेकर वापिस अपने आश्रम पर आया। आग जलाई। अपने मुरशद के लिये पानी गर्म किया और स्नान करवाया। आप भी स्नान किया। किसी तरह की कोई बात नहीं की। ऐसे नहीं कहा कि महाराज, आज तो मैं आग बहुत मुश्किल से लेकर आया हूँ। हमारे अन्दर और उन मरजीवड़ों के अन्दर यही फर्क होता है। हम एक राई जितना काम करते हैं तो मन भर बताते हैं, थोड़ा सा भी काम करना पड़ जाये, सेवा करनी पड़ जाये, उसी का ही हम शोर मचाना शुरू कर देते हैं कि मैं अमुक सेवा करता हूँ, मैं तो सेवा करते-करते थक गया हूँ। अरे भले पुरुषो! परमेश्वर का शुक्र करो कि तुम्हें महाराज जी ने सेवा दे दी। रोज़ धन्यवाद करो। दस बार शीश झुकाओ कि सच्चे पातशाह! यह सेवा मुझे दिये रखना। सेवा तो

भाग्यशालियों को मिलती है। हर व्यक्ति को सेवा नहीं मिला करती -

करि के नीच सदावणा ता प्रभु लेखै अंदरि पाई॥

भाई गुरदास जी, वार 1/16

सेवा करो और फिर कहो कि मैंने तो कुछ भी नहीं किया। सच्चे दिल से कहो। गुस्सा उसे आयेगा जो यह कहेगा कि मैं सेवा करता हूँ। उसकी जगह किसी और को लगा दो, तो वह कहेगा कि मेरी सेवा उसे दे दी। वह सेवा सफल नहीं मानी जाती। वह तो थकावट हुआ करती है।

हम तो छोटी-छोटी बात को भी बहुत बड़ी-बड़ी बना कर कहा करते हैं। फरीद जी ने इधर तो आंख की पुतली दे रखी है, उस समय कितनी दर्द हो रही होगी, कितनी तकलीफ हो रही होगी? स्नान किया, स्नान करवाया, कोई बात नहीं की कि महाराज, आज तो आग बुझ गई थी, यह आंख की पुतली देकर लाया हूँ। मुरशद तो सभी कुछ जानते थे और जानते भी हैं। चुप-चाप दीवार की ओर मुँह करके बैठ गये। सिमरण कर रहे हैं, दिन निकल आया। मुरशद ने कहा कि फरीद नज़र नहीं आ रहा। सेवकों ने कहा, ''महाराज! वह दीवार के पास बैठा है।''

मुरशद ने कहा, ''बुला कर लाओ।'' बुलाकर ले आये मुरशद के सामने खड़ा है।

मुरशद ने कहा, ''फरीदा! आंख क्यों बान्धी हुई है?''

वह बोले, ''महाराज! आंख आई हुई है।'' पंजाबी में 'आंख आई हुई का अर्थ होता है आंख में दर्द हो रहा हो। या आंख दुख रही हो।'

मुरशद ने कहा, ''फरीदा! आई हुई आँखों पर पट्टियां नहीं बान्धा करते, गई हुई आखों पर बान्धते हैं। खोल दे पट्टी।''

पट्टी खोली तो आंख बिल्कुल वैसे की वैसी। उसी समय गोद में भर लिया। सारी रिद्धियां-सिद्धियां, ब्रह्म ज्ञान के भण्डार बख्श दिये। उस सेवा के फलस्वरूप आज फरीद जी हमारे गुरू ग्रन्थ साहिब में सतगुरू बने हुए हैं। हम कभी यह नहीं कहते कि यह तो बाबा फरीद की बाणी है। जो यह बात कहता है तो वह गलती करता है क्योंकि सारी बाणी गुरू दसवें पातशाह जी के मुखारविन्द से उच्चरित हुई बाणी है। यहाँ पर सिवाय गुरू नानक देव जी महाराज के और किसी की भी बाणी नहीं है। चाहे फरीद जी का नाम लिखा हो या कबीर साहिब का नाम लिखा हो, यह सारी बाणी गुरू दसवें पातशाह के मुख से उच्चरित होकर, गुरू ग्रन्थ साहिब में आई है।

जिन्होंने मुर्दों की तरह कठोर साधनाएं कीं, वे वहाँ पर पहुँचते हैं। जो बीच में रह जाते हैं, वे लटक जाते हैं। साध संगत जी! इस तरह से बड़ी कठिन परीक्षा ली गई।

इधर भी पर्चा बहुत मुश्किल डाल दिया। गुरू नानक देव जी कहते हैं कि लहणा, यदि मेरा पीछा नहीं छोड़ना तो यह मुर्दा खाओ। उस समय भाई लहणा जी तनिक भी डांवाडोल नहीं हुए, पर बाबा बुड्ढा जी तथा दुनी चन्द जी पैर मसलने लग गये, बड़े धीरे-धीरे कदम रख रहे हैं कि हैं! मुर्दा खाना है? कैसे खायेंगे मुर्दा? पता नहीं कितने दिनों से सड़ा पड़ा होगा मुर्दा? पर भाई लहणा जी उस समय अर्न्तध्यान होकर सीधे चले जा रहे हैं और इस तरह प्रार्थनाएं कर रहे हैं -

धारना - ऐहो मेरी ओ, बेनती गुरा - 2, 2

मेरा सिदक सलामत रहि जाए - 2, 2

मेरा सिदक सलामत रहि जाए मालका,

बेनती गुरा, एहो मेरी ओ, बेनती गुरा, ...-2

इशारा कर दिया कि वह सामने मुर्दा पड़ा है, यदि मेरा पीछा नहीं छोड़ना तो आगे बढ़ो और मुर्दा खाओ, सामने मुर्दा पड़ा है। अब मुर्दा खिलायेंगे, मन में संशय आ गया पर भाई लहणा जी अति विनम्र हो गये और प्रार्थना करते हैं कि पातशाह! जो आपको रूचता है, अच्छा लगता है, हमने तो आपका वचन मानना है। हमारा सिदक सलामत रह जाये –

धारना – भावें मुरदा खला दे मालका,
असीं तेरा हुकम मंनणा – 2, 2
मेरे साहिबा, असीं तेरा हुकम मंनणा – 2, 2
भावें मुरदा खला दे मालका, ...–2

पातशाह! आपका हुक्म हम सिर माथे पर रखते हैं –

सुन श्री मुख ते बचन को श्री लहिणा तत काल।
तत छिन मुरदे ढिग गयो सतिगुर बचनं पाल॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ – 193

वचन का पालन करना है पातशाह! हमने तो आपका वचन मानना है। हमें न तो मुर्दे खाने से कोई मतलब है और न ही अन्न खाने से है। आपका जो वचन हो गया, हमने तो पालन करना है। वचनों में कितना अन्तर है? हमारे लिये यह हुक्म नहीं है कि मुर्दे खाओ। हमारे लिये तो बहुत ही सरल हुक्म है –

गुर सतिगुर का जो सिखु अखाए
सु भलके उठि हरि नामु धिआवै।
उदमु करे भलके परभाती
इसनानु करे अंम्रितसरि नावै।
उपदेसि गुरू हरि हरि जपु जापै
सभि किलविख पाप दोख लहि जावै॥
फिरि चड़ै दिवसु गुरबाणी गावै
बहदिआ उठदिआ हरि नामु धिआवै।
जो सासि गिरासि धिआए मेरा हरि हरि
सो गुरसिखु गुरू मनि भावै।
जिस नो दइआलु होवै मेरा सुआमी
तिसु गुरसिख गुरू उपदेसु सुणावै।
जनु नानकु धूड़ि मंगै तिसु गुरसिख की
जो आपि जपै अवरह नामु जपावै॥ *पृष्ठ – 305*

हमारे लिये तो बहुत ही सरल हुक्म है कि अमृत बेला में उठो। सुस्ती त्यागो, पहर रात

रहते हुए उठकर स्नान करो। स्नान करके जो पांच प्यारों ने नाम दिया है, इसे जपो, जब दिन निकल आये तो बाणी पढ़ो, उठते बैठते परमेश्वर में ध्यान लगाओ, गुरू दयाल हो जायेगा तथा जीव और ब्रह्म की एकता का उपदेश देकर परमेश्वर बना देगा और फिर जो स्वंय जपता है और दूसरों को भी जपवाता है। महाराज जी कहते हैं कि उसकी पदवी इतनी ऊँची हो गई कि हम उसके चरणों की धूल बन जाते हैं। हमें इतना बड़ा हुक्म नहीं है कि मुर्दे खाओ या शीश दो। गुरू ग्रन्थ साहिब जी महाराज हम पर कोई सख्त कसौटी नहीं लगाते। आपका हुक्म मानना भी बहुत कठिन है। देखा जाये तो हुक्म की पालना करना बड़ा सरल भी है। फिर भी इतना मुश्किल नहीं है, जितना भाई मन्झ ने माना, भाई लहणा जी ने माना। ऐसा हुक्म नहीं है जैसा गुरू अमरदास महाराज जी ने बारह साल दिन रात जाग कर हुक्म का पालन किया। उस समय जब वचन सुना –

सुन श्री मुख ते बचन को स्त्री लहिणा तत काल।

तत छिन मुरदे ढिग गयो सतिगुर बचनं पाल॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

आप मुर्दे के पास जाकर खड़े हो गये। कभी इधर देखते हैं, कभी उधर देखते हैं। बाबा बुड्ढा जी तथा दुनी चन्द जी दूर खड़े हैं, पास ही नहीं गये। आप अकेले ही रह गये।

महाराज जी कड़क कर बोले, ''खड़े-खड़े क्या देखते हो? खाते क्यों नहीं?''

लहणा जी ने कहा, ''महाराज! आपका हुक्म चाहिये कि किधर से खाऊं?''

महाराज जी कहते हैं, ''सिर की तरफ से खाओ।''

और समस्या खड़ी हो गई। अन्य किसी तरफ से खाते तो उसकी बुरकी (ग्रास) काट कर खाई जा सकती पर सिर पर तो बाल होते हैं।

भाई लहणा जी ने कहा, ''ठीक है महाराज?''

यह कहकर ज्यों ही मुर्दे के ऊपर से पर्दा उठाया तो–

सेत सु बसत्र उतारा जबही।

देखियो नीचो कछु नहिं तब ही।

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

इसके नीचे तो कुछ भी नहीं –

लख असचरज रहियो बिसमाई।

धाइ सतिगुरू पग लपटाई॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

भाग कर गये और गुरू नानक पातशाह के चरण पकड़ लिये। ज़ोर-ज़ोर से करुणा पुकार कर रहे हैं, कहते हैं, ''पातशाह! आपने इतना बड़ा स्वांग रचा। सारी सिक्खी भ्रमित कर दी। कोई

भी पूरा न उतर सका। पातशाह! इतना बड़ा स्वांग, यदि कहीं पता चल जाता कि ऐसे ही कपड़ा बना कर रखा हुआ है, किसी वस्तु को ऐसे ढक कर रखा हुआ है तो मैं पास न हो सकता।'' सभी ने ही पास हो जाना था। पर उन्हें तो एक ही चाहिये था।

कहते हैं, ''पातशाह! आप दयालु हैं, कृपालु हैं। परीक्षा की कठिन घड़ी में डाल दिया और आप ही बचा लिया।''

उस समय गुरू नानक पातशाह रह न सके। साध संगत जी! आप झुके, कन्धों से लहणा जी को पकड़ कर खड़ा कर दिया और ज़ोर से गोदी में भर लिया। कहते हैं, मुझे वह ठिकाना मिल गया, जहाँ मैं अपनी ज्योति को रख सकूंगा। बड़ी प्रसन्नता हुई क्योंकि गुरू नानक पातशाह ने संसार से कहीं नहीं जाना था, वह तो अपनी ज्योति को टिकाने के लिये जगह ढूंढ रहे थे।

13

जिस समय आपकी अजित्ता-रन्धावा के साथ गोष्ठी हुई, उस समय आपने कहा, ''अजित्ता! हमने जाना नहीं है, शरीर बदलना है। हमने ज्योति नहीं बदलनी। अपनी ज्योति उसी तरह से ही जलाये रखनी है। हमारे दस जामें गुरू रूप में प्रकट होंगे। चौहत्तर (74) जामें हमारे साधु, सन्तों के होंगे पर उन्हें कोई भी रख नहीं सकेगा। प्रभु का नाम जपवाना है। कलयुग बहुत ताकतवर है। इसने सभी की मति भ्रमित कर देनी है। लोगों ने अर्थ के अनर्थ निकालने शुरू कर देने हैं।''

उस समय गुरू नानक पातशाह को बहुत खुशी हुई, जब उन्हें अपनी ज्योति को टिकाने के लिये स्थान मिल गया।

कहते हैं, ''ले भाई लहणा! तुम हमारे अंग से बने हो, आज से तुम्हारा नाम अंगद हो गया और अब तेरे और मेरे रूप में कोई अन्तर नहीं रहा।'' इस तरह पढ़ लो -

धारना - बणा लिआ आपणा रूप,
गुरां ने गुरसिख नूं गल ला के - 2, 2
गुरसिख नूं गल ला के, गुरां ने - 2, 2
बणा लिआ आपणा रूप, ...-2

गुर उठाइ गर संग लगायो।
कहियो कि अब अंगद तूं थायो।
पुना कहयो मेरो जो रूपा।
जो तुम ह्वै हो परम सरूपा॥

श्री गुर पुर प्रकाश, ग्रन्थ, 193

गुरू महाराज ने फिर कहा, ''लहणा! अब लहणा खत्म हो गया। अब मेरे अंग से तेरा नया जन्म हुआ है और तेरा नाम आज के बाद अंगद हो गया।''

जोति रूपि हरि आपि गुरु नानकु कहायउ।
ताते अंगदु भयउ तत सिउ ततु मिलायउ॥

पृष्ठ - 1408

कठिन साधना की और पदवी प्राप्त हो गई। ऐसा फ़रमान है कि गुरू अंगद साहिब जी की कोई खींझने वाली, रोने वाली, निराशावादी साधना नहीं थी, वह तो आशावादी साधना थी। हिम्मत के साथ, धैर्य के साथ किया करते थे। कभी उलाहना नहीं दिया करते थे। कभी शिकवा नहीं किया करते थे कि महाराज! अब मैं थक गया हूँ बल्कि आप तो कहा करते थे, ''नहीं, महाराज! मैं आपसे दूर नहीं हो सकता। मैं तो आपके दर्शन करके ही जीवित हूँ।''

आपकी साधना युग पुरुषों वाली थी। बाणी का ऐसा फ़रमान है –

धारना – गुरसिख हो गिआ परवाण सतिगुरू नानक नूं,
मरदां वाली घाल घाल के – 2, 2
मेरे पिआरे, मरदां वाली घाल घाल के –2, 2
गुरसिख हो गिआ परवाण सतिगुरू नानक,..–2

गुरसिखा के मुख उजले मनमुख थीए पराली।
पए कबूलु खसंम नालि जां घाल मरदी घाली॥
पृष्ठ – 967

गुरू ग्रन्थ साहिब जी में उल्लेख आता है कि जब गुरू अंगद पातशाह ने महान पुरुषों वाली साधना शुरू की तो गुरू नानक पातशाह को परवान हो गये। संसार में गुरू नानक पातशाह को गुरू नहीं मिला था। सारे संसार में नज़र दौड़ाकर देखी थी, फिर गुरू नानक को सिख (शिष्य) मिल गया और ऐसा सिख मिला जो उनका गुरू बना।

गोरख नाथ बड़ा हैरान था। कहता है, ''हे नानक! मुझे ऐसा लगता है कि तेरा कोई सिख आयेगा और वह तेरा गुरू बनेगा।'' बना भी तभी ही –

वाहु वाहु गोबिंद सिंघ आपे गुर चेला॥
भाई गुरदास जी, वार 41/1

आप ही मस्तक झुकाते हैं। उस समय गुरू नानक पातशाह जी कहते हैं, '' अंगद जी! अब तुम और मैं, एक हो गये हैं। प्यार के साथ गांठ पड़ गई, खुश्क ज्ञान के साथ नहीं हुई। तेरे अन्दर से 'मैं' खत्म हो गई। अब तेरी 'मैं' मेरी 'मैं' और तेरी 'तू' मेरी 'तू' बन गई है।'' इस तरह फ़रमान करते हैं –

धारना – तेरा वसिआ पिआर हिरदे मेरे,
तूं तूं मैं मैं विचों हट गई – 2, 2
पिआरिआ तूं तूं मैं मैं विचों हट गई – 2, 2
तेरा वसिआ पिआर हिरदे मेरे, ...–2

कहते हैं, ''अंगद जी! तुझ में और मुझ में बस यही फर्क था कि तेरे अन्दर जो तेरी 'मैं' थी, वह तुझे मेरे पास नहीं आने दे रही थी।''

हउ हउ मै मै विचहु खोवै।
दूजा मेटै एको होवै॥ *पृष्ठ – 943*

जब 'हऊं-हऊं' और मैं-मैं खत्म हो जाती है, दूसरा मिट जाता है, फिर क्या होता है?

जब हम होते तब तू नाही अब तूही मै नाही।
अनल अगम जैसे लहरि मइओदधि जल केवल जल मांही॥ *पृष्ठ – 657*

गुरू नानक पातशाह कहते हैं, ''तुझ में और मुझ में अन्तर केवल 'तू-तू' और 'मैं-मैं' का था। अब तेरे अन्दर से 'मैं' खत्म हो गई।''

हउ हउ भीति भइओ है बीचो सुनत देसि निकटाइओ॥ *पृष्ठ - 624*

रहते तो हम परमेश्वर के साथ हैं। उसका ही रूप हैं पर consciousness (चेतनता) के अन्दर एक दीवार बन गई। जाग्रत के अन्दर 'मैं' और 'तू' और हैं। बस इसी बात को ही बार-बार रोये जाते हैं। जब यह मिट जाती है फिर 'तू' और 'मैं' दोनों ही खत्म हो जाते हैं। सब कुछ वह स्वंयमेव ही हो जाता है। कहते हैं -

मेरे मन महि तू वसहि मै सद हिरदे तोहि॥

कहते हैं, ''अंगद जी! मेरे मन में तू सदा ही बसता है और मैं तेरे अन्दर सदा ही बसता हूँ।''

अभेद भगति मेरी करी, मै मन तुमरा टोहि॥

भेद से रहित भक्ति कर ली। तुम मेरे अन्दर समा गये।

अब तू मेरे अंग ते भइआ,
तुम लहना मै देन दइआ।

तेरा नाम लहणा (लेना) था। मैंने तुझे देना था। अब तुम मेरे अंग से बन गये -

कहयो जु मेरो अहै सरूपा।
सो तुम ह्वै है परम अनूपा॥

साखी 58-59, महिमा प्रकाश

जो मेरा उपमा से रहित शरीर था, वह अब तेरा स्वरूप बन गया। मैं बहुत प्रसन्न हूँ कि सिखी तो लाखों की, करोड़ों की संख्या में सारी दुनियां में फैली थी, पर अब सबसे बड़ी खुशी मेरे मन में यह है कि सिखी का बीज रह गया।

धारना - वाहवा-वाहवा,
सिक्खी वाली पत्त रक्ख लई - 2, 2
गुरसिक्ख रूप गुरां दा बणिआ - 2, 2
सिक्खी वाली पत्त रक्ख लई, ...-2

गुरू नानक पातशाह अति प्रसन्न हैं। कहते हैं, ''अंगद जी! आपने सिक्खी की इज्जत रख ली। मैं इतनी ऊँची ही सिक्खी चाहता था। वह स्थान ढूंढता फिर रहा था, जहाँ पर गुरसिख के हृदय में, मैं अपनी पूर्ण ज्योति को टिका सकता।

सब सिखन की राखी टेका।
हिरदै पूरन तुमर बिबेका॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

सभी सिखों ने उम्मीद रखी हुई थी, मेरी भी टेक सभी सिखों पर थी, पर तेरे हृदय में पूर्ण ज्ञान था।

भा अवलंब भले जग तारन।
सभ सिखन जम जाल निवारन॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

अंगद जी! अब आप सारे सिखों के यमों के जाल काटने में समरथ हो गये।

तुझ समान जग अवर न लखिओ।

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

मैं बहुत प्रसन्न हूँ। सारे संसार में मुझे तेरे जैसा और कोई भी न मिला।

नीके सिखी बीरज रख्यो॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

बहुत अच्छा हुआ तुमने सिखी का बीज रख लिया।

ताउ कसौटी उतरिओ पूरा॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

कितनी कसौटियां लगाई गईं? कितने कष्ट दिये गये? इन्हें सहन करना बहुत कठिन हुआ करता है।

राम कसउटी सो सहै जो मरि जीवा होइ॥

पृष्ठ - 1366

दूसरा कोई सहन नहीं कर सकता और फिर इन कसौटियों पर तुम खरे उतरे हो।

बारहि बनी भयो सो रूरा॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 193

अब तुम शुद्ध सोना, चौबीस कैरट का जिसे कहते हैं, वह बन गये हो।

धारना - प्यारे जी, सोना बण गिआ बारां वंनी दा-2, 2
गुरसिक्ख तउ कसवटी सहि के - 2, 2
पिआरे जी, सोना बण गिआ बारां वंनी दा....2

कसौटी का एक नहीं, सारे ताव सहन किये, जब तक सेवा की।

मनु रामि कसवटी लाइआ कंचनु सोविंना॥

पृष्ठ - 448

जब गुरू नानक पातशाह के साथ मन लग गया कसौटियां सहन कीं, उस समय शुद्ध सोना बन गये।

फिर गुरू नानक पातशाह कहते हैं, ''अंगद जी! अब मांगों मुझ से क्या चाहते हो? दुनियां की कोई चीज़ ऐसी नहीं, जो मैं तुम्हें न दे सकूं।''

आप दोनों हाथ जोड़कर प्रार्थना करते हैं, ''पातशाह! कलयुग का समय है। कृपा करो, जो गुरसिख चले गये आपके द्वारा लगाई गई कसौटी पर खरे नहीं उतरे, आप कृपा करके उन्हें भी रियायती पास कर दीजिये। पातशाह! नम्बर तो उन्होंने भी लिये हुए हैं।''

गुरू नानक पातशाह कहते हैं, ''अच्छा, यह ले गुरसिख! ठीक है, वे भी सिख थे। किसी

के नम्बर कम थे तो किसी के अधिक, पर पूरे तो तुम ही रहे। तेरे कहने पर हमने सारे क्षमा कर दिये।''

उधर जो सिख रूपयों की गठड़ियां बान्ध-बान्ध कर घर ले गये थे और हीरे जवाहरातों के ढेर के ढेर, घरों को ले गये थे, जब घर में जाकर रखे और गठड़ियां खोल कर देखीं, तो कुछ भी नहीं था, वे तो मिट्टी बन गये थे। अब तो बहुत पश्चाताप करते हैं और कहते हैं कि हम तो सिखी से भी मुनकर हुए, गुरू नानक पातशाह का भी साथ छोड़ा और पल्ले भी कुछ न पड़ा। यह तो माया मोहिनी की झलक थी। वापिस आ गये। अब मिलना चाहते हैं। गुरू अंगद साहिब ने उनकी पीड़ा को अनुभव किया और कहते हैं, ''पातशाह! इन्हें भी क्षमा कर दो।''

महाराज जी कहते हैं, ''अंगद जी! आपके कहने पर हमने सभी को क्षमा कर दिया। उन सभी को क्षमा कर दिया जो भाग गये थे, उन्हें भी क्षमा कर दिया, जिन्होंने हमारी बातें की थीं, उन्हें भी क्षमा कर दिया, जिन्होंने यह कहा था कि हमारा दिमाग हिल गया है।''

इसके बाद बख्शीशें हुईं। बाबा बुड्ढा जी को कहते हैं कि आप उदास मत होओ। आप सभी का केवल एक नम्बर का फर्क रह गया। आप भी निकट तो पहुँच गये, पर ठहर गये, पैर दबा लिया, थोड़ा सा पीछे रह गया। अब आगे से ऐसा होगा कि जब गुरू तख्त पर बैठा करेगा, बैठेगा सिख ही तख्त पर और गुरू सिख के सामने झुकेगा, झुक कर फिर वह इसे तख्त पर बिठायेगा और जब तक उसके मस्तक पर टीका नहीं लगेगा, तब तक बात नहीं बना करेगी, गुरूता का टीका हमेशा आपने ही लगाना है। जब ये बख्शीशें देखीं, तो भाई भगीरथ जी, बाबा बुड्ढा जी, भाई सधारन जी, भाई दुनीचन्द तथा भाई कमलिया तथा अन्य जितने भी प्रमुख-प्रमुख सिख थे, उनके मन में भी चाव पैदा हुआ कि जिस तरह से गुरू अंगद साहिब जी रहते हैं, हम भी गुरू महाराज जी के साथ ही रहा करें। ये तो परछाईं की तरह गुरू महाराज जी के साथ लगे रहते हैं पर हम पीछे रह जाते हैं। उस दिन से आपने मन दृढ़ कर लिया कि हम भी साथ जाया करेंगे। महाराज जी ने किसी को न रोका। अमृत बेला में सभी उठे, महाराज जी स्नान करने के लिये रावी के किनारे-किनारे जा रहे हैं, पीछे-पीछे सभी सिख जा रहे हैं। पन्द्रह-बीस गुरसिख हैं, गुरू नानक पातशाह जी तथा गुरू अंगद देव जी आगे पीछे जा रहे हैं। थोड़ी दूर जाकर गुरू नानक पातशाह जी रावी के अन्दर चले गये। अचानक एक दम बड़ी तेज़ आन्धी चली। बादल बहुत तेज़ गर्ज़ने लगे। देखते ही देखते धरती पर चारों ओर से ओले ही ओले गिरने लग गये, उस समय जितने भी गुरसिख साथ आये थे, वे सभी वृक्षों के नीचे जाकर खड़े हो गये। गुरू अंगद पातशाह टकटकी लगाये गुरू नानक पातशाह की ओर ही देख रहे हैं। जब महाराज जी ने देखा कि आप ओलों में दबते जा रहे हैं, इतने अधिक ओले पड़ रहे हैं तो आप पानी में से जल्दी से जल्दी बाहर आये और बोले, ''अंगद जी! बाकी सभी वृक्षों की आड़ में चले गये, आप क्यों नहीं गये? आप यहाँ पर क्यों बैठे रहे?''

आप कहते हैं कि सच्चे पातशाह -

जगत मो किसी बिरछ नाल अरथ नही रहा।

हमारा किसी भी वस्तु, वृक्ष आदि के साथ कोई मतलब नहीं रहा।

जिस चरनो से प्रयोजन है तिस के अंग बैठा हां॥

मेरा प्रयोजन तो आपके चरण कमल हैं। मैं तो उनके सामने बैठा हूँ और मुझे किसी चीज़ की परवाह नहीं। शरीर जाता है तो चला जाये, पर मैं तेरे दर्शनों के बिना जीवित नहीं रह सकता –

धारना - तेरे दर्श बिनां न जीवां,
होर परवाह कोई ना - 2, 2
होर परवाह कोई ना - 4, 2
तेरे दर्श बिनां न जीवां, ...-2

दरसनु देखि पतंग जिउ जोती जोति समावै।
सबद सुरति लिव मिरग जिउ अनहद लिव लावै।
साधसंगति विचि मीनु होइ गुरमति सुख पावै।
चरण कवल चिति भवरु होइ सुख रैणि विहावै।
गुर उपदेस न विसरै बाबीहा धिआवै।
पीर मुरीदां पिरहड़ी दुबिधा न सुखावै॥
भाई गुरदास जी, वार 27/14

जब पतंगा ज्योति की लौ के दर्शन करता है तो ज्योति में ही समा जाता है। उसे पता नहीं होता कि वह मर जायेगा। दीपक की लौ जलती है और वह उस पर गिर कर जल जाता है –

दरसनु देखि पतंग जिउ जोती जोति समावै।
सबद सुरति लिव मिरग जिउ अनहद लिव लावै।
भाई गुरदास जी, वार 27/14

मृग घन्डेहेड़े का शब्द सुनता है, इतनी लिव लग जाती है कि उसे पता ही नहीं चलता कि मुझे शिकारी पकड़ लेगा। शिकारी की तरफ सीधा ही चला जाता है –

साधसंगति विचि मीनु होइ गुरमति सुख पावै।
भाई गुरदास जी, वार 27/14

सन्तों की संगत में आकर इतना लीन हो जाये जैसे मछली पानी में लीन हो जाती है, पानी से बाहर नहीं निकलती, ऐसा नहीं होता कि बार-बार घड़ियां देखते रहो कि कब कीर्तन समाप्त हो और मैं उठ जाऊं। कहते हैं जैसे मीन पानी में गायब हो जाती है, ऐसे ही संगत में आकर बैठो –

चरण कवल चिति भवरु होइ .....॥
भाई गुरदास जी, वार 27/14

जब चरण कमलों का ध्यान लगाया हुआ है तो ऐसे होना चाहिये जैसे भंवरा कमल के फूल पर जब बैठ जाता है, तो उठता नहीं है, इस तरह से अपनी वृत्ति को तोड़ो मत –

चरण कवल चिति भवरु होइ सुख रैणि विहावै।
गुर उपदेसु न विसरै बाबीहा धिआवै।

पीर मुरीदां पिरहड़ी दुबिधा न सुखावै॥
भाई गुरदास जी, वार 27/14

सो महाराज! सच्चे पातशाह –

जगत मो किसी बिरछ नाल अरथ नही रहा।
जिस चरनो से प्रयोजन है तिस के अंग बैठा हां॥

बाबा बुड्ढा जी ने देखा कि वास्तव में हमारे अन्दर और अंगद देव जी में फर्क है। हम तो भागकर वृक्षों की ओट में चले गये। हमारी लिव तो वैसी न रही जैसी अंगद जी की रही। वह तो एकटक, बस गुरू महाराज जी को ही देखते रहे, ओले पड़ते रहे और इन्हें पता ही न चला कि ओले पड़ रहे हैं। हर रोज़ मन में यही विचार उठता है कि इन पर ज्यादा खुशी है, वे कौन से गुण हैं इनके अन्दर, जिससे गुरू पातशाह को इन्होंने रिझा लिया।

एक दिन गुरू नानक पातशाह छोटी सी कुटिया में बिराजमान हैं। बाहर मूसलाधार वर्षा हो रही है। दीवारें कच्ची हैं। जहाँ पर शहतीर रखा हुआ है, वहाँ से पानी टपकने लगा है, जिसके फलस्वरूप दीवार नीचे को धंसने लग गई है। जिस समय गुरू अंगद देव जी एक दम दरवाज़े के सामने आये तो देखा कि शहतीर भी गिरने वाला है। एक सैकिन्ड भी समय बर्बाद न किया, तुरन्त अपना सिर शहतीर के नीचे लगा दिया। सारी रात खड़े रहे। जब अमृत बेला हुई, गुरू नानक पातशाह सावधान हुए, तो देखा कि दीवार गिरने वाली हो रही है और बाहर मूसलाधार वर्षा हो रही है। अन्य सभी सिख आ गये। श्री चन्द तथा बाबा लखमी दास जी भी आ गये।

गुरू नानक पातशाह कहते हैं कि प्यारिओ, अंगद जी कब से खड़े हैं?

वे बोले, ''महाराज! बरसात तो रात से ही हो रही है और मूसलाधार हो रही है। हमें नहीं पता कि कब से खड़े हैं?''

गुरू महाराज ने कहा, ''ऐसे करो, इन्हें शहतीर के नीचे से निकालो और दीवार बना दो। श्री चन्द जी, दीवार बनवा दो।''

श्री चन्द जी कहते हैं, ''महाराज! बादल हो रहे हैं। दीवार गीली है, गारा भी बहुत पतला पानी की तरह है, दीवार कैसे बन जायेगी? दिन निकलने दो। फिर सोच विचार कर हिसाब लगायेंगे कि कैसे बनानी है? अब रात को कैसे दीवार बनायेंगे?''

महाराज जी कहते हैं, ''कहीं गिर न जाये?''

श्री चन्द जी ने जवाब दिया, ''आपको तो वहम हो गया है, यदि गिर जायेगी तो क्या हो जायेगा? मामूली सी कोठी है, फिर बनवा लेंगे।''

महाराज जी ने लखमीदास जी की ओर संकेत करके कहा कि तुम बनवा दो।

लखमी दास कहते हैं, ''महाराज! पिता जी, आप तो बातें ही किसी और तरह की करते

हो। जिस बात के पीछे पड़ जाते हो, उसे छोड़ते ही नहीं। अब कोई दीवार बनाने का समय है? इन्होंने जो बात तुम्हें कही है, वह सच ही है। क्यों भाई गुरसिखो, तुम्हारा क्या विचार है?''

बाबा बुड्ढा जी कहते हैं, ''महाराज! ये ठीक ही कह रहे हैं। सुबह सूरज निकल आयेगा। गारा भी थोड़ा सा गाढ़ा हो जायेगा, फिर दीवार बना लेंगे।''

गुरू अंगद साहिब जी की ओर देखा, कहते हैं, ''पुरखा! क्या विचार है?''

वे बोले, ''महाराज! मेरा तो कोई विचार नहीं, जो आपकी रज़ा हो, मेरे लिये तो वही धन्य है। यह तो धर्म का काम है महाराज, उसे करने में देरी नहीं करनी चाहिये?'' इस तरह फ़रमान है –

धारना - देरी करीए ना धर्म कमाउण नूं,
पापां बारे लक्ख सोचीए - 2, 2
पिआरिओ, पापां बारे लक्ख सोचीए - 2, 2
देरी करीए ना धर्म कमाउण नूं, ...-2

नेक काम करना हो, दान करना हो, किसी तीर्थ स्थान या सत्संग में जाना हो, फिर सोचना नहीं चाहिये। पाप करना हो, बुरा कर्म करना हो, रिश्वत लेनी हो, झूठ बोलना हो तो लाख बार सोचो। धर्म का काम करते समय मत सोचो क्योंकि धर्म के लिये यदि अवसर मिला है तो फिर हाथ नहीं आयेगा –

मन की मन ही माहि रही।
ना हरि भजे न तीरथ सेवे चोटी कालि गही॥

पृष्ठ - 631

एक सेठ था, उसके चार पुत्र थे। उसने खूब पैसा कमाया। अन्त में उसने, उस धन के पांच हिस्से कर दिये और लड़कों को बुला कर कहा, ''अच्छा बेटा, तुम अपना-अपना कारोबार करो। एक हिस्सा मैंने अपना रख लिया है इसका मैंने पुण्य दान करना है। यह दान करके मैं अगले जीवन के लिये कुछ करना चाहता हूँ।''

समय बीतता चला गया। फिर सोचता है कि यदि यहाँ पर यह दान दिया तो ठीक नहीं होगा क्योंकि यहाँ पर तो खाने-पीने वाले लोग बहुत हैं। अमुक आदमी बुरा है, अमुक स्थान भी ठीक नहीं है, इस तरह से सोचता ही रहता है। अन्त में वह दिन भी आ गया, जो सबको देखना है, जिसे मौत कहते हैं। मौत ने उसे चारपाई पर गिरा दिया, अब बोला नहीं जाता, आंखे देखती हैं, जुबान बोलने से बन्द हो गई। सारा भाईचारा इकट्ठा होकर बैठा हुआ है और कह रहे हैं कि सेठ जी कोई बात बताओ। कोई गुप्त बात, दिल की कहो। आप कुछ बताइये, किसी से कुछ लेना हो, देना हो। कुछ नहीं बोलता। बस इशारा करता है। चारों लड़कों को सामने खड़ा कर दिया गया, उन्हें कहा गया कि तुम समझो कि वह क्या कहना चाहते हैं? वह बार-बार दीवार की ओर हाथ किये जा रहा है। लड़कों को पता था कि जिधर वह संकेत कर रहा है, उधर एक आला है। उसके अन्दर इसने

अपना पांचवा हिस्सा धन का रखा हुआ है। ऊपर से ईंटों से बन्द किया हुआ है कि कोई चोर न ले जाये। पहले तो यह कहा करता था कि मैं दान करता हूँ। सारी बात वे समझ गये कि उसका सारा पैसा, अभी वहीं का वहीं रखा हुआ है। बहुत भोले बन गये। भाईचारे ने पूछा, ''बेटा, यह क्या कह रहा है?''

एक बोला, ''पिता जी, ऐसे कहते हैं कि मैंने पैसा तो बहुत कमाया पर सारा पैसा इन ईटों पर लगा दिया।''

वह कानों से सुनता तो है, पर जुबान से बोल नहीं सकता, चारपाई से उठ नहीं सकता। फिर सिर हिलाया कि नहीं और हाथ फिर दीवार की ओर करने लगा। भाईचारे ने फिर कहा कि वह कुछ कहना चाहता है।

दूसरा लड़का बोला, ''इन्होंने अभी सिर हिलाया था न? वह पश्चाताप कर रहे हैं कि मैंने कुछ भी नहीं किया। बस यही सीधी-सीधी बात कह रहे हैं।''

उसकी बात ही न होने दी क्योंकि धर्म के काम में देरी कर दी। महाराज जी कहते हैं -

नह बिलंभ धरमं बिलंब पापं॥ ***पृष्ठ - 1354***

धर्म करने के लिये देर मत करो, पाप करने में सोचो -

द्रिड़ंत नामं तजंत लोभं॥ ***पृष्ठ - 1354***

नाम को दृढ़ करो, लोभ को छोड़ दो।

सरणि संतं किलबिख नासं॥ ***पृष्ठ - 1354***

सन्त की शरण में जाने से पापों का नाश हो जाता है-

प्रापतं धरम लख्यिण॥ ***पृष्ठ - 1354***

सन्तों की संगत में जाकर धर्म के लक्षण प्राप्त होते हैं -

नानक जिह सुप्रसंन माधवह॥ ***पृष्ठ - 1354***

गुरू अंगद देव जी, उसी समय दीवार बनाने लग गये। बड़ी मेहनत से आपने दीवार बनाई। जब दीवार बन गई तो गुरू नानक पातशाह कहते हैं, ''भाई अंगद! यह तो तूने टेढ़ी-मेढ़ी बना दी, इसे गिरा दे।'' आपने तुरन्त गिरा दी। फिर दोबारा बनानी शुरू कर दी। जब पूरी बन गई ऊपर तक दीवार खड़ी हो गई तो महाराज जी कहते हैं, यह बीच में से बाहर को निकली हुई है, गिरा इसे भी।''

फिर गिरा दी। तीसरी बार फिर बनानी शुरू कर दी फिर गिरवा दी। जब चौथी बार बनाई तो श्री चन्द जी कहते हैं, ''पिता जी, आप भी इसके पीछे पड़ गये हो। कोई मिस्त्री सुबह ले आयेंगे, बनवा देंगे। बेचारा सुबह का इसी काम में लगा हुआ है। पहले शहतीर के नीचे पता नहीं कितनी देर खड़ा रहा? अब दीवार ही बनाये जा रहा है। आप तो खुश होकर कह देते हैं कि गिरा दे इसे, यह तो अच्छी नहीं है? वह फिर गिरा देता है, फिर गारा आदि पीछे करता है, ईंटें हटाता है। कितना

कष्ट उठा रहा है? सुबह दिन निकलेगा, गुरसिख प्यारे आ जायेंगे, तुरन्त बनवा देंगे।'' चौथी बार जब बनाई तो महाराज जी ने कहा, ''इसे भी गिरा दे।''

दौड़कर जाकर चरण पकड़ लिये और कहते हैं, ''पातशाह, मेरे अन्दर कितनी मूर्खता है कि मैं आपका वचन समझ नहीं पा रहा। कृपा करके मुझे शक्ति प्रदान करो, जैसी दीवार आप बनवाना चाहते हैं, मैं वैसी ही बना सकूं। मैं तो अति मूर्ख हूँ, मुझ पर कृपा करो।''

महाराज जी प्रसन्न हुए और कहने लगे, ''प्यारओ! हमारा दीवार बनाने का कोई मतलब नहीं था। हमारा जो मतलब था, वह सभी की समझ में आ गया होगा?''

दिन निकल आया। माता सुलक्षणी जी को सारी बातों का पता चल गया और यह भी उन्हें पता चल गया कि गुरू नानक पातशाह ने गद्दी दे देनी है। मन में बहुत चिन्ता जाग्रत हुई। एक दम ममता जाग पड़ी, दोनों पुत्रों को साथ लेकर आ गईं।

प्रार्थना करती है, ''पातशाह! आपने सारी जिन्दगी पुत्रों की देख भाल नहीं की। उदासियों (यात्राओं) पर रहे। इन पुत्रों का लालन पालन कैसे हुआ है, यह आप जानते ही हैं, अब जब कुछ देने का मौका आया है, तो आपने इन्हे अपने अधिकार से इन्हें वंचित कर दिया।''

महाराज जी कहते हैं, ''हे भद्रे! यह तो करतार के हाथ की बात है। मेरे वश की बात नहीं है। ये उस कसौटी पर खरे नहीं उतर रहे। बता, मैं क्या करूं?''

सारे गुरसिख बैठे हुए हैं। इतनी देर में एक बिल्ली मरे हुए चूहे को लेकर धर्मशाला में घुस रही थी। गुरू महाराज जी के सामने से निकली तो सिखों ने उसे डराया, तो उसके मुँह से चूहा, वहीं सामने ही गिर गया। श्री चन्द, श्री लखमी दास जी भी तथा माता जी भी वहीं पर बैठे हैं।

महाराज जी कहते हैं, ''बेटा श्री चन्द, ज़रा इस चूहे को उठा कर बाहर फैंक दो। यहाँ पर गिरा हुआ अच्छा नहीं लगता।''

श्री चन्द बोले, ''पिता जी, मुर्दे को तो वैसे ही हाथ लगाना बुरा होता है। यदि आदमी भी मर जाये तो हाथ नहीं लगाया करते। यह तो चूहा है। इसे मैं कैसे हाथ लगाऊं?''

महाराज जी कहते हैं, ''लखमी दास बेटा, तुम ही उठा कर फैंक दो।'' वह बोले, ''पिता जी, अब मेरा हाथ जरूर लगवाना है इस मरे हुए चूहे को? ये सिख बैठे हैं, मैं इनमें से किसी को आवाज़ लगाकर बुला देता हूँ।''

उसी समय गुरू अंगद साहिब जी आ गये। महाराज जी ने कहा, ''पुरखा, यह चूहा पड़ा है।''

कहते हैं, ''अच्छा, सत वचन महाराज।''

उसी समय उठाया और उठा कर बाहर फैंक दिया। तब महाराज जी ने कहा –

मूले सुता! पिखहु मन गुनीए॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1198

मूले सुता - भाव माता सुलक्षणी जी मूले की लड़की थी, कहते हैं, देख अब मन में विचार कर -

ए निज सुत सो परसुत जनीए॥
श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1198

अब बता मैं इन्हें अपना पुत्र समझूं या पराया। तेरे पुत्र तो मेरा कहना ही नहीं मानते और चाहते हैं गुरूगद्दी। जिसका हृदय हउमै रहित हो गया हो, वह तो विनम्र हो जाता है। जो विनम्र होता है, उसी के अन्दर गुरू की ज्योति समाया करती है -

नहिं किसहूं के कर बिखै सभि करतार अधीन।
जिस पर करुना द्रिशटि ह्वै तिनहि बसतु इह लीनि॥
श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1198

जिस पर करतार की कृपा दृष्टि हो गई, वह इस चीज़ को ग्रहण करता है। इस तरह से परख पर परख होती जा रही है।

एक बार फिर परीक्षा हुई। सभी के साथ महाराज जी चले जा रहे हैं। श्री चन्द, लखमी दास जी भी साथ जा रहे हैं। माता जी भी देख रही हैं। अन्य गुरसिख भी खड़े हैं। महाराज जी के पास एक बहुत सुन्दर पत्थर का कटोरा था। जहाँ पर महाराज स्नान करते थे, उसके पास ही एक गड्ढा था, जहाँ पर गन्दा पानी इकट्ठा होता रहता था। महाराज जी ने वह कटोरा उस गन्दे पानी में फैंक दिया। एक दम बोले, ''श्री चन्द बेटा, जल्दी करो, वह कटोरा निकाल दो।''

श्री चन्द ने कहा, ''महाराज! इस गड्ढे में सारी दुनियां की जूठन आकर गिरती है। कोई इसमें कूड़ा फैंकता है, कोई थूक आदि फैंकता है। ऐसा गन्दा पानी है, बताओ मैं इसके अन्दर कैसे घुस जाऊं? मेरा शरीर गन्दा हो जायेगा। सारे वस्त्र खराब हो जायेंगे।''

महाराज जी कहते हैं, ''बेटा लखमी दास, तुम निकाल दो।''

वह बोले, ''पिता जी, आप तो बार-बार ऐसी बातें करते हो जो कभी मानी ही नहीं जा सकती। उस दिन मरे हुए चूहे की बातें कर रहे थे, अब आप कटोरे की बातें करने लग रहे हो। घर में कटोरे क्या कम पड़े हैं? कितने तो पड़े है? निकलवा देंगे, कौन सी जल्दी है? कोई चीज़ लायेंगे जिससे निकलवा देंगे। कोई कांटा वगैरा लाकर निकलवा देंगे?''

महाराज जी कहते हैं, ''भाई लहणा जी, आप ही निकाल दो।''

धड़ाम से छलांग लगाई। सारे कपड़े कीचड़ से लथ-पथ हो गये। गोता लगा कर पत्थर का कटोरा निकाल लाये। दाढ़ी तथा केश सभी मिट्टी से लथ-पथ हो गये।

कहने लगे, ''पातशाह! मैं अभी साफ करके लाता हूँ।'' फिर आप रावी की ओर चल पड़े। वहाँ पर जाकर वस्त्र धोये, कटोरा धोया, स्वंय स्नान किया और कटोरा लाकर दे दिया।

महाराज जी, माता सुलक्षणी जी से कहते हैं, ''आप देख रही हैं, क्या हो रहा है? फिर आप इनके लिये गुरू गद्दी मांगती हो?''

फिर गुरसिखों के मन में भी बार-बार विचार आता था कि भाई लहणा जी ने अभी केवल तीन साल ही सेवा की है। बाबा बुड्ढा जी के मन में भी आता था कि मैं तो बचपन से ही महाराज जी के साथ रहा हूँ। हम क्यों नहीं परवान होते? लहणा जी क्यों परवान होते जा रहे हैं।

एक बार गुरू नानक पातशाह आधी रात को श्री चन्द जी से कहते हैं कि श्री चन्द जी! सुबह नई संगत ने आना है और हमारे वस्त्र मैले हो गये हैं। आप ये वस्त्र धो लाओ।

श्री चन्द जी ने कहा, ''पिता जी! आप तो सोने भी नहीं देते। आधी रात है। आप कहते हैं कि सुबह पहनने भी हैं, यह कैसे होगा? अभी रात को धोएं और सुबह धुले हुए कपड़े पहन लें?''

उसके बाद लखमी दास जी को कहा, वे बोले, ''पिता जी! यदि अब हम किसी से धुलवा भी दें तो ये सुबह तक सूखेगें नहीं, बहुत कपड़े पड़े हैं। वह पहन लेना।''

महाराज जी कहते हैं, ''नहीं, यही पहनने हैं।''

बाबा बुड्ढा जी आदि कई गुरसिख साथ ही लेटे पड़े थे, पर कोई भी हुंकारा न भरता।

अन्त में महाराज जी कहते हैं, ''भाई अंगद! आप ही धो लाओ।''

अंगद जी ने कहा, ''लाओ सच्चे पातशाह, मैं धोकर लाता हूँ।''

बाहर गये, कपड़े धोए, सुखाये। बाहर आधी रात नहीं थी, बल्कि दोपहर हो चुकी थी। कपड़े सुखा कर, लाकर दे दिये। जिस समय महाराज जी के पास वस्त्र लाकर दिये तो महाराज जी कहते हैं, ''पुरखा, रात थी या दिन? क्या समय था?''

अंगद जी ने कहा, ''पातशाह! मुझे नहीं पता।'' इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - दिन रात दी खबर ना कोई,
चरनां विच ध्यान लगिया - 2, 2
मेरे साहिबा! चरनां विच ध्यान लगिया -2, 2
दिन रात दी खबर न कोई, ...-2

रात दिनस हम जानत नाही।
निस दिन धिआन सतिगुर मन माही॥

''पातशाह, मुझे कुछ भी पता नहीं, रात है या सूरज निकला हुआ है। मुझे यह भी नहीं पता कि तारे चमक रहे हैं। पातशाह, मैं तो जिधर भी नज़र दौड़ाता हूँ, तेरे सिवाय और कोई नज़र ही नहीं आता। आपको रात चाहिये तो रात हो जाती है, दिन चाहिये तो दिन हो जाता है। मुझे तो कुछ भी नहीं पता, पातशाह।''

बाबा बुड्ढा जी समझ गये कि हमारे सिदक (भरोसे) में और भाई लहणा जी के सिदक में काफी अन्तर है। महाराज जी ने एक बार फिर ऐसा ही टैस्ट लिया। एक दिन आप रात को जागे और कहते हैं, ''बाबा बुड्ढा जी, देखना ज़रा कितनी रात और बाकी है? मेरा ख्याल है एक पहर रात अभी बाकी है।''

बाबा जी बाहर गये। जाकर एक अंगली आगे कर ली, क्योंकि जो जमींदार लोग हैं, वे जब सुबह हल जोतते हैं तो उन्हें पता चल जाता है कि एक बिलांग (हाथ) यदि खिति चढ़ जाये तो उस समय, इतने बज रहे होते हैं। यदि तीन तारे (त्रिगंण) यहाँ पर हों तो इतने बज रहे होते हैं। इस तरह वे ठीक समय निकाल लिया करते हैं। बाबा बुड्ढा जी बाहर तारों को देखकर आ गये। कहते हैं, ''महाराज! आधी रात बाकी है।''

महाराज जी कहते हैं, ''नहीं, स्नान करने का समय हो गया है। ध्यान से फिर देख।''

फिर देख कर आये और कहते हैं, ''महाराज! आधी रात है।''

महाराज जी कहते हैं, ''फिर देख कर आ।''

तीसरी बार फिर गये और आकर कहा, ''आधी रात है, महाराज।'' महाराज जी ने कहा, ''आपको कैसे पता?''

बाबा बुड्ढा जी ने कहा, ''महाराज! हम हल चलाते हैं। हमारे पास घड़ियां तो होती नहीं हैं, हम तो तारों को देखकर हिसाब किताब लगाया करते हैं। अब जो कार्तिक का महीना चल रहा है, इस समय जो तीन तारों का समूह (त्रिगंण) है, यदि अमुक स्थान पर हो तो इतने बज रहे होते हैं या आधी रात होती है।''

महाराज जी ने कहा, ''अच्छा! भाई भगीरथ जी, आप देखो।''

तीन बार देख कर आये, कहते हैं, ''महाराज! आधी रात ही है। यह ठीक ही कह रहे हैं।''

फिर महाराज जी ने कहा, ''अंगद जी! आप देखो।''

आप बाहर आये। देखा फिर वापिस लौट आये।

कहते हैं, ''पातशाह! ऐसे लगता है जैसे आधी रात हो।''

महाराज जी ने कहा, ''नहीं, ध्यान से देख कर आ। लगता है, ऐसा मत कह।''

बाहर चले गये। वापिस आ गये। जाकर देखना तो क्या था? देखा ही नहीं, वैसे ही वापिस आ गये।

महाराज जी कहते हैं, ''कितनी रात और है?''

गुरू अंगद जी ने कहा, ''पातशाह!

जितनी निसा बताई राउर।
तितनी बिती न मैं लखि बाउर॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1202

महाराज! जितनी रात आपने बिता दी, वह बीत गई, जितनी बाकी रखनी थी, वह रह गई।''

अब जितनी राखी सो रही।

सरब काल को करता तुही॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1202

काल को बनाने वाले भी आप ही हैं। जितनी रात आप रखना चाहते हैं, उतनी ही बाकी रहती है -

धारना - तूं हैं मालक, समां तेरी खेड है,
नहीओं तेरी सार जाणदा - 2, 2
मेरे साहिबा, नहीओं तेरी सार जाणदा - 2, 2
तूं हैं मालक, समां तेरी खेड है, ...-2

तेरी कुदरत को मैं नहीं समझ सकता -

इउं मन गुनि कै बैन अलाए॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1202

आप तो करोड़ों, ब्रह्मण्डों के मालिक पार-ब्रह्म परमेश्वर हैं, ऐसा समझ कर, यहाँ पर हम क्या बता सकते हैं कि कितनी रात बीत गई है और कितनी बाकी है?

प्रभु मम नैन न हुते अलसाए॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1202

कहने लगे, ''पातशाह! जब मैं पहली बार गया था। तब मैं सोया हुआ था। मुझे आलस छाई हुई थी।''

भूल कह्यो मैं आधी राती।
जाम एक ही अबि सुध जाती॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1202

आपने फ़रमान किया तो ताकतवर हो गया, पातशाह! अब ताकतवर भी हो गया। पहर रात ही हो गई और मैंने पहले गलती से कह दिया था -

अब जितनी राखी सो रही।
सरब काल को करता तुही॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1202

जितनी आपने बिता दी, उतनी बीत गई। जितनी रखना चाहते हो, रख ली -

भई अवग्या छिमा करीजै।
अउगणहार सदा बखशीजै॥

श्री गुर नानक प्रकाश, पृष्ठ - 1202

पातशाह! मुझे क्षमा करें। मैं गलत कह बैठा।

बाबा बुड्ढा जी, भाई भगीरथ, भाई साधारन जी, भाई दुनी चन्द जी, जितने भी गुरू घर में रहते थे, सभी को पता चल गया, हमने तो अपने आप पर केवल काल ज्ञान ही रखा है। यह बात तो हमारे मन में आई ही नहीं। समरथ गुरू नानक पातशाह को हम भूल गये। उन्हें भूल कर हम तो अपना ही ज्ञान देने लग गये कि आधी रात है महाराज! अमुक तारा अमुक स्थान पर है, इसलिये

अब इतने बजे हैं।

इस प्रकार आप गुरू अंगद देव जी महाराज पर बख्शीश पर बख्शीश किये जा रहे हैं, साथ ही साथ भेद भी खुल रहा है। सिखों के मनों से रंज भी निकल रहा है। स्वाभाविक ही थोड़ी-थोड़ी ईर्ष्या पैदा होनी शुरू हो गई कि इन पर तो महाराज जी बहुत अधिक कृपा करते हैं और बाकी भी सिख हैं, काफी सारी आयु यहीं पर रह कर बिताई है। बड़ी-बड़ी कुर्बानियां की हैं, पर पता नहीं हमसे कौन-कौन सी गलतियां हुई हैं। महाराज जी ज्यों-ज्यों उनकी परिक्षाएं लेते हैं, त्यों-त्यों उनके हृदयों में ज्ञान जाग्रत होता चला जा रहा है कि हमारे अन्दर यह कमी थी, हमारे अन्दर अमुक दोष था आदि-आदि।

एक दिन गुरू नानक पातशाह ने रावी के किनारे पर जाकर वस्त्र उतार दिये। बाकी सिख भी साथ हैं और गुरू अंगद साहिब जी को वस्त्र सम्भाल दिये और आप पानी में चले गये। इधर आप गुरू साहिब के स्वरूप में इतने लीन हो गये कि यदि नेत्र खोलते हैं तो भी गुरू नानक, बन्द करते हैं तो भी गुरू नानक साहिब नज़र आते हैं। बाकी के हर प्रकार के फुरने खत्म हो गये। महाराज जी बाहर निकले और आवाज़ें लगाईं, ''पुरखा, भाई अंगद।''

आप बोले नहीं। एक दम मौन हैं। एकटक समाधि में लीन बैठे हैं। महाराज जी ने वस्त्र अपने आप उठा कर पहन लिये। कपड़े पहनने के पश्चात, महाराज जी सामने खड़े होकर, जिस स्वरूप का ध्यान धरा हुआ था, वह स्वरूप अन्दर से खींच लिया। उस स्वरूप के बाहर खींचते ही आप एक दम सटपटाये, नेत्र खोले और चरणों में गिर पड़े और कहते हैं, ''पातशाह! मुझे पता नहीं चला, बहुत बड़ी अवज्ञा हुई। कब से खड़े हो?''

महाराज जी कहते हैं, ''पुरखा! हम तुझ पर अति प्रसन्न हैं। तेरा और मेरा अब एक रूप हो गया। अब मेरे और तेरे रूप में किसी को भ्रम नहीं होना चाहिये। पुरखा-

जो तुझे मानेगा, उह मुझे मानेगा।
तउ कउ सेवेगा, सो मो कउ सेवेगा॥

'तू' 'मैं' और 'मैं' 'तू' -

तुम हम कउ भिंन जब जानेगा।
सो गुरू विछरिआ रहेगा।
जे कउ ह्वै मेरा अनसारी॥

यदि कोई अनुगामी है -

नमो करे पद धारी।
मम सरूप को जैसा जानै।
तिसी प्रकार इसै मन मानै॥

सभी को सम्बोधन करते हुए महाराज जी कह रहे हैं कि भाई! जिस तरह से आप मुझे मानते हो, उसी तरह से इनकी मान्यता करो क्योंकि यह मेरा ही रूप है, मेरे अन्दर और इनके अन्दर कोई अन्तर नहीं है -

धारना - बणा लिआ आपणा रूप,
सतिगुर नानक ने गुरू अंगद नूं - 2, 2
गुरू नानक ने गुरू अंगद नूं - 4, 2
बणा लिआ आपणा रूप, ...-2

गुरु अंगदु गुरु अंगु ते
अंम्रित बिरखु अंम्रित फल फलिआ॥
भाई गुरदास जी, वार 24/8

अमृत का फल लग गया। गुरू नानक साहिब के अंग से गुरू अंगद हो गये।

जोती जोति जगाईअनु
दीवे ते जिउ दीवा बलिआ॥
भाई गुरदास जी, वार 24/8

दो दीपक पड़े हैं। उनमें बत्ती भी है, तेल भी है। जब एक जलता हुआ दीपक उसके साथ लग जाये, तो वैसी ही ज्योति दूसरे दीपक में जल उठती है -

जोती जोति जगाईअनु दीवे ते जिउ दीवा बलिआ॥
हीरै हीरा बेधिआ छलु करि अछुली अछलु छलिआ।
कोई बुझि न हंघई पाणी अंदरि पाणी रलिआ॥
भाई गुरदास जी, वार 24/8

जैसे पानी में पानी मिल जाता है, इसी तरह गुरू अंगद और गुरू नानक पातशाह घुल मिल कर एक हो गये -

सचा सचु सुहावड़ा सचु अंदरि सचु सचहु ढलिआ॥
भाई गुरदास जी, वार 24/8

सच सच को मिल गया।

गुरू नानक पातशाह, बाबा बुड्ढा जी से कहने लगे, ''बुड्ढा जी! जाओ नारियल लेकर आओ, पाँच पैसे भी लाओ और तिलक लगाने का सामान भी लाओ। जल्दी वापिस आना और आस-पास जितने भी गुरसिख खड़े या बैठे हैं, उन्हें भी बुला लाओ।''

उसी समय, सभी आकर खड़े हो गये। गुरू अंगद साहिब भी बीच में खड़े हैं, किसी को नहीं पता कि क्या करने जा रहे हैं? बाबा श्री चन्द जी तथा लखमी दास भी खड़े हैं। उस समय गुरू पातशाह कहते हैं, ''पुरखा! मेरे पास आओ। जहाँ मैं बैठा करता हूँ, यहाँ पर अब तुम बैठो।''

गुरू अंगद जी बोले, ''सच्चे पातशाह! मैं यहाँ बैठूं?''

महाराज जी कहते हैं, ''हाँ, हमारा हुक्म है, तुम यहाँ बैठो''

इस प्रकार गद्दी पर बिठा दिया, महाराज जी ने परिक्रमा की। इसके पश्चात पाँच पैसे तथा नारियल सामने रख कर शीश नवांया।

आप घबरा गये, कहते हैं, ''पातशाह! आप मुझे शीश झुका रहे हो? यह शरीर.....।''

महाराज जी कहते हैं, ''पुरखा! बोलना मत। यदि बोलेगा तो वही हो जायेगा। अब कोई बात नहीं बोलना, चुप रहना है। अकाल पुरुष का हुक्म ऐसा ही था। उसकी रज़ा मान ले तू।''

दृष्टि खुल गई। क्या देखते हैं? सारी रद्धियां-सिद्धियां, ब्रह्मज्ञान के भण्डारे, कुल ब्रह्मण्डों की मालिकी, सच्चा तख्त हवाले कर दिया। यहाँ का तख्त तथा सच्चा तखत, सारी दरगाहों में, सारी सृष्टियों में, दुहाई मच गई। उस समय बड़े-बड़े अवतार, सिद्ध नाथ, सारे हाथ जोड़ कर हाज़िर हो गये। इस तरह पढ़ लो -

धारना - सिध नाथ ते अवतार सारे आ के,
हत्थ जोड़ खड़े हो गए - 2, 2
पिआरिओ, हत्थ जोड़ खड़े हो गए - 2, 2
सिध नाथ ते अवतार सारे आ के, ...-2

सचखण्ड का तख्त नज़र आया, जितना आसमान था, स्वर्ग लोकों के देवते, सिद्ध नाथ, परवान रूहें, सभी फूलों की वर्षा कर रहे हैं। गुरू नानक पातशाह के साथ धन्य-धन्य हो रही है।

गोरख नाथ प्रकट हुआ कहता है, ''नानक जी! मैं जानता था कि आपको कोई पुरुष मिलेगा। उसके सामने तुम झुकोगे और हम भी इसके सामने झुकते हैं।''

निहचलु सचा तखतु है अबिचल राज न हलै हलिआ।
सच सबदु गुरि सउपिआ सच टकसालहु सिका चलिआ।
सिध नाथ अवतार सभ हथ जोड़ि कै होए खलिआ।
सचा हुकमु सु अटलु न टलिआ॥
भाई गुरदास जी, वार 24/8

सो -

जोती जोति जगाईअनु दीवे ते जिउ दीवा बलिआ॥
भाई गुरदास जी, वार 24/8

ज्योति, ज्योति में ऐसे समा गई -

जोत जोत दी संध, शमा शमा दा मेल जिउ।
मिले गंध नूं गंध, आतमहु आतम तिउ मिले।
भाई वीर सिंघ जी, राणा सूरत सिंघ महाकावि

जैसे खुशबू में खुशबू मिल जाती है, ज्योति से ज्योति मिल जाती है, आत्मा से आत्मा मिल कर परम आत्मा हो जाती है।

जोति समाणी जोति माहि आपु आपै सेती मिकिओनु॥ *पृष्ठ - 967*

गुरू ग्रन्थ साहिब जी के अन्दर आता है। सो गुरू नानक पातशाह कहीं भी नहीं गये। इसके अन्दर यही आश्चर्यजनक खेल है। वे गये नहीं, उन्होंने अपना रूप बदल लिया। उधर भी नज़र आते हैं, इधर भी नज़र आते हैं। जैसे दो दीपक नज़र आते हैं, है एक ही।

गुरू दसवें पातशाह जी ने कहा कि वे लोग भटके हुए हैं, जो कहते हैं कि गुरू नानक

साहिब चले गये। ऐसा नहीं है। गुरू नानक साहिब ने अपनी ज्योति टिका कर, आप ही गुरू अंगद साहिब के शरीर में, अंगद नाम रखवा दिया।

धारना - जोती जोत मिलाइके,
सतिगुर नानक रूप वटाइआ - 2, 2
सतिगुर नानक रूप वटाइआ - 4, 2
जोती जोत मिलाइके, ...-2

मारिआ सिका जगति विचि नानक निरमल पंथ चलाइआ।
थापिआ लहिणा जीवदे गुरिआई सिरि छत्रु फिराइआ।
जोती जोति मिलाइकै सतिगुर नानकि रूप वटाइआ।
लखि न कोई सकई आचरजे आचरजु दिखाइआ॥
भाई गुरदास जी, वार 1/45

भाई गुरदास जी ने यहाँ पर बड़े कमाल की बात लिखी है कि गुरू नानक जी भी अचरज थे, पूरे थे, गुरू अंगद जी भी पूरे थे, पर सिख का नाटक करने के लिये उन पर इतनी देर तक पर्दा डाले रखा।

काइआ पलटि सरूपु बणाइआ॥
भाई गुरदास जी, वार 1/45
लहणे दी फेराईऐ नानक दोही खटीऐ॥ पृष्ठ - 966

सारे खण्डों, ब्रह्मण्डों में दोहाई मच गई कि अब दोहाई लहणा जी की है, गुरू अंगद जी की दोहाई है। उनका नाम लेने पर यमदूत छोड़ देंगे।

जोति ओहा जुगति साइ सह काइआ फेरि पलटीऐ।
झूलै सु तखत निरंजनी मलि तखतु बैठा गुर हटीऐ॥
पृष्ठ - 966

उस समय गुरू नानक पातशाह सभी को सम्बोधन करके इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - मेरा रूप अंगद जी जाणो,
छड्डु के भुलेखिआं नूं - 2, 2
पिआरिओ, छड्डु के भुलेखिआं नूं - 2, 2
मेरा रूप अंगद जी जाणो, ... -2

अंगहु अंगु उपाइओनु गंगहु जाणु तरंगु उठाइआ।
गहिर गंभीरु गहीरु गुणु गुरमुखि गुरु गोबिंदु सदाइआ।
दुख सुख दाता देणिहारु दुखु सुखु समसरि लेपु न लाइआ।
गुर चेला चेला गुरू गुरु चेले परचा परचाइआ।
बिरखहु फलु फल ते बिरखु पिउ पुतहु पुतु पिउ पतीआइआ।
पारब्रहमु पूरनु ब्रहमु सबदु सुरति लिव अलख लखाइआ।
बाबाणे गुर अंगदु आइआ॥

भाई गुरदास जी, वार 24/5

कहते हैं, गुरू नानक पातशाह अब गुरू अंगद देव जी के शरीर में आ गये। इस तरह से गुरू महाराज जी ने -

जोति रूपि हरि आपि गुरू नानकु कहायउ।
ताते अंगदु भयउ तत सिउ ततु मिलायउ।

पृष्ठ - 1408

सतिगुरि नानकि भगति करी
इक मनि तनु मनु धनु गोबिंद दीअउ।
अंगदि अनंत मूरति निज धारी अगम ग्यानि रसि रस्यउ हीअउ।

पृष्ठ - 1405

नानकु काइआ पलटु करि मलि तखतु बैठा सै डाली॥

पृष्ठ - 742

काया को पलट दिया।

महाराज जी कहते हैं, ''प्रेमियो! अब यह हमारा शरीर तो जायेगा पर हम नहीं जायेंगे। हमने इस शरीर में अपनी ज्योति टिका दी।''

अब समय इजाज़त नहीं देता। इससे आगे की विचार यदि महाराज जी ने चाहा तो फिर होगी। अब सभी प्रेमी गुर सतोतर पढो।

- आन्नद साहिब -
- गुर सतोतर -
- अरदास -

14

शान.....।

सतिनाम श्री वाहिगुरू,

धंन श्री गुरू नानक देव जी महाराज!

डंडउति बंदन अनिक बार सरब कला समरथ।

डोलन ते राखहु प्रभू नानक दे करि हथ॥

पृष्ठ - 256

फिरत फिरत प्रभ आइआ परिआ तउ सरनाइ।

नानक की प्रभ बेनती अपनी भगती लाइ॥ पृष्ठ-289

धारना - ब्रहमा बिशन ते पैगंबर पीर औलीए,

तेरा जस गाउंदे मालका - 2, 2 मेरे साहिबा, तेरा जस गाउंदे मालका - 2,

2ब्रहमा बिशन ते पैगंबर पीर औलीए, ...-2

तुधु धिआइन्हि बेद कतेबा सणु खड़े।

गणती गणी न जाइ तेरै दरि पड़े।

ब्रहमे तुधु धिआइन्हि इंद्र इंद्रासणा।

संकर बिसन अवतार हरि जसु मुखि भणा।

पीर पिकाबर सेख मसाइक अउलीए।

ओति पोति निरंकार घटि घटि मउलीऐ।

कूड़हु करे विणासु धरमे तगीऐ।

जितु जितु लाइहि आपि तितु तितु लगीऐ॥

पृष्ठ - 518

साध संगत जी! गर्ज़ कर बोलो सतनाम श्री वाहिगुरू।

कारोबार संकोचते हुए आप गुरू दरबार में पहुँचे हो। हर बार प्रार्थना की जाती है कि कलयुग में परमेश्वर की अपार कृपा हो तो सत्संग प्राप्त हुआ करता है। आपको सत्संग करते हुए

काफी समय बीत गया है, बहुत से प्रेमी तो कई वर्षों से सत्संग करते आ रहे हैं। बन्दगी भी कर रहे हैं, नाम भी जपते हैं, पाठ भी करते आ रहे हैं, धीरे-धीरे कलयुग के महा भयानक भवजल से पार निकलने का प्रयास कर रहे हैं। पीछे हमने गुरू अंगद साहिब महाराज जी के रूप में एक गुरसिख जीवन पर विचार किया था।

पहला प्रसंग जो शुरू हुआ, वह 6 मई को शुरू हुआ था और आज तक अनेक फिल्में बन चुकी हैं। इनमें बड़े विस्तार के साथ विचार किया गया है कि एक सिख ने कोई बहुत अधिक समय तक नहीं, सिर्फ तीन साढ़े तीन साल सेवा की थी, चार पाँच साल के पश्चात आपका स्थान पूर्ण गुरसिखों में पहले नम्बर पर आ गया। यह विचार आप सभी ने सुनी।

पिछले दीवान में विचार की गई थी कि गुरू नानक पातशाह इतने प्रसन्न हुए कि परीक्षा में पहले नम्बर पर आने वाले भाई लहणा जी को अपना ही रूप बना लिया। एक गुरू नानक दो शरीरों में है। एक गुरू नानक भाई लहणा जी के शरीर में है। ऐसा सभी ने देखा। सभी हैरान हैं कि चेले गुरू तो बनते आए हैं, पर जिस दिन गुरू शरीर छोड़ता था, क्रिया कर्म पूरा हो जाता था, उसके बाद सभी इकट्ठे होते थे, फिर सियाने लोग गवाही देते कि अमुक चेले को गुरू गद्दी दी जाये। फिर उसके अन्दर ज्योति प्रवेश करती थी, पर ऐसा कभी नहीं देखा था कि गुरू भी हो तथा साथ एक सिख भी गुरू के दर्ज़े तक पहुँच कर, गुरू हो जाये, क्योंकि गुरू ज्योति एक होती है, इसे बांटा नहीं जाता। एक ही हुआ करती है गुरू की दो ज्योतियां नहीं हुआ करतीं और यह बात किसी की समझ में नहीं आ रही। बड़े-बड़े गुरसिखों, अन्य साधु सन्तों महापुरुषों तथा गोरख नाथ जैसे सिद्धों को भी यह समझ नहीं आ रहा कि गुरू नानक साहिब ने यह क्या करामात दिखा दी। स्वंय गुरू हैं और साथ ही साथ एक सिख को तख्त पर बिठा कर, पांच पैसे तथा नारियल आगे रख कर सिर झुका दिया। यह बात सारी दुनियां के लिये ही बड़ी अजीब थी क्योंकि इससे पहले कभी ऐसा हुआ ही नहीं था। जब गुरू नानक साहिब ने कहा कि अब मैं और तुम एक हो गये और गुरू नानक साहिब ने जब उनके चरणों में मस्तक नंवाया तो वह सिख, जो उनके चरणों की धूल बना हुआ था, जिसके अन्दर अंश मात्र भी हउमै नहीं थी। उसने जब देखा कि गुरू नानक मेरे चरणों पर झुक गये और मुझे तख्त पर बिठा दिया, उस समय आपके मुख से कुछ वचन निकले बताये जाते हैं और आपने फ़रमान किया कि -

तुम करतार सरब सिरताजा।

परम प्रमेशुर श्री महाराजा।

जिस तन को तुम नै सिर न्यायो।

उचित बडे दुख, मैं लखि पायो॥

श्री गुर नानक प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 1205

यह तन मेरा....., अभी इतनी सी बात ही कही थी। कहना क्या था कि यह कुष्टी हो जाये, जिसे गुरू नानक पातशाह ने शीश नवां दिया। उसी समय गुरू नानक पातशाह ने मुँह के सामने हाथ रख दिया और कहा कि बस पुरुखा! बस!! आगे कुछ मत बोलना और कुछ न कहना। जो

भी तेरे मुख से बात निकलेगी वह तुरन्त पूरी हो जायेगी। यदि तू इस समय यह बात कह दे कि सारा संसार खत्म हो जाये तो अभी हो जायेगा। अब बिल्कुल भी यह बात नहीं कहना।

जो उचरहु सो होवै साची।

पुन अस करहु न गिरा उबाची॥

श्री गुर नानक प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 1205

ऐसी बात अब मुँह से बिल्कुल मत निकालना।

आइसु मंनहु अस मत मेरो॥

श्री गुर नानक प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 1205

मेरा हुक्म मान, मेरी मर्ज़ी ऐसा करने की थी -

भा सभि को गुर ह्वै जग चेरो॥

श्री गुर नानक प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 1205

अब तुम एक-दो-चार सिखों के गुरू नहीं हो बल्कि सारे ब्रह्मण्डों, आकाशों जहाँ तक भी सृष्टि है, तुम सबके गुरू हो क्योंकि गुरू परमेश्वर एक हुआ करता है, दो नहीं हुआ करते।

गुरू नानक पातशाह जिस समय बेई नदी में गोता मार कर गये तो अकाल पुरुष ने गुरू नानक साहिब को एक वचन कहा था, जो साक्षीकारों ने इस प्रकार लिखा है, ''हे नानक, मैं पारब्रह्म परमेश्वर, मेरा कोई अन्त नहीं पा सकता। मैं अगम अगोचर हूँ, मुझे कोई समझ नहीं सकता कोई देवता भी नहीं देख सकता -

ओहु वेखै ओना नदरि न आवै बहुता एहु विडाणु॥

पृष्ठ - 6

पर तुम गुरू परमेश्वर हो, तुझ में और मुझ में यदि कोई भेद समझेगा, उसका कल्याण नहीं होगा। जो इस बात को सच मानेगा, मेरी दरगाह में आयेगा।''

सो वाहिगुरू जी एक और गुरू परमेश्वर भी, अरबों, खरबों, ब्रह्मण्डों में एक। जिस समय बगदाद में पीर ने कहा कि सात आकाश और सात पाताल हैं तो गुरू नानक साहिब ने कहा कि जिसने जितना देखा होता है, वह उतनी ही बात बता सकता है। जब पीर न माना, तो गुरू नानक साहिब, उसके लड़के को साथ लेकर चलते हैं तो वह देखता है कि हर ब्रह्मण्ड में, हर धरती पर जहाँ भी आबादी है, वहाँ पर गुरू नानक पातशाह के सिख पहले ही विद्यमान हैं और ऐसा कौतुक हुआ कि जगह-जगह दीवान सजे हुए हैं, हरि यश हो रहा है और गुरू नानक पातशाह ही तख्त पर बैठे हैं। यह देख कर वह दंग रह गया।

एक शीशा हो, उसके करोड़ों टुकड़े कर दो और अन्धेरे में एक बहुत तेज़ प्रकाश वाला बल्ब जला दो। तो आप देखोगे कि सभी टुकड़ों में वही एक बल्ब दिखाई देगा। यह एक ऐसी क्रिया

है जो हमारी समझ में नहीं आती क्योंकि सतगुरू की जो क्रिया है, वह दिमाग से परे की बात हुआ करती है। इस तरह का फ़रमान है –

सतिगुर पुरखु अगंमु है निरवैरु निराला।

जाणहु धरती धरम की सची धरमसाला।

जेहा बीजै सो लुणै फलु करम सम्हाला।

जिउ करि निरमलु आरसी जगु वेखणि वाला।

जेहा मुहु करि भालीऐ तेहो वेखाला।

सेवकु दरगह सुरखरू वेमुखु मुहु काला॥

भाई गुरदास जी, वार 34/1

गुरू की क्रिया अगम होती है। आम मनुष्य की समझ से बहुत दूर और ऊँची हुआ करती है। पीर का लड़का हर ब्रह्मण्ड में, गुरू नानक पातशाह को देखकर हैरान हो गया। कहता है, ''पातशाह! हर स्थान पर आप ही हो? कहाँ जाकर इसका अन्त होगा?'' महाराज जी ने कहा, ''मेरे साथ चलता चल।''

वह बोला, ''नहीं महाराज! यह सिलसिला तो खत्म ही नहीं होने को नज़र आ रहा।''

महाराज जी कहते हैं, ''तेरे पिता ने मानना नहीं, इसलिये कड़ाही साथ ले लो।''

फिर उसने एक कच-कौल ले लिया। जहाँ-जहाँ जाते हैं, वहाँ से अलग-अलग प्रसाद उसमें डलवाते चले गये। जब वह थक गया तो पीर के सामने लाकर वह प्रसाद रख दिया।

लड़का कहता है, ''अब्बा जान! यह तो अल्ला ताला है। अल्लाह-तालाह।'' उसने भी नानक पातशाह को नमस्कार कर दी।

गुरू नानक पातशाह उसके पास नौ महीने रहते हैं। उसका नाम बहलोल था। जितना प्यार आप अंगद साहिब से किया करते थे, उतना ही बहलोल से था। जहाँ पर महाराज जी बैठा करते थे, वहाँ पर एक पत्थर लगा हुआ है, उस पर यह लिखा हुआ है, ''बहलोल! तुझे ढूंढता-ढूंढता मैं यहाँ तक पहुँचा हूँ। काश! तुम हिन्दू होते और मेरे साथ ही रहते। उसे रोते हुए को विलाप करते हुए को आप छोड़ आये।'' कहते हैं 36 साल वह उस चबूतरे पर दोनों बाजू ऊँची करके दीवार की तरफ मुँह करके बैठा रहा। कहता है, ''मैंने एक मर्द-ए-मज़ाहद के दर्शन किये हैं, अल्लाह ताला के और अब मैं किसी और के दर्शन नहीं करना चाहता।''

इस तरह से अकाल पुरुष कहते हैं, ''हे नानक! मैं पारब्रह्म परमेश्वर, तू गुरु परमेश्वर।'' सो आज गुरु परमेश्वर दो रूप धारण किये हुए हैं – एक लहणा जी के अन्दर और एक गुरू नानक पातशाह के अन्दर। आप फ़रमान करते हैं कि –

जो उचरहु सो होवै साची।

पुन अस करहु न गिरा उबाची॥

श्री गुर नानक प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 1205

अब दोबारा ऐसी बात मत कहना जिससे इस शरीर को बहुत दुख उठाना पड़े। जो कुछ कह दोगे, वह उसी समय हो जायेगा -

आइसु मंनहु अस मत मेरो।

भा सभि को गुर ह्वै जग चेरो॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 194

तुम अब सारे संसारों, सारे ब्रह्मण्डों के गुरू बन गये हो-

अंगद नाम आज ते होही।

निज अंगन ते कीनो तोही॥

श्री गुर नानक प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 1205

तुझे नज़र आता है कि यह मेरा शरीर लहणे का है। तेरा शरीर बदल गया। दो खरब पन्द्रह अरब सैल सारे ही शुद्ध हो गये, अब यह वह पहले वाला शरीर नहीं रहा। यह मेरे निज अंगों से हुआ है। ऐसा समझ लो कि मैंने ही यह शरीर धारण किया है।

सिमरन सतिनाम प्रगटावो।

जहिं तहिं सिखी रीति चलावो॥

श्री गुर नानक प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 1205

चुपचाप नहीं बैठना, मौन धारण नहीं करना। सतनाम, प्रभु का नाम संसार में जाकर चलाओ क्योंकि नाम के बिना सारा संसार दुखों के गर्त में गिरता जा रहा है। इस बात को जब तक संसार ने नहीं समझना, यह दुखी होता रहेगा, सन्त आते जाते रहेंगे, बार-बार समझाते रहेंगे। ज़ोर-ज़ोर से आवाज़ें लगा-लगा कर कहेंगे -

जउ सुख कउ चाहै सदा सरनि राम की लेह॥

पृष्ठ - 1427

यदि तू सदा सुखी रहना चाहता है तो प्रभु का नाम जप ले। और कोई भी वस्तु तुझे सुख नहीं दे सकती, न धन सुख दे सकता है, न जायदादें सुख दे सकती हैं, न राजसी शक्तियां सुख दे सकती हैं, न बड़प्पन सुख दे सकते हैं। यदि सुख चाहता हैं तो सतनाम का जाप कर ले भाई-

ऐसा जगु देखिआ जूआरी।

सभि सुख मागै नामु बिसारी॥ *पृष्ठ - 222*

नाम को भूलकर सुख चाहता है। उस समय आपके मन में आया कि अब हम भेष बदल

लें -

पलटउ वेख भले उर ठानी॥

मन में ठान लिया कि अब हम अपना वेश बदल लें।

गुरू नानक ठान लई मन।

अंगद देह महि जाउ समाइ॥

गुरू नानक ने अब यह पक्का मन में ठान लिया कि इस शरीर को छोड़कर, मैं अंगद जी के शरीर में गुरू ज्योति का प्रकाश कर दूँ। इसके अन्दर मैं समा जाऊँ। ऐसा ख्याल करते ही जितनी भी करोड़ों शक्तियां थीं, वे सभी गुरू अंगद जी के शरीर में प्रवेश करवा दीं -

बहुरो शकती अस गुर दीनी।

त्रै लोकी सभ कीन अधीनी॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 194

सारे आकाश, सारे पाताल, तीनों लोक matter world सारे विश्व के भौतिक पदार्थ, Supermatter world अति सूक्ष्म पदार्थों का सारा संसार anti matter world विरोधी मादा संसार, ये सभी गुरू अंगद देव जी के अधीन कर दिये।

कहते हैं, ''पुरखा! देख नज़र दौड़ाकर। करोड़ों शक्तियां हाथ जोड़े खड़ी हैं। इनका प्रयोग नहीं करना, इनसे काम लेना है। संसार की मर्यादा में चलना है। सभी शक्तियों के मालिक होते हुए भी एक साधारण मनुष्य की तरह गुज़ारा करना है। सारी शक्तियां तुम्हारे अधीन हैं। सारा ज्ञान, विश्व के सभी भण्डार, रिद्धियां-सिद्धियां, सभी कुछ तेरे अधीन कर दीं।''

निज सम कर

अस बचन बखाना।

तुम अब गमनहु

अपन सथाना। *श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ,* *पृष्ठ - 195*

इस प्रकार कहते हैं - सांसारिक हिसाब-किताब के अनुसार श्री चन्द तथा लखमी दास तथा अन्य भी कई हो सकते हैं, जो इस बात को अच्छा नही समझेंगे, जिन्हें यह बात अच्छी न लगी हो। वे तेरा विरोध करेंगे, तुम्हारे साथ लड़ाई-झगड़ा भी करेंगे क्योंकि उन्हें इस रहस्य का पता ही नहीं है। वे ये नहीं जान जायेंगे कि गुरू नानक ने ज्योति बदल दी और स्वरूप बदल दिया। इस तरह पढ़ लो -

धारना - रूप गुरां ने बदलिआ दूजा,

जोत विच जोत रल गई - 2, 2

मेरे पिआरे, जोत विच जोत रल गई - 2, 2

रूप गुरां ने बदलिआ दूजा, ... -2

थापिआ लहिणा जीवदे

गुरिआई सिरि छत्रु फिराइआ॥

भाई गुरदास जी, वार 1/45

अपने समान बना लिया। सभी कुछ अपना दे दिया और जीवित रहते-रहते उन्हें गुरू गद्दी पर बिठा दिया।

जोती जोति मिलाइकै सतिगुर नानकि रूपु वटाइआ॥

भाई गुरदास जी, वार 1/45

गुरू नानक साहिब ने दूसरा रूप धारण कर लिया और सारे जगत में हैरानी फैल गई कि गुरू के शरीर छोड़ने के पश्चात समाज इकट्ठा होता है, दस्तारें बान्धी जाती हैं फिर कहा जाता है कि इसे गुरू स्थापित किया गया है। पर गुरू नानक पातशाह ने तो नया ही ढंग चला दिया। कोई कहता है मेरे सामने उन्हें स्थापित किया, कोई कहता है, उनकी इच्छा थी। पर यह बात समझ में नहीं आ रही कि गुरू नानक भी हैं और गुरू अंगद जी को भी कह दिया कि वह उनके समान है और सभी उनके चरणों में झुका दिये। फ़रमान है कि -

जग महिं उलटी

गंग वहाई।

सिख को कर

गुर की गुरिआई॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 194

उलटी गंगा बहा दी। अपने सिख को गुरुआई दे दी -

इस प्रकार

तिह तखत बठायो।

बहुरो सभ सों

बचन अलायो।

दे को मेरे ह्वै अनसारी।

नमो करै इन

पग सिर धारी॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 194

इस संगत में यदि कोई मुझे मानने वाला है तो वह उठ कर आए और इनके चरणों में नमस्कार करे -

मम सरूप को जैसे जानै।

तिसी प्रकार इसै मन मानैं॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 194

उस समय संगत खड़ी हो गई। पंक्तियां लग गईं। हज़ारों की संख्या में, संगत में हिन्दू मुसलमान सभी थे। गुरू अंगद साहिब जी महाराज तख्त पर बैठे हैं, सभी उनके चरणों में शीश नंवाते हैं।

महाराज जी ने कहा, ''कोई रह तो नहीं गया।'' कहते हैं, श्री चन्द दिखाई नहीं दिया और न ही लखमी दास दिखाई दे रहा है।

संगत ने कहा, ''महाराज! वे नहीं आये।''

महाराज जी ने कहा, ''जाओ उन्हें लेकर आओ।''

उन्हें भी सन्देशा भेजा गया कि गुरू गद्दी के वारिस गुरू अंगद जी बना दिये गये हैं। पातशाह का हुक्म है कि सभी इन्हें मेरा ही रूप समझ कर, नमस्कार करें। उस समय आप नहीं आये –

पुत्री कउलु न पालिओ करि पीरहु कंन मुरटीऐ॥

पृष्ठ - 967

किनारा कर गये और कहते हैं हमने नहीं आना –

दिलि खोटै आकी फिरन्हि बंन्हि भारु उचाइन्हि छटीऐ॥

पृष्ठ - 967

दिल में यह बात नहीं आई कि गुरू पिता का कहना मान लें –

उलटी गंग वहाईओनि गुर अंगदु सिरि उपरि धारा।

पुतरी कउलु न पालिआ मनि खोटे आकी निसतारा॥

भाई गुरदास जी, वार 1/38

भाई गुरदास जी ने पहली वार की अठतीसवीं पऊड़ी में यह बात लिखी है। इस तरह जब महाराज जी ने देखा कि पुत्रों ने विरोध करना है, संगत इनका आदर मान भी करती है, गुरू पुत्र होने के नाते मान भी देती है और जो बन्दगी करवाने का काम है, वह यहाँ पर ठीक ढंग से चल नहीं सकेगा। इसलिये गुरू महाराज जी ने गुरू अंगद देव जी महाराज को बुलाया और कहा कि देखो, आपको मालूम ही है कि जो पुत्र होते हैं, उनमें से कोई एक ही ऐसा भाग्यशाी हुआ करता है, जिसे अपने पिता पर गुरू पिता होने का या महापुरुष होने का विश्वास हो जाये। इसी तरह कोई विरला ही महात्मा हुआ करता है, जिसके लड़के कभी यह मान लें कि उसका पिता कुछ है। रिश्तेदार, बच्चे गाँव के लोग कभी नहीं मानते जबकि अन्य बेअन्त लोगों को पता चल जाता है क्योंकि उनके पास वह दृष्टि Power (शक्ति) नहीं हुआ करती। जैसे मधु-मक्खी में ताकत है कि जिस फूल में रस हो,

शहद हो, वहीं पर बैठती है। जो बिना शहद या बिना रस के फूल हो उसके तो वह पास ही नहीं फटकती। इसी तरह जो सूझ-बूझ वाले महापुरुष हुआ करते हैं, जिस स्थान पर कुछ होता है, वे उस जगह पर जाया करते हैं, पर बच्चों, रिश्तेदारों, गाँव के लोगों, मित्रों की यह सोच शक्ति बन्द हुआ करती है। उनके सामने तो दोष दृष्टि ही रहा करती है, कमज़ोरियां सामने रहती हैं, बड़प्पन सामने नहीं रहता। वे स्वाभाविक ही ईर्ष्या करते हैं। ईर्ष्या एक ऐसा रोग है, जिससे कोई विरला, पूर्ण ब्रह्मज्ञानी ही शायद बचा हो, पर यह बीमारी बड़ी दूर तक वार करती है। सन्तों को सन्तों से हुआ करती है। सांसारिक लोगों को आपस में हुआ करती है।

इसलिये गुरू महाराज जी ने फ़रमान किया, ''पुरखा! तुम खडूर साहिब जाओ। वहाँ पर निहाला जाट हमारा प्रेमी है। उसे कुदरत ने यह ज्ञान बख्शा हुआ है कि वह गुरू को पहचान जाता है। तेरे मस्तक में गुरू ज्योति लट-लट कर रही है। जाओ! वह तुम्हें पहचान लेगा। वहाँ पर गुप्त ढंग से रहना।'' पर आपका जाने को मन नहीं करता लेकिन हुक्म का पालन करते हुए आप चले जाते हैं। बहुत उदास रहते हैं। हर समय विरह में रहते हैं। जितने वर्ष आप यहाँ रहे थे, एक सैकिन्ड के लिये भी गुरू से अलग नहीं होते थे। हर समय जैसे चकोर चांद को देखता रहता है, वैसे ही आप गुरू महाराज जी के दर्शन करते रहते थे। उन्होंने कहा, ''हैं? अब मैं गुरू पातशाह के दर्शन नहीं कर सका करूंगा। मुझे अकेले ही रहना पड़ेगा?'' दूसरी ओर हुक्म है। आखिर गुरू के हुक्म के सामने शीश नंवाया और विछोड़े को अपने अन्दर ही रख कर आप खडूर साहिब चले जाते हैं। माई भराई, भाई निहाले के घर से बड़ी नेक महिला थीं और जब भाई निहाले ने देखा तो एक दम दंग रह गया कि इनके मस्तक में तो गुरू नानक पातशाह पूरी तरह से निवास कर रहे हैं और उसने चरणों में शीश झुका दिया। कहता है, ''महाराज! सेवा बताओ।''

आपने कहा, ''हमने गुप्त रहना है। सारे प्रबन्ध कर दो।''

बाहर दूर एक कुटिया बनवा दी। जिसे तपिआना साहिब कहते हैं। दिन में आप अन्दर छिपे रहते, रात को वहाँ चले जाते। पत्थर बिछाये हुए हैं और अकेली कुटिया है। केवल एक ही व्यक्ति उसके अन्दर जा सकता है। दूसरे के लिये जगह नहीं है। इस तरह समय बीतता गया। विरह से तड़पते हुए को पूछो कि समय कैसे बीतता है, क्योंकि जिसे विरह का पता ही नहीं, वह यह बात नहीं जान सकता। आप हर समय प्रतीक्षा करते रहते हैं, गुरू नानक साहिब को अन्दर से आकर्षित करते हैं, पूरी तरह से खींचते हैं। वे जानते हैं कि मेरी विरह की तारें गुरू नानक पातशाह के पास पहुँच रही हैं। दिन रात इन्तज़ार करते रहते हैं कि कोई करतार पुर से आये और मेरे प्यारे का सन्देशा सुनाये, कोई उसकी बात बताये। पर कोई नहीं आ रहा। यह ऐसी अवस्था हुआ करती है। महाराज जी इस विरह को प्रकट करने के लिये इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - जिहड़ा गुरां दा सुनेहा देवे,
जिहड़ा गुरां दा,
जिहड़ा गुरां दा सुनेहा देवे,
चरनां 'च सीस रक्ख दां - 2, 2

जिहड़ा गुरां दा सुनेहा देवे, ...-2

धारना - मैनूं मिल जाए सतिगुर पिआरा,

उड जा - उड जा कागा काले - 2, 2

उड जा - उड जा कागा काले - 2, 2

मैनूं मिल जाए सतिगुर पिआरा, ...-2

पंथु निहारै कामनी लोचन भरी ले उसासा॥

पृष्ठ - 337

नेत्रों में जल भरा हुआ है, दिल से हूक निकलती है। रास्ता देख रहे हैं पर कोई भी नज़र नहीं आता? कौआ आकर मुंडेर पर बैठ गया। उसकी ओर मुख किया, पूछा कि यदि मेरा प्रीतम आ रहा है तो तू उसका आने का सन्देशा ले आ, उड़ जा। बेशक ऐसे ही उड़ जा ताकि मेरे मन को थोड़ा सा ढांढ़स आ जाये। न से तो मुझे कुछ देर के लिये दम मिल जायेगा।

पंथु निहारै कामनी लोचन भरी ले उसासा।

उर न भीजै पगु न खिसै हरि दरसन की आसा।

उडहु न कागा कारे॥ *पृष्ठ - 337*

बड़े प्यार के साथ, आदर के साथ कहते हैं, उड़ जाओ न।

उडहु न कागा कारे।

बेगि मिलीजै अपुने राम पिआरे॥ *पृष्ठ - 337*

जितनी जल्दी तू उड़ेगा, उतनी जल्दी ही मेरा राम प्यारा मुझे मिल जायेगा -

कहि कबीर जीवन पद कारनि हरि की भगति करीजै।

एकु आधारु नामु नाराइन रसना रामु रवीजै॥

पृष्ठ - 337

इस तरह से जो आपकी विरह अवस्था है, उसे कोई नहीं बता सकता। उसका वर्णन करना बड़ा ही कठिन है। बड़ी से बड़ी कुर्बानी देने के लिये तैयार है -

हउ मनु अरपी सभु तनु अरपी अरपी सभि देसा॥

पृष्ठ - 247

सभी कुछ किसे दे दूं? मन भी, तन भी, सारी जायदाद भी दे दूँ -

हउ सिरु अरपी तिसु मीत पिआरे जो प्रभ देइ सदेसा॥ *पृष्ठ - 247*

मिलाने वाला नहीं, जो केवल सन्देशा ही सुना दे। उसे ही सभी कुछ दे दूँ। जब ऐसी

अवस्था होती है तो उस समय नींद तथा भूख दोनों गायब हो जाती हैं। वस्त्र पहनने की सुध-बुध भी नहीं रहती –

हरि बिनु नीद भूख कहु कैसी कापड़ु तनि न सुखावए॥ *पृष्ठ - 1108*

इक घड़ी न मिलते ता कलिजुगु होता।

हुणि कदि मिलीऐ प्रिअ तुधु भगवंता।

मोहि रैणि न विहावै नीद न आवै।

बिनु देखे गुर दरबारे जीउ॥ *पृष्ठ - 96*

सो इस प्रकार पढ़ो प्यार से –

धारना - रैण गुजरे नींद न आवे, रैण गुजारे,

रैण गुजारे नींद न आवे दरस विहूणे नूं -

साहिबा, पिआरे, दरस विहुणे नूं - 2, 2

रैण गुजरे नींद न आवे - 2, 2

रैण गुजरे नींद न आवे, रैण गुजरे,

दरस विहूणे नूं, साहिबा,

पिआरे, दरस विहूणे नूं - 2

प्यार के बारे में भाई गुरदास जी अपनी हालत बखान करते हैं। जब काशी चले गये थे तो गुरू छठे पातशाह के पास बेतार वृत्ति द्वारा प्यार का यह सन्देशा भेजते थे। उस समय अपने मन की अवस्था को इस प्रकार दर्शाते हैं कि–

सलिल निवास जैसे, मीन की न घटै रुचि.....।

कबित भाई गुरदास जी, 424

पानी में मछली रहती है, उसकी रूचि कम नहीं हुआ करती –

..... दीपक प्रकास घटै प्रीत न पतंग की।

कबित्त भाई गुरदास जी, 424

दीपक जलता है, पतंगे की प्रीत कम नहीं हुआ करती मर जाता है, पर प्रीत कम नहीं हुआ करती।

कुसल सुबास जैसो त्रिपत न मधुर कौ .....।

कबित्त भाई गुरदास जी, 424

जिस तरह भंवरा फूल के अन्दर समा जाता है, वहाँ से उठता ही नहीं, रात हो जाती है, फूल बन्द हो जाता है, वह मर जाता है, पर छोड़ता नहीं –

..... उडत अकास आस घटै न बिहंग की।

कबित्त भाई गुरदास जी, 424

इसी तरह जब पक्षी आकाश में उड़ता है तो उसकी उड़ने की आशा खत्म नहीं होती, वह आगे ही आगे उड़ता जाता है।

घटा घनघोर मोर चात्रिक रिदै उलास .....।

कबित्त भाई गुरदास जी, 424

जब बादल गर्जते हैं, काली घटाएं आती हैं, तब मोर प्रसन्नता से झूम उठते हैं, चात्रिक का दिल प्रसन्न हो जाता है –

..... नाद, बाद, सुनि रति घटै न कुरंग की॥

कबित्त भाई गुरदास जी, 424

हिरण के सामने जब घन्डेहेड़े का शब्द सुनाया जाता है तो वह बड़े ही प्यार से सुनता है। उसे मालूम होता है कि उसके चारों ओर शिकारी घूमते फिरते हैं, मुझे पकड़ कर ले जायेंगे, पर उस नाद में से वृत्ति बाहर नहीं निकालता–

तैसे प्रिअ प्रेम रस रसिक रसाल संत, ...।

कबित्त भाई गुरदास जी, 424

इसी तरह से सन्त रसिया होते हैं, जो भक्ति के साथ पहुँचते हैं। एक ज्ञान से पहुँचते हैं पर केवल ज्ञान खुश्क होता है। जो गुरू भक्ति द्वारा पहुँचते हैं, उसी तरह उनके अन्दर प्रेम रस होता है –

..... घटत न त्रिसना प्रबल अंग अंग की॥

कबित्त भाई गुरदास जी, 424

सभी अंगों में प्यार ही प्यार समाया होता है। इस तरह से आप सन्देशा देते हैं कि –

रोमि रोमि मनि तनि इक बेदन

मै प्रभ देखे बिनु नीद न पईआ॥ पृष्ठ - 836

मेरे रोम–रोम में एक पीड़ा है। हमें यदि प्रीत सौ गुणा भी कम आ जाये तो भी हम भाग्यशाली बन जायेंगे। हमारी प्रीत परमेश्वर के साथ बिल्कुल भी नहीं है। कोई विरला होगा। उसके चरणों में सिर झुकाते हैं, जिसकी परमेश्वर के साथ प्रीत हो। बाकी ऐसी अनेक बातें हैं, जिनमें हमारा मन लगा रहता है, प्यार में नहीं लगता। प्यार वालों की निशानी हुआ करती है –

सीने खिच्च जिन्हां ने खाधी ओ कर अराम नहीं बहिंदे।

निहुं वाले नैणां की नींदर ओ दिने रात पए वहिंदे।

इको लगन लगी लई जांदी है टोर अनंत उन्हां दी।

वसलों उरे मुकाम न कोई सो चाल पए नित रहिंदे।

सो फ़रमान है कि –

रोमि रोमि मनि तनि इक बेदन .....॥ पृष्ठ - 836

तेरे दर्शन की पीड़ा है, मेरे मन में, तन में, रोम-रोम में –

..... मै प्रभ देखे बिनु नीद न पईआ।

बैदक नाटिक देखि भूलाने .....॥ पृष्ठ - 836

डाक्टर, हकीम, सभी भूल गये। कोई पता नहीं चलता कि इन्हें क्या हुआ –

..... मैं हिरदै मनि तनि प्रेम पीर लगईआ॥

पृष्ठ - 836

उन्हें क्या पता है –

भोला वैदु न जाणई करक कलेजे माहि॥

पृष्ठ - 1279

हउ खिनु पलु रहि न सकउ बिनु प्रीतम

जिउ बिनु अमलै अमली मरि गईआ।

जिन कउ पिआस होइ प्रभ केरी .....॥

पृष्ठ - 836

जिनके हृदय में प्रभु प्यारे के लिये प्यास है –

..... तिन्ह अवरु न भावै बिनु हरि को दुईआ॥

पृष्ठ - 836

उन्हें और कुछ भी अच्छा नहीं लगता। एक ही धुन अन्दर सवार रहती है – चाहे दुनियां का प्यार हो या परमेश्वर का प्यार हो।

इस तरह बे-बस हुए आप बार-बार अरदास करते हैं –

धारना - झल्लिआ जांदा नहीं विछोड़ा मेरे मालका,

अखीआं 'चों नीर चलदै - 2, 2

मेरे साहिबा, अखीआं चों नीर चलदै - 2, 2

झल्लिआ जांदा नहीं विछोड़ा मेरे मालका - 2

जिउ मछुली बिनु पाणीऐ किउ जीवणु पावै।

बूंद विहूणा चात्रिको किउकरि त्रिपतावै।

नाद कुरंकहि बेधिआ सनमुख उठि धावै।

भवरु लोभी कुसम बासु का मिलि आपु बंधावै।

तिऊ संत जना हरि प्रीति है देखि दरसु अघावै॥

पृष्ठ - 708

धारना - झल्लिआ जांदा नहीं विछोड़ा मेरे मालका,

अखीआं 'चों नीर चलदै - 2, 2

चंद चकोर परीत है, लाइ तार निहाले।

चकवी सूरज हेत है, मिलि होनि सुखाले।

नेहु कवल जल जाणीऐ, खिड़ि मुह वेखाले।

मोर बबीहे बोलदे, वेखि बदल काले।

नारि भतार पिआरु है, माँ पुत सम्हाले।

पीर मुरीदा पिरहड़ी, ओहु निबहै नाले॥

भाई गुरदास जी, वार 27/4

हरि हरि सजणु मेरा प्रीतमु राइआ।

कोई आणि मिलावै मेरे प्राण जीवाइआ॥ पृष्ठ - 94

मेरे प्राणों में जान आ जायेगी -

हउ रहि न सका बिनु देखे प्रीतमा

मै नीरु वहे वहि चलै जीउ॥ पृष्ठ - 94

विरह की ऐसी अवस्था है। साध संगत जी! पूर्ण ज्ञानवान हैं। पूर्ण शक्तियों के मालिक हैं, गुरू स्वरूप हैं, फिर इतना विरह! ज्ञानवान में भी विरह होता है। कहते हैं - हाँ! ज्ञानवान जो होता है, वह रसिक वैरागी हुआ करता है। ज्ञानी दो तरह के हुआ करते हैं - एक खुश्क होते हैं, दूसरे रसिक वैरागी होते हैं। महाराज जी कहते हैं, जो रसिक वैरागी होता है -

पूरब करम अंकुर जब प्रगटे भेटिओ पुरखु रसिक बैरागी॥ पृष्ठ - 204

उसका रसिया पुरुष के साथ मेल हो जाया करता है -

मिटिओ अंधेरु मिलत हरि नानक जनम जनम की सोई जागी॥ पृष्ठ - 204

करोड़ों जन्मों की सोई हुई हउमैं की नींद में से जो सुरत होती है, वह जाग जाती है, यदि

रसिक वैरागी पुरुष के साथ मेल हो जाये क्योंकि वह जीवित होता है। इस तरह से गुरू नानक पातशाह के पास सन्देशे पहुँच रहे हैं। दिन बीत गये, सप्ताह बीत गये, महीने बीत गये। ऐसा नहीं था कि गुरू नानक पातशाह को आकर्षण नहीं होता था पर आप अभी आ नहीं रहे। इसी तरह वर्ष बीतने पर आ गये, उस समय गुरू नानक पातशाह, भाई साधारन को कहते हैं कि भाई साधारन! आज हमने कहीं चलना है?

साधारन जी ने बड़े आदर के साथ पूछा, ''महाराज! कहाँ चलना है?''

महाराज जी ने कहा, ''दिल में आकर्षण हो रहा है। हम थोड़ी देर के लिये भी नहीं रूक सकते। जल्दी ही हमारे साथ चलने के लिये तैयार हो जा। भाई धीरो को भी साथ ले लो।''

तीन व्यक्ति चले आ रहे हैं - कोई सवारी नहीं, कोई घोड़ा बग्घी नहीं। तपिआणा साहिब जो खडूर साहिब में है, उसी ओर चले आ रहे हैं और पैदल ही आ रहे हैं। आखिर वहाँ पर तपिआणा साहिब पहुँच गये, जहाँ पर रोहों (पत्थरों) की सेज बिछाई हुई है। चौकड़ी लगा कर बैठे हुए हैं, अखण्ड समाधि में बैठे हैं। गुरू नानक पातशाह ने देखा कि अंगद जी का शरीर जो पिंजर बना हुआ है। मन में बड़ी उत्कठा सी उठी ऐसा रूप! परन्तु जब मस्तक की ओर देखा तो जैसे सूरज चमक रहा होता है, मस्तक दग-दग कर रहा है। उस समय गुरू नानक पातशाह सामने खड़े हैं पर गुरू अंगद देव जी को कुछ भी पता नहीं। जिस स्वरूप का आप अन्दर ध्यान धरे बैठे थे, गुरू महाराज जी ने वह स्वरूप खींच लिया। बाहर उस स्वरूप को खींचने की देर थी, जैसे मछली पानी के बिना तड़पती है, ऐसे तड़पने लगे। नेत्र खोले, एक दम हैरान हो गये कि मेरे सतगुरू तो मेरे सामने खड़े हैं। उस समय आप धड़ाम से उनके चरणों पर गिर पड़े और रो-रो कर चरण धो डाले। उस अवस्था को भाई गुरदास जी ने 25 नम्बर कवित्त में इस तरह से फ़रमान किया है -

धारना - सुध बुध ओ, दोवें भुलीआं - 2, 2

जदों दरश गुरां दा कीता - 2, 2

जदों दरश गुरां दा कीता पिआरिओ,

दोवें भुलीआं,

सुध बुध ओ, दोवें भुलीआं - 2, 2

दरसन देखत ही सुध की न सुध रही,

बुधि की न बुधि रही, मति मै न मति है।

सुरति मै न सुरति औ, ध्यान मै न ध्यान रहयो,

ज्ञान मै न ज्ञान रहयो, गति मै न गति है।

कबित्त भाई गुरदास जी 25

सात प्रकार की सुध हुआ करती है। सारी सुध भूल गई, कुछ पता नहीं चलता। कोई बात कहने लायक मुख से नहीं निकलती क्योंकि मिलाप की अवस्था फुरने रहित होती है। वहाँ पर कोई

भी फुरना नहीं हुआ करता –

धीरज को धीरज गरब को गरब गयो,

रति मै न रति रही पति रति पति है।

अदभुत परमदभुत बिसमै बिसम,

असचरजै असचरज, अति अत है॥

कबित भाई गुरदास जी 25

सुध, बे-सुध हो गई। गुरू नानक पातशाह ने उठाकर छाती से लगा लिया। प्यार किया, सिर पर हाथ फेरा।

कहते हैं, ''शरीर इतना कमज़ोर हो गया?'' आप रोज़ वचन करते हैं। पूरे दो महीने गुरू नानक पातशाह तीनों सिखों के साथ तपिआणा साहिब रहे। जब वहाँ से चलने लगते हैं तो आपका वैराग फिर फूट पड़ता है। जा नहीं सकते क्योंकि ऐसा फ़रमान है –

धारना – रब्ब वस भगतां ने कीता,

पा के ते प्रेम डोरीआं – 2, 2

मेरे पिआरे, पा के ते प्रेम डोरीआं – 2, 2

रब्ब वस भगतां ने कीता, ...-2

ना तू आवहि वसि बहुतु घिणावणे।

ना तू आवहि वसि बेद पड़ावणे।

ना तू आवहि वसि तीरथि नाईऐ।

ना तू आवहि वसि धरती धाईऐ।

ना तू आवहि वसि कितै सिआणपै।

ना तू आवहि वसि बहुता दानु दे।

सभ को तैरै वसि अगम अगोचरा।

तू भगता कै वसि भगता ताणु तेरा॥ पृष्ठ – 962

गुरू नानक साहिब को वश में कर लिया। जा नहीं रहे, पीछे संगत प्रतीक्षा करती है। किसी को पता नहीं कि गुरू नानक पातशाह कहाँ चले गये? बता कर नहीं आये थे। हर रोज़ चलने की तैयारी करते हैं पर आपका प्यार चलने नहीं देता। पूरे दो महीने गुरू नानक पातशाह, गुरू अंगद साहिब जी के पास ठहरे। फिर चले जाते हैं। कई महीने बीत गये। फिर नहीं आये। वैसे ही प्रेम की डोरियां, प्रेम का आकर्षण महसूस करके, गुरू नानक पातशाह आज किसी को भी साथ नहीं ला रहे हैं। अकेले ही चले आ रहे हैं, कच्चे, टूटे, फूटे रास्तों में चले आ रहे हैं। सीधे ही तपिआणा

साहिब पहुँचते हैं और पन्द्रह दिन फिर ठहरते हैं।

उसके बाद कहते हैं, ''अंगद जी! अब हमने शरीर छोड़ना है।''

अंगद साहिब बोले, ''पातशाह! मैं आपके पश्चात कैसे रहूंगा।'' आपका फ़रमान है –

जिसु पिआरे सिउ नेहु तिसु आगै मरि चलीऐ।

धिगु जीवणु संसारि ता कै पाछै जीवणा॥ पृष्ठ- 83

महाराज जी कहते हैं, ''नहीं, आप धर्म का पंथ चलाओ।'' कहते हैं, ''महाराज, अब मुझे आज्ञा है।''

महाराज जी कहते हैं, ''हाँ! आप उस दिन आ जाना पर वहाँ ठहरना मत, फिर यहीं पर ही आ जाना।''

गुरू नानक पातशाह चले जाते हैं, फिर सिख संगतों को पता चल गया। संगत फिर दर्शन करने के लिये आनी शुरू हो गई। उधर मुलतान में एक पीर जिसका नाम मकदूम बहाऊदीन है, वह एक दिन बैठा रो रहा है। नेत्रों से छमा-छम जल बरस रहा है। मुरीद इकट्ठे हो गये कि आज पता नहीं क्या बात है, पीर जी सुबह से ही वैराग में लीन हैं।

मुरीदों ने पूछा, ''पीर जी! क्या बात है? आप इस तरह वैराग क्यों कर रहे हो? हमें बताइये, हम कोई सेवा कर सकें। यदि किसी चीज़ की ज़रूरत है तो बताइये। यदि कोई तकलीफ है तो हमें बताइये।''

पीर जी कहते हैं, ''तुम्हें क्या बताएं?''

कहते हैं, ''महाराज! फिर भी बता दो।'' इस तरह फ़रमान करते हैं –

धारना - थोड़े दिन होर रहि गए विच दुनीआं दे,

सद्दा दरगाहों आ गिआ - 2, 2

मेरे पिआरे, सदा दरगाहों आ गिआ - 2, 2

थोड़े दिन होर रहि गए विच दुनीआं दे, ...-2

कहते हैं, ''प्यारे जी! क्या बताएं तुम्हें?''

आई है मौत मेरी थोड़े दिहाड़े बाकी।

मसले विचार करने, वेला रिहा ना काई॥

अभी तो कुछ समझा ही नहीं है। भजन नहीं किया, बन्दगी नहीं की। समस्यायों पर विचार नहीं किया। अभी तक ज्ञान की बात नहीं समझी, दिन थोड़े रह गये।

मुरीद कहते हैं, ''फिर हमें कोई हुक्म दीजिये।''

पीर ने कहा, ''मेरी आँखों के सामने अन्धेरा आ रहा है। अन्धेरे में से निकलते हुए, मुझे बहुत डर लग रहा है। ऐसे करो, गुरू नानक पातशाह के पास जाओ। मेरा सन्देशा उनके पास लेकर जाओ। उन्होंने कुछ ही दिनों में सचखण्ड जाना है, मुझे भी साथ ले जाएं। इस तरह मैं अन्धेरे से बच जाऊँगा क्योंकि मैं उजाले में जाना चाहता हूँ। किसी पढ़े लिखे, आलम को साथ ले जाओ।'' उस समय आपने सन्देशा लिखवाया –

असां जो लदण लदिआ, असाडी वी कर काए॥

साथ ही उसने यह भी ताकीद की कि इसका जवाब जरूर लेकर आना। सो आलम मुलतान से करतार पुर की ओर चल पड़ता है। रास्ता पूछता-पूछता करतार पुर के पास पहुँच जाता है। जब वह करतार पुर के पास पहुँचा तो उसके मन में ख्याल आया कि मेरा पीर इतनी शक्तियों का मालिक, इतना साधना सम्पन्न और यह गुरू नानक साहिब को कहता है, क्या ये हिन्दू लोग भी सचखण्ड में जाते हैं? हमारे मत अनुसार तो केवल मुस्लिम ही दरगाह में जा सकते हैं, हिन्दू नहीं जा सकते। पीर से जब पूछा था तो पीर ने कहा था, ''नहीं, वह तो सबसे बड़ा है –

सब ते वडा सतिगुरु नानकु जिनि कल राखी मेरी॥

पृष्ठ - 750

उस समय वह आलम दो मील की दूरी पर बैठ गया और कहता है कि यदि सबसे बड़ा है तो वह स्वंय बुलायेगा तो जाऊंगा। इधर महाराज जी ने एक सिक्ख से कहा कि इस तरफ चले जाओ, रावी के किनारे-किनारे और कुछ दूरी पर एक वृक्ष के नीचे एक आदमी बैठा हुआ मिलेगा, वह मुलतान से आया होगा, जाकर, उसे साथ ले आओ। उसे कहना कि तुझे गुरू नानक बुला रहे हैं। वह सिख उसे ले आया। जब उसने वह सन्देशा गुरू पातशाह के चरणों में रखा, उस समय गुरू साहिब ने अगंम देखा और उसे कहा, ''प्रेमी! आओ, अपने पीर को हमारा सन्देशा, इस तरह सुना देना।''

धारना - चल्लण नूं हो तिआर,

छड्ड के दुनीआं सुहावणी - 2, 2

दुनीआं सुहावणी, छड्ड के दुनीआं सुहावणी-2,2

चलण नूं हो तिआर, ...-2

फरीदा पंख पराहुणी दुनी सुहावा बागु।

नउबति वजी सुबह सिउ चलण का करि साजु॥

पृष्ठ -1382

महाराज जी ने कहा, ''प्रेमी! पीर ने भेजा है? लाओ, सन्देशा हमें पकड़ा।'' फिर महाराज जी ने कहा, ''भाई! उसे हमारी ओर से सन्देशा दे देना कि वहाँ पर जाने का दुख नहीं हुआ करता।'' जैसा कि फ़रमान है –

कबीर जिसु मरने ते जगु डरै मैरै मनि आनंदु।

मरने ही ते पाईऐ पूरनु परमानंदु॥ पृष्ठ - 1365

दुख किसे होता है? जो यहाँ पर भूले रहते हैं, भोगों में मस्त रहते हैं, झूठी खुशियों में मस्त रहते हैं, झूठी जायदादों, झूठे रिश्तों में जो फंसे रहते हैं। महाराज जी कहते हैं कि यहाँ पर तो ये बहुत अच्छे लगते हैं पर जब आगे जाते हैं फिर वहाँ ये चीज़े दुख देती हैं -

धारना - अग्गे दुख बणदे ने,

इथे दे भोग बिलासे - 2, 2

इथे दे भोग बिलासे - 2, 2

अग्गे दुख बणदे ने, ... -2

महाराज जी ने कहा, ''प्रेमी! मौत से डर तब लगता है, यदि यहाँ पर भोग विलासों में, मेरी तेरी में अपनत्व में, जिन्दगी बिताई हो तो आगे जाकर यही दुख बन जाते हैं -''

रसि चूगहि मनमुखि गावारि।

फाथी छूटहि गुण गिआन बीचारि।

सतिगुरु सेवि तुटै जमकालु।

हिरदै साचा सबदु सम्हालु।

गुरमति साची सबदु है सारु।

हरि का नामु रखै उरिधारि।

से दुख आगै जि भोग बिलासे।

नानक मुकति नही बिनु नावै साचे॥ पृष्ठ - 1276

महाराज जी फरमाते हैं कि बिना नाम के मुक्ति नहीं होती और वहाँ जाकर भोग विलास दुख बन जाते हैं। महाराज जी ने उसका सन्देशा पढ़ा। पढ़ कर महाराज जी कहते हैं, इसका जवाब लिखो भाई। उस समय महाराज जी ने इस तरह से जवाब लिखवा दिया -

धारना - जो करिआ सो चलसी,

सभना हुकम रजाए - 2, 2

सभना हुकम रजाए - 4, 2

जो करिआ सो चलसी, ... -2

साथ ही सन्देशा दे दिया। कहते हैं, ''ले प्रेमी! यह सन्देशा भी ले जा और एक सन्देशा जुबानी भी ले जा।''

धारना - सदा बैठ न किसे ने इथे रहणा

कर लै तिआरी जाण दी - 2, 2

मेरे पिआरे, कर लै तिआरी जाण दी - 2, 2

सदा बैठ ना किसे ने इथे रहिणा, ...-2

जिह मारग के गने जाहि न कोसा।

हरि का नामु ऊहा संगि तोसा।

जिह पैडै महा अंध गुबारा।

हरि का नामु संगि उजीआरा।

जहा पंथि तेरा को न सिझानू।

हरि का नामु तह नालि पछानू।

जह महा भइआन तपति बहु घाम।

तह हरि के नाम की तुम ऊपरि छाम।

जहा त्रिखा मन तुझु आकरखै।

तह नानक हरि हरि अंम्रितु बरखै॥ *पृष्ठ - 264*

उसे कहना कि तैयारी कर ले -

गोइलि आइआ गोइली किआ तिसु डंफु पसारु॥

पृष्ठ - 50

पशु चराने वाले चरवाहा, पशुओं को लेकर, बरसात के दिनों में दरिया के किनारे चला जाता है। वहाँ पर खूब घास होती है। कहते हैं, वहाँ पर क्या पसारा कर लेगा?

मुहलति पुंनी चलणा तूं संमलु घरबारु।

हरिगुण गाउ मना सतिगुरु सेवि पिआरि।

किआ थोड़ड़ी बात गुमानु॥ *पृष्ठ - 50*

कितने समय के लिये आया है - कोई पचास साल, कोई साठ साल, कोई सत्तर, कोई पछत्तर, कोई अस्सी साल के लिये आया है -

नह बारिक नह जोबनै नह बिरधी कछु बंधु।

ओह बेरा नह बूझीऐ जउ आइ परै जम फंधु॥

पृष्ठ - 254

जैसे रैणि पराहुणे उठि चलसहि परभाति।

किआ तूं रता गिरसत सिउ सभ फुला की बागाति॥

पृष्ठ - 50

प्यारे! तू क्यों इन बातों में फंस गया।

मेरी मेरी किआ करहि जिनि दीआ सो प्रभु लोड़ि।

सरपर उठी चलणा छडि जासी लख करोड़ि॥

लख चउरासीह भ्रमतिआ दुलभ जनमु पाइओइ।

नानक नामु समालि तूं सो दिनु नेड़ा आइओइ॥

पृष्ठ - 50

वह कहता है, ''पातशाह! वह तो कहते थे कि गुरू नानक पातशाह मुझे साथ लेकर जाएं।''

गुरू नानक पातशाह ने कहा, ''देख प्यारे! अब हमारे भी गिनती के ही दिन रह गये हैं।'' इस तरह से फ़रमान करते हैं -

धारना - दिन थोड़े रह गये

भइआ पुराणा चोला - 2, 2

धनु जोबनु अरु फुलड़ा - 2, 2

नाठीअड़े दिन चारि - 2, 2

दिन थोड़े रहि गए, ... -2

धनु जोबनु अरु फुलड़ा नाठीअड़े दिन चारि।

पबणि केरे पत जिउ ढलि ढुलि जुंमणहार।

रंगु माणि लै पिआरिआ जा जोबनु नउहुला।

दिन थोड़ड़े थके भइआ पुराणा चोला।

सजण मेरे रंगुले जाइ सुते जीराणि।

हंभी वंञा डुमणी रोवा झीणी बाणि॥ *पृष्ठ - 23*

आप इस तरह फ़रमान करते हैं -

धारना - नित पेकीं रहिणा नहीं,

कर लै सहुरे जाण दी तिआरी - 2, 4

की न सुणेही गोरीए आपण कंनी सोइ।

लगी आवहि साहुरै नित न पेईआ होइ।

नानक सुती पेईऐ जाणु विरती संनि।

गुणा गवाई गंठड़ी अवगण चली बंनि॥ पृष्ठ - 23

गुणों की, सत की, धर्म की, सन्तोष की, दया की, धीरज की गठड़ी गवाँ दीं। पाँच चोरों ने लूट ली क्योंकि यहाँ पर आकर सोई पड़ी है। पता ही नहीं कि यहाँ से जाना भी है। मायके में रोज़ नहीं रहना होता, इस जिन्दगी में ससुराल में जाना ही पड़ता है। महाराज जी कहते हैं कि हमारा यह सन्देशा पीर को जाकर दे देना। कह देना कि चालीस दिन और रूक जाये। हमने चालीसवें दिन चलना है।

एक दिन गुरू नानक पातशाह, भाई कमलिए से कहते हैं, ''भाई कमलिया! मुझे आज ये भैंसें भूखी लग रही हैं, तूने आज घास नहीं डाली?''

वह कहता है, ''पातशाह! मुझे आज और बहुत से काम करने थे। इसलिये मैं घास वगैरा न ला सका।''

महाराज जी ने कहा, ''जाओ। घास लेकर आओ।''

पल्ली (घास बांधने के लिये साधन) ले ली, खुरपा ले लिया, घास लेने के लिये चल पड़े। जिस तरफ घास बहुत बड़ी तथा लम्बी-लम्बी थी, उधर जाकर क्या देखते हैं कि तीन योगी खड़े हैं। उनके चेहरे बड़े ही अलौकिक हैं।

उन्होंने इसे पूछा, ''प्रेमी! तुम गुरू नानक साहिब को जानते हो?''

वह बोला, ''हाँ जी, मैं तो उनका सिख हूँ। मैं उन्हीं के पास से ही आ रहा हूँ।''

वे बोले, ''गुरू नानक पातशाह को हमारा सन्देशा दे आ।'' भाई कमलिया ने कहा, ''महाराज! मेरी भैंसे बहुत भूखी हैं। मुझे गुरू नानक पातशाह ने ही भेजा है और मैं अभी घास खोद लेता हूँ, गठड़ी बान्ध लूँ, फिर साथ ही आपका सन्देशा भी लेता जाऊंगा।''

वे योगी बोले, ''नहीं, हमारा सन्देशा जरूरी है, दिखा, तेरी गठड़ी तो हम घास से अभी भर देते हैं।''

उन्होंने एक घास का तिनका तोड़कर धरती पर फैंक दिया, देखते ही देखते वहाँ एक बहुत बड़ा ढेर घास का बन गया।

फिर उन्होंने कहा, ''जितनी मर्ज़ी घास भर कर ले जा।''

मैंने घास की गठड़ी भर ली। फिर बोला, ''महाराज! लाइये सन्देशा।'' भाई कमलिये के हाथ में एक राख की चुटकी सी पकड़ा दी। वापिस आ गया। गुरू नानक पातशाह वहीं बैठे हैं।

कहते हैं, ''कमलिआ! बड़ी जल्दी आ गया तू? यह किसी का कटा कटाया घास तो नहीं उठा लाया?''

वह बोला, ''नहीं महाराज! मैं तो खुद बड़ा हैरान हूँ।''

गुरू नानक पातशाह ने पूछा, ''क्या बात है?''

वह बोला, ''मुझे जंगल में तीन योगी मिले। महाराज जी, उनके चेहरे अति सुहावने थे। मुझे उन्होंने पूछा कि तुम गुरू नानक साहिब को जानते हो। मैंने कहा कि मुझे तो उन्होंने ही भेजा है। फिर उन्होंने कहा कि हमारा सन्देश लेकर जाओ। मैंने कहा कि मैं तो घास लेकर जाऊंगा क्योंकि मेरी भैंसे भूखी खड़ी हैं। महाराज जी! फिर उन्होंने एक घास का तिनका उखाड़ कर रख दिया। बस, पलक झपकते ही वहाँ पर घास का ढेर लग गया। मेरी घास की गठड़ी भर गई। तभी मैं घास आज इतनी जल्दी लेकर आ गया हूँ।''

महाराज जी कहते हैं, ''ला भाई, दिखा सन्देशा।''

भाई कमलिया बोला, ''सच्चे पातशाह! इस पुड़िया में बन्धा हुआ है, पता नहीं क्या है?'' उसने पुड़िया महाराज जी को दे दी। गुरू नानक पातशाह ने पुड़िया खोल कर देखी और चुप हो गये। इतनी देर में भाई साधारन भी आ गये और उन्होंने भी पूछा कि योगियों ने क्या सन्देशा दिया है? भाई धीरू भी आ गया। बाबा बुड्ढा जी भी आ गये, अन्य सिख भी आ गये, यह देखने के लिए कि योगियों ने गुरू नानक पातशाह के लिये क्या सन्देशा भेजा है।

सभी कहते हैं, ''पातशाह! हमें भी कुछ पता चल सकता है कि उन्होंने क्या सन्देशा भेजा है?''

महाराज जी इस तरह फ़रमान करते हैं –

धारना – सचखंड तों सुनेहा आ गिआ,

लिखिआ न लेख मिटणा – 2, 2

मेरे पिआरे, लिखिआ न लेख मिटणा – 2, 2

सचखंड तों सुनेहा आ गिआ, ...-2

महाराज जी कहते हैं, ''बुड्ढा जी! ये तीनों देवता ब्रह्मा, विष्णु, महेश, निरंकार जी का सन्देशा लेकर आये हैं और अब हमारी चलने की तैयारी करो –

लिखिअड़ा लेखु न मेटीऐ दरि हाकारड़ा आइआ है॥

पृष्ठ – 582

कहते हैं कि हमें ऊपर से बुलावा आ गया है।''

हाकारा आइआ जा तिसु भाइआ रुंने रोवणहारे॥

पृष्ठ – 582

इतनी बात सुनते ही सभी के नेत्र सजल हो उठे। अच्छे भले, कोई बिमारी नहीं है, अचानक ही, यह सारा कौतुक इसीलिये कर रहे थे, गुरू अंगद साहिब को अपने स्थान पर बिठाने

का कि तैयारियां ही कर लीं? उस समय बार-बार बेनतियां करते हैं कि सच्चे पातशाह! आप तो समरथ हैं, आपका शरीर भी तन्दरूस्त है, आप मत जाओ।

महाराज जी कहते हैं, ''जब से संसार रचा है, तभी से पारब्रह्म परमेश्वर की जो लीला है, उसे समझो -

धारना - इथे बैठ न किसे ने रहिणा,

जग्ग मेला चंद रोज़ दा - 2, 2

मेरे पिआरे, जग्ग मेला चंद रोज़ दा - 2, 2

इथे बैठ न किसे रहिणा, ...-2

एक शिव भए एक गए, एक फेर भए,

राम चंद्र क्रिशन के, अवतार भी अनेक हैं।

ब्रहमा अरु बिशन केते बेद औ पुरान केते,

सिंम्रिति समूहन कै हुइ हुइ बिताए हैं।

मोनदी मदार केते, असुनी कुमार केते,

अंसा अवतार केते, काल बस भए हैं।

पीर औ पिकांबर केते, गने न परत एते,

भूम ही ते हुइकै, फेर भूम ही मिलए हैं॥

अकाल उसतति

जोगी जती ब्रह्मचारी, बडे बडे छत्रधारी,

छत्र ही की छाइआ, कई कोस लो चलत हैं।

बडे बडे राजन ते दाबत फिरति देस,

बडे बडे भूपन के द्रप को दलतु हैं।

मान से महीप औ दिलीप के से छत्रधारी,

बडो अभिमान भुज दंड को करत हैं।

दारा से दिलीसर, द्रजोधन से मानधारी,

भोग भोग भूम, अंत भूंम मै मिलत हैं।

कबित अकाल उसतति

कहते हैं, ''प्यारे जी! यह बैठने का स्थान नहीं है?''

फरीदा खिंथड़ि मेखा अगलीआ जिंदु न काई मेख।

वारी आपो आपणी चले मसाइक सेख॥

पृष्ठ - 1380

सभी मिलकर प्रार्थनाएं करते हैं, ''पातशाह! इतनी जल्दी?''

कहते हैं, ''भाई! जाना ही पड़ता है। इसका कोई समय नहीं होता। यह फल तो सभी ने खाना ही है। किसी किसी को तो यह बहुत अच्छा लगता है और किसी को कड़वा लगता है। जिन्होंने यहाँ पर आकर भजन कर लिया, सेवा कर ली।''

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ।

ता दरगह बैसणु पाईऐ॥ *पृष्ठ - 26*

वे तो खुशी-खुशी जाते हैं -

कहु नानक बाह लुडाईऐ॥ *पृष्ठ - 26*

वे कन्धे सिकोड़ कर नहीं चलते। आराम से चलते हैं, जैसे यहाँ घूमते फिरते हैं। जिन्होंने यहाँ पर आकर बन्दगी की जगह निन्दा की, चुगलियां कीं, ईर्ष्या की, धोखे दिये, उन्हें वहाँ पर बहुत मार पड़ती है। वे बहुत दुखी होते हैं-

कबीर संत मूए किआ रोईऐ जो अपुने ग्रिहि जाइ।

रोवहु साकत बापुरे जु हाटै हाट बिकाइ॥

पृष्ठ - 1365

कहते हैं जिसने आगे जाकर कुत्ता, बिल्ला बनना है, उसके लिये रोओ, यह तो मानस जन्म खराब करके चला गया क्योंकि काल का कोई पता नहीं है। रूकता ही नहीं है। बड़े-बड़े विद्वान, सभी ज़ोर लगा-लगा कर थक गये।

व्यास जी कारक पुरुष हैं। कारक और ब्रह्मज्ञानी में काफी अन्तर हुआ करता है।

ब्रहमगिआनी कउ खोजहि महेसुर।

नानक ब्रहमगिआनी आपि परमेसुर॥ *पृष्ठ - 273*

जो कारक पुरुष होता है, उसके मन में परोपकार के फुरने होते हैं। उसे ज्ञान तो पूरा होता है, पर फुरना होने के कारण उसे अभेद मुक्ति प्राप्त नहीं होती। अन्य मुक्तियां जैसे सारूप, सालोक्य साहृदय आदि मुक्तियां तो मिल जायेगीं पर अभेद मुक्ति प्राप्त नहीं होती। यह केवल ब्रह्मज्ञानी ही होता है, जिसे अभेद मुक्ति प्राप्त होती है -

जिउ जल महि जलु आइ खटाना।

तिउ जोती संगि जोति समाना॥ पृष्ठ - 278

जो कारक पुरुष हैं, यदि उनके मन में कोई फुरना रह जाये, तो इन्हें चार अरब बत्तीस करोड़ साल, बार-बार संसार में आना पड़ता है। ज्ञान तो पूरा हो गया, पर फुरना खत्म न होने के कारण, उन्हें बार-बार जन्म लेना पड़ता है। वे ब्रह्मज्ञानी से निम्न स्तर के होते हैं।

हज़ार बार सतयुग बीत जाये, हज़ार बार त्रेता, द्वापर, कलयुग बीत जाये, तो एक कल्प हो जाया करता है। कुल चौदह कल्प हुआ करते हैं। इतनी आयु कारक पुरुष की हुआ करती है। एक कल्प की आयु बताते हैं। कई बार दुनियां रची, फिर नष्ट हो गई, कई बार बड़ी अजीब तरह की दुनियां थी, अब यह भी एक दुनियां है, जिसमें से आप निकल रहे हो और एक दिन आयेगा, जब इसका भी नामोनिशां नहीं रहेगा।

इस हिमालय पर्वत तथा बर्फों के नीचे बड़ी-बड़ी मछलियों की हड्डियां तथा पिंजर निकलते हैं। अब देखा जाये तो समुद्र में से हिमालय पर्वत के नीचे बड़ी-बड़ी मछलियां, मच्छ कहाँ से आ गये? कभी यहाँ पर समुद्र था, आबादी थी? वह सारी की सारी समुद्र के नीचे चली गई और जहाँ आबादी नहीं थी, पानी था, वह सारा बाहर निकल आया। वाहिगुरू जी की इसी तरह से क्रिया चलती रहती है।

जल ते थल करि थल ते कूआ कूप ते मेरु करावै॥

पृष्ठ - 1252

वेद व्यास जी के मन में आया कि अपने नौकर को यदि मैं लम्बी आयु दिलवां दूँ तो यह भी मेरे साथ ही रहा करेगा। वह इसे लेकर ब्रह्मा जी के पास गये और कहने लगे कि आप इसके मस्तक पर लिख दो कि इसकी उम्र मेरे बराबर की हो जाए।

ब्रह्मा जी ने कहा, ''मैं तो नहीं लिख सकता, आप शिवजी से पूछ लो क्योंकि काल उनके हाथों में है।''

इकु संसारी इकु भंडारी इकु लाए दीवाणु॥ पृष्ठ - 7

फिर शिव जी के पास चले गये। शिव जी ने कहा, ''मैं तो लिखता ही नहीं हूँ, काल को कह देते हैं।''

फिर काल के पास चले गये। काल ने कहा, ''मैं अपने आप तो जाता नहीं। मुझे तो जहाँ चित्र गुप्त कहते हैं, वहाँ चला जाता हूँ। वह मुझे पर्ची पकड़ा देते हैं कि अमुक आदमी को ले आओ। मैं उसे ले आता हूँ। किसी को सांप से डंक मरवा देता हूँ, किसी को छत पर से गिरवा देता हूँ, किसी की दुर्घटना करवा देता हूँ। मैं कुछ न कुछ ऐसा ही करता रहता हूँ, अपने ऊपर जिम्मेवारी नहीं लेता, बहाना बनाता हूँ, अतः आप मौत से पूछ लो।''

इस तरह सभी मिलकर चित्र गुप्त के पास चले गये। वे बोले, ''आप आए हैं। मैं बहुत धन्य भागी हूँ। ठीक है, इसका हिसाब-किताब देखते हैं। जब लेखा निकाला, देखने के बाद बोले, लो अब सुनो। मुझे दोष मत देना। इसके बारे में यह लिखा हुआ है कि इस जीव को जब व्यास जी ब्रह्मा जी के पास लेकर जायेंगे, फिर शिव जी के पास जायेंगे फिर विष्णु जी के पास तथा धर्मराज के पास जायेंगे और काल सहित ये पांचों तथा छठे व्यास जी और सांतवा यह नौकर यहाँ आकर मुझे पूछेंगे, उस समय इसकी मौत हो जायेगी। इसकी मौत का कारण तो आपने बना दिया।''

वे बोले, ''यह तो बाहर खड़ा है।''

चित्र गुप्त ने कहा, ''फिर देख लो जाकर।'' जब बाहर देखने गये तो, वह मरा पड़ा था।

महाराज जी कहते हैं, यह रहता नहीं है और इसका कोई पता नहीं कि किस समय चला जाये।

धारना - पैणा अचिंता जाल इक दिन पै जाणा - 2, 2

पैणा अचिंता जाल, इक दिन पै जाणा- 2, 4

मछुली जालु न जाणिआ सरु खारा असगाहु।

अति सिआणी सोहणी किउ कीतो वेसाहु॥ पृष्ठ - 55

सो महाराज जी कहते हैं, उम्र का कोई पता नहीं होता, यह तो काल का जाल है।

एक दिन गुरू नानक पातशाह जी को भाई बाला जी कहने लगे कि सच्चे पातशाह! जब हम सुमेरू पर्वत पर गये थे तो वहाँ पर आपने एक वचन किया था कि सन्तों पर काल का ज़ोर नहीं चला करता। सन्त स्वंय ही काल की आन रख लेते हैं। उन पर काल का ज़ोर नहीं चलता। कहते हैं, गोरख ने काल से कहा था कि -

सुन रे गोरख! उठत मारहु बैठत मारहु मारहु जागत सूता।

चार जुग महि जाल हमारा कहा करैगो सूता॥

मुझे तुम ऐसे ही समझते हो। मैं तो सारी सृष्टि को मार देता हूँ। जागते हुओं को भी मार देता हूँ, सोते हुए को भी मार देता हूँ। उठते हुए को भी मार देता हूँ, बैठते हुए को भी मार देता हूँ। चारों युगों में मेरा जाल फैला हुआ है। मेरे जाल से कौन बच सकेगा? गोरख ने कहा-

सुन रे काल! मैं ऊठत जागों बैठत जागों जागों सूता।

चार जुगां ते रहै निआरा तउ गोरख आउतीता॥

मुझे कैसे मार सकेगा? इसी तरह गुरू नानक पातशाह ने भी ऐसे ही वचन कह दिये। काल नाराज़ हो गया और उदास भी हो गया।

काल कहने लगा, ''महाराज! यदि आप ही नहीं मानोगे तो फिर मेरा काम तो बेकार हो

गया। अकाल पुरुष ने इतनी बड़ी बदनामी का काम मुझे सौंपा हैं, मुझे सभी बुरा कहते हैं, मेरा कोई भी आदर नहीं करता।''

कोई है संसार में जो मौत का आदर करे? सन्त करते हैं और कोई नहीं करता। वे क्यों करते हैं? क्योंकि वे अपने घर, कमाई करके, लाभ कमा कर, सभी कुछ करके अपने निज घर में जाकर रहते हैं क्योंकि उन्होंने अपना निज घर बना लिया होता है –

नानक बधा घर तहाँ जिथै मिरतु न जनमु जरा॥

पृष्ठ - 44

वहाँ पर घर बना लिया, जहाँ फिर मौत लौट कर पहुँचती ही नहीं है।

गुरू नानक पातशाह कहते हैं, ''अच्छा! फिर तुम नाराज़ मत होओ। हम तेरी मर्यादा ज़रूर मानेंगे पर जैसे संसार मानता है, ऐसे नहीं मानेंगे। हम अपने हिसाब से मानेंगे, पर मानेंगे भी ज़रूर।''

भाई बाला जी ने कहा, ''पातशाह! अब आप इतनी जल्दी मत करो कि देखते ही देखते तैयारियां कर लीं और आप जी का ही ऐसा फ़रमान भी है।''

धारना - चलदा ना जोर जी,

संतां दे नाल काल दा - 2, 2

संतां दे नाल काल दा - 2, 2

चलदा न जोर जी, ...-2

प्रभ कै सिमरनि गरभि न बसै।

प्रभ कै सिमरनि दूखु जमु नसै।

प्रभ कै सिमरनि कालु परहरै॥ ***पृष्ठ - 262***

प्रभु का सिमरण करने वाला, यदि काल आये तो उसे कहता है, ठहर जा, अभी मैंने नहीं जाना।

प्रभ कै सिमरनि दुसमनु टरै॥ ***पृष्ठ - 262***

गुरू दसवें पातशाह महाराज आप नन्देड़ साहिब पहुँचे हुए हैं। दोपहर का भोजन करने के पश्चात आप बिराजमान हैं। आपके कानों में एक आवाज़ ऐसी सुनाई पड़ती है –

धारना - जिहदे दर ते झूलदे हाथी,

जिहदे दर ते,

जिहदे दर ते झूलदे हाथी,

लद गए ने रावण वरगे, पिआरिओ - 2, 2

जिहदे दर ते झूलदे हाथी,

जिहदे दर ते - 2, 2

सरब सुोइन की लंका होती रावन से अधिकाई।

कहा भइओ दरि बांधे हाथी खिन महि भई पराई॥

पृष्ठ - 693

आवाज़ सुनी। महाराज जी ने कहा, ''क्या बात? ऐसे शब्द पढ़े जा रहे हैं?''

एक सिंह कहता है, ''पातशाह! भाई दया सिंह जी चलाना कर गये। चढ़ाई कर गये।''

महाराज जी कहते हैं, ''बिना मिले ही चले गये? जाओ उन्हें कहो कि हमें मिल कर जाएं।''

गुरसिख गया। जाकर उसने चरणों की ओर खड़े होकर आवाज़ लगाई। भाई दया सिंह जी वाहिगुरू! वाहिगुरू! कहते हुए उठ कर बैठ गये। उस समय गुरसिख ने दशमेश पिता जी का सन्देशा सुनाया। आप गुरू महाराज जी के पास आ गये। आकर चरणों में शीश नंवाया। बहुत वैराग किया।

महाराज जी कहते हैं, ''भाई दया सिंह! एक समान हमारी उम्र, हमारे साथ कितना प्यार था। पहली आवाज़ पर ही आपने उठ कर शीश भेंट कर दिया। जहाँ भी हम रहे, इकट्ठे ही रहे, अब जाते समय, आपने बताया भी नहीं।''

भाई साहिब कहते हैं, ''महाराज! इधर भी आप और उधर भी आप। आपका हुक्म ही इतना ज़रूरी आ गया था।''

महाराज जी ने कहा, ''कहाँ से लौट कर आए हो?''

भाई दया सिंह जी ने कहा, ''पातशाह! धर्म खण्ड. ज्ञान खण्ड, सरम खण्ड, कर्म खण्ड पार करके जब मैं सचखण्ड की डयोढ़ी से गुज़रने ही लगा था, उस समय आपका हुक्म आ गया।''

महाराज जी कहते हैं, ''ठीक है, आप चलो, हमने भी तुम्हारे पीछे-पीछे आ जाना है। बस बीस दिनों का अन्तर है। हमारा सन्देशा दे देना जो माछीवाड़े से हमने निरंकार को भेजा था। ***'मित्र पिआरे नूं हाल मुरीदां दा कहिणा।'***

खुशियां मनाई और भाई साहिब ने जाकर कुशा का आसन बिछाया। जपुजी साहिब का पाठ किया। उसके बाद आपने ऊपर चादर ओढ़ ली। आसन पर लेट गये। थोड़ी देर बाद चेतन कला शरीर छोड़ कर चली गई। सो गुरमुख पर काल हावी नहीं हुआ करता -

धारना - आवे जाए निसंग, गुरमुख पिआरा

गुरमुख पिआरा - 2, 4

गुरमुखि आवै जाइ निसंगु॥ *पृष्ठ - 932*

शरीर छोड़ दिया। बीस दिनों के पश्चात गुरू दशमेश पिता जी भी इस संसार से चले गये। इस तरह काल पर किसी का जोर तो नहीं चलता, पर उसकी मर्यादा निभानी पड़ती है।

सो गुरू नानक पातशाह ने श्री चन्द जी को साथ लिया। आठ बीघे का एक खेत था। कहते हैं, यह साफ कर देना। यहाँ पर संगत आयेगी। इसकी फसल काट दो।

जाने की तैयारी कर ली। उस समय गुरू अंगद साहिब जी को भी बुलवा लिया। बेअन्त इकट्ठ हो गया। साध संगत जी! उस समय जो गुरसिखों की हालत थी। वह कहने-सुनने से बाहर की बात है और बार-बार बेनती करते हैं- ''पातशाह! अब आप जा रहे हो, फिर मेल कैसे होगा?''

आपने इस तरह जवाब दिया। सभी पढ़ो प्यार से -

धारना - कदे होणगे संजोगां नाल मेले,

नदीआं तों वहिण विछड़े - 2, 2

मेरे पिआरे, नदीआं तों वहिण विछड़े - 2, 2

कदे होणगे संजोगां नाल मेले, ...-2

नदीआ वाह विछुंनिआ मेला संजोगी राम।

जुगु जुगु मीठा विसु भरे को जाणै जोगी राम॥

पृष्ठ - 439

कहने लगे, ''प्रेमियो! यह शरीर जैसा तुम देखते हो, इसका मेल नहीं हुआ करता। ऐसा मेल तो कुदरत ने फिर कभी बनाया ही नहीं है क्योंकि -

पवनै महि पवनु समाइआ।

जोती महि जोति रलि जाइआ।

माटी माटी होई एक।

रोवनहारे की कवन टेक॥ *पृष्ठ - 885*

किस चीज़ के लिये रोते हो? मिट्टी तो मिट्टी में मिल गई, पानी, पानी में मिल गया, आग अग्नि में मिल गई, हवा-हवा में मिल गई, आकाश पहले ही मिला हुआ था।''

कउनु मूआ रे कउनु मूआ।

ब्रहमगिआनी मिलि करहु बीचारा

इहु तउ चलतु भइआ॥ *पृष्ठ - 885*

यह तो एक अवस्था है -

बाल जुआनी अरु बिरध फुनि तीनि अवसथा जानि॥

पृष्ठ - 1428

तीन तो दिखाई देने वाली हैं। चौथी वह है कि जिन चीज़ों से यह शरीर बन कर आया है, उन्हीं में ही दोबारा लीन हो जाया करता है। विचार करो -

अगली किछु खबरि न पाई॥ *पृष्ठ - 885*

क्या पता यह रूह कहाँ जाती है? यहीं पर ही रोये जाते हो।

रोवनहारु भि ऊठि सिधाई॥ *पृष्ठ - 885*

जो रोता है, वह भी उठ कर चला जायेगा -

भरम मोह के बांधे बंध॥ *पृष्ठ - 885*

असली बात क्या है? एक तो भ्रम बहुत बड़ा पड़ा हुआ है। अपने आपको शरीर समझने से हटता ही नहीं है। कितना मर्ज़ी समझाए जाओ? कभी नहीं मानता कि मैं इस शरीर में रहने वाला हूँ। आंखों में से मैं देखता हूँ, कानों से मैं सुनता हूँ, हाथों को काम करने की शक्ति मैं देता हूँ, दिमाग को सोचने की शक्ति मैं देता हूँ, मन को फुरने करने की शक्ति मैं देता हूँ, बुद्धि के निर्णय देने की शक्ति मैं देता हूँ, चित्त को शक्ति देकर मैं ही सुख दुख का अनुभव करवाता हूँ - मैं कौन हूँ? मुझे बूझो तो सही।

सुपनु भइआ भखलाए अंध॥ *पृष्ठ - 885*

कहते हैं - अन्धे सपने में रोये जा रहे हैं -

इहु तउ रचनु रचिआ करतारि।

आवत जावत हुकमि अपारि॥ *पृष्ठ - 885*

किसे कहते हो, मरा है? मिट्टी मर गई? वह तो मिट्टी में चली गई। पानी मर गया? वह तो पानी में मिल गया। विज्ञान का एक सिद्धान्त है कि प्रकृति का जितना भार है, वह उतना ही रहता है। प्रयोग करके बताते हैं कि पहले तुम कागज़ का भार करके देख लो। फिर उसे जला दो। हम कहते हैं कि राख का भार कम हो जाता है। बड़ा सा सिलैण्डर ले लो, उसके अन्दर कागज़ को जला दो, फिर तोलो। एक रत्ती भी कम नहीं होता। उतना ही रहता है क्योंकि अभी उसके अन्दर सभी तत्व पड़े हैं। कोई भी चीज़ कम-ज्यादा नहीं होती, उतनी ही रहती है। कहते हैं- मरता कोई नहीं।

नह को मूआ नह मरणै जोगु।

नह बिनसै अबिनासी होगु॥ *पृष्ठ - 885*

इसका नाश नहीं होता, अविनाशी है आत्मा। गुरू भी अविनाशी, आत्मा भी अविनाशी, दोनों ही नहीं मरते।

जो इहु जाणहु सो इहु नाहि॥ *पृष्ठ - 885*

जानते तो हैं कि बाबा जी इस शरीर में बैठे हैं। यह तो 'मैं' नहीं हूँ। चिल्ला-चिल्ला कर कहे जाता हूँ कि यह मैं नहीं हूँ। तुम ऐसे ही भ्रम में पड़े हुए हो। जो है, उसे कोई जानता नहीं। उसे मरना नहीं है। मरने वाली वस्तु को कहते हैं कि यह है। जो जानता है, उस पर बलिहार जाओ।

जानणहारे कउ बलि जाउ॥ *पृष्ठ - 885*

बलिहार जाते हैं, कुर्बान जाते हैं उस पर, जिसने यह बात जान ली -

कहु नानक गुरि भरमु चुकाइआ।

ना कोई मरै न आवै जाइआ॥ *पृष्ठ - 885*

भ्रम ही मिटा दिया कि कोई आता नहीं, कोई जाता नहीं, कोई मरता नहीं। यह तो ज्योति अपने कौतुक आप कर रही है -

नह किछु जनमै नह किछु मरै।

आपन चलितु आप ही करै॥ *पृष्ठ - 281*

कवन रूप द्रिसटिओ बिनसाइओ।

कतहि गइओ उहु कत ते आइओ॥ *पृष्ठ - 736*

कहते हैं - ये जो दिखाई देते हैं, कहाँ चले जाते हैं? कहाँ से आते हैं? महाराज जी कहते हैं -

जल ते उठहि अनिक तरंगा।

कनिक भूखन कीने बहु रंगा॥ *पृष्ठ - 736*

समुद्र के किनारे खड़े हो जाओ। बेअन्त लहरें उठती हैं। वे लहरें आकर कहाँ चली जाती हैं? बाहर निकल जाती हैं? नहीं, वहीं पर ही समा जाती हैं।

जल तरंग अरु फेन बुदबुदा जल ते भिंन न होई॥

पृष्ठ - 485

कनिक भूखन कीने बहु रंगा॥ *पृष्ठ - 736*

हज़ारों किवंटल सोना ले लिया। उसके लाखों ही गहने बना दिये। जब उन्हें दोबारा ढाला गया तो वे कहाँ गये? फिर सोना बन गये। सोने में से ही आये थे, सोने में ही लीन हो गये। जो रूप दिखाई देता है, बस इसी का ही शोर शराबा है। इसे हम कायम रखना चाहते हैं पर यह कायम नहीं रहता। महाराज जी कहते हैं -

सभना मरणा आइआ वेछोड़ा सभनाह॥ *पृष्ठ - 595*

सभी ने मरना है, सभी का बिछोड़ा होना है –

पुछहु जाइ सिआणिआ आगै मिलणु कि नाह॥

पृष्ठ - 595

कहते है – असलियत यह है कि सियाने लोगों से पूछ लो कि आगे जाकर मेल होता है या नहीं?

जिन मेरा साहिबु वीसरै वडड़ी वेदन तिनाह॥

पृष्ठ - 595

कहते हैं, दुख उन्हें हैं, जिन्हें साहिब, परमेश्वर भूला हुआ है और अपने स्वरूप का ज्ञान नहीं है। अब एक जगह पर महाराज जी और फ़रमान करते हैं –

साजन चले पिआरिआ किउ मेला होई॥ पृष्ठ - 729

साजन तो चले, फिर मेल हो सकता है या नहीं? महाराज जी कहते हैं कि ऐसे नहीं मेल होगा, जैसा तुम समझते हो। शरीर का मेल तो होता नहीं और रूह के तुम वाकिफ (जानकार) नहीं हो, यदि रूह वैसी ही हो तो ठीक है। जब उसके जानकार ही नहीं हैं, फिर उसके साथ मिलाप बड़ा कठिन है। मेला मिलाप क्यों नहीं होता? पहली बात तो यह है कि वाहिगुरू का जो पसारा है, इसका कोई अन्त नहीं है। दूसरा रूह कहाँ चली जाती है? किस रूप में चली जाती है? किसी को कुछ पता नहीं है? यदि रूह सारी जिन्दगी जायदादों में फंसी रही है और अन्त समय भी उसी में ही फंसी रह जाये, तो फिर उसने प्रेत बन जाना है। अब प्रेत को ढूंढे जाओ कि प्रेत कहाँ है? और–

संतन कै दूखनि सरप जोनि पाइ॥ पृष्ठ - 279

यदि सन्तों को दुखी करता रहा है तो सांप बन जायेगा। अब मिलोगे कहाँ? यदि मिल गया तो डण्डे से मार दोगे। पहचान तो होगी नहीं कि यह कौन है?

संत कै दूखनि त्रिगद जोनि किरमाइ॥ पृष्ठ - 279

कुत्ते, बिल्लों को जो कीड़े (कृमि) पड़ जाते हैं, उनमें चला जाता है। अब वहाँ पर कैसे ढूंढ लोगे? कहते हैं – मिलाप हो सकता है या नहीं? वाहिगुरू का पसारा बेअन्त है। ग्यारह तो बड़ी-बड़ी दरगाह हैं, जिनमें अरबों खरबों की आबादी है। फिर भूत मण्डल है। उसके बारे में मुझे एक भूत बताया करता था।

मैंने कहा, ''तुम्हारी संख्या भी हुआ करती है।''

वह बोला, ''तुम्हारी तरह हम भी हैं, पर हम दुखी बहुत हैं।'' मैंने कहा, ''तुम कितने होंगे?''

वह बोला, ''तुम्हारा एक आदमी, हम तीन सौ। तुम्हारी संख्या से तीन सौ गुणा अधिक हैं।''

मैंने कहा, ''हमारी आबादी तो 5 अरब की है।''

वह बोला, ''फिर हम 15 खरब हैं।''

वह पढ़ा लिखा था। अब 15 खरबों में उसे ढूंढ लो, वह कहाँ पर भूत बना हुआ है। फिर मिलने का क्या लाभ? पहले खुद भूत बनो, फिर भूत को मिलो। बड़े-बड़े चौरासी नरक हैं। वहाँ पर हाय-हाय हो रही है। वहाँ पर कहाँ मिलोगे? हम किसी और नरक में होंगे, वह किसी और नरक में होगा। फिर इसी तरह वहाँ स्वर्ग है - गन्धर्व लोक है, देव गन्धर्व लोक है, पितृ लोक है, स्वर्ग लोक है, इन्द्र लोक है, प्रजापति लोक है, कर्म देव लोक है। बेअन्त लोक हैं। ब्रह्म लोक, शिव लोक, बैकुंठ धाम आदि-आदि। यदि बैकुंठ ही जाओ फिर तो मेल (मिलाप) होता है। वरना किसी अन्य लोक में जाने से मिलाप नहीं होता। महाराज जी कहते हैं -

साजन चले पिआरिआ किउ मेला होई।

जे गुण होवहि गंठड़ीऐ मेलेगा सोई॥ ***पृष्ठ - 729***

यदि सन्तों को मिलना है तो सन्त तो परमेश्वर में लीन हो जाते हैं -

पिंडि मूऐ जीउ किह घरि जाता॥ ***पृष्ठ - 327***

पिंड (शरीर) तो मर गया। शरीर के मर जाने के बाद यह जीव कहाँ चला गया -

सबदि अतीति अनाहदि राता॥ ***पृष्ठ - 327***

शबद के अन्दर जो त्रिगुणातीत जो अवस्था है, उसमें जाकर समा जाया करता है।

महाराज जी कहते हैं, ''प्यारे! मेल (मिलाप) जो होता है....., उसके लिये अपने स्वरूप को पहचानो। हम कभी बिछुड़े ही नहीं। सदा ही मिले हुए हैं। बिछोड़ा तो उसका होता है जो द्वैत में आता है। जो अपने स्वरूप को पहचानता है, उसका बिछोड़ा नहीं हुआ करता।''

महाराज जी ने इस तरह से फ़रमान किया -

धारना - पछाण बंदिआ! पिआरे आपणे सरूप नूं- 2, 2

आपणे सरूप नूं, आपणे सरूप नूं - 2, 2

पछाण बंदिआ!.....-2

मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु।

मन हरि जी तेरै नालि है गुरमती रंगु माणु॥

पृष्ठ - 441

कहते हैं - प्यारे! तू शरीर नहीं है। क्यों अपने आप को बार-बार शरीर की रट लगाये फिर रहा है। कौन सी चीज़ है तू? यह तो एक कारखाना है, जैसे कारखाने में खिलोने बनाते हैं ऐसे ही एक खिलौना बना दिया। इसमें हमें रहने के लिये जगह दे दी। जैसे हम कोठी बनाते हैं और

गलती से यह कहें कि मैं कोठी हूँ। 'मैं कोठी' कहने पर पागल खाने में ले जाकर लोग बन्द कर देंगे कि इस आदमी को तो पता ही कुछ नहीं। इसी तरह से इन पांच तत्वों में से हम कोई भी चीज़ नहीं हैं? पांच ज्ञानेन्द्रियां - नाक, कान, आंख, जीभ, त्वचा आदि में से भी कोई नहीं है। ये हमारी आंखें हैं, हम आंख नहीं। पांच कर्मेन्द्रियां हाथ, पैर आदि इनमें से भी हम कोई नहीं है। फिर पांच प्राण हैं - प्राण, उपान, उदान, बिआन, समान, इन पांच प्राणों में से भी हम कुछ नहीं हैं। फिर मन है, मैं मन नहीं हूँ, मेरा मन है। बुद्धि मैं नहीं हूँ। मेरी बुद्धि है। चित्त मैं नहीं हूँ, मैं कहता हूँ, मेरा चित्त उदास है। मेरा चित्त तुझे देखकर खिल उठा। फिर मैं क्या हुआ? झूठी मैं इसे दृढ़ कर दिया। जब भी झूठी मैं कहेगी, अपने आपको शरीर कहेगी। मिट्टी का बुत्त बन गया, ज्योति नहीं बनता। जो असली चीज़ है ज्योति, वह बन तू। गुरू का ही वचन मान ले, जिस गुरू को शीश झुकाता है, उसकी ही बात मान ले -

मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु॥

पृष्ठ - 441

तुझे न कोई मार सकता है। न ही आत्मा को कोई काट सकता है, न ही यह जलती है, न पानी में डूबती है, यह तो सदा अमर है। तुम अपने आपको मरने वाला क्यों मानता है? तू अपने आपको सदा अमर समझ। जब सदा अपने आपको अमर मानेगा फिर तुझे पता चलेगा कि मेरी जो आत्मा है, इसे जीव-आत्मा कहते हैं। जब तक मैं अलग है, तब तक मेरे अन्दर जीव भाव है। जिस दिन जीव भाव खत्म हो गया, मैं आत्मा हो जाऊंगा। आत्मा को शब्द ब्रह्म भी कहते हैं। अलग-अलग नाम हैं। कुछ शब्द भी कहते हैं। महाराज जी कहते हैं कि जो निरंकार का स्वरूप साकार हुआ है तभी -

निरंकारु आकारु होइ एकंकारु अपारु सदाइआ॥

भाई गुरदास जी, वार 26/2

ऐकंकार कहलाता। ऐकंकार से फिर आत्मा हुई। उसे कहते हैं -

एकंकारहु सबद धुनि ओअंकार अकारु बणाइआ॥

भाई गुरदास जी, वार 26/2

उस शबद धुन को औंकार कहते हैं। पहले गुरू ग्रन्थ साहिब में ऐकंकार फिर औंकार आता है। दोनों एक ही है। महाराज जी कहते हैं, दो मत कहो -

आतमा परातमा एको करै।

अंतर की दुबिधा अंतरि मरै॥ ***पृष्ठ - 661***

आत्मा और परमात्मा को एक ही रूप समझ लो वही है। यह केवल क्रिया में भेद है। जब सृष्टि के आकार होते हैं, वे सभी शब्द होते हैं -

प्रथम ओअंकार तिन कहा।

सो धुनि पूर जगत मो रहा॥

कहते हैं कि वह धुन सारे जगत में परिपूर्ण है, उसे आत्मा कहते हैं - उसी शब्द धुन को। सिद्धों ने पूछा कि वह रहता कहाँ था।

सु शब्द का कहा वासु कथीअले

जितु तरीऐ भवजलु संसारो॥ *पृष्ठ - 944*

महाराज जी कहते हैं, वह तो निरंकार स्वंय ही था। अपना ही रूप था -

सरगुन निरगुन निरंकार सुंन समाधी आपि।

आपन कीआ नानका आपे ही फिरि जापि॥

पृष्ठ - 290

अत: जिसने अपने आपको आत्मा मान लिया, उसने न कभी मरना है, न ही पैदा होना है। अपनी खेल कर रहा है। द्वैत में आकर मनुष्य को अज्ञान हो गया। अज्ञान दूर करने के लिये ही सभी भजन, पाठ, सेवा, बन्दगी आदि किये जाते हैं।

ओहु अउहाणी कदे नाहि ना आवै ना जाइ॥

पृष्ठ - 509

शब्द की साधना करो, फिर दिखाई दे जायेगा। अत: महाराज जी ने शरीर त्याग दिया। माता जी को पता चला, वह बोली, ''हैं! साहिबजादे भी नहीं बुलाए।''

कहते हैं, ''बुलाने के लिये गये थे पर वे नहीं आए।''

उस समय जल्दी-जल्दी फिर सन्देशा भेजा और आप जाकर चरणों की तरफ खड़े हो गये। कहती हैं, ''महाराज! इतनी जल्दी की आपने, कम से कम बच्चों की इंतजार तो कर लेते। चार घड़ी तो और ठहर जाओ।''

महाराज जी उठ कर बैठ गये। कहते हैं, ''मूले सुता! इतना कम समय मांगा। यदि तुम हमें कहती कि महाराज चार युग और रूक जाओ तो हमने चार युग भी ठहर जाना था। चलो अच्छा हुआ, अब परमेश्वर ने चार घड़ियां (पहर) आपके मुख से निकलवाई हैं, करो बात, क्या कहना है?''

कहती हैं, ''महाराज! मेरे पुत्रों को तो आप कुछ भी देकर नहीं गये और बेगाने पुत्र को सभी कुछ दे दिया।''

महाराज जी ने कहा, ''तुझे भ्रम है। मेरे पास तीन चीज़ें थीं - एक थी गुरूता (गुरूपन) - दूसरा था गृहस्थ, तीसरी थी उदासी। उदासी तो दे दी श्री चन्द को, गृहस्थ दे दिया लखमी दास को और गुरूता का बोझ वाला और कोई नहीं था। वह केवल गुरू अंगद ही थे, जिन्होंने यह बोझ उठाना था। यदि तुम्हें विश्वास नहीं आता तो मेरी गोदड़ी उठा लाओ।'' गोदड़ी ले आई। फिर

महाराज जी कहते हैं, ''अब उठाओ।''

जब श्री चन्द जी उठाने गये तो वह हिली ही न, लखमी दास से भी बिल्कुल न हिली। जब गुरू अंगद साहिब जी गये तो उन्होंने बड़े आराम से उठा ली। फिर महाराज जी कहते हैं, ''यह भार इनसे नहीं उठाया जाना था। इनके पास माया की कोई कमी नहीं रहेगी। जब तक ये 'सत' मार्ग पर चलेंगे तो रिद्धि-सिद्धि इनकी सेवादारनी बन कर काम करेगी, इनके कुत्तों की भी मान्यता होगी। जहाँ पर ये पैर रखेंगे उस स्थान की भी मान्यता होगी। पर जब ये सतमार्ग से हट जायेंगे फिर कुछ नहीं मिलेगा।''

बाकी जो अकाल पुरुष की ओर से हमें जो संसार का बोझ मिला था, वह अंगद जी के अतिरिक्त और कोई उठाने वाला नहीं था। यही यह बोझ उठा सकते थे।

उस समय सभी सिक्खों ने कहा, ''पातशाह! कृपा करो, हमें भी कोई अन्तिम वचन सुना दो।''

महाराज जी कहते हैं, ''देखो, मोटी-मोटी बातें हैं। यह देह फिर नहीं मिलेगी। यह जो देह तुम्हें प्राप्त हुई है, यह नर-नारायणी देह है। इसे ऐसे ही बर्बाद मत कर देना। दूसरा वचन यह है कि निज स्वरूप की लखता ही हमारा परम प्रयोजन है। अपने आपको पहचानो। इसी के लिये हम आये हैं, बाकी तो सारा भ्रम है, शोर शराबा है।

असली तत्व की बात यह है कि जब तक अपने स्वरूप को नहीं पहचानोगे, तब तक बात नहीं बनेगी।''

मनु हरि कीआ तनु सभु साजिआ।

पंच तत रचि जोति निवाजिआ॥ ***पृष्ठ - 1337***

पाँच तत्व रच कर इसके अन्दर ज्योति डाल दी। वही हम हैं।

सूरज किरणि मिले जल का जलु हूआ राम॥

पृष्ठ - 846

जैसे यह सूरज की किरण हैं, इसी तरह से यह निरंकार का अपना स्वरूप है। इसे पहचानो। फिर सभी यौनियां विषय विकारों में लीन हुई पड़ी हैं। मछलियां, खाने में मस्त हैं। हाथी काम में, मृग सुनने में, पतंगा नेत्रों में (देखने में), भंवरा नाक (सुगन्धि) में, लीन हुआ पड़ा है। मनुष्य के अन्दर, परमेश्वर ने सत और असत की विचार शक्ति डाली हुई है। इन जीवों के अन्दर नहीं है। ये विषयी सुख में हैं। यदि मनुष्य सत और असत की विचार कर ले तो इसके जीवन का प्रयोजन (मकसद) इसे प्राप्त हो जाता है। फिर अपने सत स्वरूप को पहचान ले कि मैं ज्योति स्वरूप हूँ -

मन तूं जोति सरूपु है आपणा मूलु पछाणु॥

पृष्ठ - 441

अब अपने को तो रख ले और बाकी जो यह पाँच तत्व का पुतला उठाये फिर रहा है -

माटी को पुतरा कैसे नचतु है।

देखै देखै सुनै बोलै दउरिओ फिरतु है।

जब कछु पावै तब गरबु करतु है।

माइआ गई तब रोवनु लगतु है॥ *पृष्ठ - 487*

इस मिट्टी के पुतले को मैं कहे जाता है। कहते हैं कि अपने 'सत रूप को पहचानो,' 'असत' का त्याग करो। सारे सुखों का आधार जो है, वह तो नाम है। सभी रोग इससे दूर हो जाते हैं। सारे विघ्न खत्म हो जाते हैं।

यहाँ पर अपने स्थान पर भी देख लो। लोग आते हैं और कहते हैं, बाबा जी, कृपा कर दो। यदि नाम ही नहीं जपना तो बाबा जी क्या करेंगे? मेरे पास आ जाते हैं और रोना रोने लग जाते हैं कि यह नहीं होता? हम बहुत मुश्किल में हैं? हम कहते हैं कि नाम जपो, बन्दगी करो। सभी सुखों का आधार नाम है। शरीर की तीन अवस्थाएं होती हैं। बचपन 'मूढ़' अवस्था है। जवानी विषयों की खान होती है। बुढ़ापा रोगों का घर होता है। बाल अवस्था में बच्चों को कोई सूझ बूझ नहीं होती। जवानी में इसे काम का भूत चिपटा रहता है। यह किसी की बात नहीं सुनता। बुढ़ापे के अन्दर रोगी हो जाता है? दवाईयां खाये जाते है, अंग शिथिल हो जाते हैं, भजन बन्दगी नहीं होती, बैठ नहीं सकता। मन करता है, तपस्या करूं, पर होती ही नहीं है।

महाराज जी कहते हैं, प्यारे! सांतवा वचन है, हमारा सत, सन्तोष, विचार, वैराग, विवेक इसके अन्दर रहते हुए जीवन व्यतीत करो। फिर तितिक्षा में जाओ, फिर उसके बाद इच्छा रखो, परम मोक्ष की। उसके पश्चात गुरू का वचन सुनो, सुन कर पूरी तरह मानो फिर उसकी खोज करो, फिर अपने स्वरूप को पहचान कर सदा सुखी हो जाओगे। इस तरह का जीवन व्यतीत करो।

आंठवा है मौत का दुख यह बार-बार आयेगा, जब तक ज्ञान नहीं होता। यह असह्य है। चार सौ तलवारें कोई एक जगह पर मारे, इतना दुख होता है। इस दुख से बचो।

नौवां है कल्याण के लिये सत्संग करो। सन्तों के वचनों का पालन करो। नाम सिमरण करो। दृढ़ अभ्यास करो तथा निज स्वरूप की लखता प्राप्त करो।

दसवां वचन है कि तुमने हमारे हुक्म का पालन करना है, शोक नहीं करना। मनमुख का शोक किया जाता है। इतने वचन कहे तो उस समय गुरसिखों ने प्रार्थना की कि पातशाह! फिर आप ने आगे तो बताया नहीं कि आप को इस्लाम वाले भी उतना ही मानते हैं और हम हिन्दू लोग भी उतना ही मानते हैं तो आप का दाह संस्कार कैसे करेंगे?

महाराज जी कहते हैं, ''अच्छा हुआ, तुमने यह बात पूछ ली। ऐसा करना कि हमारे चारों ओर अपने-अपने फूल लाकर रख देना, हार इत्यादि और जिसके फूल हरे रह जायें, वह अपने धर्म अनुसार क्रिया कर लेना। जिसके फूल मुरझा जायें, वह हमारे शरीर पर दावा न करे।''

उस समय देखते ही देखते महाराज जी कनात में चले गये और संगत एक दम हैरान हो गई, पर देख कर कि एक दम करोड़ों सूर्यों के समान तेज प्रकाश हुआ, सारे ब्रह्मण्ड में प्रकाश छा गया तथा

जय-जय कार की धुनें, अनहद धुनें बजनी शुरू हो गईं और इतिहास में ऐसा लिखा है -

धारना - ब्रह्मा बिशन ते महेश देवी देवते,

लैण आ गए सतिगुरू नूं - 2, 2

मेरे पिआरे, लैण आ गए सतिगुरू नूं - 2

वाहवा-वाहवा, लैण आ गए सतिगुरू नूं-2

ब्रहमा बिशन ते महेश देवी देवते, ...-2

गमन कीन ऊरध की ओरा।

जै जै कार होत घनघोरा॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 201

इतना प्रकाश हुआ कि ऐकंकार जी आप आये, कहने लगे कि अब चलो, ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि सारे देवता विमान लेकर पहुँचते हैं।

सुर अरजन तर कुसम ब्रखावहिं॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 201

फूलों की वर्षा होनी शुरू हो गई -

चारु चमर चहु दिसन ढुरावहिं॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 201

चारों ओर चंवर झुलाए जा रहे हैं -

बिसनादक चंदन चर चाहीं।

करहिं आरती संख बजाहीं॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 201

आरती हो रही है, शंख बज रहे हैं।

हती शकत जहिं लग जिसहि .....॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 201

जहाँ तक शक्ति थी, सभी जगह से देवता आ गये। सभी नमस्कार करके गन्धर्व लोक वाले गन्धर्व लोक चले गये, देव गन्धर्व वाले देव गन्धर्व में, स्वर्ग वाले स्वर्ग में, इन्द्र लोक वाले इन्द्र लोक में चले जाते हैं -

हती शकत जहिं लग जिसहि श्री नानक पहुचाइ।

हटे संग ते देव सभ चरनन सीस निवाइ॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 201

जब वैकुंठ धाम में गये, वहाँ पर विष्णु जी ने शीश नंवाया। उसके पश्चात -

सच्च खंड श्री गुर गए कीन तांहिं बिस्राम।

भू तल महिं जैसे भई सुनहु कथा अभिराम॥

श्री गुर पुर प्रकाश ग्रन्थ, पृष्ठ - 201

कहते हैं, वे तो सचखंड में चले गये, ज्योति में ज्योति मिल गई -

सूरज किरणि मिले जल का जलु हूआ राम।

जोती जोति रली संपूरनु थीआ राम।

ब्रहमु दीसै ब्रहमु सुणीऐ एकु एकु वखाणीऐ।

आतम पसारा करणहारा प्रभ बिना नही जाणीऐ॥

पृष्ठ - 846

इधर जब सियाने लोग कनात में देखने गये, उस समय क्या देखते हैं कि दोनों के फूल हरे भरे हैं। दो चादरें हैं- एक हिन्दुओं ने तो एक इस्लाम वालों ने ले ली, गुरू नानक पातशाह हैं ही नहीं। सारा शरीर तत्वों में विलीन कर दिया। और समझा दिया कि गुरू शरीर नहीं हुआ करता। गुरू परम ज्योति हुआ करती है। संगत को बहुत वैराग हुआ, साध संगत जी! आप 1526 से 1596 तक आश्विन वदी दसवीं, सत्तर साल, पाँच महीने, दस दिन, इस शरीर में रह कर दूसरा रूप धारण कर गये। इस तरह पढ़ लो -

धारना - रूप गुरां ने बदलिआ दूजा,
सतिगुरू नानक, अंगद बणिआं - 2, 2
रूप गुरां ने बदलिआ दूजा,
सतिगुर नानक, अंगद बणिआं - 2, 4

थापिआ लहिणा जींवदे गुरिआई सिरि छत्र फिराइआ।

जोती जोति मिलाइकै सतिगुर नानकि रूपु वटाइआ॥

भाई गुरदास जी, वार 1/45

लहणे दी फेराईऐ नानका दोही खटीऐ।

जोति ओहा जुगति साइ सहि काइआ फेरि पलटीऐ॥

पृष्ठ - 966

इस तरह से भाई लहणा जी, देवी को मानने वाले, गुरू नानक पातशाह के चरणों में आये

पर सिक्खी साधना पूरी तन देही के साथ निभाई, कितनी महान पदवी प्राप्त कर ली। स्वंय ही गुरू नानक पातशाह हो गये।

इस तरह से साध संगत जी! जो विचार हम कई दिनों से कर रहे थे, आज समाप्त होती है। आप सभी अब आनन्द साहिब में बोलो। फिर गुरू सतोतर में बोलो।

- आनन्द साहिब -
- गुर सतोतर -
- अरदास -